अभिनव शंकर

भाग-2

भारतीय सनातन वैदिक संस्कृति के उन्नायक श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

अभिनव शंकर
भाग-2

संकलन
समर्थ श्री त्र्यम्बकेश्वर ब्रह्मचारी

सम्पादक
डॉ. गुण प्रकाश चैतन्य

सौजन्य से :
धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी महाराज पब्लिक वेलफेयर ट्रस्ट
रानी बाजार, बीकानेर
मो. : 9414141941

ISBN : 978-93-92655-41-8

© धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी महाराज पब्लिक वेलफेयर ट्रस्ट
रानी बाजार, बीकानेर

प्रकाशक :

कलासन प्रकाशन
कल्याणी भवन, मॉडर्न मार्केट, बीकानेर

मुद्रक :

कल्याणी प्रिणटर्स
अलख सागर रोड, बीकानेर

पुस्तक प्राप्ति के लिए सम्पर्क सूत्र :

श्री करपात्र धाम सेवा न्यास
पानी घाट चौराहा, परिक्रमा मार्ग,
वृन्दावन, मथुरा (उत्तर प्रदेश)
मो. : 9456442352, 9414141941

पुस्तक का पुर्न मुद्रण मूल्य :

दौ सौ रुपये

Abhinav Shankar Part-2 *Re Print Print Price : 200/-*

अनुक्रम

पत्राचार ७
श्रद्धांजलियां २४
जाकी रही भावना जैसी २५
इस युग के निर्भीक एवं तेजस्वी सन्त स्वामी श्री करपात्री जी २६
विश्व की असाधारण ज्योति २७
लोक-कल्याणरत महामनीषी २८
आयुर्वेदिक चिकित्सा के उपासक श्री स्वामी करपात्री जी और कायाकल्प ३१
पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ३४
सनातनधर्म के दिव्य भास्कर स्वामी करपात्री जी ३६
पूज्य स्वामीजी का संस्मराणात्मक परिचय ३९
अभिनव शंकर ४७
धर्मसम्राट श्री करपात्र स्वामी-अलौकिक महापुरुष ५१
गुरुवर के सान्निध्य में ५६
धर्म और ब्रह्म के मर्मज्ञ सर्वभूत हृदय धर्मसम्राट श्री करपात्र महाराज ५९
ब्रह्मलीन श्री चरणों में निवेदन ६६
स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ६८
स्वामी जी का अलौकिक व्यक्तित्व ७१
श्री हरिहरानन्द सरस्वती करपात्री जी की स्मृति में ८६
अद्भुत-शास्त्रार्थी-विद्वान ९३
हा हन्त! महाकाल की निष्ठुरता ९६
निरंकुश पाण्डित्य के धनी श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ९८
पूज्य गुरुदेव के कुछ संस्मरण १०१
श्रीमत्करपात्रचरणसरसीरुपादुकावन्दनम् १०३
भगवत्स्वरूप धर्मसम्राट् ११०
पूज्य श्री असम्भव-पूर्ति ११४
ज्ञान-भक्ति-कर्म की त्रिवेणी ११६
मेरे भगवान् श्री स्वामी करपात्री जी ११८
सतयुगी महात्मा श्री करपात्री जी १२४

आयुर्वेदिक चिकित्सा के उपासक १२५
श्री स्वामी करपात्री जी और कायाकल्प
श्री करपात्री जी का नेतृत्व १२८
हमारे श्री गुरुदेव १३०
काशी के प्रकाश : ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी महाराज १३१
श्री मलूक पीठ सेवा संस्थान न्यास, वृन्दावन १३७
पूज्य स्वामी करपात्री जी का लीला संवरण १३८
स्वामी करपात्रीजी महाराज १४२
संस्मरण १४७
प्रातः स्मरणीय श्री स्वामी करपात्री जी महाराज १५०
के वैदुष्य की एक झलक
महान् त्यागी एवं तपस्वी १५३
प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी १५५
धार्मिक जगत की अलौकिक विभूति १५८
साक्षात परब्रह्म-स्वरूप स्वामी जी १६०
वे दिव्य विभूति थे १६०
भक्तिरस के अलौकिक व्याख्याकार, काशी की अद्वैती १६१
संन्यासियों की परम्परा के मुकुटमणि
सतत प्रवहमान त्रिवेणी १६४
प्रकाण्ड विद्वान : श्री स्वामी करपात्री जी १६६
धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री महाराज की ब्रह्मलीनता १६९
से आस्तिक गोरक्षक समाज की अपूरणीय क्षति
आध्यात्मिक विभूति करपात्री जी १७४
''शत शत प्रणाम'' १७५
श्री चरणों में शत शत प्रणाम १७६
श्री करपात्री जी १७८
भारतीय संस्कृति के अद्बितीय आलोक-स्तम्भ १७९
सन्ति सन्तः कियन्तः १८१
स्वामी करपात्री जी : भारत के भविष्य के सन्देश वाहक १८३
श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का एक संस्मरण १८५
धर्म-सम्राट स्वामी करपात्री जी का वैदुष्य १८८
अप्रतिम व्यक्तित्व वैदुष्य के प्रतिनिधि १९२
स्वामी करपात्री जी महाराज
वे सच्चे अर्थों में सरस्वती-पुत्र थे १९७

धर्म सम्राट् के कुछ दिव्य संस्मरण	१९९
स्वामी करपात्री जी	२०१
वे तेजस्वी व संघर्षशील संन्यासी थे	२०३
न तस्य प्रतिमा अस्ति	२०८
श्री राम भक्त करपात्री जी	२१३
प्रकाण्ड विद्वान : स्वामी श्री करपात्र जी महाराज	२१४
लोकोत्तर व्यक्तित्व	२१५
श्री करपात्री जी	२१६
वन्दनीय विभूति : स्वामी करपात्री जी	२१७
कर्मनिष्ठ तपस्वी, करपात्री स्वामी	२२०
भविष्य दृष्टा महापुरुष	२२१
ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज साक्षात्भगवतावतार	२२४
श्री करपात्री जी की दिनचर्या	२२७
युग प्रवर्तक स्वामी करपात्री जी महाराज	२२८
श्री स्वामी करपात्री जी महाराज	२३१
परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज एवं संस्मरण	२३८
एक अलौकिक शक्ति जो धर्मरक्षार्थ प्रकट हुई थी	२४१
धर्म सेतु स्वामी श्री करपात्री जी महाराज	२४४
धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज	२४७
करपात्री चालीसा	२४९
जयति धर्म सम्राट	२५०
परम पूज्य महाराज श्री के कतिपय संस्मरण	२५१
धर्म सम्राट पूज्य श्री करपात्री जी	२५४
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्	२५५
धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज	२५९
ज्ञानावतार पूज्य गुरुदेव	२६०
कथाश्रोता-कृष्ण सर्प	२६३
किन्हें-किन्हें लिखें, किन्हें-किन्हें छोड़ें	२६४
अद्‌भुत देवता	२७१
षट्पद गुञ्जनम्	२७२
करपात्राष्टकम्	२७४
भावाञ्जलिः!	२७६

कथं सगुणोपासना?	२७७
का-इष्टदेवता?	२७८
श्री करपात्र दर्शनाञ्जलिः	२८०
श्रीमद् यतिराज पुण्यस्मृति	२८२
करपात्री वन्दनम्	२८५
करपात्र-गाथा	२८६
करपात्र-स्वामि महाभागाः	२८९
करपात्र पदाम्भोज-भ्रमरः	२८९
तपः प्रतीकः करपात्री	२९०
महान् ग्रंथकार स्वामी करपात्री जी महाराज	२९१
साक्षात्-विश्वनाथ श्री स्वामी करपात्री जी महाराज	३२०
चिरस्मरणीय महात्मा	३२१
शुभ संकल्पों के धनी	३२२
अभिनव शंकर	३२४
करपात्री जी की प्रेरणा से	३२६
श्री विश्वनाथ शिवालय में रुद्राभिषेक	
ब्रह्मनिर्वाण एवं श्रद्धांजलियां	**३२८**
श्री वशिष्ठ जी का लेख	**३२९**
आचार्य रामसुदर्शन जी मिश्र, प्राचार्य, श्री वृन्दावन	**३५३**
श्रीमच्छङ्कराचार्य-सिद्धान्तविचार	**३५६**
किञ्चिन्नैवेद्यम्	**३५८**
श्रीसत्गुरु धर्मसम्राट्	३६०
करपात्री चालीसा	
श्री करपात्र-स्वामी जी अष्टक	३६२
श्री धर्म सम्राट् स्तवनम्	३६४
श्रीकरपात्रपदरजपंचकम्	३६७
करपात्र वंदना	३६८

धर्मसापेक्ष, पक्षपातविहीन, लोकतान्त्रिक, अध्यात्मवाद पर आधारित रामराज्य दर्शन के प्रस्तोता 'राष्ट्रपुरुष'।

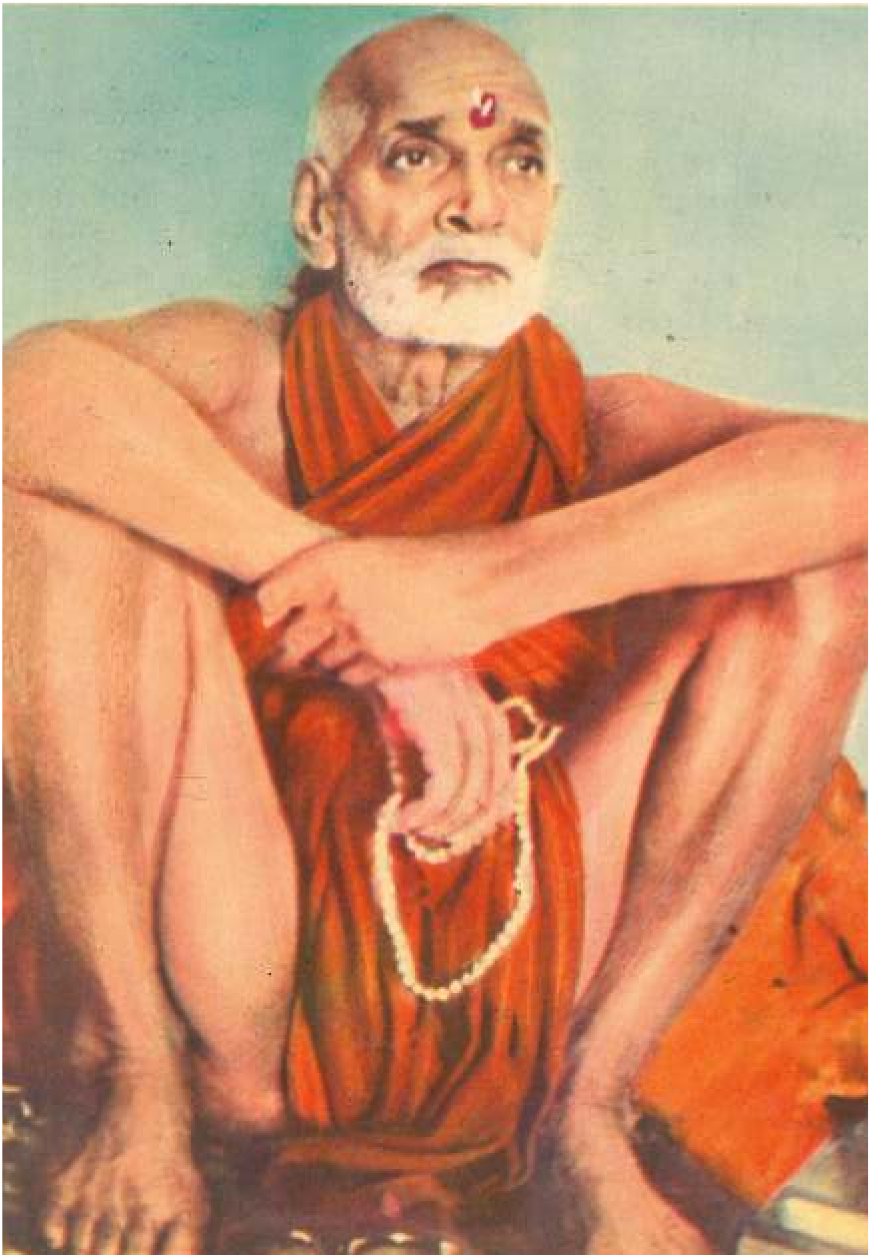

धर्मसंघ संस्थापक धर्मात्मा श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरुशङ्कराचार्य अनन्त श्री विभूषित श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज, धर्मसम्राट् को नमन करते हुये ।

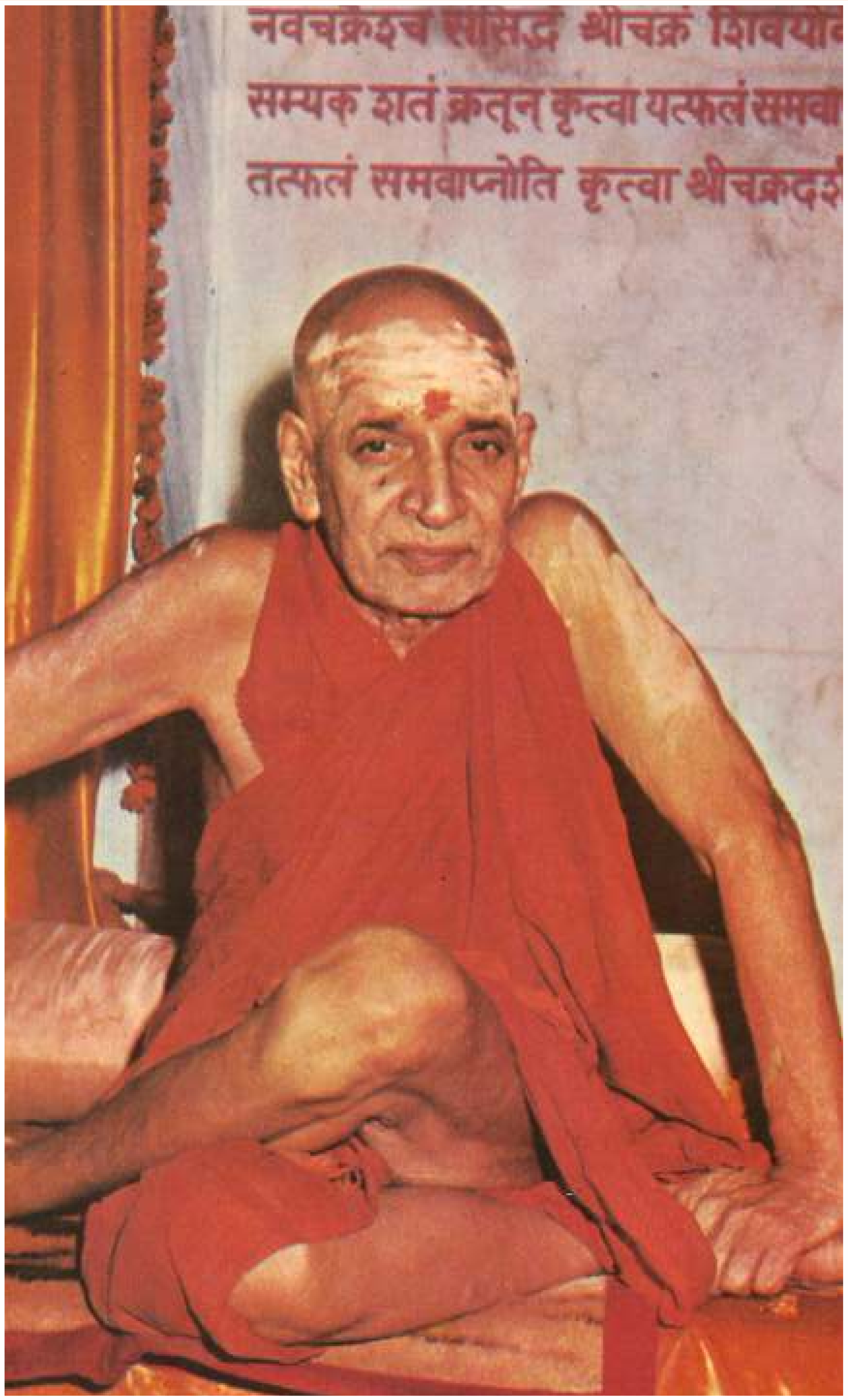
नवचक्रैश्च
सम्यक शतं क्रतून कृत्वा यत्फलं
तत्फलं समवाप्नोति कृत्वा

पत्राचार

[स्वामी श्री करपात्री जी महाराज जैसे बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति ने अर्द्ध शताब्दी तक सम्पूर्ण राष्ट्र को अपने ज्ञान, तप, त्याग, विद्या, कर्म एवं धर्मानुष्ठानादि के माध्यम से सतत् आलोकित रखा। उन जैसे कर्मठ संघर्षशील, आन्दोलनकारी, धर्मनिष्ठ कारकपुरुष ने अनेक साधु-पुरुषों, श्रीमानों, राजनेताओं आदि को असंख्यों पत्रादि भेजे होंगे जो स्वयं में महत्वपूर्ण ज्ञानप्रद एवं कल्याणकारी होंगे। न तो सम्पूर्ण पत्र सुरक्षित रखे जा सके न ही उनके संकलन का ही अभी तक प्रयास किया जा सका है। अतः विभिन्न अवसरों पर प्रेषित कतिपय पत्र जो हमें उपलब्ध हो सके, उन्हीं का प्रकाशन कर यहाँ सन्तोष करना पड़ रहा है; पाठकगण स्वयं पढ़कर देखें कि महाराज श्री किस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में अपने व्यक्तिगत पत्रों द्वारा लोगों को धर्म कार्यों में प्रेरित करते थे।]

श्री स्वामी करपात्री जी तथा श्री गाँधी जी का पत्र व्यवहार

१९-६-४७ न० दि०

श्री गोस्वामी जी,

स्वामी भास्करानन्द जी ने आपके बारे में मुझसे बातें की हैं। धर्मरक्षा के बारे में अगर आप आगामी मङ्गल या बुध को यहाँ पधार सकते हैं, तो हम वार्तालाप करसकते हैं पत्रोत्तर की प्रतीक्षा करूंगा।

आपका
मो०क०गाँधी,

***

स्वस्ति श्री गाँधी जी! नारायणस्मरण। श्रावण सुदी षष्ठी।

श्री स्वामी भास्करानन्द जी द्वारा आप का पत्र मिला। धर्मरक्षा के सम्बन्ध में वार्तालाप की अपेक्षा प्रथम पत्र द्वारा विचार अधिक उपयुक्त होगा, इससे आपसी दृष्टिकोण विज्ञात हो जायेंगे और आप के अमूल्य समय का अपव्यय न होगा। फिर सुविधानुसार मिलना भी सार्थक होगा। धर्म संघ की पाँच माँगो से आप अवगत ही होंगे। आपके भावानुसार कांग्रेसी स्वराज्य रामराज्य होगा। उसमें सबको सरल्, सस्ता न्याय मिलेगा। आप जानते हैं कि रामराज्य में एक कुत्ते को भी न्याय मिला था। ऐसी स्थिति में हम लोग न्याय से क्यों वंचित है?

भारत की अखण्डता का प्रश्न अब अवश्य जटिल है पर गोरक्षा का प्रश्न तो स्वतन्त्र भारत में गोवध-निषेध का नियम विधान-परिषद में मान लेने से हल हो सकता है। देशी राज्यों में यह है भी।

धर्म में हस्तक्षेप न करना भी कोई कठिन नहीं, विधान-परिषद में धार्मिक स्वतन्त्रता की घोषणा है ही, उसी के अनुसार, मुसलमान आदि के धर्म में हस्तक्षेप नहीं होता। परन्तु सनातन धर्म पर धर्म विरोधी कानूनों द्वारा बराबर आक्रमण होता है। मन्दिर-प्रवेश, असवर्ण-सगोत्र विवाह, तलाक आदि सामाजिक वस्तु नहीं अपितु धार्मिक हैं, क्योंकि धर्माधर्म का निर्णय अपने-अपने सम्प्रदाय कें धर्म ग्रंथों और धर्माचार्यों की व्याख्या पर ही निर्भर है। कुरान और बाईबिल के आधार पर जैसे इस्लाम तथा ईसाई धर्म के निर्णय अवलम्बित हैं, इसी तरह प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग अपने धर्माचायों द्वारा व्याख्यात धर्मग्रंथों से ही धर्म का निर्णय करें यही न्याय है। आत्मप्रेरणा आदि को धर्म में कोई प्रमाण नहीं मानते। इस तरह सनातन धर्म के आचार्यों और धर्मग्रंथों से निर्णीत वस्तु को धार्मिक न मानना और उसे सामाजिक मानकर तटस्थ या सरकार द्वारा उसमें हस्तक्षेप किया जाना सर्वथा अन्याय है।

बस, इन्हीं कुछ प्रश्नों पर विचार हो जाने से सब बातें सुलझ जायेंगी। आशा है आप विचार करने की उदारता दिखलायेंगे।

ह० करपात्री

***

श्री गोस्वामी जी, २४-७-४७

आपका पत्र मिला, धन्यवादँ

धर्मसंघ की पाँच माँग मैं जानता हूँ ऐसा ख्याल है। मुझे कहना पड़ता है कि सनातन धर्म की प्रचलित मान्यता से मैं सहमत नहीं हूँ।

गोरक्षा का नाम मैंने गोसेवा कहा है। कानून से गोसेवा कम होती है, गोरक्षण भी कम।

मेरा सारा जन्म धर्म रक्षा में गुजरा है और गुजर रहा है। धर्मशास्त्र समयानुसार फिरता रहता है, इसीलिए मेरा विश्वास है कि आप की प्रवृत्ति से जहाँ तक मैं समझता हूँ धर्म को हानि पहुँचती हैं।

सनातन धर्म में अस्पृश्यता को कुछ भी स्थान नहीं है। अगर वह रहे, तो मैं धर्म का नाश देखता हूँ। इतना मैंने संक्षेप में कहा।

आपका

मो० क० गाँधी

***

श्री हरि:

प्र. श्रावण सिताष्टमी

स्वस्ति श्री गाँधी जी! नारायण स्मरण।

सनातन धर्म की प्रचलित मान्यता से आप सहमत नहीं सो ठीक। मुझे आपको उसे मनवाना इष्ट भी नहीं। किंतु मेरा तो इतना ही कहना है कि जैसे ईसाई, मुसलमान आदि को अपने विश्वास के अनुसार ईसाई-इसलाम धर्म मानने और आचरण करने में स्वतन्त्रता है, वैसे ही सनातन धर्म की प्रचलित मान्यता से जो सहमत हैं, उन्हें अपने विश्वास के अनुसार धर्म मानने और आचरण करने में पूर्ण स्वतन्त्रता हो, कानूनी रुकावट न डाली जाय।

धर्मशास्त्र समयानुसार बदलते रहते हैं, इसमें आपका तात्पर्य स्मृतियों की अनेकता और विभिन्नता से है, किन्तु उनकी अनेकता और विभिन्नता परिवर्तन में नहीं, अपितु अनादि वेदादि शास्त्रसिद्ध तथा उनसे समस्त देश, काल, सम्पत्ति, सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि आदि भेदमूल और प्रथमत: सिद्ध तथा निर्णीत है। समयानुसार उनमें कभी किसी ने परिवर्तन नहीं किया और न कभी कोई कर ही सकता है। अन्यथा परिवर्तनवादी परिवर्तनकर्ता किसे कहेगा? यदि कहे कि हजारों पत्र-पत्रिका तथा करोड़ो व्यक्ति जिसे माने उसी को, सो ठीक नहीं, क्योंकि वस्तु के स्वरूप तथा फल का ज्ञान जिस प्रमाण से हो, उसी प्रमाण के आधार पर परिवर्तन हो सकता है धर्म के स्वरूप तथा फल का ज्ञान प्रत्यक्ष, अनुमान से नहीं हो सकता, क्योंकि धर्म को मानने वाले उससे स्वर्ग-नरक तथा परलोक और जन्मान्तर में सुख-दु:ख का होना भी मातने हैं। उनका ज्ञान किसी परिवर्तनकर्ता को कैसे हो सकता है, क्योंकि शास्त्रों के सिवा उसका दूसरा साधन ही नहीं। इसीलिये नेत्र से अज्ञात शब्द के ज्ञान के लिये श्रोत की तरह प्रत्यक्ष, अनुमान से अज्ञात धर्म को जानने के लिये शास्त्र है। यही कारण है कि प्रत्यक्ष अनुमित वाक्य शास्त्र नहीं। इसी से आत्म प्रेरणा को भी शास्त्र नहीं कह सकते। ''तस्माच्छास्त्रंप्रमाणंते'' यह गीता वाक्य और ''चोदनालक्षणोऽर्थोधर्म:''-यह मीमांसा सूत्र यही संकेत करते हैं। दूसरे, धर्मशास्त्र को बदलना धर्म को ही बदलना होगा। ऐसी दशा में बदले हुए धर्म का फल कौन देगा? मनुष्य कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, पर वह संसार के अनन्तातन्त प्राणियों के अनन्तानन्त धर्म तथा उनके फलों को नहीं ही जान सकता, फिर फल देने की बात ही क्या? इसीलिए ईश्वर को फलदाता मानना होगा? तब मनुष्य के परिवर्तित धर्म में ईश्वर की स्वीकृति चाहिये। उससे बिना करोड़ों मनुष्यों और हजारों पत्र-पत्रिकाओं के मान लेने पर भी वह धर्म नहीं कहा जा सकता। इसीलिये हम-सनातनी-सनातन परमात्मा ने सनातन जीवों के सनातन अभ्युदय-नि:श्रेयस प्राप्ति के लिये सनातन वेदशास्त्र से जो सनातन मार्ग बताया, उसी को सनातन धर्म कहते हैं। परस्पर विभिन्न दृष्टिकोण रखने वाले एक दूसरे की प्रवृत्ति से धर्म का नाश देखें इसमें आश्चर्य नहीं।

गोसेवा का भाव आप का श्रेष्ठ है और मैं भी इसका प्रचार करता हूँ। पर स्वतन्त्र भारत में हजारों बूचड़खानों का रहना क्या कलंक नहीं। फिर अनादि वेदशास्त्र सम्मत वर्णव्यवस्था, विवाह संस्था, मन्दिर मर्यादा और स्पर्शास्पर्श विवेक को कलंक कहकर कानून से नष्ट करना आवश्यक समझना, गो हत्या जैसे महापाप तथा कलंक को नष्ट करने के लिये कानून बनाना अनावश्यक समझना कितने आश्चर्य की बात है? पूर्वोक्त सिद्धांतानुसार आप यह सब न मानें, तो भी जो मानें, उन्हें अपने विश्वासानुसार स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

करपात्री

श्री हरिः

प्रथम श्रावण शु० ११,

स्वस्ति श्री गाँधी जी। जय धर्म।

पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का २५/७/४७ का पत्र आप को मिल चुका। किंतु आपका उत्तर न मिला। अतः उत्तर की प्रतीक्षा है। कृपया सूचित करें कि क्या विचार है।

भवदीय
चन्द्रशेखर शास्त्री
मन्त्री श्री स्वामी करपात्री जी
धर्म संघ, निगम बोध घाट, देहली।

***

श्री गोस्वामी जी महाराज, २९-७-४७

आप के अगले खत का जवाब नहीं दिया, क्योंकि उसमें बोध ही था। मुझे ज्यादा कहने जैसा न था, इसलिए समय बचा लिया।

आपका
मो० क० गाँधी

***

२० अक्टूबर १९४७ को आगरा जिला जेल से लिखा गया-

स्वामी श्री करपात्री जी का नेहरू जी तथा पटेल को पत्र

स्वस्ति श्रीयुत सरदार पटेल महोदय! आश्विनसित षष्ठी

तथा पण्डित जवाहर लाल नेहरु!

नारायण स्मरण।

ईश्वर की कृपा से आज आप के हाथ में देश का शासन है। अतएव, पहले की अपेक्षा जब आपका उत्तरदायित्व है। सुतरां मतभेदों, दलबन्दियों एवं व्यक्तिगत स्वार्थों और संघर्षो से अलिप्त रहकर सबके साथ न्याय करना ही आपका कर्तव्य है।

कांग्रेस तथा श्री गांधी जी के आदर्शभूत रामराज्य में एक नगण्य 'श्वान' की भी बात सुनी जाती थी इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर कुछ आवश्यक बातों की ओर आपका ध्यान आकृष्ट कर रहा हूं।

दिल्ली से चलने वाले अखिल भारतीय धर्मसंघ के आन्दोलन एवं उसकी गोवधबन्दी, भारत की अखण्डता, धर्म में हस्तक्षेप न हो, आदि पाँच माँगों से भी आप परिचित ही होंगे। दिल्ली की गड़बड़ी आदि से वह आजकल मथुरा में केवल गोवधबन्दी के लिए चल रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि आपको पूरा ध्यान है। तथापि दूसरों की भी बातें अवश्य विचारणीय हो सकती है। हम लोग कितने पहले से भारत की अखण्डता की मांग करते थे, विभाजन से होने वाले भयंकर परिणामों को बतलाते थे, परन्तु उसकी उपेक्षा की गई। परिणाम वही हुआ जो होना था। यही स्थिति गोवधबन्दी की भी है। आप जानते हैं, भारत के हिन्दू बहुमत गोवधबन्दी चाहते हैं। धार्मिक, आर्थिक किसी भी दृष्टि से विचार करें, उनकी मांग उपेक्षणीय नहीं हैं। विधान में यद्यपि धार्मिक, आर्थिक किसी भी दृष्टि से विचार करें, उनकी मांग उपेक्षणीय नहीं हैं। विधान में यद्यपि धार्मिक स्वतन्त्रा स्वीकृत की गई है, तथापि सनातनियों के धर्मों पर असवर्ण, सगोत्र, हिन्दू-विवाह, हिन्दूकोड, हरिजन मन्दिर प्रवेश आदि वर्ण व्यवस्था विध्वंसक अनेक कानूनों द्वारा बराबर आक्रमण किया जा रहा है। माना कि आप सनातनियों के सिद्धांतों से सहमत नहीं हैं, तथापि जब ईसाई, मुसलमान आदि को अपने धर्म के मानने और आचरण करने में स्वतन्त्रता है, तब हिन्दुओं पर धर्म विरुद्ध कानून क्यों लादे जा रहे हैं? हम यह भी जानते हैं कि आप लोग सनातनियों द्वारा की गई सनातन धर्म की व्याख्या नहीं मानते और धर्म की बातों को सामाजिक कहकर टालते हैं, फिर भी हमारा कहना है कि आप लोग राष्ट्रीय नेता है। जैसे आप के द्वारा व्याख्यात इस्लाम तथा ईसाई-धर्म, मुसलमान आदि को मान्य नहीं, किन्तु वे अपने धर्म-ग्रंथों तथा धर्माचायों के आधार पर ही धर्माधर्म की व्याख्या मानते हैं। आप की व्याख्या उन्हें मान्य नहीं है।

यदि हम यह भी मान लें कि आप हिन्दू हैं और हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में कुछ बोल सकते हैं, तो भी तथ्य यही है कि करोड़ों की संख्या में हिन्दू जनता अपने शास्त्रों और धर्माचार्यों में ही विश्वास करती है, वह आप की धर्मव्याख्या मानने को तैयार नहीं, फिर भी, अपने विश्वास के अनुसार अपना शास्त्र और धर्म क्यों न मानने दिया जाये और उस पर कानूनी हस्तक्षेप क्यों किया जाये? यदि वह ठीक है तो जहाँ धार्मिक स्वतन्त्रता की घोषण है, वहीं यह भी जोड़ दिया जाये कि धर्म की व्याख्या तत्तत्सम्प्रदायों के धर्माचायों और धर्मशास्त्रों के अनुसार मानी जाये। इसी तरह आप भारतीय शासन तथा सामाजिक व्यवस्था का एकदम पाश्चात्य ढंग में परिवर्तन करना चाहते हैं, यह भी भयंकर बात है। भारत की विशेषता वेद, उपनिषद, धर्मशास्त्र, दर्शन,

रामायण और महाभारत से विदित होती है। मनु, याज्ञवल्क्य, शुक्र, वृहस्पति, कणिक, कौटिलय आदि ने बड़ी गम्भीरता से यहाँ व्यवस्थाओं का निर्धारण किया है। उनका विचार तो अवश्य करना चाहिये।

यद्यपि आप लोगों के सामने शरणार्थियों की चिंता और देश रक्षा का प्रश्न सर्वाधिक है, तथापि यह विचार उन दिशाओं में लाभप्रद होगा। साथ ही जब आज ही विधान बन रहा है, केन्द्र तथा प्रांतों में सुधार के नाम पर सनातनी हिन्दुओं के धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन की हत्या की जा रही है, तब उनके लिये भी सबसे महत्वपूर्ण अवसर यही है। अतः उनकी अपेक्षा उचित नहीं। हम लोग वस्तुतः आप का हित चाहते हैं। ध्यान उधर आकर्षित करने के लिये ही आन्दोलन चला रहे हैं। क्या हम आशा करें कि आप सहृदयता और उदारता के साथ हमारी बातों पर विचार करके उचित घोषणा द्वारा हम लोगों को सन्तोष देगें और हम लोगों को आन्दोलन छोड़कर अपने सहयोग का अवसर देंगे?

आपका

करपात्री

(मासिक सन्मार्ग काशी वर्ष ९ अङ्क २, विक्रमी संवत २००४ से साभार उद्घृत)

***

श्री नेहरू को पूज्य स्वामी करपात्री जी का पत्र

स्वस्ति श्री प्रधानमन्त्री नेहरू जी,

नारायण-स्मरण।

हिन्दू कोड सम्बन्धी २९ नवम्बर १९४९ के आप के वक्तव्य को मैंने गम्भीर वेदना से पढ़ा जिसमें घोषणा है कि यह बिल सरकार के प्रति विश्वास या अविश्वास का प्रश्न है। उसे अधिकतम बहुमत से स्वीकृत कराये जाने का प्रयत्न किया जायेगा, पर यदि ऐसा न हो सका तो सरकार उसे इसी रूप में कार्यान्वित करेगी। आप के प्रश्नों पर क्रमशः विमर्श करता हूं।

वर्तमान धारा सभा में हिन्दूकोड बनाने के लिए मतदाताओं की अनुज्ञा कभी नहीं प्राप्त की गई और न मांगी ही। ऐसे सामाजिक कानून के अंश को जिस पर मतदाताओं को अपनी सम्मत्ति प्रगट करने का कोई अवसर न मिला हो, सरकार के लिए विश्वास अथवा अविश्वास का प्रश्न बना देना वैधानिक अत्याचार को स्थिर करना ही है। शासनारूढ़ सरकार को अपने संकेत पर नाचने वाले पिट्ठू मिल ही जाते हैं, किन्तु उन पिट्ठुओं द्वारा दी गई स्वीकृति कभी भी सार्वजनिक नहीं हो सकती और ऐसे संदिग्ध उपायों का आश्रय लेना नीतिमत्ता नहीं। आप की इस धमकी के दबाव से कि सर्वसम्भव समझौता न होने पर सरकार इसे इसी रूप में पास करेगी, हार्दिक सार्वजनिक स्वीकृति कभी सम्भव नहीं। हिन्दू-कोड-बिल,

हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू समाज की व्यवस्था के मूल पर कुठाराघात है। इसने देश मे तीव्र विरोध जागृत किया है: इसमें किसी को संदेह नहीं। प्रत्येक वर्ग के नर-नारी, धनवान-निर्धन, सभी ने खुल्लमखुल्ला इसकी निन्दा की है। सनातन धर्मी, आर्यसमाजी, सिक्ख, जैन आदि सभी मतों के अनुयायियों ने इसका संगठित विरोध किया है। हिन्दुओं के प्रति सरकार का सर्वप्रथम कर्तव्य गोवध को सर्वथा रोकना था। गौओं की हत्या हिन्दुओं के हार्दिक भावों को गहरी चोट पहुंचाती है। इन भावों की कठोर अवहेलना करते हुए सरकार ने न केवल गोवध जारी रखने की अनुज्ञा ही दी, प्रत्युत बम्बई में एक नया बूचड़खाना खोलने की अनुमति दी है। सरकार के इन और ऐसे ही कर्तव्य-शून्य एवं कर्तव्य-विरुद्ध कृत्यों से, जिनमें काश्मीर समस्या, उत्पीड़ित-समस्या और आर्थिक समस्या मुख्य है, जनता अत्यन्त क्षुब्ध है। आपको यह भी स्मरण होगा कि अप्रैल सन १९४७ में एक शांतिपूर्ण आन्दोलन 'धर्मयुद्ध' के नाम से चला था, जिसके उद्देश्यों में गोवधबन्दी, भारत-विभाजन का विरोध और अखण्डता की स्थापना तथा धार्मिक विषयों में सरकारी हस्तक्षेप न करना मुख्य थे। मथुरा म्युनिसिपिल कमेटी द्वारा गोवध बन्दी का प्रस्ताव स्वीकृत किये जाने और विशेषकर देश विभाजन अपनी नवजात स्वतन्त्रता की शिशु सरकार की कठिनाइयों का ध्यान रखकर यह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया। तब से सरकार के हाथ दृढ़ करने और गोवध बन्दी तथा हिन्दू कोड बिल के स्थगित करने की माँग वैधानिक रूप से सरकार के आगे रखने के लिए जनता को मैं प्रेरित करता रहा हूं। वैधानिक मार्गानुसार चलने का अनुरोध इसी विश्वास पर किया कि सरकार ऐसे मार्गों पर अवश्य ध्यान देगी और यदि सरकार हिन्दू कोड बिल रद्दकर गोवध बन्द कर दे तो मैंने स्वयं अपने आपको कांग्रेस प्रचार के रूप में गांव-गांव घूमने को उपस्थित किया है। किंतु सरकार की वज्रतुल्य कठोर नीति ने, जिसे धारा सभा के आपके वक्तव्य ने प्रकट कर दिया, मेरे विश्वास को तीव्र धक्का लगाया है। क्या वैधानिक आन्दोलन का कोई लाभ है, जबकि सरकार वैधानिकता काकुछ मूल्य ही न समझती हो, और धर्म निरपेक्ष कही जाने वाली सरकार जनता के सबसे बड़े भाग के धार्मिक कानूनों में हस्तक्षेप करने को कटिबद्ध हो, एवं एक कामचलाऊ धारा सभा देश के करोड़ों लोगों के जीवन से सम्बद्ध धार्मिक विषयों में कानून बनाना अपना अधिकार मान लें?

इसलिए मैं स्पष्ट व्यक्तिगत निवेदन आप से करता हूं कि जनता की मांग को स्वीकार करें और हिन्दू कोड बिल को लौटा लें तथा गोवध बन्द कर दें। मैं उन लोगों की करुण पुकार आप के कानों तक पहुँचा रहा हूं जो आप को प्यार करते हैं और जिन्होंने इनते ऊँचे पद पर बैठाया है। मैं हार्दिक निवेदन करता हूं कि आप इस पुकार पर उचित ध्यान दें और इसके अनुकूल कारवाई करें। दुर्भाग्यवश आप ने कुछ नहीं किया तो अपने

हृदय में गम्भीर निराशा रख मुझे जनता को शांतिपूर्ण अहिंसात्मक आन्दोलन करने का आदेश देने पर विवश होना पड़ेगा, जिससे लोकतन्त्र विरुद्ध धर्मनिरपेक्षतारहित और उत्तरदायित्व-शून्य सरकार के हृदय को जनता के कष्ट और तपस्या से पिघलाया जा सके। मैं यह पत्र अपने देश, अपनी सरकार और समस्त विश्व पर मंडराने वाली विपत्तियों के निवारण और सबके कल्याण की भावना से प्रेरित होकर आप को भेज रहा हूँ।

आपके ही देश की सेवा के लिए-

-करपात्री स्वामी

(सन्मार्ग मासिक वर्ष ११ अंक ४, माघ विक्रमी संवत् २००६ से उद्धृत)

***

श्री स्वामी करपात्री जी को १९४८ में गिरफ्तार करके बनारस जेल में डाल दिया गया। आरोप था 'इनके भाषणों से शांति भङ्ग होने का भय है।' 'जन सुरक्षा कानून' के अन्तर्गत बिना मुकदमा चलाये, बिना आरोप-पत्र दिये कारागार में बन्द कर दिया गया। बनारस के मजिस्ट्रेट ने यह भी बतलाने की औपचारिकता नहीं समझी कि उनके आपत्तिजनक भाषण कब और कहाँ हुए थे। मजिस्ट्रेट द्वारा स्वामी जी को जो लिखित नोटिस मिली उसके उत्तर में जो पत्र महाराज ने बनारस सैन्ट्रल जेल से बनारस के जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर सिन्क्लेयर डे को लिखा उसे यहाँ अविकलरूप से दिया जा रहा है-

''जनसुरक्षा विधान'' की ५वीं धारा के अन्तर्गत दी गई आप की २१-२-४८ की नोटिस मुझे सेन्ट्रल जेल, बनारस में २३-३-४८ को प्राप्त हुई और उक्त नोटिस में दिये हुये निर्देश के अनुसार आप के समक्ष मेरा निम्मलिखित निवेदन है-

(१) मैं एक दण्डी सन्यासी हूँ और हिन्दू शास्त्रों के अनुसार ही मैं हिन्दू जनता को उपदेश देता हूँ। धर्म प्रचार के लिए मैंने एक 'धर्मसंघ' नामक संस्था स्थापित की है, जिसके लक्ष्य और उद्देश्य हैं- (क) धर्मवृद्धि (ख) अधर्म-निवृत्ति (ग) विश्वकल्याण (घ) प्राणिमात्र में सद्भावना

(२) मेरे समस्त व्याख्यान और लेख उन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये होते हैं। आप के नोटिस में लिखे गये कारण कि 'मेरे भाषणों में हिंसात्मक कार्य तथा शांति भङ्ग की आशंकाहै,' इससे मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। अवश्य ही मेरे भाषणों के विषय में कोई भ्रांतिपूर्ण भाव आप के हृदय में उत्पन्न कर दिया गया है।

(३) मेरे भाषण तथा लेख, जो धर्मसंघ के कार्यालय से प्राप्त होंगे, देखने से आपको विश्वास हो जायेगा कि मेरे भाषणों से कदापि हिंसात्मक तथा शांतिभङ्ग की मनोवृति को उत्तेजना नहीं मिलती।

(४) मैंने सदा देशकालजन्य परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए 'धर्मसंघ' के आन्दोलन को चलाया। प्रयाग के 'धर्मसंघ-महाअधिवेशन' में ६-२-४८ को अपने भाषण में मैंने घोषित किया था कि अपनी सरकार से हमारी लड़ाई माता से दूध मांगन

के लिये बच्चे की और पिता से गृह में सुविधा मांगने की लड़ाई है। सम्प्रति उत्पन्न विकट परिस्थिति पर ध्यान देते हुये हमने धर्मयुद्ध आन्दोलन कुछ काल के लिये स्थगित कर दिया है।

(५) जेल में मेरा बन्द रहना या बाहर रहना, दोनों ही मेरे लिये समान हैं, किन्तु यह लाञ्छन कि 'मेरे भाषणों के द्वारा समाज में हिंसा प्रवृत्ति या अशांति बढ़ने की आशंका हो रही है, दु:खद और असह्य है। आप स्वयं विचार करें कि जिस व्यक्ति का व्रत ही विश्वकल्याण तथा प्राणिमात्र में सद्भावना है, उसके प्रति ऐसी आशंका कि 'उसके भाषण से हिंसा और शांति भङ्ग को उत्तेजन मिलेगा'- कितना दु:खद है।

(६) यदि मनुष्य के पूर्ववत् विचार या कार्य से उसके भविष्य का कोई संकेत होता है, तो यह बतलाना आवश्यक समझता हूँ कि जब मेरा शांतिमय आन्दोलन दिल्ली में चलता था, जिसमें आन्दोलनकारियों ने घोर कष्ट सहन किया तथा कई एक व्यक्ति इसी में मर भी गये और देश-विदेश में इसका समर्थन भी होता रहा ऐसी स्थिति में जब कोई शांति भङ्ग नहीं हुई, तब आन्दोलन स्थगित रखने की घोषणा के बाद शांति भङ्ग की शंका मेरे प्रति करना अत्यन्त अनुचित है।

(७) मेरा कथन भी विचारणीय है कि जिस कांग्रेस ने भाषण-स्वातन्त्र्य शासन के लिये देश में घोर आन्दोलन बलिदान किया, उसी कांग्रेस के शासनाधिरूढ़ सरकार से भाषण स्वातन्त्र्य पर कुठाराघात तथा उसका अपहरण ही बड़ा दु:खद है।

(८) अपने प्रचार कार्य में धर्मसंघ के लक्ष्यों से सम्बद्ध सरकारी नीति की आलोचना आवश्यकतानुसार मैंने अवश्य की है और इसी कारण से मेरे ऊपर ऐसा प्रतिबन्ध लगाया गया है-ऐसा विश्वास नहीं होता, क्योंकि वे आलोचनाएँ सर्वदा संयत और भाषण स्वातन्त्र्य-सीमा के अन्तर्गत थी। तथापि यदि ऐसी आलोचना ही मेरे जेल में रखने का कारण हो, तो मैं अपनी स्वतन्त्रा से वंचित रह कर सदा ही जेल में रहना पसन्द करूंगा। अतएव मेरा अनुरोध है कि आप अपनी शंका जो मेरे सम्बन्ध में उत्पन्न की गई है, निर्मूल और भ्रांतिजन्य समझें और अपने आदेश पर पुन: विचार करें।

***

: श्री हरि :

१४-४-५४

सम्मान्य श्री स्वामी जी महाराज,

सादर अभिवादन।

कई दिनों से आपको पत्र लिखने का विचार कर रहा था, आज लिख रहा हूं। आप से मिलने का मुझे कभी अवसर नहीं मिला। अस्पृश्यता-निवारण का प्रश्न भी उस सम्मान को मेरे हृदय से दूर नहीं कर पाया, जो आपके तपोमय आध्यात्मिक जीवन

के प्रति बना हुआ है। मैं जानता हूं कि मुझसे कहीं अधिक ही आप के करुणा-विगलित हृदय में हरिजनों के प्रति प्रेम-भाव होगा। आप का जीवन विभिन्न शास्त्रों के अध्ययन से नहीं, किन्तु एकांत साधना और तपश्चर्या से बना है। मैं इस आशा का त्याग कैसे कर दूं कि एक दिन आप स्वयं ही पूर्वकाल के सन्त पुरुषों की भाँति हरिजनों को अपने हृदय से लगा कर और उनका हाथ पकड़ कर श्री विश्वनाथ-मन्दिर में ले जाएंगे? यह निवेदन मैं शास्त्रज्ञ स्वामी जी से नहीं, किन्तु ब्रह्मविहार करने वाले एक सन्त पुरुष से कर रहा हूं। मुझे विश्वास है कि आप में पूर्व ऋषियों की भांति काल की गति को देखते हुये शास्त्र-ग्रंथों में आवश्यक संशोधन कर देने की भी शक्ति है। आप घोषणा कर दीजिये कि आगामी प्रदोष के दिन आप हरिजनों को स्वयं अपने साथ ले जा कर भगवान शिव का दर्शन और पूजन करायेंगे। आप धर्म-संशोधन के अधिकारी हैं, इसलिये आज इस पत्र द्वारा इतना निवेदन किया।

इस पत्र को मैं प्रकाशित नहीं कर रहा हूं, आवश्यकता भी नहीं है। यदि मेरे निवेदन को आप चरितार्थ करें और उचित समझें, तब अपने उत्तर के साथ और मुझसे पूछकर प्रकाशित करा सकते हैं।

आपका

स्वामी करपात्री जी महाराज,
काशी

हस्ता० वियोगी हरि
प्रधान मन्त्री

***

श्री हरिः

गंगातरंग, नगवा, काशी
दिनांक : २३-४-५४

स्वस्तिश्री प्रिय वियोगी जी

हरिस्मरणम्।

आपका स्नेह-पत्र प्राप्त हुआ। आशा है आप स्वस्थ एवं प्रसन्न होंगे। बहुत दिन हुये व्रजमाधुरी सार और विनयपत्रिका पढ़ने को मिली थीं। तभी से मैं आपके भावुक हृदय से परिचित हूं।

मन्दिर प्रवेश सर्वथा शास्त्रीय विषय है। किन्तु खेद है कि इस दृष्टि से आप लोगों ने कभी इस पर विचार नहीं किया। फलतः राष्ट्र को अनेक आपत्तियों का सामना करना पड़ा और पड़ रहा है। 'सन्मार्ग' द्वारा आप मेरी बातें अवश्य सुनते रहे हैं, किन्तु उस पर कभी अपने विचार प्रकट नहीं किये। जो हुआ सो हुआ, जहाँ तक मन्दिर-प्रवेश का लक्ष्य है, वह एक प्रकार से पूरा ही हो गया। देश के प्रायः सभी विख्यात मन्दिरों में हरिजनों का प्रवेश हो चुका है। श्री विश्वनाथ-मन्दिर आदि जैसे कुछ मन्दिर ही बचे है। यदि ऐसे कुछ मन्दिर

शास्त्र-विश्वासी सनातनधर्मियों के लिए छोड़ दिए जाएँ, तो इससे हरिजनों की भक्ति में कोई कमी नहीं आती।

हरिजन बन्धु धर्माचरण में निरत हों, यह मेरे लिए सुख की बात है। श्री विश्वनाथ-मन्दिर के पूर्व वाले झरोखे को बड़ा बनवा कर सुन्दर व्यवस्था कर दी गई है। रही समानता की बात, तो उनके सन्तोष और सम्मान के लिये काशी के प्रमुख, विद्वान, महाराज काशी-नरेश और हम लोग उसी झरोखे से दर्शन करने के लिये लिखित प्रतिज्ञा करने को तैयार हैं। उनके प्रति हम अपने हृदय का स्नेहभाव किस प्रकार व्यक्त करें। इस आधार पर जटिल समस्या सन्तोषजनक रीति से सुलझाई जा सकती है। विचार-विनिमय होने से उचित मार्ग निकाला जा सकता है।

कवियों, महर्षियों और सन्त-महात्माओं ने वेदादि शास्त्रों के आधार पर ही धर्म-ब्रह्म का साक्षात्कार माना है। वेद अपौरुषेय होने से भ्रम-प्रमाद-विप्रलिप्सा-करणापाट-वादि समस्त पुंदोष-कलंक-पंक शून्य हैं, अतः वे त्रिकालमय एवं अपरिवर्तनीय हैं। सर्वभूत हितपरायण उदारचेता सत्पुरुषों की यही सनातन मान्यता रही है। वेदोक्त धर्म की ही रक्षा और संस्थापना करने के लिये राम, कृष्ण आदि रूपों में भगवान का आविर्भाव हुआ है। प्राणिमात्र परमेश्वर की पवित्र सन्तान है। किसी की अवहेलना या अपमान करना परमेश्वर का ही अपमान है। स्वधर्मनिष्ठ भगवद्भक्त अंत्यज श्रेष्ठ है, स्वधर्मविमुख भगवद्भक्ति शून्य ब्राह्मण भी निकृष्ट है। स्वधर्मच्युत भगवद्विमुख ब्राह्मण को नरकगामी होना पड़ता है। स्वधर्मारूढ भगवद्भक्त अंत्यज भी भगवद्धाम प्राप्त करता है। परन्तु सर्वत्र शास्त्रानुसार स्वधर्मनिष्ठा और भगवद्भक्ति अनिवार्य है। 'वर्णाश्रम निज, निज धर्म निरत वेद पथ लोग' (सन्त तुलसीदास) विनयशील, श्रद्धालु आस्तिकजनों की यह दृढ़ मान्यता है। शास्त्र के अनुशासनानुसार जीवनयापन करना सभी के लिये कल्याण का हेतु माना गया है। धर्मवेत्ता महापुरुषों का यही उपदेश होता चला आया है।

भक्तों का मुख्य कर्तव्य तो भगवदाज्ञा का पालन करना ही है। श्रुति और स्मृति के रूप में हमें साक्षात् भगवान् की आज्ञा प्राप्त होती है।

"श्रुतिस्मृति ममैवाज्ञे यस्ते उल्लंघ्य वर्तते।
आज्ञोच्छेदी ममद्रोही मद्भक्तोऽपि न वैष्णव।।"

स्वयं भगवान् कृष्ण ही कहते हैं "तस्माच्छास्त्रं प्रमाणै, कार्याकार्य व्यवस्थितो ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तु मिहार्हसि।" फिर पाषाणमयी, धातुमयी, मूर्तियों को देवबुद्धि से पूजन की श्रद्धा शुद्ध शास्त्रानुसारिणी ही है, अन्यथा वह अन्धश्रद्धा होगी। अन्धश्रद्धा सर्वथा त्याज्य है, तब उसका यथावत् पालन करना ही उचित और न्याय्य है। शास्त्रमर्यादानुसार हरिजन बन्धुओं के लिए भगवान् के दर्शन की व्यवस्था कर दी गई है। उनके वास्तविक हित के लिये हम लोग अपना अहित भी सहने को तैयार है। स्वयं आपका हृदय भी भक्तिभाव से परिपूर्ण है। जिस धर्म की संस्थापना के लिये प्रभु

अवतीर्ण होकर दण्डक वन में नंगे पांवों घूमते हैं, दण्डक के कण्टक उनके कोमल चरणारविन्दों में आविद्ध होते हैं, फिर उनके भक्त धर्मरक्षार्थ क्या करें?

शुभचिन्तक

हस्ता० करपात्री (स्वामी)

स्वामी जी और प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गान्धी का पत्राचार

[पूज्य स्वामी जी पर हुये सांघातिक आक्रमण पर प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने जो खेद-प्रकाशपरक पत्र लिखा और पूज्य स्वामी जी ने उसका जो उत्तर लिखा, वह निम्नलितख है। –संपादक]

प्रधानमन्त्री का पत्र

'तिहाड़-जेल की शोकमयी घटना सुनकर मेरे को आघात पहुंचा है। आपको तथा अन्य साथियों को चोटें आयीं, यह जानकर हमें खेद है तथा आप सभी के प्रति मेरी सहानुभूति है। मैं आप तथा घायल व्यक्तियों के उत्तम स्वास्थ्य की कामना करती हूं। आशा है, घटना की देखभाल ठीक तरह से हो रही होगी।'

(३-७-१९६७)

***

स्वामी श्री करपात्री का उत्तर

'आपका ३ जुलाई का पत्र मिला। तिहाड़-जेल में हमारे और अन्य साधुओं के आहत होने की घटना सुनकर आपके मन को आघात एवं खेद हुआ तथा आपने सहानुभूमि व्यक्त की इस सौजन्य का हम पर प्रभाव हुआ। कदाचित् आप अपनी आँखों से आहत सत्याग्रहियों को देख लेती, जो जीवन भर के लिये बेकार कर दिये गये हैं, तो इससे आपको और आघात होता। इस घटना के जो भी जिम्मेदार हैं, उनकी यह अमानुषिकता एवं नृशंसता सर्वथा अनावश्यक थी। सत्याग्रही आध्यात्मिक कार्यक्रमों में रत थे।

इस प्रकार की घटना की पुनरावृत्ति रोकने के लिये यह आवश्यक है कि और हम आशा भी करते हैं कि आपके द्वारा इस घटना की पूरी और निष्पक्ष न्यायिक जांच करायी जायेगी और जो भी दोषी सिद्ध हों, उन्हें समुचित दण्ड दिया जायेगा। हम सभी को यथार्थ सन्तोष तो तब होगा, जब आपके प्रयत्नों से गोमाता के प्राणों का संकट दूर हो।'

***

श्री हरिः

हिन्दू महासभा भवन, मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली।

अनन्त श्री विभूषित श्री मन्निम्बार्काचार्य वर्य्येषु श्री श्री जी महाभागेषु सर्वेश्वर स्मरणम्।

आप श्री के पत्र से आपकी अगाध सहृदयता धर्म-तत्परता अनुभव करके बड़ी प्रसन्ता हुयी। इधर सब ठीक है, प्रयत्न चल रहा है, सफलता प्रभु पर ही निर्भर है। निर्वाचन आदि के सम्बन्ध में यदि सम्भव हो तो रामराज्य परिषद से अथवा स्वतन्त्र खड़ा करके उसका समर्थन किया जाय-इसीलिए संयुक्त मोर्चा भी बना है।

करपात्री स्वामी

[पूज्य आचार्य चरण का सलेमाबाद राजस्थान में बड़ा ही उच्च स्थान है, पाठक विचार करें कि किस प्रकार व्यक्तिगत पत्र लिख-लिखकर वह धार्मिक महापुरुषों को रामराज्य परिषद आदि में भाग लेकर धर्म रक्षार्थ प्रेरणा देते रहे। क्या ही अच्छा होता कि सम्पूर्ण भारतवर्ष के साधु-सन्यासी, महन्त, धर्माचार्य इस हिन्दू जाति को कर्मठता का पाठ पढ़ाने एवं धार्मिक गतिविधियों के साथ-साथ राजनीतिक हलचलों में भी सोत्साह भाग लेने के लिये प्रेरित करते तो आज भारत अध्यात्मप्रधान विश्व कल्याणकारी राष्ट्र होता।]

श्री हरिः

जीवन् मुक्त महात्माओं पर शास्त्र का शासन नहीं होता एतस्य कृतकृत्यत्वात् शास्त्रं अस्मात निवर्तते- प्रथम कोटि साधक यथाविधि श्रौत-स्मार्त्त कर्मों का अनुष्ठान करके उपासना द्वारा चित्त दोषों का निराकरण करता है, पुनः श्रवण मनन और निदिध्यास के द्वारा ब्रह्मात्म साक्षात्कार सम्पादन करता है। वह तब जीवन् मुक्त या स्थितप्रज्ञ होता है-इस क्रम से कर्म एवं उपासना में पूर्व मीमांसा, श्रवण में उतर मीमांसा, मनन में न्याय-वैशेषिक तथा निदिध्यासन में सांख्य और योगदर्शन का कार्य समाप्त हो जाता है। इस तरह कृतकृत्य जीवन् मुक्त का अपना कुछ भी प्रयोजन न रहने से यद्यपि उस पर शास्त्र का नियन्त्रण नहीं होता, शास्त्र उससे निवृत्त हो जाता है तथापि पूर्वाभ्यास के कारण उससे यथायोग्य कर्म एवं उपासना होते रहते हैं। श्री मधुसूदन सरस्वती जी कहते हैं-

'अद्वेष्ट्टत्वादिवत्तेषां स्वभावो भजनं हरेः'। जैसे उनमें स्वभाव से ही अद्वेष्ट्टत्वादि गुण रहते हैं उसी प्रकार भगवान् का भजन करना भी उनका स्वभाव ही होता है। जगद्‌गुरु जी इसी कोटि के स्थितप्रज्ञ महात्मा थे।

करपात्र स्वामी

शिवरात्रि सं० २०३३ विक्रमी

***

[उक्त पत्र धर्म सम्राट् पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने ज्योतिष्पीठ के जगद्‌गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज के प्रति भावाभिव्यक्त करते हुये धर्म संघ प्रकाशन मेरठ को स्वयं अपने हाथ से लिखा था।]

***

श्री हरिः

स्वस्ति श्री चरणसिंह जी नारायण स्मरण।

भगवत्कृपा से जन प्रतिनिधि सरकार केन्द्र में सत्तारूढ़ हुयी है। कांग्रेस शासन में गोवधबन्दी के लिये कितने-कितने प्रयास किये गये वह सर्वविदित है। यद्यपि अनेक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय प्रश्न आज सरकार के सामने हैं जिनके निस्तारण में आप अहर्निश जुटे हैं, परन्तु कृषक वंशोत्पन्न होने के नाते आप गोवंश के महत्व की भली प्रकार समझ सकते हैं। पिछली सरकार कभी राजनैतिक तो कभी धार्मिक बखेड़े खड़े करके जन-जन की इस पुकार को निरन्तर तीस वर्षों से अनसुनी करती रही है, यह आपसे छिपा नहीं है। आज इस कृषि प्रधान देश भारत में एक किसान का बेटा स्वराष्ट्र मन्त्री के पद पर आसीन है अतः किसानों के मन में गोवंश की रक्षा की आशा बलवती होना स्वाभाविक है। अन्य बड़ी-बड़ी समस्याओं के बीच गोवध बन्दी का प्रश्न विस्मृत न हो जाये, अतः यह पत्र लिखा जा रहा है।

आशा है अपने प्रभाव का समुचित प्रयोग करके भारत राष्ट्र से गो हत्या का कलंक मिटवाने में हार्दिक रूचि लेगें। इस विषय में विचारहेतु कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं:-

(१) यद्यपि भिन्न-भिन्न प्रान्तों द्वारा गोहत्या बन्दी सम्बन्धी कानून बने हुये हैं, परन्तु उन पर कड़ाई से पालन नहीं किया जा रहा है। केन्द्र की ओर से प्रत्येक राज्य के मुख्यमन्त्री को आदेश भिजवाये जायें।

(२) अ० भा० स्तर पर संविधान में उल्लिखित ४८ धारा के अन्तर्गत सम्पूर्ण गोवंशहत्या निषेध कानून शीघ्र पारित करने का प्रयास किया जाये।

(३) देश से गोमांस निर्यात पर तत्काल कठोरतापूर्वक प्रतिबन्ध लगाया जाये तथा भारत सरकार द्वारा प्रकाशित निर्यात वस्तुओं की सूची में 'गोमांस' का शब्द तत्काल निकाला जाए।

(४) विभिन्न प्रान्तों से कलकत्ता/बम्बई आदि स्थानों को भारी संख्या में गो इत्यादि दूध देने वाले पशु भेजे जाते हैं जो एक वर्ष के अन्दर दूध बन्द होते ही काट दिये जाते हैं। इस प्रकार राष्ट्र की बड़ी हानि हो रही है और घी दूध की मंहगाई बढ़ रही है। अतः इस पर रोक लगायी जाये।

(५) वर्तमान मशीनी कसाई खाने जिनमें बड़ी संख्या में दैनिक गोवंश काटा जाता है तुरन्त बन्द किये जाये तथा नये बनने वाले मशीनी कसाईखानों का निर्माण रोका जाये जैसा कि गोवा राज्य में नया मशीनी कसाईखाना करोड़ों की लागत से निर्माण किया जा रहा है।

(६) जिन राज्यों में गोहत्या बन्दी कानून बने हैं उन राज्यों से ऐसे राज्यों को जहाँ मशीनी बूचड़खाने स्थापित हैं जिनमें सहस्त्रों की संख्या में पशुधन नित्य कटने

हेतु वहाँ भेजे जाते हैं–उस पर प्रतिबन्ध लगाया जाये तथा उनके पालन की व्यवस्था सम्बन्धित राज्य में ही की जाये।

नारायण स्मरण पूर्वक
करपात्री स्वामी

***

टिप्पणी:– जनता सरकार के शासन काल में उक्त आशय के पत्र अनेक अन्य जननेताओं को स्वामी जी द्वारा पृथक–पृथक रूप से भेजे गये जिनमें गोवध बन्दी हेतु अनुरोध किया था। ग्रन्थ के कलेवर की दृष्टि से यहां सब पत्रों का प्रकाशन अशक्य है। अतएव उन महानुभावों के नाममात्र यहाँ देकर सन्तोष करना पड़ रहा हैं यथा :–

१. श्री मुरारजी देसाई प्रधानमन्त्री भारत सरकार।
२. श्री सुबह्मण्यम् स्वामी।
३. श्री चन्द्र शेखर अध्यक्ष जनता पार्टी, जन्तर मन्तर रोड़, नई दिल्ली।
४. श्री मन्नारायण अग्रवाल अध्यक्ष, गान्धी स्मारक निधि, वर्धा।
५. श्री राजनारायण स्वास्थ्य मन्त्री, नयी दिल्ली।

***

श्री हरि:

प्रयाग २५, जनवरी, १९७७

स्वस्ति श्री सन्त शरण वेदान्ती नारायण स्मरण।

ब्रह्मचारी जी को खूब अच्छी तरह कानूनी ढंग से पर्चा भरना चाहिये, फिर तुम्हें भी डमी कैन्डीडेट की हैसियत से पर्चा भरना चाहिये बाद में उठा लेना चाहिये। चम्पाबाई के यहाँ एक पं० छविनाथ ब्राह्मण रहते हैं वे भी खड़े होते हैं प्रयाग के आसपास से, उन्हें भी खड़ा करना चाहिये। बिहार से भी किसी को खड़ा करना चाहिये। इधर प्रयाग में परिषद के अध्यक्ष से भी वासुदेव शास्त्री को बात करके उन्हें या किसी अन्य व्यक्ति को खड़ा करना चाहिये।

करपात्र स्वामी

[रामराज्य परिषद की ओर से सन् १९५२ एवं १९५७, ७७ के चुनावों में प्रत्याशी खड़े किये गये थे। रात–दिन घूम–घूमकर महाराज जी ने व्यापक यात्राएँ भी की थी, तथा प्रमुख व्यक्तियों को पत्र भी लिखकर भी प्रेरित किया था। श्री सन्त शरण वेदान्ती जी को प्रेषित ऐसे ही एक पत्र की यहां पाठकों की जानकारी हेतु दिया जा रहा है पाठक स्वयं देखें कि किस प्रकार स्वामी जी प्रत्याशियों के चयन में एवं उन्हें खड़ा करने में वीतराग संन्यासी होते हुये भी, जनकल्याण एवं धर्म भावना के प्रयोजन से स्वयं पत्र लिख–लिखकर उत्साहित करते थे।]

***

श्री हरिः

ब्रह्मीभूत जदग्गुरु श्री शंकराचार्य अनन्त श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज अत्यन्त महत्वपूर्ण महापुरुष थे। शंकराचार्य पद ने उन्हें गौरवान्वित नहीं किया अपितु उन्होंने उस पद को गौरवान्वित किया। जैसे मठाम्नाय में लिखा है कि जो व्यक्ति सिंहासन को काँटा समझता हो वही उस पद का अधिकारी हो सकता है तो वास्तव में जीवन भर वे इसी भावना से उस पद को सुशोभित किये।

जगद्गुरु जी धर्म और आध्यात्मिकता की जीवनमूर्ति थे। आचार एवं विचार का उनमें अद्भुत समावेश था। चरित्रमय यह 'जगद्गुरुगौरव' स्मृति ग्रन्थ भगवत् चरित्र जैसा ही परम आदरणीय और पठनीय है।

स्मृति-ग्रन्थ का प्रकाशन करने वाले पं० श्री श्यामसुन्दर वाजपेई एवं उनके सहयोगी अत्यन्त धन्यवादार्ह हैं।

करपात्र स्वामी

[रुग्ण होने के कारण 'जगद्गुरुगौरव' ग्रंथ के प्रकाशन समारोह मे धर्म सम्राट स्वयं नहीं पधार सके थे। अपने प्रतिनिधि श्री ब्रह्म चैतन्य ब्रह्मचारी को पत्र लेकर काशी से मेरठ भेजा था। उसी पत्र को यहाँ यथावत् प्रस्तुत किया है।]

***

श्री हरिः

धर्म संघ प्रकाशन मेरठ द्वारा 'जगद्गुरुगौरवम का प्रकाशन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न आचार्यों, सन्तों एवं विद्वानों के माध्यम से भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं धर्म ब्रह्म सम्बन्धी बहुत सामग्रीयों का इसमें संकलन हो सका है। इसमें जगद्गुरु स्वामी श्री कृष्ण बोधाश्रम जी के दिव्य चरित्रों का भी संकलन है, जो स्वयं में महत्वर्पूण है। भगवत्व्-प्राप्त भगवद्भक्त साक्षात् भगवत्स्वरूप ही होता है, उनका चरित्र भगवच्चरित्र है। जैसे भगवच्चरित्र के चिन्तन का महत्व है उससे भी अधिक भगवद्भक्त चरित्र चिन्तन का महत्व है।

''या निर्वृत्ति स्वनुभृतां तव पादपद्म ध्यानाद्भवज्जन कथा श्रवणे न वास्यात्। सा ब्रह्मणि स्वमहिमन्यपि। '' -श्री भागवते

करपात्र स्वामी

[धर्म संघ प्रकाशन मेरठ द्वारा ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी श्री कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज की स्मृति में प्रकाशित स्मृति ग्रंथ 'जगद्गुरुगौरव' पर अपनी विचाराभिव्यक्ति करते हुये धर्मसम्राट ने उक्त स्वलिखित पत्र प्रकाशन को भेजा था जिसकी अविकल रूप से यहाँ दिया गया है।]

सन् ७७ में कांग्रेस सरकार के पतन के पश्चात केन्द्र में जनता सरकार बनी। तब स्वामी जी को आशा बंधी के अब गोवध बन्दी हेतु केन्द्रीय कानून बन जायेगा। इसके लिए उन्होंन प्रयास भी किये, प्रतिनिधि मण्डल मिले, सभाएँ की तथा देश के भाग्यविधाता बने विभिन्न राष्ट्रीय स्तर के नेताओं को व्यक्तिगत पत्र भेजकर गोवध बन्दी की अपनी मांग प्रस्तुत की। इन नेताओं में भी श्री मुरार जी देसाई, प्रधानमन्त्री, श्री चरण सिंह वित्त मन्त्री, श्री अटल बिहारी वाजयेयी विदेश मन्त्री, श्री एच० एम० पटेल गृह मन्त्री, श्री राजनारायण स्वास्थ्य मन्त्री भारत सरकार एवं श्री चन्द्र शेखर अध्यक्ष जनता पार्टी सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त शासन के बाहर के प्रभावशाली महानुभावों को भी पत्र लिखकर स्वामी जी ने अनुरोध किया था कि वह सरकार पर अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए इस पुनीत कार्य में योगदान दें। सभी पत्रों का प्रकाशन यहाँ अभीष्ट भी नहीं है। कभी सम्भव हुआ और श्री महाराज के गत ५० वर्षों में विभिन्न व्यक्तियों, भक्तों, नेताओं, महात्माओं आदि को विभिन्न प्रसंगों एवं अवसरों पर लिखे गये पत्रों का संकलन किया जा सका तो उनका प्रकाशन पृथक से करने का प्रयास किया जायेगा। इस निवेदन के साथ थोड़े से इन पत्रों के प्रकाशन से ही पाठकगण सन्तोष करेंगे, ऐसा विश्वास है।

***

जाकी
रही
भावना
जैसी

वाङ्मयी उद्गार

एक मंच पर धर्म सम्राट करपात्री जी महाराज एवं तत्कालीन जगद्गुरु पुरी पीठाधीश्वर निरंजन देव तीर्थ जी महाराज बीकानेर में सम्मेलन के अवसर पर सन् 1978 में

धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी महाराज नित्य पूजन करते हुए

करपात्री जी महाराज सांयकाल रोज रुद्राभिषेक करते हुए

स्वामी करपात्री जी द्वारा विरचित 'वेदार्थपारिजात' के उद्घाटन के अवसर पर

(बायें से) श्री हनुमानप्रसादजी धानुका, काशिराज श्री विभूतिनारायण सिंह, श्री सत्येन्द्रकुमार गुप्त (सम्पादक,आज) आचार्य बदरीनाथजी शुक्ल (कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय) तथा आचार्यश्री पट्टाभिराम शास्त्री

अनन्त श्री स्वामी करपात्रीजी – अपने भक्तजनों के साथ

(दाहिने) जगद्गुरु शंकराचार्य ब्रह्मलीन स्वामी श्री निरंजनदेव तीर्थ

(बायें) जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्दजी सरस्वती

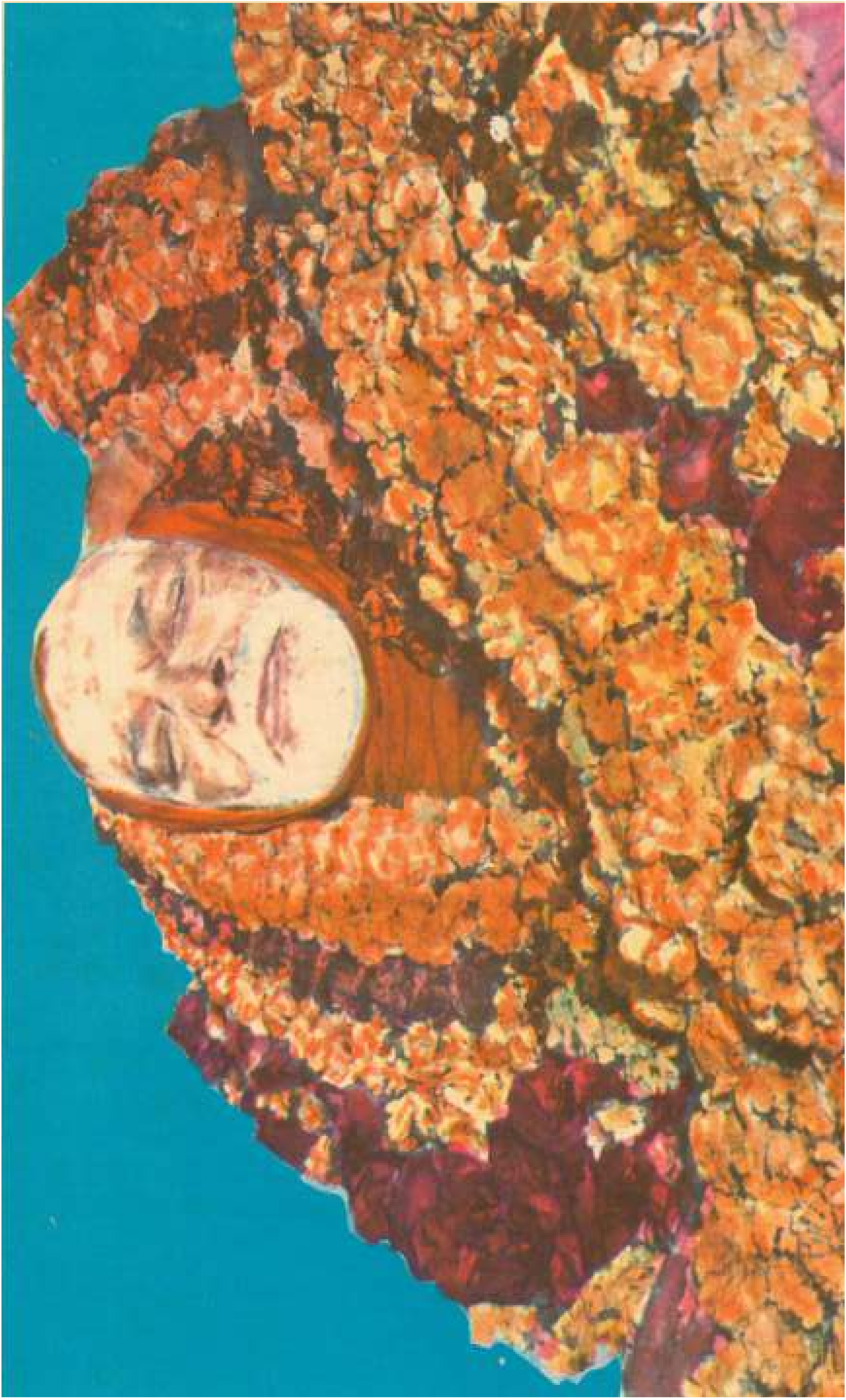

जाकी रही भावना जैसी

धर्मसम्राट् की जीवन जाह्नवी में अवगाहन करके, श्रद्धांजलियाँ समर्पण कर, कृतित्व व वक्तृत्व के पांडित्य व वैदुष्य द्वारा ज्ञानवर्धन कर पावन अमृत का रसास्वादन व अलौकिक आनन्दानुभूति पाकर; देश के मूर्धन्य धर्माचार्यों, सन्तों, विद्वानों, भक्तों, बुद्धिजीवियों, पत्रकारों व राजनीतिज्ञों ने जैसा उन्हें देखा, पाया, अनुमान किया उसको शब्दों द्वारा भाषा रूप दिया है, पढ़ें। आप अभिभूत हो उठेंगे कि एक व्यक्तित्व ने किस प्रकार अपना विचित्र प्रभाव छोड़ा है।

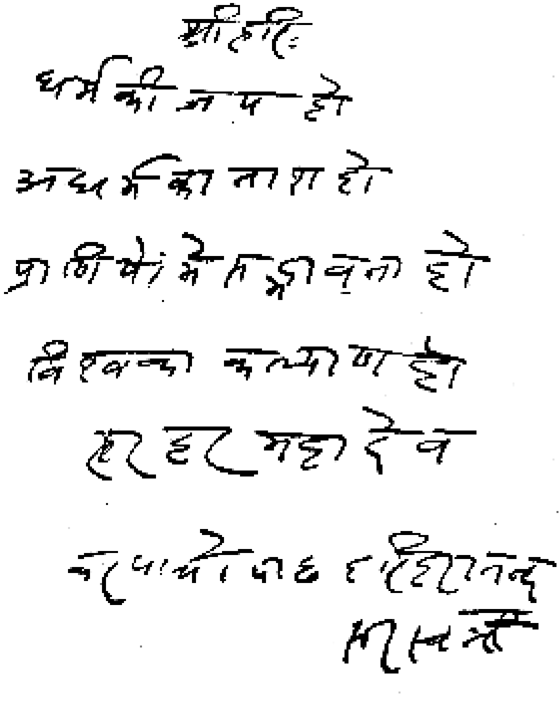

इस युग के निर्भीक एवं तेजस्वी सन्त स्वामी श्री करपात्री जी

'परमहंस अनन्त श्री विभूषित हरिहरानन्दसरस्वती जी बड़े ही विद्वान् और सनातन धर्म के नेता थे। वीतराग होकर एक पात्र भी अपने पास न रखकर करतलभिक्षा करते रहने के कारण उनका नाम करपात्री जी पड़ा। उन्होंने सारे भारत में हमेशा यात्रा करते हुये अपने धर्म प्रवचनों द्वारा जनता में सनातन धर्म के प्रति श्रद्धा जगायी। धर्म-संघ स्थापित करके सनातन धर्मावलम्बियां में एकता सम्पन्न करने का प्रयत्न किया। नास्तिक वाद निरसन के लिये अनेक ग्रंथ लिखे। लोगों में भगवद्भक्ति जगाना आवश्यक जानकर भक्तिपरक ग्रंथ भी लिखे जो भगवत्तत्व पर जिज्ञासा रखने वालों को बड़े ही उपकारक है। वेद पर असांप्रदायिक लोगों से किये गए आक्षेप और मीमांसा शास्त्र के विरुद्ध अर्थे का प्रमाण सम्मत रीति से निराकरण कर वेदों का शास्त्रीय रीति से अर्थ समझाने के लिये श्री सायणभाष्य का समर्थन करते हुये वेदार्थ पारिजात लिखकर धार्मिक जनता को बड़ा बल दिया। आपने अपना सारा जीवन भगवती की उपासना और सनातन धर्म के पुनरुत्थान में लगाकर लोगों के हृदयों में विराजते रहे अब ब्रह्मीभूत होने पर भी वैसे ही विराजते हैं। उन्होंने सनातन धर्म की रक्षा के लिये जो कार्य किया उसे भुलाया नहीं जा सकता। स्वामी करपात्री जी इस युग के निर्भीक तथा एक तेजस्वी सन्त थे। सनातन धर्म जगत की उनसे प्रेरणा लेकर धर्म की रक्षा के लिये तत्पर रहना चाहिये।

'पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ब्रह्मविद् थे और ब्रह्मविद् ब्रह्म ही होता है। तात्पर्य यह है कि स्वामी जी नहीं रहे यह हम कैसे कह सकते है? पचास वर्ष के पहले देश में इतने धर्मानुयायी नहीं थे जितने आज उनकी तपस्या से हैं। उन्होंने उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक धार्मिक पुनर्जागरण का काम किया है। धर्म के तो वे पर्याय ही थे। ऐसे महात्मा यदि कुद दिन और हम लोगों के बीच रहते तो हम लोगों का काम आगे बढ़ जाता'।

अनन्त श्रीविभूषित श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीस्वामी अभिनव विद्यातीर्थ जीमहाराज, दक्षिणाम्नाय, श्री शारदापीठम् शृंगेरी (कर्नाटक)

विश्व की असाधारण ज्योति

अनन्त श्रीविभूषित श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीस्वामी निरञ्जनदेव तीर्थ जी महाराज, पूर्वाम्नाय, श्री गावेर्धनपीठ, जगन्नाथ पुरी (उड़ीसा)

विश्वसंघ यतिचक्र चूड़ामणि भारतीय हृदय सम्राट परमहंस परिव्राजकाचार्य अनन्त श्री स्वामी श्री करपात्री जी महाराज विश्व की अनन्य असाधारण विभूति थे। एक व्यक्ति लेखक है, प्रवचन शास्त्रार्थ इत्यादि में पटु नहीं है, शास्त्रार्थ में दक्ष हैं किन्तु प्रवचन, भाषण और लेखन में नहीं है। यह सब करने वाला श्रवण, मनन, निदिध्यासन पराभक्ति और स्वधर्मानुष्ठान में भी निष्ठ हो ऐसी एक ही मूर्ति के दर्शन स्वामी जी में होते थे। उन श्री स्वामी जी के एक ही व्यक्तित्व में प्रौढ़ पाण्डित्य की पराकाष्ठा थी अद्भुत शास्त्रार्थ निपुणता थी। लेखनी के भी वे अद्वितीय धनी थे। उनका लिखी एक-एक पुस्तक में शास्त्रीय सिद्धान्तों का सार निचोड़ा हुआ पाया जाता है। क्या भक्ति क्या ज्ञान क्या वैराग्य, इन तीनों भागों में गंगा, यमुना, सरस्वती की तरह उनकी, वाणी, लेखनी, शास्त्रार्थपटुता इत्यादि का संगम था, प्रौढ़ अध्यात्मविद होते हुये भी विश्वकल्याण से ओतप्रोत उनके पावन हृदय की पवित्र भावना थीं। वेद शास्त्रादि चतुर्दश विद्या उनकी वाणी पर नृत्य करती हुई सी दिखाई देती थी। हिन्दू धर्म, सभ्यता, हिन्दू संस्कृति, हिन्दू आचार-विचार, वेद शास्त्र, पुराण, इतिहास, रामायण महाभारतादि प्रतिपादित सिद्धान्तों और गोमाता की रक्षा के लिये प्राणार्पण पर्यन्त बलिदान की भावना से ओतप्रोत उनका अन्तःकरण था। यदि हिन्दू जाति ने अपने नेता को नहीं पहचाना तो भविष्य उसका अन्धकारमय है और पहचान लिया तो प्रकाशमय ज्योतिपुंज है।

जैसे सूरदास के राह पर लाने के बाद श्रीकृष्ण ने उन्हें छोड़ दिया था, उसी प्रकार महाराज श्री हमें राह पर ला कर हमें छोड़ कर चले गये हैं परन्तु मेरी भावना है कि महाराज श्री अभी भी हमारे बीच में हैं क्योंकि अवतारों का शरीर पंचभूतों से निर्मित नहीं होता।

जिस समय पाश्चात्य सभ्यता के झंझावत में हिन्दू समाज भटक रहा था, महाराज श्री ने उसका हाथ पकड़ कर उसे नयी राह बतायी। एक बार महामना मदन मोहन मालवीय भागवत के रास पंचाध्यायी को निकालने के लिए उतावले थे। महामहोपाध्याय पं. गिरधर शर्मा ने उन्हें सलाह दी कि वे महाराज श्री से मिलने के बाद ही कोई निर्णय करें पर जब महामना महाराज श्री के पास आये, उनके स्वरूप से इतने प्रभावित हुये कि उक्त विषय पर चर्चा करने का साहस उनमें नहीं हुआ।

लगभग ५६ वर्ष पूर्व प्रयाग मेले में जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज ज्योति पीठाधीश्वर से करपात्री जी महाराज की प्रथम भेंट प्रयाग में

हुयी थी। उस समय महाराज श्री ब्रह्मचारी थे पर सनातन धर्म का प्रतिपादन उन्होंने जिस ओजस्विता के साथ किया उससे शंकराचार्य महाराज को कहना पड़ा मेरे बाद सनातन धर्म का प्रतिपादन यदि कोई व्यक्ति कर सकता है तो यही युवक कर सकता है। यद्यपि वागभट्ट सी भाषा में उस समय महाराज श्री ने अपना पक्ष प्रतिपादित किया था और ७५ प्रतिशत जनता उन्हें समझने में असमर्थ हो रही थी फिर भी उनके भव्य मुख-मण्डल और भाषा की प्रवाहित को देखकर पूरी जनता उनके दर्शन के लिये खड़ी हो गयी। महाराज श्री के बारे में अब मैं क्या लिखूं प्रतिभा कुंठित हो गयी है, मेघा विचार शक्ति शून्य हो गयी है, भक्ति निराश्रित घूम रही है। फिर भी महाराज श्री के अन्तिम आदेशों को पालन तो करना ही होगा। उनका आदेश था-गोमाता की रक्षा, अनादि काल से चले आ रहे सनातन धर्म, हिन्दू संस्कृति को पल्लवन में पूरी रतह डटे रहना आग लगे या ओला पड़े। जरूरत पड़े तो फांसी के तख्ते पर भी झूल जाना। आप सब महाराज श्री के बताये हुये मार्ग पर चलने का संकल्प लेकर महाराज श्री के आदेशों को पूरा करें।

'उन्हें पूर्वाश्रम के पिताजी ने महाराज श्री के सुपुर्द किया जिसका निर्वाह पूज्य श्री ने अंत तक किया। पूज्यश्री के अन्तिम सन्देश सनातनधर्म के विरोधियों से लोहा लेने, वर्णाश्रम मर्यादा की रक्षा करने एवं गोमाता की हत्या रोकने के प्रयास करने के लिये पूरी तरह डटे रहना, आग लगे, ओला पड़े तो फांसी के तख्ते पर झूल जाना। अतः इस कार्य में जीवन उत्सर्ग भी हो जाय तो हमें खेद नहीं होगा। पूज्य श्री द्वारा स्थापित संस्थाएँ पूज्य श्री कायश शरीर हैं यहां झाडू देने में भी मैं अपने को गौरवान्वित समझूंगा। पूज्य श्री ने वेदों पर जो काम किया है उसे पूरा कर प्रकाशित किया जायेगा। जिस प्रकार सूरदास को राह पर लाने के बाद श्री कृष्ण ने उन्हें छोड़ दिया उसी प्रकार पूज्य श्री हमें राह पर लगाकर छोड़ गये हैं। उनके अन्तिम सन्देश का पालन करना ही हमारा कर्तव्य है'।

***

लोक-कल्याणरत महामनीषी

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द जी सरस्वती महाराज, ज्योतिष्पीठ, उत्तराम्नाय, बदरिकाश्रम (उ.प्र.) द्वारका शारदा पीठ(गुजरात)

धर्म सम्राट पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का प्रादुर्भाव उस समय हुआ था जब भौतिकवाद अपने प्रखर रूप में भारतीयता, आदर्श जीवन मूल्य तथा धार्मिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को ग्रसित करने के लिये तैयार बैठा था। भगवान शंकराचार्य के अवतरण तथा पूज्य स्वामी जी महाराज के प्रादुर्भाव के अन्तराल में ऐसी विकट परिस्थितियाँ पैदा हो गयी थी सनातन धर्म को अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने से

रोकने का प्रयास कर रही थीं। पूज्य महाराज जी ने भौतिकवाद के इन प्रबल झझावातों से सनातन धर्म को मुक्त कर देश में धार्मिक एवं आध्यात्मिक वातावरण की सजंना की, धार्मिक पुनर्जागरण का वातावरण प्रस्तुत किया, श्रौत स्मातं पद्धतियों से परिपूर्ण यज्ञों की परम्परा का श्रीगणेश किया, तथा शास्त्र एवं शास्त्रीयता की मर्यादा को उच्चतम शिखर पर पहुंचा दिया। अद्वैत दर्शन के वे नव व्याख्याता थे। दण्डी सन्यासी के रूप में अद्वैत दर्शन का प्रचार–प्रसार कर देश के लोगों को मानसिक तथा रागात्मक अनुभूतियों को तीव्रता प्रदानकर उन्होंने शताब्दियों से उपेक्षित दण्डी समाज की ओर लोगों का ध्यान अनायास ही मोड़कर उसे अत्यन्त ही सम्मानूपर्ण स्थान समाज में प्रदान कर दिया। आज समाज में दण्डी सन्यासियों को जो महत्ता प्राप्त है, शंकराचार्यो को जो प्रमुखता मिली है उसका सारा श्रेय पूज्यचरण को ही है।

सर्ववेद शाखा सम्मेलनों के माध्यम से उन्होंने देश में वैदिक धर्म की पुनर्स्थापना की। वेदों की अपौरुषयता, उनका प्रामाण्य तथा उनकी सनातन उपयोगिता को सिद्ध कर उन्होंने वेदों के प्रति लोगों में श्रद्धा उत्पन्न की, शास्त्रीय पद्धति को जीवनयापन का मार्ग बतलाया तथा सनातन धर्म की ज्योति को सदैव के लिये आलोकित कर दिय। वे साक्षात् शिव थे, उन्हें पूजा करने को रुद्राक्ष मी माला धारण कर भस्म लगाने की तथा अन्य उपासना करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने लोक कल्याण का महान व्रत लिया था। उन्हें अपने मोक्ष की चिन्ता नहीं थी। लोक कल्याण में रत उन महामनीषी को चिन्ता थी तो करोड़–करोड़ लोगों को दु:खों से मोक्ष दिलाने की चिन्ता थी। अपने उपदेशों व्याख्यानों, पुस्तकों तथा पूजन पद्धतियों से लोगों का ध्यान भौतिकता से आपध्यात्मिकता की ओर मोड़कर उन्होंने इस दिशा में विशेष सफलता प्राप्त की। लोगों में अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक होती हैं। उन्हें स्वयं पूजा करते देख लोग उधर आकृष्ट होंगे, इसी ध्येय से वे घण्टों पूजा में लिप्त रहते थे, अन्यथा आप्तकाम, पूर्णकाम, निष्काम महामनीषी को इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी।

सम्पूर्ण भारतीय विद्याओं के वे कोष थे। भारतीय दर्शन का कोना–कोना उन्होंने झांक लिया था। भारतीय संस्कृति में समन्वय की जिस परम्परा का आद्य शंकराचार्य जी ने श्रीगणेश किया था, पूज्य महाराज श्री ने उसे सम्पूर्ण भारतीयों के जीवन दर्शन के रूप में परिणत कर दिया।

उनके ग्रंथों की एक लम्बी परम्परा है। राजनीतिक दर्शन के उद्धारक के रूप में 'मार्क्सवाद और रामराज्य' तथा वेदों की अपौरुषयता के सम्बन्ध में वेदार्थ पारिजात उनका अन्यतम शास्त्रीय ग्रंथ है। वेदार्थ पारिजात आने वाले हजारों वर्षों तक लोगों को वैदिक परम्परा की ओर उन्मुख होने के लिये अनुप्राणित करता रहेगा।

अगाध विद्वता एवं कर्मठव्यक्तित्व के साथ–साथ योगी और भक्त का रूप अत्यन्त प्रखर था। उनके हृदय में सदैव करुणा का सागर उमड़ता रहता था। वे सबका

कल्याण चाहते थे। एक सच्चा भक्त यही चाहता भी है। भगवान की लीलाओं का वर्णन करते समय जिन जिन नये ललितात्मक भावों की उद्‌भावना वे करते थे, उस लीला के साक्षात् दर्शन के बिना वह सम्भव नही नहीं था। इसलिये हम उन्हें पूर्ण अवतारी तथा शंकर स्वरूप मानते रहे हैं। आज भी हमारी यह धारणा है कि वे घट–घट में व्यापत हो गये हैं। प्रत्येक व्यक्ति की अन्तरात्मा में उनका दर्शन होता है और उनके दिखाये मार्ग पर चलने की प्रेरणा एवं शक्ति उन्हीं के चरणों के स्मरण से हो सकती है।

गत वर्ष जब वे गम्भीर रूप से अस्वस्थ हुये थे तो देश के करोड़ों लोगों को धर्म की रक्षा की चिन्ता होने लगी थी। वे स्वस्थ हो गये, अपनी ज्ञान तन्तुओं को उन्होंने और मुखरित कर दिया तथा सबको यही आदेश दिया था, गोमाता की रक्षा सनातनी मूल्यों का संरक्षण, हिन्दू संस्कृति की रक्षा तथा आध्यात्मिकता के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिये। आग लगे या ओला पड़े, जरूरत पड़े तो फांसी के तख्ते पर भी झूलना पड़े तो भी उक्त मूल्यों के पल्लवन में डटे रहना चाहिये।

ग्रहण के अवसर पर हम उनके दर्शनार्थ आये थे। उस समय उनका परब्रह्म स्वरूप साक्षात् प्रतिभासित हो रहा था। हमने यह जिज्ञासा की थी कि क्या वे मृत्यु का वरण कर रहे हैं उन्होंने सकारात्मक उत्तर दिया था। हमको लगा कि भारतीय धर्म मंच के मनस्वी नायक परम पूज्य महाराज श्री अब उत्तरायण की प्रतीक्षा कर रहे हैं और अन्ततः हुआ भी यही। २० जनवरी १९८२ को उन्होंने अपने अत्यन्त अन्तरंग श्री मारकण्डेय जी ब्रह्मचारी को बुलाकर क्षेत्र सन्यास का संकल्प लिया, वेदों के भाष्य के बारे में चर्चा की तथा ७ फरवरी १९८२ को भगवान शंकर ने उन्हें आत्मसात् कर लिया। यह अद्‌भुत बात है कि उन्होंने रविवार को ही अवतार लिया था और रविवार को ही परम निर्वाण प्राप्त किया। यह भी एक आश्चर्यजनक बात है कि माघ के महीने में केदारखण्ड में चतुर्दशी के दिन इन्होंने अपना शरीर त्यागा और उनकी षोडसी महाशिवरात्रि को ही पड़ी। यह उनके दैवी गुण का परिचायक है।

'अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के ब्रह्मलीन हो जाने से देश की एक ऐसी अपूरणीय क्षति हुयी है जिसे पूरा नहीं किया जा सकता। वे इस युग की एक महान विभूति थे। उन्होंने धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में अविस्मरणीय योगदान दिया और अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म के प्रचार–प्रसार तथा लोक–कल्याण के लिये अर्पित कर दिया। स्वामील जी ऐसे समय में पैदा हुए जब भौतिक विज्ञान और आधुनिकता के कारण संसार में अन्याय, अत्याचार और अनैतिकता का बोलबाला हो रहा था तथा लोगों का धर्म और अपने प्राचीन वेद–शास्त्रों पर से विश्वास उठ गया था, लेकिन स्वामी करपात्री जी ने अपनी लेखनी और उपदेशों के द्वारा लोगों को धर्म और सत्य का सन्मार्ग दिखाया और निर्भय रहते हुए अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया।

मैंने पूज्य श्री के साथ रहकर अध्ययन किया तथा श्रीविद्या की दीक्षा ली।

पूज्य श्री का प्रादुर्भाव भारत में भौतिकवाद के चरण जब बढ़ रहे थे, तब हुआ। वे शास्त्रीय प्रमाणों को उपस्थित कर धर्मशास्त्रों से विचलित हुयी श्रद्धा को पुनः बनाये रखने में समर्थ हुए। महाराज श्री बराबर एक श्लोक कहा करते थे–

मतयो यत्र गच्छन्ति तत्र गच्छन्ति वानराः।
शास्त्राणि यत्र गच्छन्ति तत्र गच्छन्ति ते नराः।।

'प्रत्यक्षानुमानादि मूलक बुद्धि जहाँ तक जाती है वहाँ तक ही जाने वाले 'वानर' आदि पशु होते हैं। परन्तु प्रयक्षानुमान एवं शास्त्र जहाँ तक चलते हैं, वहाँ तक चलने वालना प्राणी ही 'नर' होता है।' जीवन, ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, योग, धर्म आदि का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था, जिसमें उनकी गहरी पहुँच नहीं थी। महाराज श्री साक्षात् ब्रह्मस्वरूप थे। स्वयं में मुक्त थे। उन्होंने भीष्म की तरह उत्तरायण होने पर ही प्राणों का परित्याग किया। यह केवल संयोग नहीं माना जा सकता कि महाराज श्री ने माघ में काशी केदारखण्ड में चतुर्दशी के दिन शरीर त्यागा और उनकी षोडसी महाशिवरात्रि के शुभ दिन पड़ी। हम प्रार्थना करते हैं कि वे अपने पदचिह्नों पर चलने की हमें प्रेरणा प्रदान करें।'

***

आयुर्वेदिक चिकित्सा के उपासक श्री स्वामी करपात्री जी और कायाकल्प

अनन्त श्रीविभूषित श्रीजगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ज्योतिष्पीठ, उत्तराम्नाय बद्रिकाश्रम हिमालय

पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज का वेदों, शास्त्रों पर अटूट विश्वास था, आयुर्वेद शास्त्र पर भी उनकी अनन्य निष्ठा थी। आयुर्वेद की ही औषधि का प्रयोग करते थे। एक बार एक महात्मा ने उनको ज्योतिष्मती कल्प विधि की एक हस्त लिखित पुस्तक दिखाई और कहा कि उसको उक्त पुस्तक हिमालय के किसी महात्मा के द्वारा प्राप्त हुयी थी।

एक बार जब हम पूज्य स्वामी जी के जन्म दिवस पर उनके दर्शन करने गये तो स्वामी जी ने हमसे ज्यीतिष्मती कल्प के सम्बन्ध में बतलाया और कहा कि तुम ज्योतिष्मती का पता लगाओ हम यह कल्प करना चाहते हैं। हमने ज्योतिष्मती के सम्बन्ध में दतिया के स्वामी जी से सुना था, वे नेत्र की ज्योति बढ़ाने और स्मरण शक्ति को सुरक्षित रखने के लिए इसे बांटते थे। प्रश्न करने पर उन्होंने बताया था कि यह कटनी के आस पास मिलती है और इसका नाम मालकांगनी है। हमने कटनी के आस-पास इसका पता लगया परन्तु वहाँ नहीं मिली। तब हमारे एक डॉक्टर भीमराव

ताथोड़ को वारासिवनी पत्र लिखाया, उन्होंने उत्तर भेजा कि मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले के पास बैहर के जङ्गलों में यह औषधि मिलती है।

हम बैहर के जङ्गलों में गये, सर्दी का समय था, औषधि को प्राप्त करने के लिये उसको पहले रक्ताक्षत एवं मौली से निमन्त्रित करना पड़ता था। फिर दूसरे दिन उसे तोड़ा जाता था। इसी प्रकार पन्द्रह दिन तक औषधि को निमन्त्रित कर तोड़ने का क्रम चला। पूज्य स्वामी करपात्री जी भी इसी बीच एक दिन के लिये उस स्थान पर पहुंचे। उन्होंने अपने हाथ से ज्योतिष्मती की लता कापूजन किया, फिर उसे दूसरे दिन तुड़वाया गया। उसका तेल निकलवाया। वाराणसी के नारद घाट में उक्त औषधि का विधितव् पूजन श्री रामनाथ जी वैदिक द्वारा सम्पन्न हुआ। फिर उसमें गोघृत, गोदुग्ध, शहर आदि डालकर पकाया गया फिर उसे धान्यराशि के अन्दर २१ दिन रखा गया। चीनी मिट्टी के बर्तन में मुख पर मिट्टी से बांधा गया था।

नारद घाट में औषधि के संस्कार हो रहे थे और नवीन विश्वनाथ मन्दिर के पास मीरघाट में कल्प विधान के अनुसार त्रिगर्भा कुटी का निर्माण हो रहा था। पूज्य स्वामी जी ने पंच कर्म किया पंचकर्म जामनगर आयुर्वेद शोध संस्थान के भूतपूर्व निदेशक एवं वर्तमान में वाराणसेय संस्कृत विश्व विद्यालय में आयुर्वेद विभाग के अध्यक्ष आचार्य श्री विश्वनाथ द्विवेदी की देखरेख में सभी कार्य हो रहे थे। पंचकर्म बड़ी ही प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

पण्डितों से मुहूर्त पूछकर भगवान विश्वनाथ जी का दर्शन करके उत्तम मुहूर्त में स्वामी जी ने त्रिगर्भा कुटी में प्रवेश किया औषधि लेना प्रारम्भ किया। कुटी के अन्दर घृत का दीपक जलता रहता था। कुटी के अन्दर हम आचार्य विश्वनाथ जी एवं एक ब्रह्मचारी परिचर्या के लिये, केवल तीन ही व्यक्ति जा सकते थे। कुटी के अन्दर औषधि और दूध स्वामी जी ले रहे थे। औषधि के साथ भाजन में दूध साठी चावल एवं शहद का विधान था। उसी प्रकार क्रम चल रहा था। कल्प के समय स्वामी जी केवल संस्कृत में ही बोलते थे, इस बीच उन्होंने अनेकों आध्यात्मिक ग्रंथों का परिशीलन किया। हम प्रातः सायं दो-दो घन्टे बैठते थे, उस बीच उनसे आध्यात्मिक रहस्य पर चर्चा होती रहती थी। हम नवीन विश्वनाथ मन्दिर के कमरे में रहते थे जब कभी उन्हें आवश्यकता पड़ती थी, वे हमें रात को भी बुला लेते थे।

कल्प का उल्लेख आयुर्वेद के कई प्रामाणिक ग्रंथों में है चरक, औषधि कल्पलता एवं वाग्भट्ट द्वारा रचित रसरत्न समुच्चय आदि में इसका उल्लेख है। ज्योतिष्मती के सेवन से बड़ी विलक्षण बातें बतलाई हैं। रसरत्न समुच्चायकार ने लिखा है-

ज्योतिष्मती नाम लता पीता पीत फलोज्वला।
आषाढ़े पूर्व पक्षे स्याद् गृहीत्वा बीजमुत्तमम्।।
आहरेत्तिलवर्त्तलं मुष्टिना वापि तत्पचेत्।

क्षीर तुल्यं चतुर्यांश माक्षिकं तैलशेषितम्।।
ततस्तत्कोल कर्पूरत्वग्जातीफल मिश्रितम्।
स्निग्धभाण्डगतं धान्येष्वनुगुप्तं निधापयेत्।।
पिवेत् सूर्योदये तैलात्पलं याति विर्संज्ञनाम्।
ततः संज्ञां शनैर्लब्ध्या ततः क्रन्दति रोदिति।।
एवं मासे श्रुतधरः परस्मिन्सूर्य सन्निभः।
तृतीये पूज्यते देवैश्रचतुर्थे नैव दृश्यते।
खेचरः पञ्चमे षष्ठे सिद्धैमिलति सप्तमे।
विष्णोः सम दिनं जीवेज्जीवन्मुक्तोष्टे भवेत.।

अर्थात् ज्योतिष्मती नाम को लता पीता और पीतफल होती है। आषाढ़ के पूर्व पक्ष में उसके उत्तम बीजों को ग्रहण कर तेल निकालें और औषधि के समान भाग दूध मिला कर चतुर्यांश मधु डालें। उसे मिट्टी के बर्तन में मन्द आँच में पकाये जब तेल मात्र शेष रह जाये तो उतार लें और ठण्डा करें, उसमें कंकोल, जायफल, कर्पूर, तज डाल कर बरनी में रखें और कपड़ मिट्टी करके उसे धान्यराशि में २९ दिन तक पकायें। पिुर त्रिगर्भा कुटी मं पंचकर्म करके बैठे। सूर्योदय के समय चार तोले औषधि का पान करें, औषधि पान करने से बेहोसी आ जाती है धीरे-धीरे जब होश आता है तो वह रोता चिल्लाता है। भूख लगने पर साठी चावल और दूध मधु के साथ देना चाहिये। इस प्रकार एक मास में औषध करने से श्रुतधर हो जाता है, दूसरे मास में सूर्य के सामन तेजस्वी हो जाता है, तृतीय मास में देवता उसकी पूजा करने लगते हैं। चौथे मास में वह अदृश्य हो जाता है पाँचवे मास में आकाश में विचरण करता है। छठे मास में सिद्धी से भेंट होती है। सातवें मास में विष्णु के बराबर हो जाता है। आठवें मास में जीवन्मुक्त हो जाता है।

स्वामी जी ने जब इसका सेवन प्रारम्भ किया, किन्तु एक ही दिन एक तोला पी पाये, अधिक पीने से बेचैनी होती थी। क्रम केवल ४० दिन तक चल पाया। इतने में ही उनके शरीर में काफी परिवर्तन हो गया था। लोगों का कहना था कि उनकी आयु २५ वर्ष कम दिखाई पड़ने लगी थी। बीच में अनेकों विघ्न आये, बहुत से लोगों ने हमसे कहा यदि स्वामी जी को कुछ हो गया तो दोष तुम्हारे शिर पर आयेगा। हमने उनके आदेश को देखते हुए किसी भी बात की परवाह नहीं की। जब तक कल्प चला हम बराबर सब कार्यक्रम छोड़कर उनकी सेवा में रहे।

आज त्रिगर्भा कुटी तो है परन्तु कल्प करने वाला नहीं। अपनी बीमारी के दिनों में असह्य कष्ट रहने पर भी पूज्य स्वामी जी ने आयुर्वेद औषधि छोड़कर दूसरी औषधि नहीं ली। भारतीय संस्कृति और सभ्यता का इतना कट्टर उपासक अब कहाँ मिलेगा। अन्त में उनसे जो बातें हुई और उनके द्वारा जो कार्य हुये वे हमें सदा स्मरण रहेंगे।

***

पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

सुमेरु काशी पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री शङ्करानन्द सरस्वती जी महाराज, ऊर्ध्वाम्नाय, काशी

अकारण करुण, करुणा वरुणालय भगवान की लीलामयी इस भारत भूमि में वर्तमान अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट विश्ववंद्य यतिचक्र चूड़ामणि स्वामी श्री करपात्री जी महाराज सौभाग्य से भारतीय जनता के मध्य उपस्थित थे। इनका प्रातिभज्ञान लोकोत्तर था। संस्कृतवाङ्मय का कोई भी अंश ऐसा नहीं था जिस पर इनका पूर्ण अधिकार न हो। हमारा लगभग तीन दशक से गुरु शिष्य भाव का सम्बन्ध रहा है। हमें अनेक ग्रंथों का श्री महाराज के सान्निध्य में अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। ग्रंथों की ग्रंथियों का रहस्य अत्यन्त सरलता से समझाने की अद्भुत क्षमता थी उनमें। किसी भी ग्रंथ को अध्यापन से पूर्व देखने की श्री महाराज जी को आवश्यकता नहीं थी। अध्यापन, भाषण, लेखन कला आदि सभी क्षेत्रों में श्री महाराज जी का अप्रतिम अधिकार था। श्री महाराज जी के लिखे विचार-पीयूष, मार्क्सवाद और रामराज्य के अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि श्री महाराज जी का आधुनिक राजनीति की समस्त शाखाओं पर कितना विलक्षण अधिकार था। कोई भी पाश्चात्य राजनीति का मार्मिक विषय श्री महाराज की दृष्टि में तिरोहित नहीं था।

चातुर्वर्ण्य संस्कृति विमर्श वेद प्रमाण्य मीमांसा आदि के अध्ययन करने से श्री महाराज जी के मीमांसा दर्शन की विचार प्रणाली तथा वेदों का अद्भुत पण्डित्य सुस्पष्ट ज्ञात होता है। श्री विद्यारत्नाकर भी श्री महाराज जी की अद्भुत कृति है। आज तक श्री विद्या के विषय में सांगोपाङ्ग परिपूर्ण दूसरा कोई ग्रंथ नहीं था। इस ग्रंथ के अध्ययन करने पर तंत्र विषय पर श्री महाराज का अद्वितीय अधिकार ज्ञात होता है।

महाराज श्री के गुणों का वर्णन करना सूरज को दीपक दिखना होगा पूज्यपाद द्वारा गोवध बंदी के संदर्भ में चलाये गये आन्दोलन भारत की अखण्डता के लिये किये गये प्रयत्न, समाज में शास्त्रीय विधान की स्थापना, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित रखने हेतु लिया गया संकल्प, स्वयं में उनकी कीर्ति स्तम्भ हैं। धर्म की राजधानी काशी उन्हें प्रिय थी। वे धर्म सम्राट थे। जिस दिन पूरे भारत में गोहत्या बन्द हो जायेगी, उसी दिन श्री चरणों के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। गोहत्या के कलंक को भारत के सिर से मिटाने के लिए वह आगे आये। हम सब लोग उनके छोड़े कार्य को पूरा करें।

पूज्यपाद श्री की कल्पना भारत में वेदों का ईश्वर-राज्य, महाभारत, पुराणों का धर्म-राज्य तथा रामायण का रामराज्य लाने की थी। उनका सोचना था कि यदि ये तीनों राज्य भारत में आ गये तो विश्व में शांति स्थापित होने में जरा भी विलम्ब नहीं होगा।

अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट यतिचक्र चूड़ामणि स्वामी श्री करपात्री जी

महाराज लगभग दशक तक भारतीय अध्यात्म गगन एवं धर्म क्षितिज पर अपनी आभा, विभा, प्रभा, तप, त्याग एवं वैदुष्य से छाये रहे। शास्त्र प्रतिपादित सनातन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार तर्क युक्ति तथा शास्त्रों-वचनों के द्वारा उपस्थापित कर जनमानस में धर्म सम्राट के रूप में सर्वत्र व्याप्त थे। भाषण या प्रवचन का प्रभाव ऐसा मानो भगवती-भास्वती सरस्वती की उन्हें अनुपम देन थी। लेखन कला भी पूज्य चरण की अद्‌भुत थी। हिन्दी, संस्कृत उभय भाषा के लिखने में वे सिद्धहस्त थे। धार्मिक प्रेरणा के स्रोत थे। राजनीतिक, धर्म, दार्शनिक, विचारों में भी उनकी कृतियाँ भारतीयों को सदा प्रेरणा देती रहेगी। उनके विरोधी भी उनकी युक्तियों के सामने नत-मस्तक रहते थे।

कानपुर में बाबू सम्पूर्णानन्द जी ने वृन्दा के प्रसंग को उठाया। श्री महाराज जी ने लगभग बीस मिनट में ही शंङ्का का उन्मूलन कर सनातन धर्म के पक्ष का अद्‌भुत ढंगसे प्रतिपादन कर अपनी अलौकिक प्रतिभा के बल पर भारतीय शास्त्रों के विचारों को सुनाकर उनकें स्वकीय बनाया।

माध्व सम्प्रदायाचार्य स्वामी विद्यामान्य तीर्थ हरिद्वार में लगभग एक मास तक शास्त्रार्थ्ज्ञ का चैलेन्ज अद्वैतवादियों को देते रहे। परन्तु वहाँ के किसी अद्वैतवादी ने उसे स्वीकार करने का साहस नहीं किया। अचानक वहाँ पर महाराज जी पहुँचे। कतिपय साधुओं ने श्री महाराज जी को समाचार सुनाया तथा उनसे निवेदन किया कि महाराज हम लोगों का पराभव लज्जास्पद हो रहा है। महाराज जी ने शास्त्रार्थ की चुनौती स्वीकार कर अपने पाण्डित्य से अद्वैतवाद की दुंदुभी बजा ही दी।

वर्णाश्रमव्यवस्थामूलक हिन्दू धर्म के संरक्षण के लिये कुछ करना आवश्यक है। इसके लिये उन्होंने ग्राम-ग्राम में संकीर्तन मण्डल की स्थापना पर बल दिया। जिसमें ग्राम के समस्त निवासी साथ में भाग लें। ये सुझाव अत्यन्त सराहनीय, माननीय तथा आचरणीय है क्योंकि इस अर्थ युग में अमीर व गरीब की खाई गहरी होती जा रही है। जिससे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आपस में धन के आधार पर दूर होते जा रहे हैं। समाजवाद ज्यों-ज्यों बढ़ता जा रहा है त्यों-त्यों भाईचारे का सम्बन्ध समाप्त होता जा रहा है इसकी पुनः प्रतिष्ठा के लिये श्री महाराज जी का सुझाव वर्तमान में आवश्यक एवं सामयिक है।

श्री महाराज जी के शिष्यमण्डली में हम लोगों को चाहिये कि -'वयं पञ्चोतरशतम' के सिद्धांत का अवलम्बन कर परस्पर का यदि कोई वैमत्य हो भी तो उसे श्री महाराज जी के शब्दों में ''पानी की लकीर की भांति साधुओं का भेद होता है'' के आधार पर समन्वय स्थापित कर उनके सिद्धांत के प्रचार-प्रसार में लगा दे क्योंकि पूज्य महाराज जी का सर्वस्व धर्म या उनका जीवन धर्ममय था। उसी की स्थापना रक्षा के लिये जीवन भर महाराज जी ने संघर्ष किया।

‘पूज्यपाद द्वारा गोवध बन्दी आन्दोलन, अखण्ड–भारत, शास्त्रीयशासन विधान, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित रहने, धर्म मे हस्तक्षेप न किये जाने के लिये किये गये संकल्प, आन्दोलन एवं विभिन्न प्रयास ही उनके कीर्तिस्तम्भ हैं। जिस दिन सम्पूर्ण भारत में पूर्णतया गोवंशवध बन्दी जो जायेगी उसी दिन पूज्यपाद के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।’

***

‘पूज्य स्वामी जी महाराज, मूर्तिमानवेद थे, धर्मावतार थे। उन्होने वेद, शास्त्र, गो, धर्म आदि की रक्षार्थ विविध संस्थाओं के माध्यम से बहुमुखी कार्य सम्पादन कर महान आदर्श प्रस्तुत किया है। उनके श्रीचरणों में हम श्रद्धासुमन समर्पित करते है।’

–पूज्यपाद जगद्‌गुरु रामानुजाचार्य श्री गोपालदत्तशास्त्री, वृन्दावन।

सनातनधर्म के दिव्य भास्कर स्वामी करपात्री जी

अनन्त श्री विभूषित जगद्‌गुरु श्री निम्बार्काचार्य पीठाधीश्वर ‘‘श्री श्री जी’’

श्री राधा सर्वश्वरशरणदेवाचार्य जी महाराज

अ.भा. श्री निम्बार्काचार्य पीठ, निम्बार्क तीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर(राजस्थान)

अनादिवैदिक सनातन धर्म जगत् के परम देदीप्यमान प्रखर प्रकाश पुञ्ज परम दिव्य भास्कर अनन्त श्रीविभूषित धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का पवित्रतम उज्ज्वल जीवन वैदिक मर्यादा, वैदिम परम्परा, वैदिक संस्कृति, वैदिक आचार, वैदिक अनुष्ठान, वैदिक धर्म संरक्षण, सुर भारती संस्कृत भाषा के अभिवर्द्धन, गो–विप्र–परित्राण, सात्विकय ज्ञानुष्ठान, वर्णव्यवस्था, श्रुति–स्मृति–पुराणादि शास्त्र प्रतिपादित –शुद्ध विधि, देवमन्दिर मर्यादा संरक्षण आदि–आदि के प्रचुर प्रचार–प्रसार में ही प्रतिपल प्रवृत्त रहता था।

श्री स्वामीजी महाराज शास्त्र विपरीत तत्वों का अपने प्रबलतम तर्कों से वेद–वेदान्तादि सच्छास्त्रों के अगिणत उद्धरणों से अपन वैदिक सिद्धांत की सम्पुष्टि करते हुए जिस प्रकार खण्डन करते उससे विरोधी तत्व हतप्रभ होकर एकमात्र पलायन का ही अवलम्ब लेते। उनकी असीम प्रतिभा, विलक्षण वैदुष्य, धर्मतत्परता, विद्वत्समाज को आकृष्ट किये बिना नहीं रहती। विरोधी जन भी उनकी प्रखर ऋतम्भरा प्रज्ञा के सन्मुख सदा ही नतमस्तक रहते थे। निरन्तर प्रचण्ड तपश्चर्या उनके आदर्शमय उदात्त जीवन का स्वाभाविक धर्म था। इतने प्रकाण्ड वैदुष्य के साथ उनमें कितना दैन्य, सारल्य, माधुर्य्य था जिसका प्रत्यक्षदर्शन उनके पार्श्ववर्तजिन तथा सम्पर्क में आने वाले मेधावी महानुभाव करते थे।

श्रीमद्भागवत के रासपञ्चाध्यायी जैसे गूढ़तम विषय पर जब श्री स्वामी जी की सुधावर्षिणी मधुर वाणी निर्झरित होती तो उस क्षण समय भावुक श्रोतागण श्री वृन्दावनधाम की निर्मलनिकुञ्जों में अपने आप को पाते। कितना मधुरातिमधुर दिव्यातिदिव्य उनका वह परम मनोहर मञ्जुल सरस प्रवचन होता, उस समय न केवल श्रोतावृन्द ही अपितु स्व्यं श्रीस्वामीजी महाराज भी प्रमोद्रेक में सर्वेश्वर वृन्दावन विहारी श्यामाश्याम प्रियालाल श्री राधामाधव प्रभु की ललित लीलामृत-सिन्धु में आप्लावित हो जाते और उनके नत्रों से अश्रु बिन्दुओं की धारा अविरल रूप से बह पड़ती। उस समय रसिकों को ऐसी अनुभूति होने लगती-कि कही ऋषिरूपा या ऋचारूपा किसी व्रजगोपाङ्गना ने ही रसिकजनों को उल्लसित करने के लिये उनको श्रीयुगललीलाविलासरससिन्धु में आप्लावित करने हेतु ही विलक्षण विचित्र परिग्राट् के स्वरूप को धारण किया हो। कभी-कभी तो उस लोकोत्तर असमोर्द्ध नित्यनवलीला विलासरस के पान कराने में इतनी तन्मयता दृग्गोचर होती कि जिससे उनकी मधुर रसना से भगवती सरस्वती की अजस्र धारा प्रवाहित होते हुए रसिक महानुभावों के अन्तर्मानस को आन्दोलित उद्वेलित कर देती फलतः रसिकजन भावविभोर होकर जय जो जय हो की मङ्गलमयी मधुर ध्वनि करते हुए परम पुलकायमान हो उठते। यथार्थ में उनकी दैनन्दिनी जीवनचर्या इतनी सुन्दरतम एवं गरिमापूर्ण थी जिसके अवलोकन मात्र से ही भावुक साधकजनों को स्वत ही मार्गदर्शन मिल जाता।

अखिल भारतीयश्री निम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्क तीर्थ (सलेमाबाद) किशन गढ़ (राजस्थान) में वि.सं. २०३१ चैत्रारम्भ में जब अ.भा. विराट् सनातन धर्म सम्मेलन हुआ, उसमें आपने अनेक धर्माचार्य, सन्त, महन्त, मण्डलेश्वरों, विद्वत्समूह एवं अपार जनसमूह को जो उद्‌बोधन दिया वह तथा श्रीमद्भागवत के रापञ्चाध्यायी का कथा प्रवचन भी सम्मेलन स्मारिका एवं टेपयन्त्रों मे सुरक्षित है। जब-जब भी यथावसर भावुक समाज आपके इन वचनों को पढ़ते तथा सुनते हैं वे आत्मविभोर हो जाते हैं।

श्री करपात्री जी महाराज ने समग्र गोवंश-रक्षा हेतु गोहत्या-निरोध के लिये जो महान प्रयत्न किया वह भारत के धार्मिक इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अङ्कनीय है। आपके सर्वोत्कृष्ट नेतृत्व में सम्पूर्ण भारत की धर्मप्राण जनता ने जो महनीय प्रेरणा प्राप्त कर गोरक्षा शुद्ध-सात्विक रूप से प्रबल सत्याग्रह-आन्दोलन को स्वस्थ दिशा ली जो ७ नवम्बर १९६६ (दिल्ली) में प्रदर्शित अभूतपूर्व विराट प्रदर्शन सभी को आपके अप्रतिम वर्चस्व का परिज्ञान करा रहा है। गोरक्षार्थ अनेकों बार असह्य कारागृह (जेल) यातना आपने सहकर धर्म का स्वरूप दरशाया।

नाना मत-मतान्तरों के शास्त्रों का भी आपका अकल्पनीय गम्भीर अनुशीलन था। जिस समय आप उनके शास्त्रों पर विवेचनापूर्ण प्रवचन करते तो उन मतों के अनुयायी विद्वज्जन आपके सार्वभौम ज्ञान एवं प्रगाढ़ वैदुष्य की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा

करते थे। श्रीरामचरितमानस पर भी जब आप का मनोमुग्धकारी प्रवचन होता तो कितने ही मानस मर्मज्ञ रामायणी विद्वज्जन ओजस्वितापूर्ण रहस्मय प्रवचनों को श्रवणकर आश्चर्यचकित हो जाते।

धार्मिक जागृति के लिये आपने ''धर्मसंघ'' नामक संस्था की स्थापना की। धर्म साक्षेप राजनीति हो तदर्थ आपने 'रामराज्यपरिषद' का धटन किया। भारत की अखण्डता की उदात्त भावना आपने प्रत्येक जनमानस में प्रेरित कर भारत सरकार को राष्ट्र की अखण्डता के स्थिरत्व के लिये विविध रूप से उद्‌बोधन दिया। हिन्दू कोड बिल विरोध के लिये आपने प्रबल प्रयास किया। मठ-मन्दिरों पर सन्त-महात्माओं पर आने वाली दुरुह समस्याओं के निराकरण के लिये किया गया उच्चतम प्रयत्न आप की अपूर्व निष्ठा का द्योतक है। विक्रमाब्द २००७ के अधिक आषाढ़ मास में जगन्नाथपुरी (उड़ीसा) में सन्त-महात्माओं पर सरकार द्वारा किाय गया लाठी प्रहार, गोली वर्षा आदि नृशंसतापूर्ण, अतिक्रूर, जघन्यतम कार्य की कड़ी आलोचना कर स्वयं पुरी पहुँच कर सन्त-महात्माओं की सर्वविध से परिचर्या की।

सनातन धर्म के सत्रैस्व परमवन्दनीय श्री स्वामी जी महाराज का जितना गुणगान किया जाय वह अत्यल्प है। समग्र विश्व आपकी अतुलनीय आभा से अत्यधिक प्रभावित है। मनसा, वाचा, कर्मणा प्रत्येक विधा से आप की क्रिया सनातन धर्म के वर्चस्व एवं अभ्युदय के लिए थी। वैदिक सनातन धर्म के सार्वत्रिक प्रचार के लिये आपने पद-यात्रा का व्रत लिया और पूरे भारत मे आपने पदाति ही विचरण किया। इसी पद-यात्रा को सन्दर्भ में आपने राजस्थान के परिभ्रमण काल में विक्रमाब्द १९९९ में अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ की भी यात्रा की। आचार्य पीठ से आपका गहरा सम्बन्ध था। समय-समय पर आप के सामयिक समस्याओं के समाधान हेतु पत्र आते। गो-रक्षा-आन्दोलन काल में आप के द्वारा प्रेरित स्वहस्तलिखित पत्र जो बड़ा ही महत्वपूर्ण है भक्तों के लाभार्थ शीर्षकान्तर्गत वह प्रकाशित है। भावुक जन अवश्य ही आप के इस पत्र से आपको धर्मतत्परता की अनुभूति करेंगे।

यद्यपि विश्ववन्द्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज इन प्राकृत नेत्रों से अन्तर्हित हो गये हैं तथापि उनका दिव्य उपदेश एवं उनके स्वप्रणीत अनेक ग्रंथरत्न विद्यमान हैं। यदि जिज्ञासु धार्मिक जन इनका सम्यक् अलोडन करें तो श्री स्वामी श्री महाराज से आज भी प्रत्यक्ष ही हैं।

'अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का चरित्र लोकोत्तर एवं पावनतम आदर्श था। उनके द्वारा प्रतिष्ठापित धर्मसंघ, रामराज्यपरिषद जैसी परमहितकारी संस्थाओं तथा गोहत्यानिरोध आन्दोलन आदि के द्वारा पूज्य स्वामी जी ने विश्वकल्याण के लिये और सनातन धर्म जगत के लिये महत कार्य सम्पादन किया।'

***

पूज्य स्वामीजी का संस्मरणात्मक परिचय

अनन्त श्री स्वामी श्री अखण्डानन्द जी सरस्वती

श्री करपात्री जी महाराज के साथ ४०-४५ वर्षो तक सत्सङ्ग एवं आलाप का सौभाग्य मिलता रहा। एक बार अपने हृदय-पटल पर हम उनकी स्मृतियों की जगमगाती हुई झलक देखने का प्रयास करते हैं।

सर्वप्रथम लोगों में यह चर्चा फैली कि गङ्गा तट पर कौपीन मात्र धारी महात्मा विचरण करते हुये आ रहे हैं। उनके पास वस्त्र है, कौपीनाच्छादन मात्र। पात्र कोई नहीं है। ब्राह्मणों के घर से हाथ पर ही भिक्षा लेकर करते हैं। कोई संग्रह नहीं, परिग्रह नहीं। कोई शिष्य-सेवक नहीं। हमारी सत्सङ्गप्रिय मित्र-गोष्ठी दर्शन के लिये उत्सुक हुयी।

थोड़े दिनों बाद श्री करपात्री जी महाराज ने दण्ड ग्रहण कर लिया। दिग-दिगन्त में उनके पाण्डित्य का प्रकाश व्याप्त होने लगा। हमें ज्ञात हुआ कि वे नरवर के षड्दर्शनाचार्य स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रम से विद्याध्ययन कर चुके हैं, श्री उडिया बाबा जी महाराज से सत्सङ्ग करते रहे हैं एवं श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती महाराज से (तब तक वे ज्योतिष-पीठाधीश्वर नहीं हुये थे) दण्ड ग्रहण किया है। वे सनातन धर्म की पद्धति के पूर्ण समर्थक हैं एवं शास्त्रों के अक्षर, पंक्ति में निष्ठा रखते हैं तथा अपनी अद्भुत प्रतिभा एवं प्रसन्न-गम्भीर विद्या के द्वारा सबका समन्वय करते हैं, युक्तियुक्त सिद्ध करते हैं। अब उनके दर्शन की उत्कण्ठा अधिकाधिक प्रबल होने लगी।

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज, अब जिनका नाम श्री हरिहरानन्द जी सरस्वती हो चुका था, के दर्शन का सुयोग तो तब मिला, जब मैं झूँसी में ब्रह्मचारी श्री प्रभुदत्त जी महाराज के सम्वत्सरव्यापी संकीर्तन में श्रीमद्भागवत पर प्रवचन कर रहा था।

भागवत के प्रवचन से उठने के पाद जब श्री करपात्री जी महाराज, गङ्गा तट पर विरक्तों से मिलने के लिये जाने लगे, तब मैं भी उनके पीछे हो गया। उस समय वे संस्कृत में ही भाषण करते थे। मेरे प्रवचन की उन्होंने प्रशंसा की! शास्त्रानुकूल एवं संगत बताया। बाद में उन्होंने पूछा कि, सुना है, तुम श्रीकृष्ण-लीला का बहुत बढ़िया वर्णन करते हो, तुम सिद्धांतरूप से उसका निरूपण करते हो या परमत के रूप में। मैंने कहा-''परमत के रूप में''। उनके मुख से संस्कृत में शब्द निकला-''त्वन्मुखे घृतशर्करा'' अर्थात 'तुम्हारे मुँह में घी शक्कर'। विरक्तों में उनकी ब्रह्मविद्या, दर्शन शास्त्र के पाण्डित्य एवं अद्भुत प्रतिभा की प्रतिष्ठा बढ़ रही थी। वे उस समय उदीयमान सूर्य के समान चमक रहे थे।

उन्हीं दिनों गीता प्रेस के संस्थापक सेठ जयदयाल जी गोयन्दका, श्री ब्रह्मचारी जी के आमन्त्रण पर संकीर्तन-उत्सव में झूँसी आये हुए थे। वे श्री करपात्री जी महाराज से मिले। सेठ जी ने यह प्रश्न उठाया-''ज्ञानी के जीवन में काम-क्रोधादि दोष रहते हैं

अथवा नहीं।'' सेठजी का कहना था कि यदि तत्वज्ञानी के जीवन में ये विकार बने रहेंगे, तो दु:ख भी बना रहेगा। यदि तत्त्वज्ञान से दु:ख की निवृत्ति नहीं हुयी तो कोई भी तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयत्न क्यों करेगा? यह प्रश्न सेठ जी, इसके पहले कुम्भ मेला में आये हुये अन्य महापुरुषों से भी कर चुके थे। सेठ जी ने यही प्रश्न श्री करपात्री जी महाराज से किया और तत्वज्ञ के जीवन में विकार मानने से समाज की हानि का प्रतिपादन किया।

श्री करपात्री जी महाराज ने निरूपण किया कि 'औपनिषद् महावाक्य के द्वारा अखण्डार्थ का साक्षात्कार होने पर अविद्या की निवृतित हो जाती है, यह तो ठीक है। परन्तु, जब तक शरीर है तब तक उसमें यौवन, वार्धक्य, रोग आते रहते हैं। स्वप्न, सुषुप्ति अवस्थाएँ भी आती हैं। साक्षी के ब्रह्मत्व का बोध होने से अन्त:करण एवं विषय के मान में कोई अन्तर नहीं पड़ता। ब्रह्मविद्या, केवल भ्रम को निवृत्त करती है, भासमान (प्रपंच) को नहीं। अतएव साक्षीभास्य अन्त:करण में यदि तत्वज्ञान के अनन्तर भी विकार आते हैं, तो उससे मुक्ति में कोई बाधा नहीं पड़ती, क्योंकि आत्मा तो नित्य मुक्त स्वरूप है। अविद्या की निवृत्ति तो केवल उपलक्षण मात्र है। इसलिए समाज के लिए यही हितकारी है कि उसे ज्ञात रहे कि तत्वज्ञ के जीवन में भी विकार हो सकते हैं और वह अन्ध-श्रद्धा के वश होकर ज्ञानी को निर्विकार समझकर, ठगा न जाय और धोखे में न पड़े। इससे सम्प्रदाय की कोई हानि नहीं होगी प्रत्युत् सत्यवादी होने के कारण समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी।

श्री करपात्री जी महाराज के निर्भय निरूपण से, कुम्भ के मेले में उनकी प्रतिष्ठा बढ़ी एवं उनको विद्या का यश चारों ओर फैलने लगा। मेरे चित्त पर उनके वैराग्य, त्याग, विलक्षण प्रतिभा एवं शास्त्र-ज्ञान का अत्यधिक प्रभाव पड़ा और मेरे मन में उनसे बारम्बार मिलन, दर्शन, सत्सङ्ग की आकांक्षा बढ़ने लगी।

श्री करपात्री जी महाराज अपनी विलक्षण प्रतिभा से सभी महात्माओं को प्रभावित कर लेते थे। उनका कहना यह था कि यदि प्रत्यक्ष अनुमान आदि प्रमाणों से प्रत्यगात्म-स्वरूप ब्रह्म का बोध हो जाय तो वेदों की प्रामाणिकता ही नष्ट हो जायेगी। प्रमाण वही होता है जो प्रमाणान्तर से अनधिगत एवं अबाधित वस्तु का असंदिग्ध बोध कराता है। परोक्ष, स्वर्गादि रूप फल, यज्ञ-यागादि धर्म के अनुष्ठान से कैसे मिलते हैं, यह बात वेद-शास्त्रों के अतिरिक्त और किसी भी प्रकार जानी नहीं जा सकता। (यज्ञ-यागादि रूप) प्रत्यक्ष-धर्म का परोक्ष फल के साथ सम्बन्ध बताने में ही शास्त्रों की सार्थकता है। धर्म का ज्ञान केवल लौकिक दृटि से नहीं हो सकता है।

दूसरी बात यह थी कि नित्य अपरोक्ष आत्मा केवल अज्ञान के कारण ही अप्राप्त-सा हो रहा है। वह भी शास्त्र के अतिरिक्त और किसी प्रमाण से ज्ञात नहीं हो सकता। जैसे, शब्दादि विषय श्रोत्र चक्षु आदि के द्वारा ही प्रत्यक्ष होते हैं-अपने-अपने

विषय में सब प्रमाण स्वतन्त्र होते हैं, इसी प्रकार प्रत्यक् चैतन्याभिन्न परमात्म-तत्व के सम्बन्ध में एकमात्र शास्त्र ही प्रमाण है। प्रत्यक्ष आदि प्रमाण यदि शास्त्रोक्त विषय का समर्थन करने में उपयोगी हो तो उनको भी मान्य करना चाहिये।

वैसे तो मैंने ब्राह्मण-महासम्मेलन में भारतवर्ष के धुरन्धर विद्वानों के, जिनमें लक्ष्मण शास्त्री द्राविड़, पंचानन तर्करत्न, श्री चिन्न स्वामी, श्री अनन्त कृष्ण शास्त्री आदि सम्मिलित थे-इस विषय का विचार-विनिमय सुना था। परन्तु श्री करपात्री जी की नव-नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा साधारण जनता को भी श्रुति-स्मृति पर विश्वास करने के लिये बाध्य कर देती थी।

श्री करपात्री जी महाराज वेद की अपौरुषेयता पर दृढ़ थे वेद के कर्ता का कहीं भी वेद में वर्णन नहीं है, वेद अविच्छिन्न सम्प्रदाय-परम्परा से प्राप्त है; अन्य प्रमाणों से अनधिगत एवं अबाधित वस्तु का प्रतिपादक है; ज्ञानात्मक होने से वेद का वास्तविक स्वरूप प्रत्यक्चैतन्याभिन्न ही है अनात्मा होने पर वेद भी अनात्मकक्षा में निक्षिप्त हो जायेगा। यह भी ध्यान रखने योग्य है कि कोई भी व्यावहारिक वस्तु ब्रह्मज्ञान के अव्यवहित-पूर्वक्षणपर्यन्त बाधित नहीं होती। अतएव जिसको ब्रह्मज्ञान नहीं हुआ है, उसको किसी भी व्यावहारिक वस्तु को मिथ्या करने का अधिकार नहीं है। वर्णाश्रमोचित व्यवहार ब्रह्मज्ञान पर्यन्त करना ही चाहिये। जो लोग वर्णाश्रम-मर्यादा का उल्लघंन करके संकीर्तन करते हैं या मनमाने अनुष्ठान करते हैं, मन्त्रोपदेश करते हैं, उनके प्रति श्री करपात्री जी महाराज का बड़ा कठोर दृष्टिकोण था। वे खुले रूप से उनका खण्डन करते थे।

श्री हरि बाबा जी महाराज संकीर्तन के प्रारम्भ में प्रणव का उच्चारण करते थे। पण्डित श्री मदन मोहन जी मालवीय हरिजनों को भी सामूहिक रूप से प्रणव, स्वाहा आदि से संयुक्त मन्त्रों का उपदेश करते थे। श्री करपात्री जी महाराज ने दोनों का विरोध किया। श्री उड़िया बाबा जी महाराज के पास सन्देश भेजा कि श्री हरि बाबा जी को प्रणव उच्चारण करने को मना कीजिये। श्री उड़िया बाबा जी महाराज ने कहा कि जब तक कोई पूछे नहीं तब तक किसी को उपदेश नहीं करना चाहिये-'नापृष्टः कस्याचित् बूयात्' (मनुस्मृति)। यदि श्री हरि बाबा जी मुझसे पूछें तो मैं उनको बतला सकता हूँ। वे महात्मा है, जो वे करते हैं उसमें मैं हस्तक्षेप क्यों करूँ? इस उतर से श्री करपात्री जी महाराज कुछ असन्तुष्ट हुये। यद्यपि वे छात्रावास में नरवर में पढ़ते समय, बाबा के पास, रामघाट एवं कर्णवास में प्रत्येक अनध्याय के दिन सत्सङ्ग करने के लिये आते थे और उनकी श्रद्धा भी बहुत अधिक थी, फिर भी शास्त्र-निष्ठा के कारण उन्हें अपने व्यवहार में कुछ परिवर्तन करना पड़ा।

पण्डित श्री मदन मोहन मालवीय जी के साथ इसी विषय को लेकर ऋषिकेष में शास्त्रार्थ हुआ। कई दिनों तक श्री करपात्री जी एवं मालवीय जी

अपना-अपना पक्ष प्रस्तुत करते रहे। मालवीय जी, पुराणों से भगवन्नाम मन्त्र, पूजा आदि के वचन उद्धृत करते। श्री करपात्री जी धर्मशास्त्र एवं मीमांसा की दृष्टि से उसी का खण्डन किया करते थे। दोनों अपने-अपने निश्चय पर अडिग रहे। इस शास्त्रार्थ में मध्यस्थता करने के लिए दो व्यक्ति चुने गये थे। १-जयदयाल गोयन्दका, गीता प्रेस के संस्थापक, २-काशी के विद्वान सेठ श्री गौरीशंकर गोयन्दका। गौश्रीशंकर जी ने स्पष्ट रूप से श्री करपात्री जी के पक्ष में अपना निर्णय दिया। परन्तु, सेठ जयदयाल जी ने कहा कि एक रकम से तो युक्ति परिस्थिति आदि की दृष्टि से मालवीय जी का पक्ष परिपुष्ट है और शास्त्रीय दृष्टि से करपात्री जी का। इससे श्री करपात्री जी महाराज किंचित अप्रसन्न हुए। परन्तु, शास्त्रार्थं में उनकी विजय तो हो ही गयी थी। उस समय यह बात आगे नहीं बढ़ी।

जिन दिनों मैं गोरखपुर में कल्याण के सम्पादन-विभाग में काम करता था, सेठ जयदयाल जी ने 'विद्या-अविद्या एवं सम्भूति-असम्भूति' के सम्बन्ध में एक लेख लिखा। लेख में प्रत्यक्ष रूप से ही शांकरभाष्य का खंडन था। उन्होंने अपने लेख में 'विद्या' का अर्थ ब्रह्मविद्या किया था तथा 'असम्भूति' का अर्थ ईश्वर। जहाँ तक मुझे स्मरण है दोनों के सम-समुच्चय का प्रतिपादन किया था। श्री करपात्री जी महाराज ने उस लेख का खंडन कल्याण में प्रकाशित करने के लिये लिख भेजा। परन्तु, कल्याण में वह लेख प्रकाशित नहीं हुआ। श्री करपात्री जी इससे असन्तुष्ट हुये। 'कल्याण' को अपना-लेख तो देना बन्दकर ही दिया, कहीं से उद्धृत करके भी अपने लेखों को छापने से मना कर दिया। वे अपनी निष्ठा में अत्यन्त दृढ़ एवं असंदिग्ध थे। मैंने भाई जी से कहा कि शांकर-भाष्य सर्वथा युक्तियुक्त एवं अनुभव-संगत है। श्री करपात्री जी ने उसका उचित समर्थन किया है। उनका लेख न छापना ठीक नहीं है। भाई जी ने कहा, कि आप एक लेख लिख दीजिये, वह छाप दिया जायेगा।

श्री करपात्री जी मुझसे प्रसन्न थे और बहुत स्नेह करते थे। विशेषकर के 'कल्याण' के साधारण अंकों में मेरे सैंकड़ों लेख प्रकाशित हुए। भागवत की भूमिका (जो अब 'भागवत-दर्शन' में प्रकाशित हुयी है) भागवत का अनुवाद, साधना-अंक आदि में मेरे लिखे लेखों को देखकर, पढ़-सुनकर वे कभी-कभी अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते थे और प्रशंसा भी करते थे। मैं उनके सिद्धांत को भली-भांति समझता था। धर्म एवं ब्रह्म शास्त्रैकगम्य हैं। नित्य-परोक्ष एवं नित्य-अपरोक्ष वस्तु के साक्षात्कार में वाक्य ही प्रमाण होते हैं, प्रत्यक्ष अनुमानादि नहीं। प्रत्यक्ष, अनुमानादि के द्वारा शास्त्रोक्त पदार्थ को युक्ति-युक्त सिद्ध करना चाहिये। वे सहायक हैं, परन्तु शास्त्र के विरूद्ध होने पर वे तुच्छ एवं अकिंचित्कर हैं।

'कल्याण' के सम्पादन विभाग ने परस्पर परामर्श करके यह निश्चय किया कि मुझ पर श्री करपात्री जी प्रसन्न रहते हैं, अतः उनके प्रसाद का लाभ उठाकर उन्हें

मना लिया जाय। मुझे बलिया भेजा गया। भृगु मुनि के स्थान में श्री करपात्री जी ठहरे हुये थे। काशी के पण्डितराज श्री सभापति उपाध्याय वहाँ आये हुये थे। सत्संग की चर्चा के अनन्तर मैंने उनसे 'कल्याण' के लेख के लिये प्रार्थना की। वे हँसेते हुये प्रसन्न मुद्रा में बात करते रहे।

श्री करपात्री जी महाराज ने कहा "लेख तो मैं अब 'कल्याण' को सीधे नहीं दे सकता। हाँ, मेरा कोई लेख कहीं भी प्रकाशित हो तुम लोगों को पसन्द आए तो छाप दिया करो।" मेरे लिये इतनी छूट, उनका अनुग्रह था।

श्री करपात्री जी महाराज ने काशी के स्वामी श्री ब्रह्मानन्द जी सरस्वती महाराज से सन्यास ग्रहण किया था। उस समय तक स्वाकी श्रीब्रह्मानन्द जी महाराज, ज्योतिषपीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य नहीं हुये थे। वे श्री करपात्री जी महाराज के गुरु हैं, यह जानकर मेरे हृदय में उनके प्रति श्रद्धा जाग्रत हुई। मैं वहाँ आने-जाने लगा। मेरे सन्यास का निश्चय हुआ। परन्तु, इसमें 'कल्याण' परिवार के कार्यवश दो-तीन वर्ष का विलम्ब हो गया। तब तक वे शंकराचार्य हो गये। मैं दन्ड ग्रहण के अनन्तर पहले-पहल ऋषिकेश की कोयलघाटी में करपात्री जी के दर्शन करने गया। वहां उन्होंने मुझे अपने आसन पर ही बैठा लिया और कृष्ण-लीला पर प्रवचन करने को कहा। मैंने बड़े संकोच के साथ उनकी आज्ञा स्वीकार की।

मैंने श्री हरि सूरि के 'भक्ति-रसायन' का आधार लेकर, भगवान की जन्म-लीला सुनाई। श्री करपात्री जी महाराज बहुत प्रसन्न हुये।

मैं जब हरिद्वार से वृन्दावन के लिये पैदल लौट रहा था तब मेरठ में श्री करपात्री जी महाराज की अध्यक्षता में कोई यज्ञ हो रहा था। श्री गिरिधर शर्मा, श्री अखिलानन्द आदि विद्वान वहाँ इकट्ठे थे। पूतना-उद्धार का प्रसङ्ग सुनाने के पश्चात् उनके निवास स्थान पर जाकर मैंने वेदों की अपौरुषेयता के सम्बन्ध में प्रश्न किया। मन्त्रों की आनुपूर्वी अनादि एवं नित्य है, यह बात मेरे विश्वास का विषय नहीं हो रही थी। उस समय उन्होंने मुझे पंडित नकच्छंद राम द्विवेदी द्वारा लिखित एवं हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित 'सनातन-धर्मोद्धार' ग्रंथ को देखने का परामर्श दिया। वैसे वह ग्रंथ मैंने पहले पढ़ा तो था किन्तु इस दृष्टि से नहीं। अन्ततोगत्वा उन्होंने हँसते हुए कहा कि वास्तविक नित्यता तो ज्ञानस्वरूप आत्मा में ही होती है। वेद का यथार्थ परमार्थ आत्मा ही है। और तो सभी अनात्म पदार्थों की नित्यता आरोपित एवं कल्पित ही है। यह बात मुझे अच्छी तरह जम गयी।

कभी-कभी उनके अनुग्रह का स्मरण कर हृदय भर आता है। वे काशी के नगवा स्थित 'गंगा-तरंग' में ठहरे हुये थे। मैं ग्यारह बजे दिन में उनके पास पहुँच गया। मैंने उनसे प्रश्न किया कि सभी आस्तिक दर्शनों में यह देखने में आता है कि ईश्वर को पूरा-पूरा महत्व नहीं दिया गया है। न्यायवैशेषिम में आत्मा एक द्रव्य है-

ज्ञानाधिकरण। उसके दो भेद हैं – जीवात्मा और परमात्मा। योग दर्शन में ईश्वर समाधि का साधन मात्र है। निरोध दशा में या द्रष्टा के स्वरूपावस्थान में ईश्वर की चर्चा नहीं की जा सकती। अनुमान से प्रकृति ही सिद्ध होती है, ईश्वर नहीं। पूर्व–मीमांसा में कर्म ही प्रधान है। वही अपूर्व बनकर अपना फल भी दे लेता है। वेदान्त–दर्शन में माया की उपाधि से ब्रह्म में ईश्वरत्व है। ऐसी स्थिति में आप कुछ अपना अनुभव सुनाइये। प्रश्न सुनकर प्रसन्न मुद्रा में वे बैठ गये। चार बजे तक समझाते रहे। उस दिन भिक्षा करने नहीं गये।

श्री हरि बाबा जी महाराज के प्रणव–संकीर्तन को लेकर श्री करपात्री जी महाराज ने परम पूज्य श्री उड़िया बाबा जी के पास आना बन्द कर दिया था। मुझे यह बात खटकती रहती थी। जो पहले बाबा के प्रति इतना आदर भाव रखते थे, सत्संग के लिये आया करते थे, वे अब कभी बाबा के दर्शन के लिये भी नहीं आते, यह कुछ असमंजस–सा लगता है। मैंने एक दिन श्री उड़िया बाबा जी महाराज से कहा कि वे नहीं आते तो क्या हुआ, विद्वान हैं, त्यागी हैं, महात्मा हैं, आप ही उनके पास कभी चले चलिये तो क्या है? बाबा ने कहा, क्यों नहीं? जब कहो, मैं उनके पास चल सकता हूँ। मैंने कहा बाबा, वे आजकल वृन्दावन में ही है। धर्म–संघ विद्यालय में ठहरे हुये हैं, आप चले चलिये न? बाबा एक बालक की रुचि पर भी ध्यान देते थे। उनके मन में तो जैसे कोई आग्रह ही नहीं था। उठ खड़े हुये, 'चलो बेटा'। मैं उनके पीछे–पीछे पैदल चलने लगा। एक व्यक्ति को चुपके से दौड़ा दिया कि वह जाकर श्री करपात्री जी को बता दे। श्री करपात्री जी महाराज समाचार सुनते ही बिना पादुका के ही छत पर से उतर कर रास्ते में आ गये, प्रणाम किया एवं बाबा को ऊपर ले गये। थोड़ी देर तक बात चीत होती रही, बाबा आश्रम में लौट आये। दूसरे ही दिन श्री करपात्री जी एवं श्रीकृष्ण बोधाश्रम जी बाबा से एकांत में मिलने के लिये समय लेकर आये। १–२ घन्टे तक गोष्ठी होती रही। मुझे भी उसमें सम्मिलित कर लिया गया था। इस प्रसंग के बाद, बाबा एवं श्री करपात्री जी का मिलना–जुलना फिर से होने लगा।

दिल्ली में गायत्री महायज्ञ का आयोजन हुआ। देश के पीठाधीश्वर, मण्डलेश्वर, विद्वान आमन्त्रित किये गये। गायत्री की कोटि आहुति का यज्ञ था। ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्त जी को यजमान बनाया गया। दक्षिण के विद्वानों ने आपत्ति कर दी कि यजमान सपत्नीक ही होना चाहिये। कुश की कन्या से विवाह कराया गया। समागत अभ्यागतों के लिये बड़े–बड़े सिंहासन–मंच निर्माण किये गये। श्री उड़िया बाबा जी को बड़े आदर एवं आग्रह से आमन्त्रित किया गया। मैंने श्री करपात्री जी महाराज को कहा कि वे इन सिंहासनों पर तो बैठेंगे नहीं वे तो बिना आसन के धूल में भी बैठ जाते हैं। श्री करपात्री जी ने हँसकर कहा कि सिंहासन पर बैठना अथवा धूल में बैठना दोनों लोक–संग्रह ही है। लोक–श्रद्धा कभी वैभव की ओर जाती है, कभी त्याग की ओर।

तत्त्वज्ञ की दृष्टि में कोई अन्तर नहीं है। वहाँ-जहाँ जैसे बैंठेंगे, वही ठीक होगा। मुझे उनका यह दृष्टिकोण बहुत पसन्द आया।

उसी यज्ञ में एक दिन उन्होंने मुझसे कहा-''आओ, तुम भी मेरे साथ भिक्षा कर लो। किसी ब्रह्मचारी ने मूँग की दाल की खिचड़ी बनाई थी। नमक, न घी, छाँक तक नहीं लगी थी उन्होंने कहा,''तुम अपने अनुकूल भोजन कर लिया करो। मेरे साथ तो ऐसा ही मिलेगा।'' उनकी उदारता देख-देख कर मैं मुग्ध होता रहता था।

उसी यज्ञ में आर्यसमाज के साथ शास्त्रार्थ का आयोजन हुआ। आर्य समाज की ओर से श्री रामचन्द्र देहलवी प्रमुख थे। सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ महारथी श्री माधवाचार्य थे। सनातन धर्म के मंच पर श्री करपात्री जी महाराज, गिरिधर शर्मा, अनन्त कृष्ण शास्त्री, पंडित अखिलानन्द शर्मा आदि दिग्गज विद्वान विराजमान थे। मैं श्री करपात्री जी महाराज के ठीक पीछे बैठा हुआ था। यज्ञ में गोवध के सम्बन्ध में श्री करपात्री जी महाराज सरल भाव से श्रौत सूत्रों के अनुसार शास्त्रार्थ के लिए सन्नद्ध हो गये। सनातनधर्मी विद्वानों ने प्रार्थना की कि महाराज आप देखते रहिये, शास्त्रार्थ हम करेंगे। वे हँसकर चुप हो गये। सर्व श्री गिरिधर शर्मा, अखिलानन्द शर्मा एवं श्री माधवाचार्य ने परस्पर विमर्श करके आर्य समाजियों से प्रतिप्रश्न किया- ''वेदों में भला गोवध की बात कहाँ लिखी है?'' शास्त्रार्थ लिखित रूप से होता था और पढ़क जनता को सुना दिया जाता था। आर्य समाज की ओर से मन्त्रों, भाष्यां और ग्रंथों का नाम लिखकर आया कि यहाँ-यहाँ शास्त्रों में गोवध की बात लिखी हुयी है। जन-समूह में पढ़कर सुनाया गया। पंडित अखिलानन्द जीने खड़े होकर कहा-''देखो भाई, आर्यसमाजी लोग कहते हैं कि वेदों में गोवध लिखा हुआ है। कितने दुःख की बात है।'' अब तो क्या था, सब जनता आर्यसमाजियों के विरुद्ध हो गयी। ताली पिटने लगी। लोगों ने उन लोगों का बोलना दूभर कर दिया। वे कहते ही रह गये, ''यह हमने अपना मत नहीं बताया है। यह उन्हीं लोगों का मत है,'' पर वहाँ कौन सुनता था? पंडित माधवाचार्य जी ने कहा, कि महाराज! इन लोगों के साथ ऐसा ही शास्त्रार्थ होता है। कोई पूर्वोत्तर-मीमांसा के अनुसार अधिकरणरचना नहीं होती। श्री करपात्री जी की सरलता और सनातन धर्मआर्यसमाजी के शास्त्रार्थ का एक अच्छा नमूना देखने को मिला।

श्री करपात्री जी महाराज में संघटन की एक विशिष्ट शक्ति थी वे अपनी निपुणता, बुद्धिकौषल एवं सौजन्य से विरोधियों को भी अपने अनुकूल बना लिया करते थे मुझ पर उनका सहज स्नेह था। उन्होंने धर्मसंघ के अन्तर्गत सन्त-सम्मेलन का संगठन किया था, जिसमें अध्यक्ष थे वेद भगवान और उपाध्यक्षों में मेरा नाम भी था। लोगों ने मेरे व्याख्यान के लिये जब आग्रह किया और मैंने संकोच प्रकट किया तो भरीसभा में श्री करपात्री जी ने मुझे देखकर लोगों से कहा कि ये तो हमारे निधि हैं, इनको जैसे अनुकूल पड़े वैसे ठीक है, संकोच में डालने की आवश्यकता नहीं है।

सन् १९४८ की बसन्त ऋतु में श्री करपात्री जी महाराज वृन्दावन पधारे थे। वे रमणरेती में श्री राधाकृष्ण धानुका की कोठी में ठहरे हुए थे वे उन दिनों पाँच या सात दिन तक गंगा जल पर रहने के बाद भिक्षा लेते थे। इतना मुझे अवश्य स्मरण है कि वे धानका जी की कोठी में एक साधारण से आसन पर बैठ जाते थे और मैं उन्हें श्रीमद्भागवत पर प्रवचन सुनाया करता था। प्रतिदिन सायंकाल का यह नियम ही हो गया था। जब वे सुन सुनकर प्रसन्न होते तो मेरे हृदय में आनन्द का समुद्र लहराने लगता था। सिद्धांततः अद्वैत एवं भावतः भक्ति का प्रतिपादन उन्हें बहुत प्रिय था। वे कभी-कभी गद्‌गद् हो जाया करते थे। यह निश्चित है कि वे वेदों से लेकर अवकहड़ा-चक्र एवं हनुमान चालीसा पर्यन्त के जानकार थे, सबको मानते थे, सबका समर्थन करते थे। उनको मुझसे श्रीमद्भागवत सुनने की कोई आवश्यकता नहीं थी, फिर भी यह उनका स्नेह ही था कि मुझे आदर देते थे। ''अमानी मानदो मान्यः'' का यह प्रत्यक्षा निदर्शन था।

श्री करपात्री जी महाराज, अन्य शास्त्रों के समान रस-शास्त्र के भी अप्रितम विद्वान थे। जब वे रस-तत्व का प्रतिपादन करने लगते तो बड़े-बड़े रस-मनीषि भी आश्चर्य-चकिंत रह जाते थे। वे जब रस के सम्बन्ध में अनुमानवादी, प्रत्यक्षवादी एवं अपरोक्षवादी आचार्यों का खण्डन करते, श्री मधुसूदन सरस्वती के द्वारा भक्ति-रसायन में प्रतिपादित रस-तत्व के समर्थन में अपनी लोक-विलक्षण विचक्षण प्रतिभा को प्रकाशित करने लगते थे तब ऐसा कौन रस-मर्मज्ञ है जो मुग्ध न हो जाय?

श्री करपात्री जी महाराज का मुझ पर कितना स्नेह था, इसका उदाहरण आपके सम्मुख प्रस्तुत है

बम्बई वाले श्री प्रेमपुरी जी महाराज एवं दैवी-महामण्डल के अध्यक्ष स्वामी श्री शुकदेवानन्द जी महाराज से अत्यन्त गाढ़-सम्बन्ध होने के कारण, मैंने अखिल भारतीय साधु समाज का अध्यक्ष पद स्वीकार कर लिया था। निश्चय ही वह संस्था उन दिनों भारत के गृहमन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा की प्रेरणा और भारत सेवक समाज के कार्यकलाप से सम्बद्ध थी। मेरा अध्यक्ष होना श्री करपात्री जी महाराज को पसन्द नहीं था। मैं जब उनका दर्शन करने गया तो वे मुझ पर बरस पड़े ''तमु इस सरकारी संस्था में क्यों सम्मिलित हुये?'' लगभग एक घन्टे तक वे मुझे समझाते रहे। उन्हीं यहाँ तक कहा कि अच्छा, कोई बात नहीं, मैं अब ऐसे कहा करूंगा कि जैसे कांग्रेस में एक सम्पूर्णानन्द विद्वान है वैसे ही भारत साधु समाज में एक अखण्डानन्द हैं। उनके इस स्नेह को देखकर मैं कुछ बोल नहीं सका, चुपचाप प्रणाम करके चला आया। तब से साधु-समाज के प्रति मैं उदासीन हो गया और फिर किसी अधिवेशन में सम्मिलित नहीं हुआ।

नाम, रस, धाम और श्री राधा-कृष्ण के उक्त रस-रहस्यमय दिव्य निरूपण के साथ ही माहात्म्य-प्रकाश, मङ्गलश्लोक-व्याख्या, शुकागमन-शुक-परीक्षित-संवाद, प्रह्लाद-बलि-चरित, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामभद्र और लीलापुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण चन्द्र की लीलाओं का मासिक दिग्दर्शन 'भागवत-सुधा' में मनोरथ रीति से श्री स्वामी जी के श्री मुखारविन्द से अभिव्यक्त हुआ है।

धर्म और ब्रह्म के मर्मज्ञ श्री स्वामी जी ने भक्तिसुधा, भक्तिरसार्णाव और भागवतसुधा के माध्यम से लोकोत्तर अमलात्मा-मुनीन्द्र-श्रीमत्परमहंसों के जिस जीवन का अनुपम रीति से चित्रण किया है, उसके स्वयं मूर्तिमान स्वरूप ही थे। जीवन चरम-चरम में देश-काल-कलना-विमुक्त अखण्ड बोधरूप शिवतत्व के रूप में ही वे श्री वाराणसी केदारखण्ड में विराजमान थे। भागवत-कथामृत का पान करते अघाते नहीं थे। रोमांचकण्टकित प्रेमाश्रुपरिप्लुत उनके स्वरूप का वह मङ्गलमय दर्शन भावुक रसिकों के रसज्ञों के हृदय में स्फरित रहे।

'नित्य सरस्वती स्वार्थसमन्वितासीत्' यह उक्ति श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से चरितार्थ हुयी है। वेद वाणी और तदनुकूल समस्त शास्त्रों का जैसा समन्वित और समन्जस स्वरूप उन्होंने अपनी वाणी और लेखनी के द्वारा व्यक्त किया है, वह आत्मसात् करने योग्य है।

***

अभिनव शंकर

-अनन्त श्रीसमलंकृत परम भागवत सन्त पूज्यपाद स्वामी श्रीविष्णु आश्रम जी महाराज, दण्डी आश्रम, बिहारघाट, बुलन्दशहर (उ.प्र.)

श्री शङ्कराचार्यनवावतारम् विद्वद्वरेण्यञ्च यतीन्द्रमुख्यम्।
कलीयुगे यज्ञ-युगप्र वर्तकम् वन्दे सदा श्री करपात्रिणं गुरुम्।।

श्री करपात्री जी महाराज आदि शङ्कराचार्य जी के नूतन अवतार ही थे। विद्वानों में श्रेष्ठ यति-चक्र चूड़ामणि तथा कलियुग में यज्ञों के प्रचार व प्रसार द्वारा त्रेता युग के प्रवर्तक थे। ऐसे उन महापुरुष का हम सदैव अभिवन्दन करते हैं।

श्री करपात्री जी महाराज 'कारक-पुरुष' थे। वे निरन्तर सत्कर्म में लगे रहते थे। रात्रि को दो बजे उठ जाते थे। रात्रि में ग्यारह बजे से पूर्व उनका सेना सम्भव नहीं होता था। सायंकाल चार-पांच बजे के लगभग केवल एक बार भिक्षा करते थे। उनकी भिक्षा में न लवण और न मीठा होता था। भिक्षा करके वे पाँच मिनट के लिये भी विश्राम नहीं करते थे। भिक्षा के तुरन्त बाद प्रवचन करने चल पड़ते थे। उनके यहाँ प्रमाद या आलस्य का नाम ही नहीं था। छह-छह घण्टे निरन्तर सभा में बैठे रहते थे, किन्तु कभी किसी ने उनको निद्रित नहीं देखा। उनमें इतना विलक्षण सत्व का उद्रेक था।

सनातन धर्म की व्याख्या उनकी अत्यन्त स्पष्ट थी। यथा, सनातन परमात्मा ने सनातन जीवों के कल्याण के लिए सनातन वेदों के द्वारा जो सनातन विधान बनाया है, वही सनातन धर्म है। शरीर, इन्द्रिय, मन बुद्धि, चिताहंकार की शास्त्र के अनुकूल जो हलचल है, चेष्टा है वही धर्म है। तथा शास्त्र के प्रतिकूल इनकी जो हलचल है, चेष्टा है, वह अमर्ध है। इन शब्दों में वे धर्माधर्म का निर्णय करते थे। उनके जैसी वक्तृत्व शक्ति तो कहीं देखने में ही नहीं आती। एक बार वृन्दावन में वेणुगीत पर प्रवचन कर रहे थे जिसको सुनकर वहाँ के विद्वान् और रसिकजन मन्त्रमुग्ध हो जाते थे।

स्वामी श्री महाराज की स्मरण शक्ति अद्भुत थी। उनके पास कभी हमने नोट बुक नहीं देखी। जो श्लोक जहाँ देखा, वहीं याद हो गया। जब श्री महाराज जी प्रवचन करते थे, उस समय वेदान्ती लोग ब्रह्म का अद्भुत निरूपण सुनकर मुग्ध हो जाते थे और भक्त लोग भगवल्लोला-कथारस में डूब जाते थे। धर्मात्माजन धर्म की व्याख्या सुनकर अपने को कृतकृत्य मानते थे। साधारण लोग तो उनकी मङ्गलमयी वाणी को सुनकर ही आनन्द का अनुभव करते थे। भगवान् श्रीकृष्ण के बैकुण्ठ चले जाने पर पाण्डवों के लिए पृथ्वी जैसे शोभाहीन, अमङ्गलमयी दिखायी देती थी, उसी प्रकार श्री महाराज जी के न रहने पर पृथ्वी शोभाहीन और अमङ्गलमयी दिखायी दे रही है।

श्री महाराज जी को प्रायः सभी सम्प्रदायों के लोग मानते थे। सभी उनका आदर करते थे। वृन्दावन वाले श्री अखण्डानन्द जी महाराज कहा करते हैं कि धर्म और ब्रह्म का निरूपण जैसा श्री करपात्री जी महाराज करते है, वैस इस समय कोई ओर नहीं कर सकता। देहली, कानपुर, काशी, बम्बई आदि महानगरों में विशाल यज्ञों का आयोजन करके महाराज ने कलियुग में भी त्रेतायुग का दृश्य उपस्थित कर दिया था। उन यज्ञों का जिन लोगों ने दर्शन किया है, वे ही महाराज जी की महिमा को समझते हैं।

साधारण जनता में ख्याति प्राप्त करने वाले अनेक सन्त हैं, किन्तु उच्च कोटि के विद्वानों में श्री महाराज ने ही प्रतिष्ठा प्राप्त की। पण्डित लोग प्रायः किसी की कथा या प्रवचन नहीं सुना करते, किन्तु महाराज जी के कथा-प्रवचन को सुनने के लिए बड़े-बड़े विद्वान भी लालायित रहते थे। वैसे श्री महाराज बड़े तितिक्ष्, सहनशील और सरल थे, किन्तु यदि कोई धर्म के विरूद्ध, शास्त्र के विरुद्ध बोले या लेख लिखे तो यह उनसे सहन नहीं होता था। तत्काल उसका खण्डन कर देते थे, चाहे वह कितना भी प्रभावशाली व्यक्ति हो।

धर्म रक्षा के लिये, गो रक्षा के लिये महाराज जी ने अनेक कष्ट सहे, अनेक बार जेलों में गए, इस बात को सभी लोग जानते हैं। 'नानशनात् परं तपः', अर्थात् अनशन से बढ़कर दूसरा कोई तप नहीं है, इसका श्री महाराज जी ने अपने जीवन में विशेष रूप से पालन किया। हमने देखा है कि श्री महाराज जी एक वर्ष में अड़तालीस दिन केवल फलाहार करते थे। सात दिन तक कुछ न लेना, इसके बाद श्री सत्यनारायण

की कथा सुनकर प्रसाद ग्रहण करना, वह भी फलाहार होता था। उन दिनों में भी तीन पाठ दुर्गा सम्पशती के करना, श्री मद्भागवत का सप्ताह पारायण करना, जप करना, जिज्ञासुओं से वार्तालाप करना, व्याख्यान देना, ये सभी कार्य भी निर्विघ्न रूप से चलते रहते थे। यह विलक्षणता अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिली।

स्वामी जी महाराज भारतवर्ष के पवित्र तीर्थों में पहले पैदल ही भ्रमण किया करते थे। अङ्ग–प्रत्यङ्ग अत्यन्त कोमल होने पर भी भूख, प्यास, शीतोष्ण सब कुछ सहन कर लेते थे। साथ में जो सेवक रहते थे, वे भी विरक्त भाव से ही सेवा–कार्य करते थे। मार्ग में भिक्षा का समय होते ही वे ब्राह्मणों के यहाँ से आटा माँगकर लाते थे और भिक्षा बनाकर, महाराज को भिक्षा कराकर तथा स्वयं भोजन करके आगे के लिए चल पड़ते थे। एक बार ऐसा हुआ महाराज तो भिक्षा करके तत्काल चल दिये, ब्रह्मचारी लोग भोजन करते रहने के कारण बहुत पीछे रह गये। तब उन्हें मार्ग में लोगों से पूछना पड़ा कि इधर से कोई महात्मा तो नहीं गये है। तब एक व्यक्ति ने कहा कि मैंने उनको देखा तो नहीं है, किन्तु चरण चिन्हों से मालूम होता है कि इस मार्ग से गये हैं। यह रेखा जो दिखाई दे रही है, वह विशिष्ट महापुरुषों के चरणों में ही होती है। आप लोग इसी मार्ग से जाओ, श्री स्वामी जी आपको मिल जायेंगे। ऐसा ही हुआ।

एक बार वैरागियों के यहाँ महाराज जी सहित सब लोग ठहर गये। ठण्डी का समय था। एक वैरागी ने अर्द्ध रात्रि के लगभग शंख बजा दिया। महाराज उठ गये और साथियों को भी उठा दिया। शौचादिक के लिये नदी के किनारे जंगल में चल दिये। वहाँ जाकर देखा कि अभी रात्रि बहुत हैं। तब सभी लोग वहीं नदी–तट पर सो गये। महाराज तो एक बहुत पतला वस्त्र रखते थे, उसी को ओढ़ लिया। जब प्रात: उठने लगे तो उठा नहीं गया। शरीर ठण्डी से जकड़ गया। तब दो व्यक्तियों ने पकड़ कर शौच जाने के लिये बिठाया तथा जल पास में रख दिया। जब शौच से निवृत्त हो चुके तो कहा कि अब हमें उठाकर नदी के जल में गोता लगवाओ। उसी समय दो महात्माओं ने पकड़ कर अत्यन्त शीतल नदी के जल में शरीर को डुबो दिया। इस प्रकार जब स्नान कर चुके, कौपी आदि धारण कर ली फिर कन्धों पर रखकर नदी किनारे से ब्रह्मचारी लोग उनकी वापिस ले आये। महाराज ने कहा कि हमें यहाँ ले जाकर बिठा दो जहाँ प्रवचन करना है। उन्होंने ऐसा ही किया। पहले से ही सभा–स्थल में महाराज जी को बिठा दिया। समय पर लोग आये तथा प्रवचन हुआ, जिससे सभी लोग बहुत प्रभावित हुये। जब यह पला चला कि इनका शरीर ठण्डी से जकड़ा हुआ है तो वैद्यों ने उपचारादिक उपायों से उनका शरीर ठीक किया। पर्वतों पर चलते–चलते जब उनके चरणों से रक्त निकलने लगता तो वे वस्त्र लपेट लेते थे, किन्तु पादुका नहीं धारण करते थे। श्री महाराज का जीवन इस प्रकार तपोमय था।

हमें धर्म और दर्शन की जटिल समस्याओं के सम्बन्ध में उलझने की क्या आवश्यकता? हम तो आद्य श्री शङ्कराचार्य के समान उनमें श्रद्धा रखते रहे। वे जो निर्णय देते थे उसको परमप्रमाण मानते थे। श्री गान्धी और मालवीय जी के समय में बड़े-बड़े सनातनी भी न जाने कब के और कितने भटक गये होते, परन्तु धर्म की वास्तविक मीमांसा करके उन सबको बचा लिया श्री स्वामी करपात्री महाराज ने। आज जो हम ब्राह्मणों और दण्डी स्वामियों में कुछ चेतना पाते हैं, समाज में धार्मिक भावना का जागरण देखते हैं, यह सब इन महापुरुष की ही देन हैं।

वे जहाँ जाते थे, वहीं अपार जनसमूह इकट्ठा हो जाता था। उनके दर्शन करके जनता अपने को कृतकृत्य मानती थी। प्रवचन सुनकर सहस्त्रों व्यक्तियों के सन्देह निवृत्त हो जाते थे। उनके द्वारा लिखे गये ग्रंथों को पढ़कर, यथार्थ वस्तु का बोध होता है। श्री महाराज में अनेक दिव्य गुण थे, उनका कौन वर्णन कर सकता है? प्रश्न करने वाले के अभिप्राय को तत्काल समझ लिया करते थे। एक दिन हमने प्रश्न किया कि महाराज के दर्पण के पीछे जो वस्तु होती है उसका दर्पण में प्रतिबिम्ब दिखायी नहीं देता। इसी तरह अन्तःकरणावच्छिन्न जो चेतन है, उसके अनुभव की अपरोक्ष की बात तो समझ में आती है, किन्तु अन्तःकरण के रहित जो व्यापक चेतन है, उसका अनुभव कैसे सम्भव हो सकता है? महाराज जी हमारे अभिप्राय को तत्काल समझ गये और कहने लगे कि जैसे घट में जो आकाश है, वह घट के नष्ट होने पर महाकाश का रूप धारण कर लेता है, उसी प्रकार अभ्यासातिशय से अन्तः करण की अत्यन्त उपेक्षा हो जाने पर अनन्तापरिच्छिन्न चेतन का अनुभव होने लगता है। यह उत्तर सुनकर हमको बड़ा सन्तोष मिला। महाराज ब्रह्मवेता, ब्रह्मनिष्ठ और ब्रह्मस्वरूप ही थे। भगवान् से हम प्रार्थना करते हैं कि महाराज के वियोग से व्याकुल जिनका हृदय है, उन भक्तों को शान्ति प्रदान करें।

***

धर्मसम्राट श्री करपात्र स्वामी-अलौकिक महापुरुष

-श्रीमत्परमहंस परिभाजक १००८ पूज्य स्वामी श्री नन्दनन्दनानन्द सरस्वती जी महाराज, प्रधान सम्पादक, दैनिक सन्मार्ग, काशी।

षोडशानन्दनाथे मे लोक लोकैक भास्करः।
ज्ञानाम्बाश्लिष्ट सच्छक्तिश्चित्सुखैकैक विग्रहः।।
स एव ललिता रूपस्तद्रूपा ललिता स्वयम्।
न तयोर्विद्यतेभेदा, भेदकृत्पापकृद् भवेत्।।
योगतन्त्राब्धिहंसाय षोडशीसंविदात्मने।
वेदवेदांतवेद्याय करपात्रगुरवे नमः।।

माष शुक्ल चतुर्दशी रविवार तदनुसार ७ फरवरी १९८२ को प्रातः ९ बजे इस अलौकिक लीला का सम्वरण हुआ।

जन्म कर्म च मेदिव्यमेवयोवेत्ति तत्वतः।
त्यक्तवादेहं पुनर्जन्मनैति मामेतिसोर्जुन।।

'महत्संगस्तु दुर्लभो अगम्यो अमोघश्च' महापुरुष समागत दुर्लभ जीव सामान्य की इच्छा तथा अहंशक्ति से अगम्य परन्तु परिणाम में सर्वथा अमोष हाता है। इस जीवत दृष्टिबिन्दु से पूज्यपाद स्वामिवर्य केवल परब्रह्म हैं, परन्तु देखने वाले के दृष्टिबिन्दु में 'Sub Specieleternitis' शाश्वत तत्वान्वेषण की दृष्टि वाले व्यक्ति ही शाश्वत तत्व को देखने के इच्छुक हो सकते हैं और उन सहस्त्रों में कोई एक उस तत्व का साक्षात्कर्ता होता है, शेष लोग सीमित दृष्टि सम्पन्न होने के कारण सीमित व्यक्तित्व ही देख पाते हैं। आदि अन्त के दो बिन्दुओं में सम्बन्ध रेखा यह सांसारिक जीवन हैं, इन बिन्दुओं के वार असीम है, जिससे सामान्य जीव का प्रयोजन दीखने के कारण उसकी उपेक्षा करता रहता है।

अब जानन्ति मां मूढ़ामानुषी तनुमाश्रितम्।
परंभावमजानन्तो ममभूत महेश्वरम्।।

सर्वभूत महेश्वर` परम भाव को न जान सकने के कारण संसारी प्राणी उसे हाड़चाम का मानुष समझता हुआ अवज्ञा कर सकता है। किन्तु इस महाशक्ति के मानवोत्तर चमत्कार भी अनन्त हैं और उनके कृपापात्र ही उन्हें जानते हैं।

जगत की विविधता को देखते इस महापुरुष की निस्सीम शक्ति भी अनेक क्षेत्रों में फूटकर प्रसारित हुई। सौर मण्डल के केन्द्र निश्चयन के समान जर्मनी के प्रोफेसर इमानुअलकांट तथा कोपर्निकस परिवर्तन के प्रतिस्पर्धी हो स्वामी करपात्री की प्रतिभा विश्व की सभी विद्याओं, कलाओं तथा राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक आदि सभी व्यावहारिक अथवा पारमार्थिक कार्यकलापों का वास्तविक केन्द्र

सर्वभूतांतरात्मा परब्रह्म को माना और उसी की सब्ज्ञी प्राकशरश्मियों का प्रसार सभी क्षेत्रों में किया। उनकी सरल सरस्वती रसमय परब्रह्म से प्रसारित प्रथम 'भगवत्तत्व' के रूप में अवतीर्ण हुई, तदनन्तर अनादि निधनावाक् वेदवाणी के शाश्वत चिन्मय रूप की व्याख्या के रूप में प्रफुल्लित हुई।

उसी का क्रियात्मक रूप भारत की राजधानी दिल्ली का ऐतिहासिक शतमुख कोटिहोमात्मक महायज्ञ विश्व ने देखा जो विगत दो सहस्त्र वर्षों में महाराज समुद्रगुप्त के अश्वमेघ के अनन्तर नहीं देखा गया। तदनन्तर, काशी, कानपुर, उदयपुर, दिल्ली, मुम्बई आदि स्थानों में यज्ञों, महायज्ञों, लक्षदण्डी, अतिरुद्र आदि यज्ञों की एक शृंखला ही वंध गयी और उस भौतिकता के बोलबाले मं यज्ञ के विरोधयों ने भी यज्ञ करने आरम्भ कर दिये।

इसी समय "संघे शक्तिःकलौ युगे" शास्त्र विश्वासी परम्परावादी आस्तिक जनभावना की रक्षा के लिये अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ की नींव डाली गयी और इस अलौकिक महापुरुष ने आसेतु हिमाचल परयात्रा में रामेश्वर से श्रीनगर, काश्मीर और अफगानिस्थन की सीमा खैबरपास लण्डीकोतल, लण्डीखाना, पेशावर, कुर्रमपारा चिनार, बाबू, कोहाट तक धर्मसंघ की शाखाओं का एक डाल फैल गया और आस्तिक-नास्तिक जगत को आश्चर्य चंकित करने वाले धर्मसंघ के जयघोष 'धर्मकी जय हो, अमर्ध का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो और विश्व का कल्याण हो' भारतीय वायु मण्डल में गूंज उठे। विश्व महायुद्धों से कटे-फटे, द्वितीय विश्व महायुद्ध के परमाणु अस्त्रों से संत्रस्त विश्व ने प्रथम बार विश्व का कल्याण हो का जयघोष सुना तथा शाँति की आशा का अनुभव किया। इन चारों जयघोषों का गम्भर अर्थ पृथक लेख का विषय है, किन्तु विश्व कल्याण केवल प्राणिमात्र के प्रति सद्भावना से ही सम्भव है वह धर्म, सत्य, परलोक और परमेश्वर की भावना बिना सम्भव नहीं है। वहाँ अधर्मी अथवा विधर्मी के प्रति भी दुर्भावना नहीं केवल अधर्म रूप रोग के नाश की ही प्रार्थना है, अधर्मी के नाश की कामना नहीं।

परमपूज्य स्वामी जी की दैनिकचर्या अति व्यस्त रही। आप रात्रि में प्रायः १.००, १.३० बजे उठ जाते। प्रायः ४ बजे प्रभात तक प्रातः पाठ, पूजन ध्यान आदि से निवृत्त होकर भ्रमण के लिए जाते मार्ग में पाठ करते रहते। वहाँ से लौटकर पुनः पूजन में व्यस्त हो जाते। तदनन्तर गीता, उपनिषद् तथा अन्य वेदांत ग्रंथों का अध्यापन पाठ होता। लोगों के चले जाने पर पुनः ग्रंथ लेखन, भाषण आदि कार्यों में व्यस्त रहते। सायं ५ बजे से पुनः दर्शनार्थियों का तांता बंध जाता और सायं संध्या में पुनः पूजन, रुद्राभिषेक आदि में संलग्न रहते।

महाराज श्री के भाषणों के गाम्भीर्य तथा प्रभाव को वही लोग जानते हैं जिन्होंने सुना है। प्रारम्भ में संस्कृत गर्भित दुरूह भाषा से लेकर अन्तिम दिनों में अत्यन्त

सरल सरस भाषा में गूढ़तम शास्त्रीय, धार्मिक तथा राजनीतिक तत्वों की अभिव्यक्ति आपके भाषणों की विशेषता थी। वृन्दावन धाम के गोस्वामी तथा अन्य प्रकांड पण्डित श्री स्वामी जी महाराज की रासपंचाध्यायी रस के रसविभोर मधुप रहे। काशी के प्रकांड पण्डित, आचार्य और महामहोपाध्याय श्री स्वामी जी कृत शास्त्रीय व्याख्या के प्रति नतमस्तक रहे और ग्रंथाध्ययन के लिये कितनी बार आते। वाराणसेय सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय आदि विश्वविख्यात् शिक्षा केन्द्रों में पूज्य स्वामी जी की व्याख्यान मालाएं हुई, जिन्हें उन संस्थाओं ने विविध मार्गों से लिपिबद्ध, मुद्रित और प्रसारित भी किया।

श्री करपात्री स्वामी की लेखनी भगवती सरस्वती के सरस पद-विन्यास से सुशोभित सुधारसगर्भित भक्ति सुधा से लेकर गूढ़तम वैदिक कर्म कांड दार्शनिक, सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्र को आलोकित कर चुकी है। वेद प्रामाण्य मीमांसा, 'वेदार्थ पारिजात' आदि ग्रंथ वेदिक संस्कृत के लोकोतर उत्कर्ष, अकाट्य युक्तियों के आधार पर पाश्चात्य तथा प्राच्य आक्षेपकर्ताओं के मदमर्दन तथा वैदिक कर्म कांड, सनातन दार्शनिक दृष्टिकोण की अनुपम व्याख्या तथा सनातन हिन्दू संस्कृति, वैदिक धर्म, आध्यात्मिकता तथा वर्णाश्रम धर्म का लोकोत्तर महिमा से अनुप्राणित है। 'रामायण मीमांसा' श्री स्वामी जी महाराज की अद्वितीय कृति न केवल आर्य इतिहास की पोषक है, प्रत्युत फादर बुल्के जैसे ईसाई मिशनरियों की भ्रामक राम-कथाओं का युथ्कत पूर्ण खण्डन और रामायण महिमा का अद्भुत प्रतिपादक ग्रंथ है। स्वर्गीय श्री गोलवल्कर की विचार नवनीत द्वारा हिन्दू धर्म, समाज, वर्णाश्रम मर्यादाओं के विमृतरूप का प्रतिपादन तथा वीरसावरकरके हिन्दू इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ आदि भ्रामक साहित्य का संशोधन तथा सम्मार्जन पूज्य स्वामी जी के विचार पीयूष नामक ग्रंथ में जिन अकाट्य युक्तियों से हुआ हैं, वह केवल मर्मज्ञ संस्कृतज्ञों एवं शास्त्रज्ञों के सन्तोष का विषय है।

भारत की राजनीतिक क्षेत्र इस समय पाश्चात्य भौतिकवादी अन्ध परम्परा से ओतप्रोत है। नैतिक मूल्यांकन, सत्य, धर्म, परलोक, परमात्मा का प्रायः उनमें स्थान नहीं है। प्रौढ़तम प्रतिष्ठित तथा धन, जन, शासन बलपूर्ण राजनीतिक संस्थाएँ भी प्रायः राजनीतिक दर्शन मूल्य हैं। भौतिकवाद के प्रवाह में फ्रांसीसी क्रांति (French Revolution) ने जिन समानता स्वतन्त्रत तथा भातृता के उद्घोषों को जन्म दिया, उनका भी अन्धानुकरण हुआ। प्रथम बार कार्ल मार्क्स के 'कपिटल' में ही साम्यवाद और समाजवाद की भौतिक व्याख्या दार्शनिक आधार पर हुयी। पूज्य स्वामी जी का 'मार्क्सवाद और रामराज्य' राजनीतिक क्षेत्र में एक असाधारण प्रयास है। राजनीति को भौतिक विषयोपभोग तथा पूंजीवाद और श्रमिकवाद के दलदल से

समुद्घृत कर श्री स्वामी जी ने रामराज्य के मर्यादावाद और अध्यात्मवाद पर केन्द्रित किया। रामराज्य में प्रति व्यक्ति अपने कर्तव्य पालन द्वारा ही अपना, समाज का, राष्ट्र का और विश्व कल्याण का सम्पादन कर सकता है और तदनुकूल अधिकार वहन का उसका सहज अधिकार है। पूंजी और श्रम का वास्तविक मूल्यांकन कर श्री स्वामी जी ने दोनों को परस्पर पोषक बनाया, परस्पर शोषण से स्वार्थान्धता व विद्वेष तथा वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय संघर्षों को प्रश्रय मिलेगा जो मानवमात्र तथा विश्व विनाश के कारण बनेंगे। इसी का नाम आसुरी शक्ति हैं, वह विश्व को, मानव को विनाश के कगार पर पहुँचा रही है। इस सर्वनाश से बचने के लिये रामराज्य के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। विश्व के सभी राजनीतिक वादों में रामराज्य ही सर्वोत्तमवाद है। जहाँ आज की राजनीति प्रायः सभी राजनीतिक दलों द्वारा भौतिक सुख साधनों के जुटाने के आदर्शो से प्रेरित और धर्म से विमुख है, वहाँ रामराज्यवाद ही आध्यात्मिकता पर आधारित धर्म नियन्त्रित नीति प्राणिमात्र को 'अमृतस्य पुत्राः' एक परमेश्वर की सन्तान मानकर उनके प्रति सहज भातृता का समर्थन करता है। इस प्रकार राजनीतिक क्षेत्र में विश्व की सुख शांति के एकमात्र उपाय रामराज्य को ही विश्व कल्याण का एकमात्र साधन प्रतिपादित किया गया है। प्रायः बारह सौ पृष्ठों का ग्रंथ, राजनीति, समाजनीति तथा नीतिशास्त्र के विद्वानों तथा सभी राष्ट्रहित चिंतको के लिये सर्वोपकारक ग्रंथ रत्न है।

इसी प्रकार श्री स्वामी जी महाराज की लेखनी ने अनेक गम्भीर दुरुह तथा अखिल विश्व के उपयोगी साहित्य का सृजन किया। निशांधकार में विषयांध रजनीश के 'सम्भोग से समाधि' के सर्वपातक भ्रम का निवारण किया गया है। इस महापुरुष की लेखनी, वाणी, जीवन पट के सभी पटाक्षेप विश्व के सन्तप्त जीवों की संतापशांति के लोकोत्तर साधन है। इतिहास ऐसे महापुरुषों की सहस्त्राब्दियों के अन्तर से ही प्रकट करता है। आद्य शंकराचार्य के बाद यह अभिनव शंकराचार्य हिन्दू समाज एवं भारत राष्ट्र की इस विषय संकटपूर्ण परिस्थिति में एकमात्र आशा किरण अब लुप्त सी दीखती है। ब्रह्मद्रवी भागीरथी गंगा में स्वामी जी का पांच भौतिक विग्रह विलीन हुआ। सदा से ब्रह्मतत्व अपनी बाह्यशीला का संवरण कर अपने शाश्वत रूप में समा गया।

'महाराज श्री की वह मूर्ति हमारे ध्यान में आती है। जिस समय महाराज श्री की आसेत हिमालय धर्मजागरण यात्राओं में पैरों में विवाईयाँ फटी थीं। पेड़ के नीचे विश्राम था और एक ओर लकड़ियाँ बटोरकर ब्रह्मचारी द्वारा भिक्षा बन रही थी।.......दूसरी मूर्ति वह ध्यान में आती है–देश आजाद हुआ, रोशनी हुयी तब महाराज श्री ने भारत माता को खण्डित होते देखकर आंखों में आँसू भरकर कहा था

कि आज हजारों मन्दिरों में दीपक तक नहीं जला होगा। नोआखालीकाण्ड के समय नोआखाली यात्रा में बराबर रोते रहे हिन्दु धर्म के प्रति उनके हृदय में बड़ी वेदना थी। हमने हिन्दुओं का इतना बड़ा हितैषी अपने जीवनकाल में नहीं देखा वे ही आशा की किरण थे जिनके कारण ही आज देश में धर्म शेष हैं। महाराज श्री करपात्री जी ने सनातन धर्म की नीव उखाड़ने वाले यूरोप के बड़े-बड़े विद्वानों को सही उत्तर दिया। उन्होंने 'रामायण-मीमांसा' लिखकर भगवान श्रीराम एवं उनके चरित्रों की आलोचना करने वालों को सटीक उत्तर दिया। आज हिन्दुओं की माँ, बहन, बेटियों की लाज सुरक्षित नहीं है, उन्होंने जनता का सनातन धर्म एवं हिन्दु जाति को जीवित रखने का आह्वान किया था। वर्तमान समय में सनातन धर्म के उन्नायक, वैदिक व्याख्याता, हिन्दु-धर्म, संस्कृति, सभ्यता एवं गोरक्षक, हिन्दुजाति के सच्चे हितैषी, विश्वकल्याणकामी, साक्षात् धर्मस्वरूप उन महापुरुष को सदा सदा स्मरण किया जाता रहेगा। उनके द्वारा बताए मार्ग पर चलने का व्रत लेकर ही हम उनके प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर सकते हैं।'

***

गुरुवर के सान्निध्य में

श्री १००८ स्वामी श्री विपिनचन्द्रानन्द सरस्वती जी महाराज (जज स्वामी)

आनन्दवृन्दावन, मोतीझील, वृन्दावन (मथुरा)

श्रुति का आदेश है कि 'तद्विज्ञानार्थ स गुरुमेवाभिगच्छेत्समित्पाणि: श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठं' (मुण्डक २-२-१२)

श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु के प्रति उपासन्न हो।

अत: मैं अपनी हाईकोर्ट जजी का काल १९७७ में समाप्त करके मई १९८१ में अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट गुरुवर करपात्री जी महाराज की शरण हुआ और उनसे मैंने विधिवत सन्यास की दीक्षा ली। यद्यपि वे उन दिनों अस्वस्थ थे फिर भी कृपा करके उन्होंने दीक्षा प्रदान की। तत्पश्चात् चातुर्मास में उनसे पर्याप्त शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने एक बार कहा था-माता-पिता-गुरु से उपदेश और आशीर्वाद दोनों ही प्राप्त होना चाहिये। रामचरितमानस में माँ सुमित्रा ने लक्ष्मण जी को अप्रमत्त रहकर मातृ-पितृ तुल्य भगवान श्री सीता-राम की सेवा का जहां उपदेश दिया, वहाँ उनके श्री चरण कमलों में अगाध प्रीति का शुभाशीर्वाद दिया। सचमुच में श्री गुरुदेव की अनुकम्पा से ही मुझे उनसे दीक्षा, शिक्षा और शुभाशीर्वाद तीनों ही प्राप्त करने का जहाँ सौभाग्य प्राप्त हुआ वहाँ उनके अनुपम अनन्त गुणों के दर्शनों का सुयोग भी सधा।

पूज्यपाद गुरुवर से मेरा प्रथम परिचय व सम्बन्ध देहली के यज्ञ में हुआ। उनकी अलौकिक प्रतिभा और चमत्कृति का अमिट प्रभाव पड़ा। राशन पर कन्ट्रोल, विविध प्रकार के असहयोग आदि विघ्न-बाधाओं के रहते भी जिस दिव्य रीति से वह विशाल यज्ञ सम्पन्न हुआ, वह सचमुच में महाराज की अद्‌भुत धर्मनिष्ठा और भगवन्निष्ठा का आश्चर्यजनक प्रभाव ही था। तदनन्तर कई बार दर्शन एवं सत्संग का अवसर प्राप्त हुआ।

भाष्यकार भगवान श्री शंकराचार्य ने उपदेश साहस्री में गुरु लक्षण इस प्रकार व्यक्त किये हैं-

आचार्यश्चोहापोहग्रहणधारणशमदमदयानुगहादिसम्पन्नो लब्धागमो दृष्टादृष्ट भोगेध्वनासक्तस्त्यक्त सर्व कर्म साधनो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितोऽभिन्नवृत्तो दंभदर्पकुहकशा-ठ्यमायामात्सर्यानृताहंकारममत्वादिदोष विवर्जित: केवलं परानुग्रह प्रयोजनो विद्योपयोगार्थी।

शिष्य के द्वारा न पूछे जाने पर भी अपनी ओर से उत्तम युक्तियों के द्वारा समझाने में जो कुशल हो, शिष्यगत मिथ्याज्ञान निराकरण में समर्थ हों तथा ऊहापोह समर्थ हों वे आचार्य हैं। ग्रहण, धारण, शम, दम, दया, अनुग्रह और अमानित्वादि सम्पन्न हों वे आचार्य होते हैं। (विहित बोधसामर्थ्य का ग्रहण ककहते हैं। श्रुत अर्थ के अविस्मरण को धारण कहते हैं। प्रतिषिद्ध विषयों से अन्त:करण का उपरम शम कहा

जाता है। प्रतिषिद्ध विषयों से ही ब्राह्य करण के उपरम को दम कहते हैं। दु:खी प्राणियों के दु:ख दूर करने की भावना दया है। तदनन्तर दु:ख निवारण के लिये यत्न अनुग्रह है।) जो लब्धागम हों अर्थात् प्रामाणिक आचार्य से उपदेश प्राप्त हों और ऐहि- आमुष्मिक भोग से अनासक्त हों ब्रह्मवित् अर्थात महावाक्यार्थ भिज्ञ हों, ब्राह्मी स्थिति सम्पन्न ब्रह्मनिष्ठ हों अभिन्नवृत्त हों अर्थात् अपरित्यक्त सदाचार और शोचाचार हो, दम्भ, दर्प, कुहक, शाठ्य, माया, मात्सर्य, अनृत, अहंकार, ममत्वादि दोष विवर्जित हों। (अर्थात् दंभ=धर्मध्वजित्व, जिनमें न हो; कुहक=परवञ्जन, जिनमें न हो; दर्प=धनादिनिमित्त मद, जिनमें न हो; शाठ्य=नैष्ठुर्य जिनमें न हो; माया=बाहर जैसे न हो वैसा प्रकाशन, जिनमें न हो; मात्सर्य=गुणों में दोष स्थापन से जो मुक्त हों; अनृत=असत्य वचन, न बोलने वाले जो हों।) केवल परोपकाररूप प्रयोजन वाले एवं अपनी विद्या का उपयोग करने की भावना वाले जो हों, उन्हें आचार्य कहते हैं।

उक्त प्रत्येक गुण आचार्य श्री में प्रचुर मात्रा में विद्यमान थे। यही कारण था कि जिज्ञासु उनेक सम्पर्क में आकृष्ट होकर आते और प्रभावित होकर उनके सान्निध्य में कृतार्थ होते। महाराज श्री मूर्तिमान धर्म, मूर्तिमान ज्ञान, मूर्तिमती विद्या, उपासना और करुणा थे।

मैंने एक समय प्रश्न किया कि 'सदगुरु श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ दोनों ही क्यों होना चाहिये?' बोले- ''जो स्वयं ब्रह्मनिष्ठ नहीं है, वह ब्रह्म का यथाथ्र उपदेश किस प्रकार करेगा? 'असत्य से सत्य की उत्पत्ति नहीं होती', अत: जहाँ जो चीज नहीं है, वहाँ कैसे मिलेगी? ज्ञान बधारने वाले बोध चञ्चु उपदेश को अनुभावरूढ़ कैसे करा सकेंगे? परन्तु श्रोत्रिय होना क्यों आवश्यक है? इसलिए क्योंकि ब्रह्मनिष्ठ यदि परम्परा से श्रोत्रिय नहीं होगा तो भिन्न-भिन्न शंकाओं का सम्यक् समाधान करने में असमर्थ सिद्ध होगा।''

एक बार चर्चा चली कि आजकल कलिकाल में आचार-विचार, शासन, सत्ता, शिक्षा एवं मनोभाव प्राय: विरुद्ध होने पर वर्णाश्रम आदि धर्म किस प्रकार पालन किये जायें। महाराज जी ने उत्तर दिया कि ईश्वर एवं धर्म में दृढ़ विश्वास करके कट्टरता से किन्तु युक्तिपूर्वक पालन किया जाय, ताकि किसी अन्य का अपमान न हो तथा वृथा कष्ट न पहुँचे। उदाहरणार्थ-यह कहने की बजाय कि हम किसी जाति या व्यक्ति विशेष तथा बाजार का पक्क अन्न ग्रहण करते या नहीं करते हैं, यह नियम बनाना एवं बताना चाहिये कि हम अपने पूजा के भगवान को ही विधिवत लगा भोग खाते हैं तथा भगवान के शास्त्रोक्त रीति से नैवेद्य अर्पण होता है। इस नियम के पालन में किसी भी कानूनी अथवा सामाजिक आपत्ति की सम्भावना नहीं है और किसी के प्रति घृणा एवं अपमान की भावना नहीं है। इस प्रकार धर्म भली प्रकार पालन हो सकेगा।

महाराज जी ने अलौकिक उपदेश विशेषरूप से दिये -

(१) तत्व विचार निष्ठुर होकर करना चाहिये, तत्व निर्धारण में (ब्रह्मात्मैक्यबोध में) ढिलाई से काम नहीं चलता।

(२) अन्तःकरण भगवत्भक्ति से ओत-प्रोत हो, क्योंकि अन्तर्यामी परमात्मा की अनुकम्पा से ही परमार्थ प्रीति और परिपक्व स्थिति सम्भव है श्रवण-मनन तो बहुत व्यक्ति करते हैं, परन्तु बोध सबको कहाँ हो पाता है? इसलिये अन्र्यामी का अनुग्रह अपेक्षित है, तदर्थ शरणगति आवश्यक है।

(३) यद्यपि ब्रह्मतत्व में परिनिष्ठित महापुरुषों का कोई कर्तव्य शेष नहीं रहता, फिर भी प्रपञ्च की प्रतीति पर्यन्त व्यवहार शास्त्रानुकूल करना ही परमावश्यक है। ज्ञान एवं भक्ति के बल पर शास्त्र विरूद्ध आचरण क्षम्य नहीं है।

उक्त उपदेश में ज्ञान, उपासना और कर्म का कितना सुन्दर समन्वय है; वस्तुतः यह समस्त जिज्ञासु व साधकों के लिये प्रशस्त राजमाग है। साथ ही अन्य मार्ग की निन्दा करते हुये एक मार्ग को महत्व देने वालों को चेतावनी है।

महाराज जी का पार्थिव शरीर आज हमारे मध्य नहीं हैं, किन्तु अग्निरथ-न्याय के अनुसार उनका प्रतीयमान शरीर ब्रह्मज्ञान समकाल ही दग्ध हो गया था। केवल वाधितानुवृति से लोक कल्याण में संलग्न दर्शन देता था, परन्तु तत्वदृष्टि से और भावराज्य की दृष्टि से उनकी अनुपस्थिति नहीं है। आप श्री मूर्त से अमूर्त, स्थूल से सूक्ष्म, व्यष्टि से समष्टि तथा परिछिन्न से परिछिन्न हो गये। अतः अब देश काल व व्यक्तित्व की उपाधि व उसके व्यवधान के बिना समस्त अधिकारियों को दर्शन व अनुभूति निस्सन्देह निरन्तर प्रदान करेंगे।

हमारा कर्तव्य है कि महाराज श्री की पुण्य स्मृति जागृत रखते हुये, उनके निर्दिष्ट मार्ग पर सर्वदा अग्रसर रहे तथा विपत्ति उपस्थित होने पर भी धर्म प्रतिपादित मर्यादा का कदपि उल्लंघन न करें। प्रार्थना है कि महाराज श्री हमको इस कर्तव्य के परिपालन की शक्ति प्रदान करने की सर्वदा कृपा करें।

***

धर्म और ब्रह्म के मर्मज्ञ सर्वभूत हृदय धर्मसम्राट श्री करपात्र महाराज

पूज्यपाद १००८ श्री स्वामी निश्चलानन्द सरस्वती जी महाराज,
श्रीधाम वृन्दावन (मथुरा)

धर्म और ब्रह्म के मर्मज्ञ

मन्त्र और ब्राह्मणात्मक वेद और वेदानुकूल शास्त्र ही धर्म और ब्रह्म में प्रमाण हैं। धर्म भव्य (अनुष्ठेय) है, जबकि ब्रह्म घट–पटादि के समान सिद्ध होते हुए भ्ज्ञी मन और वाणी का अविषय है। इसलिये इतर प्रमाणों की इनमें गति नहीं है। विधि और निषेध मुख से वेद धर्म और ब्रह्म का निरूपण करते हैं। धर्मनिष्ठ और ब्रह्मनिष्ठ का जीवन ही जीवन है। धर्मनिष्ठा और ब्रह्मनिष्ठा से विरहित जीवन का कोई तात्विक महत्व नहीं है। धर्मनिष्ठा भी ब्रह्मनिष्ठा में ही पर्यवसित होती है। वस्तुतः धर्म का धर्म भी ब्रह्म ही है। प्रातः स्मरणीय अनन्त श्री विभूषित सद्गुरुदेव श्री स्वामी जी महाराज जहाँ धर्म–ब्रह्म के मर्मज्ञ थे, अद्वितीय व्याख्याता और लेखक थे वहाँ धर्म और ब्रह्म में उनकी अपार निष्ठा थी। भक्ति, ज्ञान और वैराग्य की उनमें पूर्ण प्रतिष्ठा थी। वे ज्ञान–वैराग्य और भक्ति की त्रिवेण ही थे। परमभागवत अर्थात् श्रीमत्परमहंस थे।

पञ्चदेवोपासक

आप श्री माँ त्रिपुरासुन्दरी की दैनिक उपासना करते हुये 'शाक्त' परिलक्षित होते थे, पार्थिव पूजन और नर्मदेश्वर पूजन करते हुये 'शैव' आलोकित होते थे, सूर्य–नमस्कार के समय 'सौर' दृष्टि गोचर होते थे और शालग्राम पूजन के समय वैष्णव। आप प्रति पूर्णिमा सत्यनारायण भगवान की पूजा करते थे और स्वयं कथा करते थे। एकादशी व्रत निर्जल ही रहते थे। वामन द्वादशी के दिन श्री वामन भगवान का पूजन करते थे। गणेश चतुर्थी के दिन गणेश भगवान का विधिवत पूजन करते समय आप पूर्ण 'गाणपत्य' ही परिलक्षित होते थे। श्रीकृष्णजन्म, श्रीराधाष्टमी, श्रीशिवरात्रि, अनन्त चतुर्दशी और ऋषिपञ्चमी का महोत्सव भी विधिपूर्वक बड़े उत्साह के साथ मनाते थे। आप धर्म के लिये सर्वस्व न्यौछावर करने को सदा तत्पर रहते थे। विग्रहवान धर्म ही थे। सनातन धर्म के रक्षक (शाश्वत धर्मगोप्ता, गीता ११–१८) थे। गोमाता, गोवंश की रक्षा के लिये प्राणों को सदा हथेली पर रखते थे। भक्तराज प्रह्लाद के समान ही सुदृढ़ सत्याग्रही थे। जहाँ अवतार काल में भी क्रूर और धर्म विरोधी सरकार का विरोध ब्राह्मण, ब्रह्मर्षि और देवर्षि तक के लिये बहुधा असम्भव परिलक्षित हुआ है, यहाँ अपने अदम्य उत्साह के साथ आजीवन सत्याग्रह कर अद्भुत धैर्य का परिचय दिया है।

रोग भी राम

भगवत्कथा के रसिक तो आप महाराजा पृथु के समान ही थे। जब चिकित्सकों की ओर से आप अस्वस्थ घोषित कर दिये गये तक भी आप की आन्तर स्वस्थता इस प्रकार झलक रही थी–''सम दु:ख सुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः। तुल्यप्रियाप्रियोधीरस्तुल्यनिन्दात्म संस्तुति।।'' (भगवद्गीता १४–२४) ''जिन्ह के श्रवण समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरिनाना।। भरहि निरंतर होंहि न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहु गृह रूरे।।'' (रामचरितमानस २०–१२७–४, ५) रुग्णता की पराकष्ठा में भी आप कहा करते थे– ''भगवान की अपार कृपा है, कहाँ कोई कष्ट है? कथा सुनने के लिये मिल ही रही है। सन्त–महात्मा और वैदिक ब्राह्मणों का दर्शन भी मिल रहा है। इससे बढ़कर भला कौन सी कृपा हो सकती है? रोना भी चाहो तो भगवान के लिये कहाँ रोया जाता है? यह तो भगवान की अपान अनुकम्पा ही है कि कथा सुनते सुनते रोना आता है।'' वस्तुतः ऐसा कहकर आप भगवत्कृपानुभूति का अनुपम रस–रहस्य व्यंजित करते थे। कोई तो भोग को योग में छिपाकर रखते हैं, परन्तु महाराजा जनक ने योग को भोग में छिपाकर रखा, लेकिन उसे भी सदा के लिये छिपाकर रख न सके, क्योंकि आन्तर योग्यता का प्रकाश परमेश्वर को ही अभीष्ट जो ठहरा भगवान श्री रामभद्र को विलोकते ही वह योग (परमात्मा में परम प्रीति) प्रकट हो गया– जोग भोग मर्ह राबेउ गोई। राम विलोकत प्रगटेउ सोई।।'' (रामचरितमानस १–१६–२)।। इसी प्रकार पूज्यपाद श्री सद्गुरुदेव ने रुद्राभिष्रक तथा विविध न्यासों द्वारा निज विग्रह को ब्राह्मी तनु के रूप में अभिव्यक्त किया तथा उन्होंने धर्म नियन्त्रित सामाजिक, राजनैतिक विविध आदर्श व्यवहार में उसे संलग्न–सा रखा था और योग (भगवान में अनन्य प्रीति) को छिपा–सा रखा था, परन्तु रोग के दर्शन का वही लोकोतर चमत्कारी प्रभाव पड़ा जो महाराज जनक पर श्रीरामभद्र के दर्शन का पड़ा था। रोग ने ब्राह्म व्यवहार का अपहरण कर लिया और अखण्ड प्रीतियुक्त भगवद्भजनमात्र को अवशिष्ट रखा।

अहर्निश कथामृत का पान करना, लीला स्फूर्ति में आनपन्दाश्रुओं को अविरल विमोचित करना, रामरक्षा–स्तोत्र, विष्णुसहस्त्रनामादिका तथा श्रीमद्भागवत, योगवासिष्ठ, उपनिषद, आनन्दरामायण, रामचरितमानस आदि का श्रवण करना, सप्तशती आदि का पाठ करना तथा सकल व्यवहारों से परम उपराम हो अखण्ड प्रफुल्लित 'पदार्थ भावना' की स्थिति में वस्तुतः स्वयं तुरीय रूप में अवस्थित अविमुक्त क्षेत्र में निवास करना, यही उनका दैनिक कृत्य अवशिष्ट था।

अलौकिक प्रतिमा

आप श्री का योगपट (सन्यास का नाम) श्री स्वामी हरिहरनान्द सरस्वती जी था। आप श्री 'करपात्री' जी के रूप में लोग प्रसिद्ध थे। अनन्त श्री स्वामी ब्रह्मनन्द जी महाराज आप श्री के गुरु थे। अनन्त श्री स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती जी महाराज आपके

परम गुरु थे। अनन्त श्री स्वामी अनिरुद्धानन्द सरस्वती जो महाराज आप के परमेष्ठि गुरु थे। 'श्री विद्या' के आप परमाचार्य थे। इस दीक्षा परिपाटी में आप श्री षोडशानन्दनाथ के रूप में प्रसिद्ध थे। षड्दर्शनाचार्य पण्डित स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रम जी महाराज से आप ने व्याकरण, दर्शन, भागवत आदि ग्रंथों का अतिस्वल्प समय में ही अनुशीलन कर सबको चमत्कृत कर दिया था। यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य (गीता १६/२३-२४) ये श्लोक आपके जीवन के मूलस्तम्भ रहे। आप महर्षि याज्ञवल्क्य, मनु, वसिष्ठ और व्यासादि के अनुसार धर्म और ब्रह्म की व्याख्या करते थे। समस्त शंकाओं का अत्यन्त सुचारऊ प्रामाणिक एवं हार्द समाधान देते थे। आप में 'अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानियोगव्यवस्थितिः।' (गीता १६/१) आदि दैवी सम्पदा पूर्णरूप में प्रतिष्ठित थी।

आप ओजस्वी और विद्वान तो साक्षात दर्शन के समान ही थे। महर्षि व्यास, आचार्य जैमिनि, शंकर और भामतीकार का एक साथ दर्शन आपके ग्रंथों और भाष्यों में होता है। शीर्षासन करते समय आप योगेश्वर परिलक्षित होते थे। नीति निरूपण में आप बृहस्पति और शुक्र के तुल्य ही थे।

"देहत्याग कहाँ और कैसे हो, इसका आग्रह नहीं रखना चाहिये। तत्त्वविचावर निष्ठुर हृदय से करना चाहिये।" एकांत में ऐसा कहकर आपने जहाँ तत्त्वनिष्ठा व्यक्त की वहाँ "देवयान से उत्क्रमण आन्तरिक योग्यता के अनुसार प्राप्त होता है। देवयान के अधिकारी की दक्षिणायन में देहत्याग से भी शुक्लगति ही प्राप्त होती है।" ऐसा कहकर आप श्री ने जहाँ उत्क्रमण-विज्ञान का रहस्योद्घाटन किया, वहाँ वाराणसी में उसमें भी केदारखण्ड में, उसमें भी साक्षात् केदारेश्वर के पार्श्व में, उसमें भी माघ शुक्ल चतुर्दशी उपांत पूर्णिमा उत्तरायण पुष्य नक्षत्र में प्रातः ९.२०, रविवार वि.सं. २०३८ (दिनांक ७-२-८२) के दिन स्वरूप में अवस्थित हो, सबसे विरक्त और विविक्त हो, शांतिपूर्वक 'शिव, शिव' कहते देहत्याग कर भक्तिनिष्ठा और योगनिष्ठा को साकार किया आप श्री ने।

जहाँ आप सिद्धांतनिष्ठ होने के कारण बाहर से बहुतों को हठी परिलक्षित होते थें, वहाँ हृदय से करुणासिधु ही थे।

विप्र-धेनू-सुर और सन्त के परमोपासक

'विप्रधेनुसुरसन्त हित लीन्ह मनुज अवतार' यह उक्ति आप के सम्बन्ध में पूर्णतः चरितार्थ होती है। आप यज्ञयुग के प्रवर्तक थे, ब्रह्मण्य देव और परम गोभक्त थे। सम्पूर्ण भारत के श्रोत्रिय ब्रह्म निष्ठ ब्राह्मण आपको अपना पोषक और आचार्य मानते थे। वस्तुतः आप सर्वभूत हृदय ही थे।

मुमुक्षुओं के शरण्य

जहाँ आप श्री धर्म नियन्त्रित राजनीति के प्रेरक और प्रकाशक थे, वहाँ मुमुक्षुओं के शरण्य थे। मुमुक्षुओं और विद्याप्रेमियों पर कृपा करके विगत कई वर्षों से आप चातुर्मास्य में वाराणसी ही विराजते थे। प्रस्थानत्रयी, अद्वैतसिद्धि, खण्डन-

खण्ड-खाद्य, चित्सुखी, पञ्चदशी, न्याय, मीमांसा, सांख्य, योग, वेद, व्याकरण, तन्त्र, नैषध एवं श्रीमाद्भागवत को पढ़ाते समय आप इन दर्शनों के समग्र रस-रहस्यों को अद्‌भुत दक्षता के साथ व्यक्त करते थे। सायं प्रवचन के सन्दर्भ में काशीखण्ड की और श्रीमद्भागवत की अनुपम व्याख्या भी करते थे। आप जन्म-कर्म से वर्णाश्रम, अवतारवाद और अद्वैतवाद के पूर्ण समर्थक थे। समन्वय की अनुपम दृष्टि आप में सहज प्रतिष्ठित थी। श्री राधासुधानिधि, महावाणी और श्रीमद्भागवत एवं श्रीमद्‌वाल्मीकि रामायण के रस-रहस्य आप के श्रीमुखचन्द्र से जिस अनुपम रीति से प्रकाशित होते थे उनका श्रवण सभी सम्प्रदाय के आचार्य आश्चर्यचकित होकर करते थे। सतत् सम्प्रदायों के प्रामाणिक आचार्य आप को हितावतार, व्यासवतार, शुकावतार, वाल्मीकि और लव-कुशावतार मुक्तस्वर से घोषित किये बिना रह नहीं पाते थे। भगवान राम और भगवती सीता में अद्‌भुत प्रीति आपको जन्म से ही प्राप्त थी। भृकुटी के मध्य और बाहों में जहाँ भस्म से ऊर्ध्वपुण्ड धारण करते थे वहाँ भाल पर त्रिपुण्ड और पूजन के पश्चात कुमकुम की बिन्दी भी धारण करते थे। गले में जहाँ तुलसी की माला धारण करते थे वहाँ रुद्राक्ष और स्फटिक की माला भी। भगवान को बड़ा प्रेम से विल्वपत्र और तुलसी निवेदित करते थे। जब कभी किसी से प्रमाद से तुलसीदल खो जाता या बहुत कम मात्रा में ही प्राप्त हो पाता, आप विह्वल-से हो जाते। जब कभी प्रचुर मात्रा में तुलसी आदि पूजन की सामग्री होती आप बड़े ही चाव से उत्फुल्लता व्यक्त करते हुए उन्हें भगवान को समर्पित करते। जब कभी तुलसी की माला आपको निवेदित करते तो आप फूले न समाते, अत्यन्त प्रसन्न होकर धारण करते और तत्काल जप प्रारम्भ कर देते। सोने, चाँदी और कागज की लक्ष्मी कभी गिनते हुये आप नहीं पाये गये। लेकिन, तुलसी और रुद्राक्ष की मालाओं को गले में धारण करते उन्हें सम्भाल कर रखते और यदा-कदा कुतुहलवश गिनते भी पाये जाते। आप मुक्त होते हुए भी लीला-विग्रह धारण करके भजन करने वाले शङ्कर, शुक आौर सनकादि एवं नारदादि सरीखे कारक कोटि के सिद्ध महापुरुषों में थे।

आप मुमुक्षुओं को प्रेरणा प्रदान करते- "भाई! श्रवण, मननादि तो बहुत से व्यक्ति करते हैं; परन्तु श्रवणादि उन्हीं के सफल हो पाते हैं जो भगवान के शरणागत हैं।" 'काशी मोक्ष धाम है। यहाँ देहत्याग से मोक्ष अवश्य मिलता है।' इस तथ्य की पुष्टि आप मुक्तिकोपनिषद, जावालोपनिषद, काशीखण्ड, केदारखण्ड, सुरेश्वराचार्य वरचित 'काशी मोक्ष निर्णयः' के अनुसार तो करते ही थे रामचरितमानस और विनय पत्रिका के अनुसार भी करते थे। आप ऋग्वेद से लेकर हनुमान चालीसा तक का सम्मान करते थे, समन्वय करते थे।

'वेदशास्त्रानुसन्धान संस्थान केदारघाट' की बात है। आपके निवास कक्ष में चूहे रात में उपद्रव करने लगे। वैसे ही आप बहुत कम सोते थे। वे चूहे तो अल्प निद्रा

में भी विघ्न पहुंचाने लगे थे। आपने सचिव-सेवक से कहा-'चूहे बहुत उपद्रव करने गले हैं। सो नहीं पाता।' उत्तर मिला-'आज्ञा मिले तो चूहे दानी में फंसाकर इन्हें गंगा में डाल दूँ या पड़ोस में छोड़ दूँ या काशी की सीमा के बाहर छोड़ दूँ?'' आप श्री मुस्कराते हुए बोले- 'अरे भाई! गंगा में छोड़ोगे तो मर सकते हैं, इन्हें बहुत कष्ट पायेंगे। इसलिए यह सब उपद्रव मत करो। हमें ही कष्ट सहने दो। शास्त्रों को जानने और धर्म पर चलने पर तो पग-पग पर कष्ट सहने के लिए तैयार रहना पड़ता है।'

आपकी उपस्थिति से श्री शंकराचार्यो की प्रतिष्ठा थी, दण्डी स्वामियों की शोभा थी। आप धर्मविरोधियों और ढुलमुल पंथियों के लिए तथा स्वयंभू आचार्यों के लिए अंकुश थे।

इस प्रकार आप श्री उन्मुक्त आत्माराम परम-निष्काम श्रीमत्परमहंस सर्वभूतहृदय श्रीहरिहर ही थे। सचमुच में धर्मनिष्ठ ब्रह्मनिष्ठ भगवद्भक्त और दीनवत्सल थे। सर्वभूतहृदय अन्तरात्मस्वरूप होने के कारण आप हमारे परमआत्मीय और साक्षात आत्म ही हैं। आपकी अनुकम्पा के अमोघ प्रभाव से हम आपके द्वारा निर्दिष्ट पथ पर आनन्दपूर्वक चलते रहें, यही प्रार्थना है।

संस्मरण

आप श्री ने देहत्याग के छह महीने पूर्व वृन्दावन बिहारी भवन वाराणसी में कहा-तात्त्विक ढंग से विचार करो तो अहंकार कोई तत्व सिद्ध नहीं होता, परन्तु थोड़ा भी प्रमत्त होते ही क्षण भरमें भयंकर उपद्रव खड़ा कर देता है। यह हमारा अनुभव है। अहमर्थ परमार्थसार में इस अहंकार की अतात्विकता का हमने विस्तारपूर्वक विचार किया है।

- वेदों में कुश, चरु आदि के लिए भी सम्बोधन है। इससे सिद्ध है कि कर्मकाण्डपरक श्रुतियाँ भी सम्पूर्ण प्रपञ्च चिदूपता-चिन्मयता ही सिद्ध करती हैं। तुम भी सबको चिन्मय-चिद्रूप-आत्मस्वरूप ही समझो।
- देहत्याग के लगभग छह महीने पूर्व आप श्री ने कहा-हमने धर्मदृष्टि के कारण अपने कई सन्निकट के व्यक्तियों-मित्रों, शिष्यों, भक्तों को समय-समय पर दूर भी रखा, परन्तु कभी 'किसी का बुरा हो' ऐसा नहीं सोचा। अब तो मैंने अपनी ओर से सबको अभय दान दे दिया है। जिन लोगों को पास आने के लिए पहले सख्त मना कर दिया था, उन्हें भी बेटा! बेटी! भैया! कहकर सम्बोधित करना आरम्भ कर दिया है। अन्तिम समय है, किसी के प्रति हृदय में यह भावना न रह जाय कि अमुक बुरा है।
- देहत्याग के लगभग सात महीने पूर्व आप श्री ने कहा-किसी को अनीतिपूर्वक सताये जाते देखकर मेरा हृदय विद्रोही बन जाता है। संस्था में समन्वय की भावना होनी चाहिए। किसी को छोटा समझ कर उसके प्रति दुर्व्यवहार नहीं होना चाहिए। सबके मान व्यक्तित्व का समादर होना चाहिये।

– देहत्याग के लगभग आठ महीने पूर्व एक प्रसंग में आप ने कहा 'अपने पक्ष का मूर्ख और विपक्ष का धूर्त समान है।' यह नियम आज तब व्यवहार में कभी व्यभिचरित नहीं हुआ। इस नियम को ध्यान में रखकर संस्था का संचालन करना चाहिये।

– वार्तालाप के संदर्भ में आपने एक बार कहा–मेरी पहले धारणा थी कि और सम्प्रदाय तो अच्छे हैं, पर मध्य सम्प्रदाय में भयंकर लोग ही रहते हैं। जब मैं दक्षिण–उडूपी की ओर गया, मध्य सम्प्रदाय के कुछ साधु सम्पर्क में आये। उनका निष्कपट गंगाजल–जैसा निर्मल हृदय देखकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अच्छे–बुरे सब जगह होते हैं। अच्छे व्यक्ति के बिना कोई सम्प्रदाय टिक ही नहीं सकता। किसी सम्प्रदाय–संस्था में कम तो किसी में ज्यादे, होते सब में अच्छे व्यक्ति है।

श्री वृन्दावन धाम में संन्यासियों को हेय–दृष्टि से देखा जाता था। परन्तु श्री महाराज जी के भक्ति भाव परिपूर्ण श्रीमद्भागवत, श्री राधा–सुधानिधि आदि ग्रन्थों के व्याख्यान सुनकर तथा परम–वैष्णवोचित जीवन का दर्शन कर सभी नतमस्तक हो गये। –'ये तो शुकदेव है' –'ये तो हमारे है' –आदि सद्भावों से उनका हृदय भर आया। वृन्दावन के श्री राधावल्लभादि गोस्वामियों के हृदय में उन वीतराग, परम वैष्णव, गोभक्त, यमुनाप्रेमी, लीलास्थल के उपासक, परम विद्वान, सन्यासी श्री स्वामी करपात्री जी के प्रति अत्यन्त सम्मान का भाव उछलने लगा। और वास्तविकता यह है कि पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज जैसे महान भगवद्भक्त, भक्ति–ज्ञान और वैराग्य के मूर्तिमान प्रतीक के वृन्दावन निवास से सन्यासी महात्माओं का दर्शन, प्रवचनादि श्री वृन्दावन धाम में भी सुलभ हो गया। श्री दण्डी आश्रम, श्री उड़िया बाबा आश्रम, श्री स्वामी अखण्डानन्द आश्रम, श्री हरि बाबा आश्रम, श्री परमहंस आश्रम, श्रोत मुनि आदि स्थलों में कथा, कीर्तन, लीला आदि का जो नियमित क्रम चलता है उन सबका श्रेय उन्हीं महापुरष को सहज में ही दिया जा सकता है।

जितना प्रेम उन्हें पवित्र वृन्दावन धाम से था उतना ही काशी से था, तो अयोध्या आदि से भी कम नहीं था। श्रीराम नवमी के अवसर पर अयोध्या में, होली के अवसर पर श्री वृन्दावन धाम में, सूर्य ग्रहण के अवसर पर कुरुक्षेत्र में, श्री गंगा दशहरा पर हरिद्वार में स्वामी जी का समान निष्ठापूर्वक निवास रहता था। कुम्भ के अवसर पर प्रयाग, नासिक, उज्जैन, हरिद्वार में तीर्थ स्नान हेतु धर्म यात्रा उनकी धर्म–निष्ठा एवं तीर्थ–निष्ठा की प्रत्या प्रतीक हैं।

काशी विश्वनाथ धाम काशी तो उन्हें अत्यन्त प्रिय रही। काशीखण्ड केदारखण्ड के माध्यम से काशी की महिमा व्यक्त करते हुए कभी नहीं अघाते थे। काशी मरण से मुक्ति लाभ का प्रतिपादन समारोह पूर्वक करते थे। काशी महात्म्य ही वर्णन करते हों ऐसी बात नहीं ज्यों ही राजस्थान में, कानपुर में या अन्यत्र कहीं स्वास्थ्य खराब हुआ

तुरन्त शीघ्रातिशीघ्र काशी पहुँचने की भावना उनके हृदय में जाग जाती और वे काशी पहुँचकर ही शान्त, प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होते–भागवान शिव के समान उन्हें भी काशी नगरी विशेष प्रिय थी।

यहाँ अधिक न कहकर इतना ही सार रूप से कह सकते हैं कि पूज्य स्वामी श्री करपात्री श्री महाराज मूर्तिमान सनातन धर्म थे, उनके महा–निर्वाण से वर्तमान समय में आध्यात्मिक क्षेत्र में जो रिक्तता आ गयी है उसको पूर्ति असम्भव है। हमारा परम कर्तव्य है कि हम दृढ़ निश्चय पूर्वक उनके द्वारा बताए गये शास्त्रीय मार्ग पर चलकर जीवन को सफल बनाएँ।

[ईश्वर यदि सत्य वस्तु हैं तो किसी के चाहने या न चाहने से उसका कुछ भी नहीं बिगड़ सकता। भले ही चमगादड़ों को सूर्य का प्रखर प्रकाश असत्, अनावश्यक एवं हानिकारक प्रतीत होता हो, परन्तु एतावता सूर्य असत्, अनावश्यक एवं हानिकारक नहीं सिद्ध होते। वैसे किसी को ईश्वर भले ही असत्, अनावश्यक एवं हानिकारक प्रतीत हो, फिर भी उसकी प्रचन्ड सत्ता का अपलाप होना असम्भव है। वस्तुतः सूर्यनारायण से भी अधिक सूर्य चन्द्र का भी भासक एक स्वतः सिद्ध सर्वमान्य वस्तु है। यह बात आधुनिक अन्वेषण, न्यायसांख्य–वेदांत–दर्शन, आस्तिकसिद्धांतो तथा आस्तिकवादों से स्पष्ट सिद्ध है। धर्म एवं ईश्वर परम सत्य वस्तु है, इसीलिये सर्वकाल एवं सर्वदेश से इसकी मान्यता रही है।]

– करपात्र स्वामी

ब्रह्मलीन श्री चरणों में निवेदन

–पण्डित राजनिरीक्षणपति मिश्र, वाराणसी

श्री काशी विद्वत्परिषद के संरक्षक, श्री धर्मसंघ, रामराज्य परिषद आदि दर्शनों संस्थाओं के संस्थापक, महामनीषी तत्ववेता, अनन्त श्री विभूषित धर्मसम्राट् पूज्य स्वामी श्री करपात्री (हरिहरानन्द सरस्वती) जी महाराज उत्तरायण माघ शुक्ल चतुर्दशी को काशी केदारखण्ड के वेदशास्त्रानुसंधान केन्द्र में श्री गंगा तट पर अपनी इच्छा शक्ति से शास्त्रीय विधि से ब्रह्मलीन हो गये। वे तपोनिधि पुष्पपुंज थे। उन्हें अपने महाप्रयाण का पहले से आभास था। इधर काशी से बाहर की यात्रा बन्द कर खाते–पीते–सोते और घूमते श्री गंगाजल शालग्राम और तुलसी पत्र सदा साथ रख आदेश दे रखे थे कि मेरे तिरोधान के समय केदार घाट का गंगा तट रहे एवं मेरे मुख में उपर्युक्त तुलसी पत्र और शालग्राम का गंगाजल युक्त चरणोदक रहे। प्रातः नित्य की भांति प्रसन्न मुद्रा में स्नान पूजन के बाद भी दुर्गापाठ सुन रहे थे इसी बीच सहसा बोल उठे कि नीचे मन्दिर में कुशासन बिछाओ और मेरे मुख में उपर्युक्त वस्तुओं को दो। बिना विलम्ब ऐसा होते ही पद्मासन लगाकर ॐ नमः शिवाय का जप करते तीन हिचकियों के ब्याज से ब्रह्मलीन हो गये।

यह वज्रपात के समान शोक समाचार विद्युतगति से न केवल काशी परन्तु समस्त भारत में फैल गया। चारों ओर से धर्माचार्यगण, सन्त महात्मा, विद्वान् और श्रद्धालु भक्तजन शोकाकुल हो दौड़ पड़े। उनके अन्तिम दर्शन सजल नेत्रों से करके सभी बिलख उठे। उनके पार्थिव शरीर को शवयात्रा द्वारा कई लाख लोगों के समूह ने श्री केदार घाट के सामने गंगा जी की गोद में सदा के लिये प्रवाहित कर दिया। 'असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्। काश्यावासः, सतमंगो गंगाभ्यः शिवपृजनम्।' अर्थात् इस निस्सार संसार में काशीवास, सत्संग, गंगाजल और भगवान् शंकर की पूजा चार ही सार वस्तु हैं। ये चारो पूज्य चरण को प्राप्त थे। वे कुछ ही क्षणों में सबको छोड़कर प्रसन्न मुद्रा में सदा के लिए छोड़ गए।

'अनायासेन मरणं वाल्वस्य तपसः फलम्' के अनुसार विनाक्लेश शरीर त्याग बड़े पुष्प का फल है। इस प्रकार का महाप्रयाण उनके पुष्पपुंज का निकष है। ऐसे ही महापुरुष के विषय में महाकवि भूर्तृहरि ने लिखा है–

सृजतितावविशेव गुणाकरं पुरुष रत्न लंकरण भुवः।
तदपि तत्क्षणभंगि करोति चोदहकष्टम् पण्डितताविधेः।।

अर्थात् अनेक गुणों के निधान एवं संसार के अलंकार ऐसे महापुरुषों को बनाकर उसी समय उनके साथ मृत्यु का संयोजन कर देना सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की मूर्खता है। जो भी हो वे चले गये अब उस पावन तपःपूत विग्रह के दर्शन, त्रिकाल त्रिपुर सुन्दरी पराम्बा के साथ अन्य देवों का पूजन, वेणुगीत और रासपंचाध्यायी से लेकर श्री

रामचरित मानस तक के रहस्यों का प्रवचनों द्वारा ग्रन्थिभेदन पुरस्सर तत्व प्रदर्शन, विचार पीयूष, वेदार्थ परिजात जैसे दर्जनों ग्रंथों के प्रणयन से सरस्वती सदन को सुषमा का समर्थन संस्कृत के कठिन दुर्गम ग्रंथों का विद्वानों को पढ़ाना एवं पूर्णनिष्ठा के साथ शास्त्र पद्धति से आचरण द्वारा सबका प्रशिक्षण आदि गुणगण अब न मिलेंगे। पर सन्त कबीर के शब्दों में यह गति सबके लिए अनिवार्य है जैसा कि उन्होंने कहा है–

अया है तो जाएगा राजा रंक फकीर, देह धरे का भोग है सब काहू को होय।

भगवान् श्री कृष्ण ने गीता में 'आतस्य हि ध्रुवो मृत्युः' कहकर ऐसे समय सबको धैर्य बंधाया है। जैसा लिखा है–

मातुलो यस्य गोविन्द पिता यस्य धनञ्जयः,
सोऽभिमन्यूरणेशेते कालोहि दुरति क्रमः।

अर्थात् जिसके मामा भगवान् कृष्ण और पिता महारथी अर्जुन थे वह अभिमन्यु नवीनवय में ही रणांगण में सदा के लिए सो गया था। अतः काल की गति अटल है ऐसा मानकर विवश हो सन्तोष करते हुये हम श्री विश्वनाथ में विलीन श्री चरणों से प्रार्थना करते हैं कि वे अपने समान तेज पुंज को शीघ्र भेजकर अनाथ सनातन धर्म एवं बिलखते हुये धार्मिक जगत का पथ प्रदर्शन कर सनाथ करें। वे तो 'कीर्तियस्य सजीवति' के अनुसार अमर हैं। उवके पावन चरणों में प्रगति पुरस्सर यही निवेदन तथा श्रद्धांजलि समर्पित है कि–

करपात्र महाराज विश्वनाथ स्वरूपवान,
त्वादशं सत्वरं प्रेष्य देवानुगृहाण नः।।

प्राणी को चाहिए कि परलोक सहायता के लिये भूतों की न हताकर शनैः शनै धर्म का संचय को। मनु कहते हैं कि 'परलोक की सहायता के लिये पिता, पुत्र, द्वारा, धन, जाति आदि भी नहीं ठहरते, यहां तो केवदा एक धर्म ही टिकता है। प्राणी अकेला ही उत्पन्न होता है, अकेला ही नष्ट होता है और अकेला ही अपने पुण्यों एवं पापों को भोगता है। मरे हुये शरीर को काष्ट-लोष्ट के समान छोड़कर बन्धुवर्ग चले जाते हैं, उस समय एक धर्म ही प्राणी के साथ जाता है। बुद्धिमान को चाहिये कि अपनी सहायता के लिये धर्म संचय करता रहे।

– करपात्र स्वामी

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

-प्रो. करुणापति त्रिपाठी, भू. पू. कुलपति, संस्कृत विश्वविद्यालय

अनन्त श्री विभूषित स्वामी करपात्री जी महाराज भारत की अप्रतिम विभूति थे। वे धर्म-सम्राट एवं धर्म की साक्षात मूर्ति थे। ऐसी विभूतियां धरती पर शताब्दियों में कभी-कभी अवतीर्ण होती हैं। उनके समग्र व्यक्तित्व का साक्षात्कार और वर्णन करना अत्यन्त दुष्कर है। उनकी महत्ता कितनी विशाल और उत्तुंग है इसका आकलन आज इसलिये सम्भव नहीं है कि हम लोग उनके अत्यन्त निकट के हैं। काशी में उनके सतत रूप से रहने के कारण काशी-वासियों के लिये उनका सान्निध्य कितना घनिष्ठ था उनकी इस महिमा का ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं हो सकता। भारतीय संस्कृति, संस्कृत वाङ्मय धर्म तथा काशी के मूर्धन्य पण्डितों का जब इतिहास लिखा जायेगा तब उनके महान विभूति सम्पन्न, विशाल व्यक्तित्व के स्वरूप का परिचय कुछ-कुछ मिल सकेगा।

'स्वामी जी के शिव-सायुज्य से धर्मशास्त्र और सनातन-धर्मी आचार निष्ठा का एक ऐसा ज्योति स्तम्भ महाकाल के शाश्वत सागर में विलीन हो गया जिसकी पूर्ति सम्भव नहीं लगती। आदि शंकराचार्य के बाद ज्ञात इतिहास में दुनिया श्री करपात्री जी महाराज को ही जानती हैं, जिन्होंने सनातन धर्म और भारतीय संस्कृति की उपासना में अपना जीवन समर्पित किया। उनकी स्मृति में श्रद्धा सुमन समर्पित हैं।'

वे एक जागरूक चिंतक थे। वर्तमान युग की समस्याओं को शास्त्रीय दृष्टि से जितनी गहराई और सूक्ष्मता के साथ समस्याओं का आंकलन करते थे, उनकी ही गम्भीरता के साथ शास्त्रानुसारी समाधान भी वे ढूंढ़ने का प्रयास करते थे, आज के युग में विश्व के सभी विकसित देशों में पश्चिम के दार्शनिक 'मार्क्स और फ्रायड' के विचारों का जितना प्राबल्य और प्रभाव है, उतना और किसी दर्शन बोध का प्रसार नहीं है। स्वामी जी महाराज ने उनके भौतिकवादी कल्पित मान्यताओं का बड़ी गहराई से परीक्षण करते हुए उनका खोखलापन और उनकी निस्सारता प्रतिपादित की है इसके साथ ही उन्होंने भारतीय शास्त्रों की एवं आध्यात्मिक दृष्टि के गम्भीर परिचिंतन के साथ समाधान भी प्रस्तुत किया। मार्क्सवाद और रामराज्य, पूंजीवाद, समाजवाद आदि विषयक उनकी कृतियों में इनका अवलोकि किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय मान्यता में अडिग आस्था होने के साथ उस दृष्टि से समय पर उत्पन्न वाले अनेक सामाजिक, धार्मिक प्रश्नों के समाधान में शास्त्र-पोषित पक्ष को वह उपस्थित करते रहे हैं।

वे सच्चे अर्थों में धर्मप्राण एवं धर्मसम्राट थे। भारतीय सनातन धर्म के पारम्परिक मान्यतानुसारी व्याख्याता थे। केवल वह इन विषयों में मौखिक प्रवचन ही नहीं करते

थे, अपितु इसके लिये उन्होंने धर्म संघ नामक धार्मिक और सामाजिक संस्था की स्थापना की। अपने सिद्धांतों के प्रचारार्य सन्मार्ग दैनिक पत्र(काशी और कलकत्ता) का ४५ वर्षों से प्रकाशन कराते रहे हैं। धर्म की गूढ़ युत्थियों को सर्वबोध्य बनाने के लिये 'सिद्धांत' नामक मासिक पत्र का वर्षों तक उनकी संरक्षता में प्रकाशन हुआ। सामाजिक और राजनैथ्तक क्षेत्र में सनातन धर्मी भारतीय मान्यता को प्रतिष्ठित करने के लिये उन्होंने अखिल भारतीय स्तर पर 'रामराज्य परिषद' नामक राजनीतिक संस्था की स्थापना की जो आज भी जीवित है। इसके अतिरिक्त भारत के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक लगभग ४०-४२ वर्षों तक धर्म, आध्यात्मिक भावना, सच्चारित्व, धर्म में रुढ़ आस्था एवं सनातन धर्मों आचार-प्रतिष्ठा के लिये वे निरन्तर प्रयास करते रहे।

वे तपस्वी, धर्मनिष्ठ, त्यागी और सरल प्रकृति के व्यक्ति थे सच्चे अर्थ में महात्मा थे जिसका लक्षण शास्त्रों में बताया गया है- मन, वचन और कर्म में जो एक सा होता है वह महात्मा माना जाता है और जिसके मन में कुछ दूसरा वचन में कुछ दूसरा और कर्म में कुछ दूसरा जीवन होता है वह दुरात्मा होता है :-

मनस्येकं वचस्यैकं कर्मव्येके महात्मानाम्।
मनस्यन्यद् वचनस्यन्यद् कर्मण्यन्यद् दुरात्मानाम्।।

उनकी मेघा और संस्कृत वाङ्मय का अगाध जीवन्तज्ञान ऐसा था कि जिसका दूसरा उदाहरण मुझे नहीं दिखाई पड़ा। आज से ४०-४२ वर्ष पूर्व जब नगवा में गंगा-तरंग नामक भवन में रहते थे, तब मैं प्रधान नगवा पाठशाला (श्री शिवकुमार गोविन्द सांगवेद विद्यालय, प्रधान नगवा, वाराणसी) से व्याकरण शास्त्र का अंशकालिक अध्ययन करता था। उन्हीं दिनों सायंकाल अपने ममेरे भाई श्री श्रीनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा स्वामी जी की प्रशंसा सुनकर, स्वामी जी के दर्शनार्थ्ज्ञ कभी-कभी जाता था उस समय मैं व्याकरणाचार्य हो चुका था। स्वामी जी के यहाँ जब भी पहुँचता तब देखता था कि वे सायंकाल मीमांसा शास्त्र का अध्यापन करते रहते थे। वहीं उनका दर्शन हुआ। उस समय उनके समीप कभी-कभी थोड़ी देर मैं बैठ भी जाता थसा और देखता था कि पूर्वाधीत मीमांसा शास्त्र के रहस्य एकाएक उनकी मेघा में प्रतिभा के प्रकाश से उद्भासित हो जाते थे और वे अप्रतिहत गति से पढ़ाने लगते थे। तभी से मैं उनका भक्त बन गया था।

संस्कृत विश्वविद्यालय में अब मैं शिक्षा शास्त्र विभागाध्यक्ष था, उन दिनों तत्कालीन कुलपति ने मेरे और डाक्टर विद्या निवास मिश्र के आग्रह से भारतीय दर्शनों पर आठ दिनों का सायंकालोत्तर समय में एक व्याख्यान माला का आयोजन कराया था। जिसमें सभी आस्तिक-नास्तिक, आदमिक-नैगमिक, बौद्ध, जैन दर्शनों के साथ-साथ मीमांसा आदि षड्दर्शनों पर स्वामी जी का व्याख्यान प्रतिदिन लगभग २ से ३ घंटे तक होता था। उन्होंने मीमांसा वेदांत आदि षड्-दर्शनों के अतिरिक्त जैन और बौद्ध आदि

दर्शनों का समस्त शाखाओं पर जितनी पूर्णता, गहराई और सरल शब्दों में बौद्धगम्य भाषण दिया था, वैसी भाषण माला भारतीय दर्शनों पर आज तक सुनने को नहीं मिली। प्रति वर्ष जन्माष्टमी के अवसर पर वैष्णव दर्शन की विभिन्न शाखाओं, कृष्ण भक्ति तथा अन्य वैष्णव भक्ति मार्गो पर अत्यन्त गम्भीर पर साथ ही साथ जनता के लिये सुबोध्य उनका भाषण भी संस्कृत विश्वविद्यालय में होता था। जिसे सुनने पर ऐसा लगता अमृत की मानो वर्षा हो रही हो।

इसी प्रकार के व्याख्यान वृन्दावन भवन और एक बार सनातन धर्म इण्टउ कॉलेज में चातुर्मास्य काल में प्राय होता था, और मुझे जब भी सौभाग्य मिलता, मैं उस व्याख्यान के पीयूष वर्णन में सम्मिलित हो जाता। कहने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि वे कई घण्टे तक व्याख्यसान देने में थकते नहीं थे और गम्भीर से गम्भीर शास्त्रीय एवं दार्शनिक विषयों को सरल से सरल जनता बोध्य भाषा में उपस्थित करते थे। श्रीमद्भागवत, राधा सुधानिधि, षटसन्दर्भ आदि पर भाषण करते हुये वे स्वयं रसमय एवं रसतरल हो उठते थे। इसी प्रकार रामचरित मानस पर उनके व्याख्यान जितने पांडित्यपूर्ण, सरस और भक्तिपूर्ण होते थे उसकी तुलना भी नहीं हो सकती।

भक्तिशास्त्र पर उनकी अनेक रचनायें हैं। उनकी रचनाओं का आकलन मैं अल्पबुद्धि यहाँ नहीं कर सकता। पर भक्तिशास्त्र का एक तुच्छ अध्येता के कारण मैं उनके एतद् विषयक, ग्रंथों लेखों और भाषणों को अत्यन्त औत्सुक्य के साथ समझने का प्रयास करता था। भक्ति विषयक उनका नवीनतम ग्रंथ भी पढ़ रहा हूँ जो परम भक्तिमय एवं पांडित्यपूर्ण है।

उनकी अन्तिम योजना और 'वेदशास्त्रानुसंधान संस्थान' की स्थापना बहुत ही वृहद रही। 'वेदार्थ पारिजात' के दोनों खण्ड उनकी अमर कृतियाँ हैं जो युग-युग तक सनातनधर्म प्रेमी जनता को प्रेरणा देती रहेंगी।

वे तपस्वी, योगाभ्यासी, नित्य नैमितिक धर्मानुष्ठान-पारायण प्रखर और अप्रितम एवं उद्‌भट विद्वान एवं परम पूज्य महात्मा थे। उनके विषय में इन कतिपय शब्दों के साथ अपनी भक्तिभावपूर्ण भावनाभरित, दुखाश्रुपूरित श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ और सोचता हूँ कि शिवसायुज्य प्राप्त ब्रह्मलीन स्वामी जी के आशीर्वाद से उनके अपूरणीय कार्यों को पूरा करने का प्रयास कैसे होता है।

***

स्वामी जी का अलौकिक व्यक्तित्व

–वैद्य सम्राट श्री बृजमोहन दीक्षित, धूपचण्डी, वाराणसी

स्वामी जी की गणना सामान्य पुरुषों में नहीं की जा सकी। वे दिव्यगुण सम्पन्न विभूति थे भारत के। अधार्मिक वृत्तियां बढ़ रही थीं, चतुर्दिक आक्रमण हो रहे थे सनातन धर्म पर, व्याकुल तथा किंकर्तव्यविमूढ़ थे धार्मिक जन कोई पथ प्रदर्शक व धैर्य बंधाने वाला न होने से, भयभीत सा या सारा धार्मिक समाज। ऐसी विकट परिस्थिति में अवतीर्ण हुये महाराज धर्मरक्षार्थ और अन्तिम क्षण तक अवलम्ब रहे आस्तिक जगत के।

मानव परीक्षा के ३ साधन हैं– (१) सामुद्रिक, (२) गृहस्थितिक (३) लाक्षणिक। रेखा विशेषज्ञ महाराज की हस्त, पाद, मस्तिष्क रेखायें देखकर चकित रह जाते और कहते थे सब रेखायें असाधारण हैं जो सामान्य पुरुषों में नहीं मिलती। गृह स्थिति के पारखी ज्योतिविद् भी महाराज की जन्मपत्री देख यही कहते। लाक्षणिक ज्ञान का मुझे स्वतः अनुभव है क्योंकि यह आयुर्वेद का विषय है। उत्तम, मध्यम तथा साधारण पुरुषों की परीक्षार्थ विभिन्न शारीरिक अवयवों की परीक्षा विधि विस्तार में लिखी गयी है। महाराज के लक्षण असाधारण थे जो उनकी महत्ता के परिचायक थे।

असाधारण विद्वता, वक्तृत्वशक्ति, लेखनशक्ति, विचार विनिमय आदि महाराज के सहज युग थे। यह सब पढ़ने लिखने परिश्रम व अभ्यास के संभव नहीं। किसी विषय का अभ्यास करने से पहले ही उस विषय का पारंगत हो जाय कोई किन्तु हर विषय का समान ज्ञान परिश्रम साध्य नहीं हो सकता।

वेदमूर्ति स्वामी जी

सन् ६२ की बात है। चार दाक्षिणात्य वैदिक विद्वान काशी आये, स्वामी जी से वेद की चर्चा करने। ऋक्, यजु, साम ३ वदों के प्रसिद्ध विद्वान थे। लोगों ने उन्हें मेरे पास भेज दिया कि वे आप को स्वामी जी मिला देंगे। वे आये मेरे पास और स्वामी जी ने मिलने की इच्छा प्रकट की, मैंने दूसरे दिन उनसे आने को कह सायंकाल स्वामी जी के पास गया और उक्त विद्वानों की चर्चा की। स्वामी जी मुस्कराये और कल ४ बजे सायंकाल मिलने का समय दिया। दूसरे दिन कौतुकवश मैं भी उनके साथ गया। मुझे भी संदेह था कि स्वामी जी का क्या वेदों में भी वैसा ही अधिकार होगा जैसा अन्य शास्त्रों में है।

लगभग ३ घंटे तक शंका समाधान का क्रम चलता रहा, अन्त में चारों विद्वान महाराज के चरणों में मस्तक हो हाथ जोड़ बोले महाराज आप वेदमूर्ति हैं साक्षात् यह सब अध्ययन का ज्ञान नहीं। हम लोगों ने भी गुरु परम्परा से सारा जीवन बिया दिया अध्ययन में किंतु आज जो श्रीमुख से व्याख्या सुनी लगा वेद स्वयं अपनी व्याख्या कर रहे हैं।

स्वामी जी पहली बार आये तपः काल में हरिद्वार भगवती भागीरथी के दर्शनार्थ। असाधारण तेज मुख मण्डल पर, वाणी में जादू पा मदन मोहन मालवीय जी मुग्ध हो गये दर्शन कर और अनुनय विनय कर महाराज को लोककल्याणार्थ राजी कर लिया।

बड़ी विषम परिस्थिति थी उस समय। विदेशी सरकार यज्ञ विरोधी थी। स्वामी जी ने २ फरवरी से ९ फरवरी १९४४ तक दिल्ली में तथा ४ अप्रैल से ११ अप्रैल १९४४ तक कानपुर में शतमुखकोटि होमात्मक महायज्ञानुष्ठान कराये तदुपरांत २९ अक्टूबर से ७ नवम्बर १९४४ तक 'सार्द्धद्वयकोटि होमात्मक एक विशंत्युत्तर शतमुख सर्ववैदिक शास्त्रीय रुद्र महायज्ञ' का आयोजन काशी में सम्पन्न कराये। उस समय तक के यज्ञों में काशी का यह यज्ञ सबसे बड़ा था। सहस्त्रों वैदिकों ने इसमें भाग लिया था। लाखों की भीड़ रहती थी। स्वामी जी के प्रवचन में रात को १२ बजे तक जन समुदाय मन्त्र मुग्ध सा शांत सुनता रहता था। परन्तु पिछले यज्ञ में कानपुर के कुछ बड़े सेठ यज्ञ में उनका पैसा न लेने से घोर विरोधी हो गये थे, यहाँ भी हिन्दू विश्वविद्यालय विरोधी, नास्तिक वर्ग तो विरोध में कमर कसे ही था उस पर हजारों व्यक्तियों का प्रतिदिन जलपान, भोजन आवास, कन्ट्रोल का भीषण संकट सभी विपरीत वातावरण था। बिजली, पानी की व्यवस्था के लिये मैं तत्कालीन आयरिश कलक्टर वर्नीड से मिला। वह संस्कृत का अच्छा ज्ञाता था इसलिये मेरी घनिष्ठता थी। मैंने कहा कलक्टर की हैसियत से कुछ मत करो, किंतु वर्नीड की हैसियत से तो कर ही सकते हो और अन्त तक उसने सभी सहायता की।

गेहूं, चावल आदि का भण्डार भरा था। विरोधियों ने सप्लाई अफसर से शिकायत की "नाजायज ढंग से नगवा में इतना गल्ला इकट्ठा है क्यों नहीं छापामार कर पकड़ते आप।" उसने कहा मैं देखूंगा आप परेशान न हो। वह मुसलमान था, जब कई बार शिकायत लेकर गये लोग और छापा मारने का आग्रह किया तो उसने कहा आप की रामायण में लिखा है यज्ञ जब होता था कुछ विघ्न करने वाले थे। क्या आप उन्हीं में है? लज्जित हाकर चले गये सब बाद में उसने मुझे बातया सब और आश्वासन दिया। दीक्षित जी! सरकारी तौर पर मैं कोई मदद नहीं कर सकता लेकिन आप लोग जो भी कर रहे हैं निश्चित होकर करिये मैं कतई नहीं बोलूंगा। यह प्रभाव था यज्ञ का और स्वामी का। यज्ञ की परिक्रमा करने वालों में मुसलमान स्त्री, पुरुष भी दिखाई देते जो बड़ी श्रद्धा से परिक्रमा करते थे।

यज्ञ में स्वयं-सेवकों की आवश्यकता थी। पं. गौरीशंकर जी मिश्र हिन्दू विश्वविद्यालय के लाईब्रेरियन स्वामी जी के भक्त थे। १००० स्वयं सेवको को लिस्ट स्वामी जी के सन्मुख रखी और कहा महाराज ये बड़े निष्ठावान परिश्रमी तथा आज्ञाकारी छात्र हैं सेवा करेंगे हर प्रकार यज्ञ की। मैं मन्त्री था प्रबन्ध समति का

बड़ा विरोध किया मैंने इस लिस्ट का। मैंने महाराज से निवेदन किया इनका कोई भरोसा नहीं इन्हें न रखना चाहिये। मिश्र जी के आग्रह पर तथा स्वामी जी की भी रूचि देख विवश मुझे स्वीकार करना पड़ा। किन्तु मैं आश्वस्त नहीं था अत: जिन घरों में मेरा चिकित्सकीय सम्बन्ध था ऐसे घरों के १०० यदुवंशी धर्मवीर अलग से नियुक्त किये और उन्हें भलीभांति समझा दिया। कि आवास, यज्ञमण्डप, सभा स्थल, भोजनालय सब की भली भांति रक्षा करें इनका कोई भरोसा नहीं रक्षक ही भक्षक बन सकते हैं। वे निष्ठावान धर्मवीर सतत सचेष्ट रहे और उनकी सहायता ने ही सम्पूर्ण कार्य निर्विघ्न समाप्त हुआ।

स्वामी-जी का तपोबल

एक दिन वही मिश्र ही के निष्ठावान स्वयं सेवकों ने रात १० बजे नारे बाजी आरम्भ की। धर्म का नाश हो, अधर्म की जय हो, विश्व का संहार हो, प्राणियों में दुर्भावना हो। मैं अपने कार्यालय में था दौड़ा गया पूछा क्या बात है? आप लोग यह क्या कर रहे हैं? बोले यज्ञ नहीं यह पाखंड है हम लोग कुली नहीं, भोजन किसी काम का नहीं मिलता। मैंने पूछा आप क्या चाहते है? बोले-हमे प्रति व्यक्ति २० रूपये मिल जायय हम अपना प्रबंध कर लेंगे। मैंने कहा-इसे लिये इन नारों की क्या आवश्यकता है? चलिये ४ आदमी मेरे कार्यालय में कल के लिये अभी २००० रूपये ले लीजिये अपना प्रबन्ध कीजिये। वे रुपया लेकर चले गये। २ दि बाद वही पुनरावृति और जोश के साथ। स्वामी जी भी कोलाहल सुन वहीं आ गये मैंने पुन: पूछा अब क्या है? बोलें-हमें रुपया नहीं चाहिये हम मजदूर नहीं अभी भोजन दीजिये। मैंने कहा-रसोईघर का कार्य समाप्त हो गया है, कर्मचारी एकत्र करने व बनाने में समय लगेगा २ घंटा बाद आप भोजन कीजिये मैं अभी प्रबंध करता हूँ किन्तु वे किसी प्रकार राजी न हुये नारे लगाते रहे। अन्त में स्वामी जी ने कहा क्यों देर करते हो इन्हें अभी भोजन कराओ, बहुत परिश्रम किया है इन्हें दूध भी पिलाओ। मैं स्वामी जी की ओर देखने लगा। बोले देखते क्या हो, वहाँ अन्नपूर्णा बैठी है भोजन कराओ। मैनें वहाँ बैठे कानपुर के सुदर्शन वाजपेयी को भेजा वे देखकर इतने भाव विभोर हो लौटे कि मार्ग में कैम्पों के खूंटे से पैर छिल गये रक्त स्त्राव हो रहा था उन्हें ध्यान नहीं। बोले-भाइयो! आश्चर्य है सब झाल भरे हैं सारी सामग्री भी पड़ी है भोजन आरम्भ हुआ कुछ ने सब्जी ही खाना आरम्भ किया कि घट जाय तो हल्ला करें किन्तु वह तो अन्नपूर्णा का भंडार था स्वामी जी का तपोबाल।

दूध केवल ५०० याज्ञिक ब्राह्मणों के लिये आधा सेर प्रति व्यक्ति के हिसाब से मेरी पर्ची के अनुसार आता व बड़े कड़ाव में गरम किया जाता था। उस दिन याज्ञिकों को दूध नहीं पहुँचा था क्योंकि स्वयं सेवक आन्दोलन कर रहे थे। दूध पिलाया जाने लगा इन्हें। होड़ लगा दी ९-९, १०-१० पुरवा (कुल्हड़) तक पी गये

कुछ लोग कि किसी प्रकार खतम हो जाय और हमें हल्ला मचाने का अवसर मिले। किन्तु दर्शकों के आश्चर्य का ठिकाना न रहो केवल २-३ अंगुल कम हुआ कड़ाव। फिर याज्ञिकों को और धर्म वीरों को भी दूध दिया गया अनेक धाार्मिक जनों ने भी इसे स्वामी जी का प्रसाद समझ पान किया। उस समय हजारों व्यक्तियों ने यह चमत्कार देखा और बहुत देर तक महाराज की जय जयकार में आकाश गूंजता रहा।

स्वामी जी का रानीति में पदार्पण

लोक सभा व विधान सभाओं में अधार्मिक वातावरण देख आप बहुत दुःखी हुये और राम-राज्य परिषद की स्थापना लोक कल्याणार्थ किया जिसने निर्वाचनों में भाग ले आंशिक सफलता भी प्राप्त की किन्तु यग का प्रभाव, वांछित सफलता न मिली जिससे कार्य कर्त्ताओं का उत्साह मन्द पड़ गया और आगे प्रगति न हो सकी। लखनऊ के यज्ञ के अवसर पर हम लोगों ने महाराज से मोटर पर चलने की प्रार्थना की जिसे महाराज ने बड़े संकोच से आरम्भ किया और सारे देश में नवीन धार्मिक चेतना का दर्शन हुआ धार्मिक जगत को।

वेदभाष्य व अनेकों ग्रंथ

महाराज ने अनेकों वेदशाखा सम्मेलन देश के विभिन्न भागों में आयोजित किये और वेदों के भाष्य का कार्य आरम्भ किया तथा अनेक ग्रंथों की रचना की आपने साम्यवाद पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला और उस विषय पर भी एक पुस्तक लिखी।

महाराज का महाप्रयागण

कुम्भ का अवसर था। तत्कालीन प्रान्त के मुख्यमन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने कुम्भ के अन्तिम दिनों कुम्भ मेला में हम लोगों की प्रेरणा से एक प्रज्ञा सम्मेलन आयोजित किया था जिसमें देश भर के प्रमुख विचारक विद्वान आमन्त्रित थे। मेरी ही देखरेख में यह सम्मेलन होने वाला था। शिक्षा निदेशक श्री ठाकुर प्रसाद सिंह जी के कार्यकर्त्ता गाड़ी लेकर मेरे आवास पर आ गये थे मैं प्रयाग जा रहा था किन्तु वह फाइल मिलने में कुछ विलम्ब हुआ इसी बीच अलख ब्रह्मचारी जी गाड़ी लेकर आ गये, बोले चलकर स्वामी जी को देख लीजिये। यों तो सब ठीक है प्रातः उठकर नियमानुसार पूजन आदि सब किया है किन्तु उसके बाद आसन पर बैठे तो मुखाकृति कुछ परिवर्तित सी लग रही है। मैंने कहा सब ठीक है कोई बात नहीं अभी तो परसों मैंने देखा है। फिर भी मैने अपने पुत्र चिरञ्जीव शशिकांत दीक्षित को जो मेरे साथ स्वामी जी की चिकित्सा में सहयोगी थे भेजा और कहा दवा की पेटी ले लो कोई आवश्यकता हो तो दवा दे देना। चले गये और मैं गाड़ी में बैठ ही रहा था कि फोन आया ''स्वामी जी नहीं रहे'' स्तब्ध रह गया यह सुनते ही और कार्य-कर्ताओं से कहा आप लोग जाइये सब देखिये और मैं स्वामी जी दर्शनार्थ पहुँचा केदार घाट। स्वामी जी सदा की भाँति प्रसन्न मुद्रा में भगवान के सामने बैठे थे वेदपाठ हो रहा था। कोई लक्षण नहीं था कि यह निर्वाण मुद्रा है।

इच्छामृत्यु

सुना था कि महापुरुषों की मृत्यु स्वेच्छया होती है, किन्तु देखा नहीं था इसलिये विश्वास न था। लम्बी बीमारी के बाद महाराज पूर्ण स्वस्थ हो गये थे कष्ट न था। नियमित पूजन, अध्यापन, ४ किलोमीटर पैदल घूमना, निद्रा सब कार्य स्वाभाविक ढंग से चल रहे थे। मैं अब उनकी स्वास्थ्य परीक्षा के लिये प्रति चौथे दिन जाया करता था। एक दिन महाराज ने कहा–दीक्षित जी! अब यह संसार हमारे रहने योग्य नहीं है। हम तो मृत्यु का आह्वान कर रहे वह क्यों नहीं आते समझ में नहीं आता। मैंने समझा कुछ विराग हो गया है, 'महाराज, यह क्या कह रहे हैं ऐसा अभी सोचिये भी मत, अभी आप को बहुत दिन रहना है। फिर चौथे दिन जाने पर यही बात दुहरायी मैंने विशेष ध्यान नहीं दिया, सोचा यहाँ के वातावरण से ऊब गये हैं और उसके तीसरे दिन उन्होंने मृत्यु को आह्वान से बुला लिया।

अपूर्व वैदिक निष्ठा

अनेक लोग स्वामी जी की लम्बी व कठिन बीमारी देखकर शंका करते थे, स्वामी जी को ऐसी बीमारी क्यों? सिद्धि कहां गयी आदि। किन्तु यह भी उनका सामान्य नरलीला थी, उन धार्मिक जनों को पथ प्रदर्शन के लिये जो बीमारी के ऐसे कठिन अवसर आ जाने पर विचलित हो जाते हैं और यह सोचने लगते हैं कि आयुर्वेद से अब क्या होगा पाश्चात्य कराने लगते हैं। ऐसे लोगों ने देखा कि इस गम्भीर परिस्थिति में भी १ मात्रा भी एलोपैथिक दवा नहीं ली। बेहोश होते–होते कह दिया मुझे किसी भी दशा में सुई व विदेशी दवा न दी जाय। सारे देश में हलचल मच गयी आप की बीमारी की। भारत सरकार व प्रान्तीय सरकार तथा कानपुर, दिल्ली, बम्बई आदि के अनेक भक्त अपने यहाँ के प्रसिद्ध डॉक्टर लेकर आये व एक विचार विमर्श चलता रहा स्वामी जी बेहोश पड़े थे बम्बई के एक प्रसिद्ध डॉक्टर ने कहा क्यों वैद्य के नाम पर एक महात्मा के प्राण ले रहे हैं, इन्हें मस्तिष्ट रक्तस्त्राव है तत्काल लम्बर पञ्चर कराकर लें और उचित चिकित्सा हो। मैं बुलाया गया, पुरी तथा बद्रिकाश्राम के शंकराचार्य जी भी कुछ प्रभावित हो गये थे। मुझसे पूछा आपका क्या मत है? लम्बर पञ्चर से कोई विशेष हानि न हो तो देख लेने में क्या आपत्ति है? औषध तो खिलाना नहीं है। मैंने घोर विरोध किया। उन डॉक्टर साहब से पूछा, आपने कैसे कह दिया रक्तस्त्राव है बिना किसी परीक्षा के। मैंने तो नाड़ी परीक्षाकर निदान किया है। और पहले ही लिखकर रख दिया है किस दिन क्या परिवर्तन होगा ठीक २८वें दिन होश होगा यह भी लिखा दिया है। ब्रह्मचारी अलख जी कापी लाये पढ़ा डॉक्टर साहब मानव विज्ञान में त्रुटियाँ हो सकती हैं यह वेद है सदा सत्य। इसमें न किसी प्रकार की त्रुटि की सम्भावना हैं न भूल की। इस प्रकार महाराज ने व्याधि के ब्याज से आयुर्वेद की महता स्थापित कर सभी वेदों की प्रामाणिकता का प्रतिपादन किया।

विज्ञान की परिधि से परे स्वामी जी

महाराज के निर्वाण का समय प्रातः साढ़े आठ बजे के लगभग था। वेदपाठ हो रहा था, लोग विषण्ण हृदय साश्रुनयन खड़े थे। निश्चय हुआ कि पुरी के शंकराचार्य जी महाराज के आने पर उतर संस्कार होगा। वे उरई में थे, बहुत शीघ्रता करने पर भ्झी कल ९ बजे के पहले नहीं आ सकते अतः बरफ की सिल्लियां मंगाकर उनमें पार्थिव शरीर रक्खा जाय। मैंने कहा आप लोग महाराज का भी साधारण पार्थिव शरीर समझते हैं। यह अज्ञान है। यह दिव्य शरीर है। कोई विकृति न होगी ऐसे ही रहने दीजिये। दूसरे दिन प्रातः आये शंकराचार्य जी और महाराज का विग्रह सर्वसाधारण के दर्शनार्थ टाउन हाल ले जाया गया। वहाँ नागरिकों की भीड़ उमड़ पड़ी, फूल मालाओं का ढेर लग गया अपने आराध्य के दर्शनार्थ देहातों तथा दूर दूर से भी काफी संख्या में भक्त आ गये। १ बजे के बाद महाराज का पार्थिव शरीर भक्त जनों की भीड़ के मध्य ट्रक द्वारा केदार घाट पर ले जाया गया।

मृत्यु के पश्चात थोड़ी ही देर में शरीर कड़ा होने लगता, चेहरे में विकृति हो जाती व अधिक देर होने पर एक विशेष प्रकार की गंध आने लगती है। इसीलिये मृत्यु होते ही लोग उसके हाथ पैर सिकोड़ देते हैं जिसमें चिता में रखने में कठिनाई न हो। अधिक देर रखने की स्थिति में बरफ की सिल्लियों व रासायनिक द्रव्यों का सहारा ले हैं किन्तु स्वामी जी के शरीर में किसी प्रकार की विकृति न थी। उत्तर क्रिया के समय विधिवत स्नान कराया गया, हाथ पैर वैसे ही मुलायम थे मोड़ने पर कोई कठिनाई न हुई। मुखमंडल में वही कान्ति शरीर में किसी प्रकार की विकृत गंध नहीं। अन्त में गृहस्थी के संस्कार के समय कपाल क्रिया से भिन्न क्रिया संन्यासियों में होती है। शंख के नीचे के भाग द्वारा शिर के मध्य भाग का भेदन किया जाता है। श्री शंकराचार्य जी ने शंख उठाया किन्तु भेदन करने का साहस न जुटा सके। शंख उठाकर सबसे कहा आप लोग क्षमा करें यह कठिन कार्य मुझसे न होगा। मैं केवल विधि पूरी करने हेतु शंख का स्पर्श किये देता हूँ और जैसे ही शिर के मध्य में शंख रक्खा वह स्वतः प्रविष्ठ हो गया भीतर। स्वाभाविक छिद्र था जिससे ज्ञात हुआ कि महाराज ने बह्मरन्ध्र से प्राण विसर्जन किये हैं।

इस प्रकार से सारी घटनायें महाराज के अलौकिक व्यक्तित्व की परिचायिका हैं। धन्य है वे जिन्हें महाराज की सेवा का कुछ अवसर प सान्निध्य मिला। जिन्हें उनके दर्शन व उपदेश सुनने का सौभाग्य हुआ वे भी धन्य हैं। मैं तो अपने को भाग्यशाली व भगवान का कृपापात्र मानता हूं जिनकी अहैतुकी कृपा से ही महाराज का अनुपम स्नेह मिला, चिकित्सा का अवसर मिला, मेरे माध्यम से आयुर्वेद की प्रतिष्ठा हुयी। अन्त में महाराज के श्री चरणों में नमन कर विराम लेता हूँ। उनकी गुण गणना इस लेखनी द्वारा संभंव नहीं।

असित गिरी समं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे, सुर तरुवर शाखा लेखनी पत्र मुर्वी
लिखति यदि गृहीत्वा, शारदा सर्वकालम् तदपि तव गुणानामीशं पारं न याति।

'पूज्यपाद गुरुदेव महाराज स्वामी श्री करपात्री जी से बिछुड़ने पर हम शिष्यों को महान कष्ट एवं दु:ख है। हम उनके विचारों को आगे बढ़ाने के लिये 'वेदार्थपारिजात' और 'भक्ति सुधा' भागवत् सुधा एवं राधा सुधा ग्रंथों के समान महाराज श्री के अन्य वेदों पर भाष्य भी शीघ्र अपनी संस्था द्वारा प्रकाशित करायेंगे।'

–सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्रेष्ठ श्री हनुमान जी धानुका,
श्री राधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान, कलकत्ता।

'स्वामी जी राजसत्ता एवं भौतिकवाद के समक्ष कभी नतमस्तक नहीं हुए तथा वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था के प्रचार–प्रसार में संलग्न रहे।'

–मेवाड़ महामण्डलेश्वर महन्त श्री मुरली मनोहर शास्त्री, काशी।

'करपात्री जी जो हिन्दू धर्म की साकारमूर्ति थे वे जीवन के अन्तिम क्षणों तक गो माता की रक्षा के लिये प्रयास रत रहे। जनता ने उन्हें धर्म सम्राट की उपाधि दी।'

–श्री राधाकृष्ण बजाज, महासचिव, अखिल भारतीय गो सेवा संघ।

'पूज्यपाद अनन्त श्री विभूषित स्वामी करपात्री जी महाराज में अनेक दैवी गुण थे। आप की वाणी में वाग्देवता का निवास था और आप के करों में भगवती दुर्गा शक्ति के रूप में अवतरित थी। यही कारण है कि पद्मा सदा आप के गुणों से आकृष्ट होकर आप के पदकमलों में विराजमान रही है। इसके अतिरिक्त आप में जिन मानवीय गुणों की गरिमा थी उसका आज हम अन्यत्र सर्वत्र अभाव पाते हैं। एक ओर जहाँ अपने सिद्धांतों के परिपालन में वे हिमालय के समान अडिग और वज्र से भी कठोर थे ठीक दूसरी ओर स्वामी जी परदुख कातरता करुणा वरुणालय के सच्चे स्वरूप थे। हमारे विचार से आज दुनिया में एक ऐसा इन्सान उठ गया है जिसने सिद्धांतों के लिये टूट जाना तो स्वीकार किया परन्तु मुड़ना नहीं बड़ी आवश्यकता थी, क्योंकि इस समय संस्कृत, संस्कृति, संस्कार सभी कुछ संकट में है। अस्तु प्रभु इच्छा बलीयसी।'

–डा. रामरंग शर्मा, काशी।

'स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के निधन से भारतीय संस्कृति का स्तम्भ अब नहीं रहा। यह भारत के लिए सबसे बुरा दिन तथा भारतीय संस्कृति की अपूरणीय क्षति है। श्री स्वामी जी इस विश्व के एकमात्र विद्वान थे जिनका सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय पर पूर्णतया अधिकार था तथा संस्कृति के वे सजग प्रहरी थे। उनके ब्रह्मीभूत होने के समाचार से हम स्तब्ध रह गये।'

–पं. कमलापति त्रिपाठी, दिल्ली।

‘पूज्यपाद स्वाम श्री करपात्री जी महाराज के निधन से काशी का ज्ञानदीप ही बुझ गया। भविष्य में ऐसी प्रतिभा की पूर्ति असम्भव है। वाराणसी के लिए यह अत्यन्त दु:ख की घड़ी है।’

–श्रीमती चन्द्रा त्रिपाठी, अध्यक्षा, जिला कांग्रेस कमेटी, वाराणसी।

‘महाराज श्री द्वारा दिये गये पवित्र एवं मङ्गलकारी धर्मजयघोष, धर्म–संघ के जयकारे सदा सर्वदा भारतीय जनता को सत्कर्मों एवं सद्धर्म में प्रेरित करते रहेंगे, धर्म–जयकारों के उदगाता धर्मसम्राट स्वामी करपात्री जी के ब्रह्मीभूत होने पर धार्मिक जनता शोक प्रकट करती है।’

–श्री प्रभुदयाल पटेल, भू.पू. कृषि मन्त्री की अध्यक्षता में आयोजित काशी विश्वनाथ मन्दिर, बड़ौदा की जनसभा में।

‘धर्म सम्राट अनन्त श्री विभूषित ब्रह्मलान स्वामी करपात्री जी महाराज के सम्बन्ध में कुछ कहना दिवाकर को दीपक से प्रकाशित करता है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, स्वामी जी का अधिकांश समय राजनैतिक और धार्मिक विषयों पर लिखने तथा बोलने में व्यतीत होता था। इन विषयों में जनता को निर्भीकता पूर्वक आगे से चलने अर्थात् अग्रसारित करने वाले अपने समकाल के महर्षियों में इस धरातल पर स्वामी जी अद्वितीय थे। उनके विचार राजनैतिक हों या धार्मिक किन्तु उनका एक हि दृष्टि कोण रहा करता था और वह था भारतीय संस्कृति का समुत्थान तथा मानव जीवन को पवित्र करना, जिनकी दृढ़सेतु थी गो रक्षा। इसी गोरक्षा के लिये हा तो उन्होंने अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर रखा था।

महाभारत कालीन इतिहास में भगवान श्री कृष्णचन्द्र ने गो सेवा कर्म को ही अपना प्रधान ध्येय मानकर अपने गोपाल नाम को सार्थक किया था। उसी प्रकार आधुनिक युग में ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी महाराज भी ‘भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिये गो रक्षा ही महान कर्तव्य है–धर्म है कहकर जनता को मार्ग प्रदर्शित करते रहते थे। अतएव उनके अनुयायियों का यह परम कर्तव्य है कि वे गोरक्षा के सम्बन्ध में विशाल रूप से भारतीय जनता को जागृत करने के लिए घर–घर में इसकी महानता के विभिन्न पहलुओं को समझाकर सरकार को गो रक्षा के लिये प्रेरित करें।

भारतीय संस्कृति में कर्तव्य परायणता तथा कृतज्ञता का सर्वश्रेष्ठ स्थान है और इनके द्वारा ही मानव जीवन का उद्धार हो सकता है। अस्तु, गोरक्षा कृतज्ञता का मात्र संकेत ही नहीं बल्कि यह परमावश्यक और अनिवार्य है क्योंकि आर्थिक समुन्नति और राष्ट्रहित भी इसी में निहित है। अतएव इसी गोरक्षा के पुनीत संकल्प द्वारा हमी हम स्वामी करपात्री जी तथा भगवान श्री कृष्ण के आदेश और आदर्श की रक्षा कर सकते हैं।’

–श्री ताराचन्द सर्राफ।

‘धर्म सम्राट पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज देश के तपः पूत, महान् प्रकाण्ड विद्वान तथा तेजस्वी सन्त थे। उन्होंने सनातन धर्म, संस्कृत तथा पत्रकारिता की जो सेवा की उसे कभी बुलाया नहीं जा सकता। पूज्य स्वामी जी ने ‘सन्मार्ग’, ‘सिद्धान्त’, ‘धर्मज्योति’, ‘विवेक’, ‘रामराज्य समाचार’, ‘धर्मचर्चा’, ‘धर्म संघ समाचार’ निरावरण जैसे अनेक पत्रों का प्रकाशन कराकर धार्मिक गतिविधियों के प्रचार व प्रसार का मार्ग प्रशस्त किया था। काशी के बाद १९४८ में ‘सन्मार्ग’ का दिल्ली तथा कलकत्ता से प्रकाशन शुरू हुआ तो मुझे दिल्ली के ‘सन्मार्ग’ में पत्रकारिता प्रारम्भ करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। स्वामी करपात्री जी के सुझाव पर श्री चन्द्रशेखर शास्त्री जी को सम्पादक नियुक्त किया गया जो इस समय गोवर्धनपीठ (पुरी) में श्री मज्जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी निरञ्जनदेव तीर्थ जी महाराज हैं। परावर्तन पुण्य के प्रभाव से ही मुझे स्वामी करपात्री जी महाराज जैसे उद्भट संस्कृत विद्वान गुरु के रूप में प्राप्त हुये और लगातार तीन वर्षों तक उनके श्री चरणों में बैठकर इस शरीर में पत्रकारिता का ज्ञान प्राप्त किया।

यह एक संयोग ही था कि दिल्ली के ‘सन्मार्ग’ में अनेक संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान महापुरुष थे। सम्पादक श्री चन्द्र शेखर शास्त्री और प्रबन्धक श्री नन्दलाल शर्मा शास्त्री एम.ए.एल.बी. (जो बाद में भारत की लोक सभा में राजराज्य परिषद के सदस्य भी रहे और वर्तमान में स्वामी नन्दनन्दनान्द सरस्वती हैं) तो संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे ही, सम्पादकीय विभाग में यह शरीर तथा कम्पोजिंग विभाग में कुछ संस्कृत-कम्पोजीटर भी थे। स्वामी करपात्री जी को जब पता चला कि सन्मार्ग में अनेक संस्कृत कार्यकर्त्ता हैं तो उन्होंने सभी से आग्रह किया कि वे आपस में संस्कृत वार्तालाप किया करें। फलस्वरूप सन्मार्ग का वातावरण संस्कृतमय हो गया और जो कर्मचारी संस्कृत नहीं जानते थे वे भी कुछ-कुछ संस्कृत बोलने लगे। इससे स्वामी जी को अपार हर्ष हुआ और उन्होंने कहा कि ‘सन्मार्ग’ के प्रकाशन का उद्देश्य पूर्ण हो गया। स्वामी जी का बहु आयामी व्यक्तित्व था। उनके ब्रह्मलीन होने से जहाँ संस्कृत जगत सन्तप्त हैं वहाँ सनातन धर्म अपने को अनाथ समझ रहा है। वस्तुतः स्वामी जी के अभाव से हिन्दू राष्ट्र की अपूरणीय क्षति हुयी है जिसकी निकट भविष्य में प्रतिपूर्ति असम्भव है लेकिन सन्तोष की बात है कि स्वामी करपात्री जी अपने पीछे हजारों-लाखों अनुयायी छोड़ गये हैं जो जगत गुरु शंकराचार्य स्वामी निरञ्जनदेवतीर्थ जी महाराज एवं जगद्गुरु शंकराचार्य (बद्रिकाश्रम) स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज के नेतृत्व में स्वामी जी द्वारा प्रज्ज्वलित ज्वाला को अधिक प्रज्जवलित करने का जी भर प्रयास करेंगे। निश्चित ही स्वामी करपात्री जी अपने शेर्ष कार्य की प्रतिपूर्ति का दायित्व पुरी एवं बद्रिकाश्रम के शंकराचार्य जी के कन्धों पर डाल गये हैं।

सनातन धर्म जगत को पूरा विश्वास है कि शंकराचार्य जी अपने सबल कन्धों पर इस गुरुत्र दायित्व का वहन करेंगे और सनातन धर्म की नौका को पार ले जायेंगे।’

-सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री जयवन्शी झा, दिल्ली।

धर्म युद्ध का बिगुल बजाया देश में बन पदगामी।।
धर्म संघ अरु रामराज्य परिषद का गठन बनाया था।
मार्क्सवाद का खण्डन कर शुभ रामराज्य बताया था।।
धर्मनियन्त्रित राजनीति को उत्तम राज्य बताया था।
उठ गये हाय! इस भू-मण्डल से धर्म का मार्ग सिखाया था।।
करपात्री जग में भये, शंङ्कर के अवतार।
कठिन कुटिल कलिकाल में, कियौ धर्म विस्तार।।
गो-ब्राह्मण प्रतिप्राण हे युग के परम प्रवीन।
माघ सुदी चौदस तिथि भये ब्रह्म में लीन।।
असू रामनख विक्रमहिं, संवत् युत रविवार।
धर्म सूर्य अब छिप गयौ, या जग को पतवार।।
हे स्वामी करपात्रि जू, धर्म मूर्ति साकार।
'व्यास अश्रु' श्रद्धाञ्जलि, अर्पित बारम्बार।।

-प्रेम वल्लभ व्यास, मथुरा। (उ.प्र.)

अन्तिम प्रणाम

काषाय वस्त्र वरदन्ड हस्त, पावन त्रिपण्ड शोभित ललाट।
जप, पूजन, अर्चन, चिन्तनरत, कृश काया में जीवन विराट्।।
उपनिषद् वेद शास्त्रादि विज्ञ, तुम शिवस्वरूप अद्भुत अनन्य।
तुम जैसे यति के चरणों से, हो जाती है यह धरा धन्य।।
विद्या वरेण्य साधक अनूप, जीवन-मनीषी आप्त काम।
मधुमय अनन्त श्री भूषित, स्वामी करपात्री जी को प्रणाम्।।
सुनने को जिसकी गोर्वाणी, स्वयमेव ज्ञान था रुक जाता।।
माटी की कंचन काया को, कर पावन गंगा में विलीन।
ली तुमने शिव सायुज्य हेतु, यह चिर समाधि, हम हुये दीन।
प्रत्यक्ष सत्य है शाश्वत है, हम विधि विधान से छले गये।
फिर भी कल्पना नहीं होती, तुम हमें छोड़ कर चले गये।।
सन्निकट तुम्हारे मिलती थी, हमको अहरह सान्त्वना-शान्ति।
ज्ञानार्जन होता था जिससे, क्षर हो जाते भ्रम और भ्रान्ति।।
तुम धर्म ज्योति के संवाहक, हे काशी के गौरव ललाम।
हे पुण्यश्लोक, स्मरणीय नित्य,
स्वीकार करो अन्तिम प्रणाम।।

-काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर', सराय गोवर्धन, वाराणसी

हे धर्ममूर्ति तुझको प्रणाम

हे धर्मसनातन की विभूति। हे धर्म पुरातन की विभूति।।
हे हंसवाहिनी के सुपुत्र। हे शाश्वतजीवन की विभूति।।
अद्भुत तुम धर्म यशस्वी थे। पावन थे पूर्ण तपस्वी थे।।
तुम मानवता से ओत प्रोत। व्यक्तित्व उदार मनस्वी थे।।
वे वन्दनीय तुमको प्रणाम,
हे अर्चनीय तुमको प्रणास्।
हे अखिल विभव की धर्म मूर्ति,
हे पूजनीय तुमको प्रणाम्।।

–दीनानाथ शुक्ल वाराणसी।

***

'देश की महान विभूति धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी देश के उन तेजस्वी तथा विद्वान सन्यासियों में अग्रणी थे जिन्होंने अपना सर्वस्व ही धर्म, संस्कृति, संस्कृत तथा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए अर्पित किया हुआ था। वे १९४६ से पहले तक अंग्रेजी साम्राज्यवादी से संघर्ष करे रहे तथा देश स्वाधीन हुआ तो भारत विभाजन, हिन्दू कोड बिल तथा गो हत्या के विरोध की पताका लेकर वे सबसे आगे थे। सनातन धर्म की मान्यताओं की रक्षा के लिए वे पग–पग पर सतत संघर्ष करते रहे। उन्होंने अनेक बार जेल यात्राएं की। वे धर्म नियन्त्रित राजनीति के प्रबलतम समर्थक थे। समाजवाद–साम्यवाद के विकल्प के रूप में उन्होंने परमलोक कल्याणकारी 'रामराज्य' का दर्शन साङ्गोपाङ्ग प्रस्तुत कर राजनीति में भी प्रवेश किया। स्वामी जी एक संघर्षशील, तेजस्वी, निर्भीक संत थे। उनके ब्रह्मलोक प्रयाण से देश व धर्म की अपूरणीय क्षति हुई हैं। धर्मदूत परिवार उनके प्रति श्रद्धानत ये।'

–'धर्मदूत पाक्षिक' पिलखुवा (गाजियाबाद)।

***

'विश्व वन्द्य धर्मसम्राट अनन्त श्री विभूषित परमपूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का नाम आधुनिक युग में धर्म रक्ष्ज्ञा का प्रतीक बन गया था। पूज्य स्वामी करपात्री जी अद्वितीय प्रतिभा, दृढ़ संकल्प निश्चय, शास्त्रनिष्ठा एवं अदम्य उत्साह की साक्षात मूर्ति थे। वह विगत ५०–५५ वर्षों से राष्ट्रोद्धारक कार्यों में संलग्न रहे। हिन्दू धर्म पर आये किसी भी संकट से जूझ जाना उनकी विलक्षण कर्मनिष्ठा का परिचायक है। देश विभाजन को रोकने के लिए उनके अथक प्रयासों में देशभक्ति का करुण क्रन्दन झलकता है। हिन्दी रक्षा आन्दोलन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। गो रक्षा आन्दोलन कें तो वह सूत्रधार ही रहे है और गो हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध के लिये उनकी आत्मा छटपटाती रही। उनके अनमोल ग्रंथों में धर्म, संस्कृति, अध्यात्म तथा भारतीयता

का मार्मिक प्रतिपादन मिलता है। 'मार्क्सवाद और रामराज्य' 'रामायण मीमांसा', 'विचारपीयूष' और 'वेदार्थपारिजात' आदि पूज्य स्वामी जी के प्रेरणादायी ग्रंथ हैं। करपात्री जी के दिव्य ज्योति में विलीन होने के अवसर पर 'जनधर्म' दिव्यात्मा को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए नमन करता है।'

–साप्ताहिक 'जनधर्म भोपाल,(म.प्र.)

***

'यदि मैं आज से प्रयास शुरु कर देता अगले दस वर्षों में साई बाबा, पाँच वर्षों में बालयोगेश्वर तीन वर्ष में रजनीश बन सकता हूँ लेकिन सौ साल के प्रयास के बाद भी करपात्री नहीं बन सकता।'

–सुप्रसिद्ध अमेरिकी अर्थशास्त्री डा. फिलाबार।
(धर्म संघ समाचार अकोला वर्ष ३२/३८८ (२२-२-८२))

***

'स्वामी जी महाराज सनातन धर्म की परम्परा को जीवित रखने के लिए सदा प्रयत्नशील रहे। उनके स्थान की पूर्ति सम्भव नहीं है।'

–प्रो. रामचन्द्र सिंह, काशी विद्यापीठ।
–श्री रामसूरत तिवारी, इंका नेता, काशी।
–श्री अनिल कुमार सिंह संजय, जिला कांग्रेस (ई) काशी।
–श्री राजेन्द्र त्रिवेदी (राजू), अध्यक्ष, निर्बल वर्ग कल्याण समिति, वाराणसी।

***

'धर्म, संस्कृति के रक्षक, पोषक एवं उन्नायक पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज आज हम लोगों के बीच से चले गये। उनके अभाव की पूर्ति हम किसी भी प्रकार से नहीं कर सकते हैं।'

–श्री हनुमान प्रसाद शर्मा, प्रबन्धक, श्रद्धाञ्जलि सभा
श्री भागीरथी सुरेका संस्कृत महाविद्यालय, ब्रह्मनाल, वाराणसी
–श्री श्रीपति मिश्र आचार्य, श्री सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, काशी।

***

'स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के आकस्मिक निधन से देश में गहरा शोक व्याप्त है।'

–श्री माधव प्रसाद त्रिपाठी, अध्यक्ष, श्री प्रताप नारायण मिश्र, उपाध्यक्ष,
श्री कलराज मिश्र महामन्त्री, श्री विपिन बिहारी तिवारी, प्रदेश मन्त्री,
उत्तर प्रदेशीय जनता पार्टी।

***

‘वे धर्म तथा संस्कृति के महान् संरक्षक तथा संयोजक थे....आपकी भागवत व्याख्यानमाला चिरस्मरणीय रहेगी। आपका जैसा अलौकिक पाण्डित्य था वैसी ही आपकी आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत वाणी पीयूषवर्षिणी थी। आप वैदिक संस्कृति तथा भागवत धर्म के अमर व्याख्याता थे।

-श्री वल्लभ वंशजा श्री शरद वल्लभ बेटी जी, अध्यक्ष,
शुद्धाद्वैत जय यज्ञ समिति, काशी।

***

‘काशी के विद्वान तपस्वी एवं सन्त स्वामी करपात्री जी महाराज के ब्रह्मी भूत हो जाने पर सभा हार्दिक शोक व्यक्त करते हुये श्रद्धाञ्जलि समर्पित करती है।’

-अधिकारी एवं कर्मचारी गण
नगर पालिका एवं विकास प्राधिकरण, वाराणसी।

***

‘सनातन धर्म की इस अपूरणीय क्षति को निकट भविष्य में पूरा नहीं किया जा सकता। पूज्य महाराज श्री के प्रति हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।’

-समस्तधिद्वतगण एवं विश्वविद्यालय परिवार
श्री सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

***

कंचन कमनीय कलेवर पर, शोभित शुचि गैरिक वस्त्र खण्ड!
उन्नत ललाट राजत त्रिपुण्ड, कर कमल विराजत ब्रह्मदण्ड।।१।।
रुद्राक्ष रूप में बने स्वयं, शिव जिनके उर कण्ठ हार।
काशी पवित्र केदार खण्ड, निर्मल गंगा की धवलधार।।२।।
हे विश्व वन्द्य, यति वृन्द श्रेष्ठ, अभिनव शंकर हे विश्वनाथ।
‘राम राम’ ‘शिव शिव’ कहते, तुम कहाँ चले कर जग अनाथ।।३।।
क्या पुण्य धरा का हुआ क्षीण, ले ली तुमने शाश्वत समाधि।
हो गए निरञ्जन ब्रह्म-रूप, तज करके मायिक घटोपाधि।।४।।
हो गई धरा सूनी सूनी, हो गई दिशाएं तेज हीन।
सागर भरता व्याकुल उसांस, उत्तुंगश्रृंग हिमगिरि मलीन।।५।।
कंप गई धरा कंप गया व्योम, रवि की किरणें हो गई मन्द।
रुक गया पवन का उच्छ्वास, कण-कण करता है करुण क्रन्द।।६।।
खोया धरती ने वेद पुरुष, खोया जगती ने शास्त्र ज्ञान।
संस्कृति ने खोया उद्धारक, हो गई धर्म की क्षति महान।।७।।
हो गया आज भारत उदास, गैया मैया निर्बल निराश।
हो गया धर्म का सूर्य अस्त, मर्यादा का कुण्ठित विकास।।८।।

वेदों की व्याख्या अभिभाषण, अव्याहत लेखन शास्त्रार्थ।
आसेतु हिमाचल धर्मघोष कर, कौन करेगा जग कृतार्थ।।९।।
श्रुति सम्मत पथ का उद्घाटन, वर्णाश्रम का शुचि कीर्तिमान।
अब कौन करेगा स्थापित, शुचि रामराज्य का संविधान।।१०।।
वेदान्त वेद्य रस निर्विशेष, सच्चिदानन्द भुवनाभिराम।
सौन्दर्य सार सर्वस्व श्याम, माधुर्य मूर्ति श्यामा ललाम।।११।।
वृन्दावन नित्य निकुन्जों की, रसमयी कथा का सुधा दान।
हो मगन ध्यान शुकदेव सदृश, अब कौन करेगा भक्तिमान।।१२।।
श्री चक्र समर्चा योग मार्ग, तन्त्रागम कुण्डलिनी प्रबोध।
ब्रह्मात्मैक्य साक्षात्कार, शिष्यों को देगा कौन शोध।।१३।।
हे रामचरित के उद्गाता, हे महा-महिम! हे धर्म राष्ट्र।
हे युग दृष्टा हे युग सृष्टा, हे वाणी के वैभव विराट्।।१४।।
हे अनन्त – गुण – गण – निधान, तुम शब्द तुला पर अतुलनीय।
चिन्मय चरित्र के चारु चित्र, अभिनन्दनीय अभिवन्दनीय।।१५।।
श्रद्धाञ्जलि शब्द सुमन अर्पित, हे अन्तर्यामी पूर्ण काम।
योगीन्द्र वन्द्य गुरुदेव पूज्य, स्वीकार करो शत-शत प्रणाम।।१६।।

श्री राम नारायण सिद्धांती, रिंनिया, उरई।

***

धर्मसम्राट को श्रद्धांजलि

छोड़ जगत का ठाट – बाट, घूम – घूम घर घाट – घाट।
चल बसे हैं अग – जग से, श्री करपात्री जी धर्म सम्राट।
शोकित विश्व का कोना – कोना लिए अन्तर में कसक वेदना।
पूछ रहा है काल – गति से – धर्म जगत का बाट।
चल बसे हैं अग – जग से – श्री स्वामी धर्म सम्राट्।
हाड़ मास की पार्थिव काया – पंचभूत हुआ है।
आलोकित है सदा जगत में – जो स्तम्भ छुआ है।
पर उस मार्तण्ड का अस्त नहीं – प्रशस्त किया धर्म-पथ को।
घोर तिमिर में घेर लिया है – जिसने रश्मि रथ को।
मान चुका है लोहा विश्व ने – युक्ति तर्क अकाट्।
चल बसे हैं अग – जग से, श्री करपात्री जी धर्म सम्राट।

-श्री रामाश्रय यादवेन्दु

“सर्वाधिष्ठान परब्रह्मतत्व है”–ऐसी बुद्धि होने से उसकी प्राप्ति के लिये धर्म एवं तद्बोधक शास्त्र का अवलम्बन करना होता है। तदर्थ पाशविक उच्छ्ङ्खल व्यापारों का परित्याग करना ही पड़ेगा। ऐसी स्थिति में अधर्म जिससे शूकर–कूकरादि योनियों की प्राप्ति होती है, का परिवर्जन होगा। धर्म के सेवन से दिव्ययोनियों की प्राप्ति होती है। ब्रह्मनिष्ठ होने से प्राणी ब्रह्म हो ही जाता है। ईश्वर और परलोक में विश्वास रखने वाला व्यक्ति अत्याचार, अन्याय और अधर्म से डरता है। जब साधारण व्यक्ति भी समाज के सामने पाप करते हुए संकोच करता है, तब सर्वान्तरात्मा, सर्वसाक्षी, सबके हार्दिक हाव कुभाव के भासक भगवान् से कौन से दोष एवं पाप छिपाये जा सकते हैं? इस दृष्टि से आस्तिकवाद ही विश्वशान्ति एवं सुव्यवस्था की स्थापना कर सकता है।

श्री हरिहरानन्द सरस्वती करपात्री जी की स्मृति में

–द० ली० श्रीमत्परमहंस परिव्राजक १००८ स्वामी श्री रामदेव जी महाराज,
श्री राधाकृष्ण मन्दिर, जे० के० कमला नरग, कानपुर (उ०प्र०)

श्री करपात्री जी का दर्शन प्रथम बार मुझको नरवर साङ्गवेद विद्यालय में हुआ था। मैं श्री गङ्गा तट पर भ्रमण करता हुआ द्वितीय बार जब नरवर पहुँचा तब करपात्री जी पर्ण कुटी में अध्यात्म रामायण का पाठ कर रहे थे। मैं दर्शन करके विद्यालय में चला गया। पाठ समाप्त होने के बाद वे भी विद्यालय में आ गये वहाँ पर सत्सङ्ग हुआ। उस समस उन्होंने दण्ड ग्रहण नहीं किया था। विद्वत संन्यास ले लिया था। वहाँ पर ऐसा विदित हुआ कि वहीं उन्होंने अध्ययन करने के अनन्तर श्री स्वामी विश्वेश्वराश्रम जी जो उनके वेदान्त के गुरु थे उनसे संन्यास दीक्षा प्राप्त करने की प्रार्थना की। उन्होंने दीक्षा नहीं दी क्योंकि करपात्री की स्त्री थी और किसी सांसारिक कार्य में प्रवृत्त नहीं हुये थे। जब उन्होंने संन्यास की दीक्षा नहीं दी तब करपात्री जी और विष्णुदत्त और एक लंगड़े थे जिनका नाम मुझको स्मरण नहीं तीनों ने साथ ही विद्वत संन्यास लिया। उस समय करपात्री जी का नाम हरिहर चैतन्य था। तीनों साथ–साथ उत्तराखण्ड को चले गये। हरिहर चैतन्य और लंगड़े लौट आये। विष्णुदत्त नहीं लौटे और दिगम्बर रूप से उत्तराखण्ड में रह गये। संस्कृत भाषा में ही बात करते थे उनका दर्शन उत्तर काशी में मुझको हुआ था। लंगड़े महात्मा गङ्गा तट पर विचरते थे। उनका भी दर्शन मुझको हुआ था। हरिहर चैतन्य ऋषिकेश में कोयलघाटी पर कुछ दिन रहे वेदान्त ग्रंथों को पढ़ाया करते थे। वहीं पर करपात्री नाम लोगों ने रख दिया क्योंकि कर में ही भिक्षा मांग कर खा लेते थे। केवल ब्राह्मणों के ही घर भिक्षा लेते थे। एक वस्त्र रखते थे। वहाँ पर बहुत तप किया। ऋषिकेश में जितने सत्सङ्गी थे सब उनके पास जाया करते थे गौरीशंकर गोयनका और अन्य मारवाड़ी लोग और पंजाबी, गुजराती आदि स्त्री पुरुष जिज्ञासुजन अपनी जिज्ञासा शान्त करते थे। श्रीमद्भागवत में जो सन्देह आधुनिक लोग करते थे उनका समाधान युक्तियों द्वारा कर देते थे। उसी समय हरिद्वार का कुम्भ हुआ। उसमें मदनमोहन मालवीय गये थे उनकी श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में स्थित रास पञ्चाध्यायी में कुछ शंका थी गौरीशंकर गोयनका से बात हुयी। गोयनका जी ने उनसे कहा कि ऋषिकेश कोयल घाटी में एक विरक्त विद्वान है उनके पास चलिये वे आपकी शंका का समाधान कर देंगे। मालवीय जी करपात्री जी के पास गये किन्तु वहाँ भागवत की शंका का समाधान हो नहीं पाया।

एक और ही प्रसङ्ग छिड़ गया, उस समय मालवीय जी सबको प्रणव सहित मन्त्र दीक्षा देने लगे थे। करपात्री जी ने उसका विरोध किया। हरिद्वार के कुम्भ में मालवीय जी और करपात्री शास्त्रार्थ की योजना बनायी गयी। गौरीशंकर गोयनता और जयदयाल गोयनका मध्यस्थ बने। करपात्री और मालवीय का शास्त्रार्थ हुआ। गौरी शंकर गोयनका ने करपात्री जी का समर्थन किया। जयदयाल गोयनका ने मालवीय जी का समर्थन किया। वहाँ कुछ निर्णय नहीं हुआ। करपात्री जी का वहाँ पर नाम हो गया। अन्त में गौरी शंकर गोयनका और जयदयाल गोयनका का उसी विषय में पत्र व्यवहार हुआ। वह पुस्तक रूप में छपा था। उसकी भूमिका करपात्री जी ने लिखी–किन्तु अपना नाम नहीं छपने दिया। उस पुस्तक का नाम माननीय प्रश्नोत्तर सम्भवतः था वहाँ से करपात्री पग यात्र करते हुये काशी पहुंचे। वहाँ विद्वानों ने उनका बहुत आदर किया वहाँ से प्रयाग के कुम्भ में गंगा तट पर भ्रमण करते हुये जा रहे थे उस समय वहाँ पर छतनगा के पास एक पेड़ के नीचे झोंपड़ी में मैं ठहरा था। गंगा जी के तट पर भ्रमण करने गया था वहाँ दूसरी बार करपात्री जी का दर्शन हुआ उस समय करपात्री जी दण्ड ग्रहण किये हुये थे किन्तु उसको ब्रह्मचारी लेकर चलता था उसकी पूजा आदि नहीं करते थे बिना हमारे प्रश्न किये कहने लगे कि दण्ड ग्रहण करने की इच्छा नहीं थी किन्तु गुरु जी ने बहुत आग्रह किया इस कारण ग्रहण करना पड़ा। करपात्री जी के गुरु ब्रह्मानन्द सरस्वती थे उन्हीं ने उनको ब्रह्मचर्य की दीक्षा देकर हरिहर चैतन्य नाम रखा था। दण्ड देने के अनन्तर हरिहरानन्द सरस्वती रख दिया। मैंने कहा यदि आपकी इच्छा न होती तो किसी के आग्रह पर दण्ड नहीं लेते। भरत जी से सबने आग्रह किया कि राज ग्रहण करो भरत जी ने नहीं ग्रहण किया इस बात से करपात्री जी हंसने लगे। कुम्भ में जाकर डूंग जी ब्रह्मचारी के शिविर में निवास किया। मैं भी भ्रमण करने के लिये कभी–कभी जाया करता था वहाँ कुशासन पर बैठकर करपात्री जी उपदेश देते थे। सनातन धर्म के सिद्धान्त के प्रचार करने की वहाँ से ही विशेष प्रवृत्ति हुयी। धर्म ग्लानि अधर्माभ्युत्थान की निवृत्ति के लिये सबको अनुष्ठान का उपदेश देते थे। वक्तृत्व शक्ति अद्भुत थी जनता पर प्रभाव अधिक पड़ता था। तब लोग सभाओं में भी बुलाने लगे उस समय बड़ी कट्टरता थी स्त्रियों को संस्कृत में भाषण देने का भी विरोध करते थे। प्रयाग कुम्भ समाप्त हुआ वहाँ से पगयात्रा प्रारम्भ हुयी। गंगा तट के किनारे रहने वाला एक ब्राह्मण बुला गया था। वहाँ जाना था मैं भी साथ में था और ब्रह्मचारी दण्डी स्वामी भी साथ में थे। रात्रि में प्रयाग नगर में लोहिया पाण्डे के घर पर निवास किया बड़ी भयंकर ओला की वृष्टि रात्रि में हुई पेड़ों के पत्ते गिर गये फसल नष्ट हो गयी। प्रातः होते ही यात्रा आरम्भ हो गयी। मार्ग में खेती की दशा देख करपात्री बड़े दुःखी हुये। गंगा किनारे ब्रह्मचारी ने भोजन बनाया भोजन विश्राम करके तब उस ग्राम में गये जहाँ ब्राह्मण ने बुलाया था। वह ब्राह्मण प्रतीक्षा कर रहा था उसने भोजन के लिये कहा

करपात्री ने कहा हम लोग भोजन कर चुके हैं। तुम्हारे ग्राम में ओला पड़ने से फसल नष्ट हो गयी है। तुम बहुत दु:खी होंगे। ब्राह्मण बोला महाराज ऐसा तो होता ही रहता है ब्राह्मण सत्संगी था उसके यहाँ सन्त आया करते थे। वह पर्ण कुटी बना रखा था वहाँ सब ठहर गये। सूर्यास्त के समय २० या २५ विरक्त मण्डली के सन्त आ अये उनमें एक को पण्डित कहते थे वे सब ब्राह्मणेतर थे उन लोागें ने पण्डित जी के लिये खाट मंगवाया वे उस पर सोये उनके पांव को और लोग दबाने लगे। उसको देखकर गृहस्थ ब्राह्मण भी पांव दबाने लगे। पण्डित जी ने गायत्री मन्त्र का उपदेश देना प्रारम्भ किया और उसका अर्थ समझाने लगे। गायत्री का उच्चारण भी अशुद्ध करते थे अर्थ भी ठीक नहीं कर पाते थे रात्रि हो गयी अंधेरा था वे लोग करपात्री जी को देख नहीं पाये थे पहले तो करपात्री जी सुनते रहे। पश्चात वे बोलने लगे उनके बोलते ही बनावटी पण्डित चुप हो गये तो वहाँ पर कई दिन ठहरने की योजना वे लोग बनाये थे जब उनको पता लगा करपात्री जी ठहरे हैं तो प्रात: अंधेरे में ही चले गये वहाँ यह स्मरण हुआ कि सूर्य के सामने खद्योत का चमकना बन्द हो जाता है। करपात्री जी भी प्रात: श्री गंगा स्नान कर चले हम लोग साथ में थे श्री गंगा का तट वहाँ छोड़ दिया। चित्रकूट की यात्रा प्रारम्भ हुई अनेक ग्रामों मे होते हुये यमुना तट पर राजापुर पहुंचे वहाँ यमुना में स्नान किया। वहाँ से भ्रमण करते हुये भयंकर वनों में होते हुये चित्रकूट पहुंच गये। वाल्मीक मुनि के आश्रम पर रात्रि में पर्वत के ऊपर विश्राम किया। वहाँ समस्त तीर्थों की यात्रा करके शिवरात्रि के दिन कालंजर की यात्रा की। वह बहुत दूर था करपात्री निर्जल व्रत थे तब भी यात्रा करते रहे। सायंकाल उस पर्वत पर पहुँचे शिव मन्दिर था ओर पर्वत में सरोवर बहुत सुन्दर था रात्रि में वहां निवास किया और शिव का पूजन किया। प्रात: स्नान करके यात्रा प्रारम्भ कर दी। ब्रह्मचारी ने आग्रह किया कि भोजन करके चलना चाहिये किन्तु करपात्री जी ने स्वीकार नहीं किया केवल अमरूद का फल खाकर जलपान किया। उससे वमन हुआ तब यात्रा स्थगित कर दी भोजन आदि करके चले अनेक ग्रामों में भ्रमण करते हुये वांदा होकर पुन: असनी ग्राम में गंगा तट पर पहुंचे वहाँ शंकराश्रम और अनंग बोधाश्रम दिगम्बर का दर्शन हुआ। शंकराश्रम विद्वान थे उनका सत्संग हुआ वहाँ से गंगा तट पर भ्रमण करते हुये कानपुर में आये। वहाँ करपात्री जी का प्रवचन हुआ। जनता अधिक प्रभावित हुयी जो लोग सनातन धर्म के विषय में सन्देह करते थे। उनका समाधान करपात्री जी अपनी युक्तियों से ऐसा करते थे कि पुन: वह शंका नहीं करता था।

वहाँ से भ्रमण करते हुये नरवर में पुन: सांगवेद विद्यालय में कुछ दिन निवास किया। वहाँ भेरिया भृगुक्षेत्र आश्रम में आये वहाँ एक उत्सव हो रहा था वहाँ संकीर्तन के समय प्रणव का उच्चारण होता था। उसका विरोध करपात्री जी ने किया वहाँ से अनूपशहर में गये वहाँ पर भी करपात्री जी का प्रवचन हुआ। वहाँ से श्री गंगा तट को

छोड़कर श्री वृन्दावन की यात्रा किया मार्ग में अनेक ग्रामों, नगरों में होते हुये हाथरस में आये वहाँ सभाओं में प्रवचन हुये। वहाँ खांडेग्राम के निवासी चोखेलाल आदि ब्राह्मण मिले उनके ग्राम में ब्रह्म सत्र का आयोजन था। वे लोग प्रयाग में ही निमन्त्रण दे आये थे उन लोगों ने आग्रह किया कि महाराज हमारे ग्राम में चलिए। वहाँ छपा हुआ कार्यक्रम दिखाया। उसमें उपनिषद् ब्रह्म सूत्र आदि की कथा का कार्यक्रम छपा था। उसको पढ़कर करपात्री जी ने कहा कि मैं वहाँ नहीं जाऊंगा। क्योंकि सभा में उपनिषद् कथा सुनाना शास्त्र विरुद्ध है तब उन लोगों ने कहा महाराज जैसी आपकी आज्ञा होगी वैसा करेंगे तब उस ग्राम में गये।

ज्येष्ठ मास था गर्म वायु चल रही थी। तब भी पग यात्रा करके वहाँ पहुंचे। भीमसेनी एकादशी का व्रत था करपात्री निर्जलव्रती थे। मैं भी उनकी कुटिया में ही बैठा था। वहाँ पर प्रयाग विश्वविद्यालय के एक प्राध्यापक आये और कहने लगे कि वहाँ के कार्यक्रम को पूर्णानन्द तीर्थ उड़िया बाबा की आज्ञा से बनाया गया। यदि उपनिषद् और ब्रह्म सूत्र की कथा जनता को सुनाया जाये तो क्या हानि है? करपात्री जी मौन थे मुझको बोलना पड़ा मैंने उनसे प्रश्न किया कि क्या आप उपनिषद् और ब्रह्मसूत्र पर विश्वास करते हैं उन्होंने कहा कि हाँ। तब मैंने कहा कि उसमें तो विधान है जिसका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ हो वही उपनिषद् को पढ़ सकता है। इस विषय का विचार अपशूद्राधिकरण वेदान्त दर्शन में है भाष्य और टीकाकारों ने वैसा ही विचार किया है तब वे बोले यह बड़ा अन्याय है और उड़िया बाबा बड़े सिद्ध सन्त हैं उनकी आज्ञा उल्लंघन करना ठीक नहीं है। उड़िया बाबा को वहाँ के लोग श्रीकृष्ण का अवतार मानते थे उनकी बात को सुनकर करपात्री जी मौन व्रत छोड़ दिये और बोलने लगे प्राध्यापक महोदय चुप हो गये। वहाँ का सब कार्यक्रम परिवर्तित कर दिया गया। भगवद्गीता-योग वासिष्ठ-पञ्चदशी आदि ग्रंथ की कथा रखी गई। करपात्री जी भगवद्गीता का त्रयोदश अध्याय सुनाते थे हमको उपदेश साहस्त्री सुनाने को कहा गया, उड़िया बाबा पश्चात् आये। वे ग्राम निवासियों से कहने लगे कि कार्यक्रम क्यो परिवर्तित किया गया। ग्राम वालों ने कहा कि करपात्री जी की आज्ञा से किया गया यदि कोई करपात्री जी से शास्त्रार्थ करे और यह सिद्ध कर दे कि उपनिषद् सबको सुनाना चाहिये तो हम लोग वैसा ही करेंगे। उड़िया बाबा तो अधिक विद्वान नहीं थे। अधिक विद्वानों को साथ में रखते थे। उस समय कोई विद्वान शास्त्रार्थ के लिए नहीं तैयार हुआ। करपात्री जी को ज्वर हो आया अतएव उनका विषय भी हमको की सुनाना पड़ता था उपदेश साहस्त्री सुनाते समय उसमें एक प्रसंग आया कि संन्यास का अधिकार ब्राह्मण को ही है। मैंने केवल शब्दार्थ किया मेरा स्वभाव है कि जब मैं किसी पुस्तक प्रसंग को सुनाता हूं तो शब्दार्थ ही करता हूं। कभी कही बहुत आवश्यक हुआ तो अधिक कह देता हूं। जब मैंने सुनाया कि ब्राह्मण को ही संन्यास का अधिकार

है तब एक मोटा-ताजा लम्बा-चौड़ा गेरुआ वस्त्रधारी उठकर खड़ा हो गया और कहने लगा-संन्यास का अधिकार सबको है। हमने कहा कि तुमको तो नहीं है और की बात मैं पुनः बताऊंगा। वहाँ का नियम था वक्ता ऊँचे बैठता ही और सब नीचे बैठते थे दूसरा कोई बीच में नहीं बोलता था। हमने कहा तुमने नियम को भंग किया है उड़िया बाबा ने उसको बैठा दिया और उसको बोलने से रोक दिया। वह उन्हीं के साथ रहता था उड़िया बाबा ने हम से कहा कि अब आगे बात सुनाइये, मैंने कहा कि अब तो मैं इसी को सिद्ध करूंगा अनेक शास्त्रों के वचनों से और तर्क से डेढ़ घण्टा तक प्रवचन किया और कह दिया कि जिसको विचार करना हो वह विचार कर ले। वहाँ अखिलानन्द भी थे और अनेक पण्डित थे वे बहुत प्रसन्न हुये। करपात्री जी ने सुना वे भी प्रसन्न हुये। ज्वर के कारण वे सभा में नहीं गये दूसरे दिन भी उसी विषय पर व्याख्यान दिया जितनी जनता थी वह भी प्रसन्न हुयी। सभा के बीच में मैंने प्रथम बार प्रवचन किया वहाँ करपात्री जी का बहुत प्रभाव पड़ा।

वहाँ से भ्रमण करते हुये आगरा पहुंचे, आगरा में भी करपात्री जी का प्रवचन हुआ। वहाँ कई दिन रुके थे वहाँ से यात्रा करते हुये मथुरा पहुंचे। वहाँ पर श्रीनाथ के मन्दिर में रुके। वहाँ पर करपात्री जी रास पञ्चाध्यायी पर प्रवचन प्रारंभ किया। मथुरा के प्रायः सभी पण्डित सुनने आते थे बहुत भीड़ होती थी। पञ्चदश दिवस तक रास पञ्चाध्यायी के प्रथम श्लोक पर ही व्याख्यान करते रहे। वहाँ से वृन्दावन आये वहाँ मिर्जापुर की धर्मशाला में निवास किया वहाँ भी रास पञ्चाध्यायी पर ही प्रवचन किया वृन्दावन में भी पण्डित श्रवण करने आते थे यहाँ जो गोस्वामी किसी अन्य की कथा न सुनते थे वे भी आते थे। वृन्दावन निवासियों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। वहाँ भी पन्द्रह दिन तक उस प्रथम श्लोक पर प्रवचन किया। करपात्री जी की वाणी में बहुत ही रस था। वहाँ से करपात्री जी वृन्दावन की यात्रा के लिये चले गये मैं अकेला ही श्री गंगा तट पर चला गया इस प्रकार छः मास तक निरन्तर साथ रहा। पश्चात हरिद्वार के कुम्भ में भी कृष्णबोधाश्रम जी, करपात्री जी और मैंने पर्ण कुटियों में गंगा स्थलीय ब्रह्मचारी के आश्रम में निवास किया। वहाँ भी वृक्ष के नीचे प्रवचन होता था। सभाओं में भी लोग बुलाते थे वहाँ भी प्रभावशाली प्रवचन होता था। करपात्री जी की प्रबल इच्छा थी कि सनातन धर्म के सिद्धांत का प्रचार हो।

श्री वृन्दावन में करपात्री जी के प्रभाव की एक घटना और लिखता हूं। पूर्णानन्द तीर्थ उड़िया बाबा ने श्री वृन्दावन धाम में कृष्णाश्रम का निर्माण करवाया उसमें प्रथम उत्सव आयोजित किया गया करपात्री जी को भी आमंत्रित किया गया। करपात्री जी पग यात्रा द्वारा वहाँ पहुंचे। मैं भी पग यात्रा से वहाँ पर पहुँच गया। मिर्जापुर की ही धर्मशाला में निवास किया। उड़िया बाबा का उधर बहुत प्रभाव था बहुत सेठ साहूकार उनके भक्त थे उनको कृष्ण का अवतार माना जाता था। बहुत सी

जनता वहाँ इकट्ठी हुई कथा कीर्तन प्रवचन होता रहा करपात्री जी को बुलया गया। करपात्री जी ने कहा वहाँ ब्राह्मणेतर व्यास गद्दी पर बैठकर कथा कहते हैं और प्रणव का उच्चारण सभी लोग सामूहिक रूप में करते हैं। इस कारण मैं नहीं आऊँगा यदि उपरोक्त बातें न की जायें तो आ सकता हूं उड़िया बाबा ने कहा वे बातें मैं नहीं रोक सकता। उन्होंने बहुत से विद्वानों को धन देकर बुलाया था उनको इस बात का अभिमान था कि विद्वान हमारा समर्थन करेंगे।

करपात्री जी उनके आश्रम में नहीं गये उसी धर्मशाला में प्रवचन करते रहे। भागीरथी सेठानी ने अष्टोत्तरशत १०८ भावगत सप्ताह का आयोजन किया। करपात्री जी का प्रवचन होने लगा। श्री वृन्दावन धाम के भक्तजन भागवत कथा रस पीने के लिये उमड़ पड़े। जो बाहर के लोग उड़िया बाबा के आश्रम में आये थे वे भी कथा श्रवण के लिये आने लगे। उधर जिन विद्वानों को उड़िया बाबा ने निमन्त्रण देकर बुलाया था वे भी उनके विरोधी हो गये। वृन्दावन निवासी तो वहाँ गये नहीं। सब जनता करपात्री जी से प्रभावित हुयी। समाचार पत्र भी करपात्री के अनुकूल हो गये व्रजवासी उनके यहाँ भोजन करने भी नहीं गये उड़ीया बाबा दर्शन करने मन्दिरों में गये उनकी गोस्वामी लोग दर्शन नहीं कराया उनसे दक्षिणा नहीं लिया। यहाँ से अष्टोत्तर भागवत से ही विशेष प्रवृत्ति हुयी। इसके अनन्तर काशी के चातुर्मास्य के पश्चात् धर्म संघ की स्थापना विन्ध्याचल में किया गया। हमारे पास पत्र आया कि आप भी इस संघ में सम्मिलित हों। मैंने उत्तर दिया कि मैं किसी संघ या सभा में सम्मिलित नहीं होता, सनातन धर्म के सिद्धांत का प्रतिपादन अवश्य करता हूं और करूंगा क्योंकि मैंने काशी में विद्याध्ययन किया है। मुझको सब सभाओं का पता है। सनातन धर्म के प्रचार के लिये सनातन धर्म सभाएँ है। भारत धर्म महामण्डल है। वर्णाश्रम स्वराज्य संघ बना है। धर्म के प्रचार के लिये बहुत धन संग्रह किया गया किन्तु कुछ व्यक्ति धन अपने पास रखकर पचा गये। उसके अनन्तर करपात्री जी के प्रभाव से ब्रह्मानन्द सरस्वती को ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य बनाया गया। प्रयाग के कुम्भ में धर्म संघ का संगठन किया गया। करपात्री कहते थे कि धन के संग्रह कि बिना ही धर्म संघ का कार्य चलेगा। मैंने उनसे कहा कि सभा या संघ बिना धन के नहीं चलते हैं। जिन पण्डितों को आपने इसमें लिया है ये आपके नाम से धन संग्रह करेंगे और उसको पचा जायेंगे।

उनके त्याग विद्वत्ता से जनता अधिक प्रभावित होती थी। इस कारण कर्म–काण्ड के कुछ वैदिक पण्डितों की प्रेरणा से शत कुण्डी यज्ञ का आयोजन किया गया। जिसमें स्वामी कृष्ण बोधश्रम जी ने बहुत बड़ा सहयोग दिया। यज्ञ भारत की राजधानी दिल्ली में करने का निश्चय हुआ। यमुना तट निगम बोधघाट पर यज्ञ का आयोजन हुआ। उसमें भी मैं सम्मिलित हुआ था उस यज्ञ में अपार भीड़ हुयी। अन्न घृत रुपये

की कोई कमी नहीं रही उसमें करपात्री जी को बहुत परिश्रम करना पड़ा। यद्यपि उस यज्ञ का बहुत विरोध भी हुआ। तब भी यज्ञ बहुत सफल रहा करपात्री जी के प्रभाव से विरोधी कुछ नहीं कर सके। वहीं से यज्ञ की परम्परा चल पड़ी। कानपुर, काशी आदि में भी वैसे ही यज्ञ हुये किन्तु दिल्ली के समान कोई नहीं हुआ।

करपात्री जी के प्रभाव को देखकर लोगों ने उनको राजनीति में लाने का प्रयत्न किया वे उसमें आ गये। रामराज्य परिषद नामक संस्था की स्थापना हुयी। उसका प्रचार होने लगा बहुत से राजे महाराजे उसमें सम्मिलित हुये चुनाव में कहींसफलता भी मिली। किन्तु पूरी सफलता नहीं मिली। इस कारण बहुत से लोग उससे अलग हो गये। करपात्री जी के बहुत से भक्त भी उससे अलग हो गये। बहुत से प्रबल विरोधी बन गये। उनके गुरु ब्रह्मानन्द ने भी उनका विरोध किया तब भी करपात्री जी उसका प्रचार करते रहे। काशी जी में धर्म-संघ शिक्षा-मण्डल की स्थापना हुयी। उसका कार्य पहले तो चला पश्चात उसमें भी विरोध होने के कारण शिथिलता आ गयी।

करपात्री जी ने बहुत सी पुस्तकें भी लिखी हैं। उनमें धर्म और भक्ति का वर्णन उत्तम रीति से किया है। अन्तिम पुस्तक वेदार्थ परिजात बहुत ही श्रेष्ठ है। अब उनके ग्रंथों से ही जनता को लाभ हो सकता है। उनका प्रकाशन करना ही चाहिये। मेरा करपात्री जी का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। मैं उनसे सदा मिलता रहता था। व्यावहारिक विषय में मतभेद होने पर भी सैद्धान्तिक विषय में कोई मतभेद नहीं था उनकी कुछ स्मृतियाँ लिख दिया हैं। अधिक लिखने से तो बहुत बड़ा ग्रंथ तैयार हो सकता है।

***

अद्‌भुत-शास्त्रार्थी-विद्वान

-१००८ श्री स्वामी सिद्धेश्वराश्रम (दण्डी स्वामी) जी महाराज,
उड़िया बाबा का आश्रम दावानल कुन्ड, वृन्दावन।

स्वामी करपात्री जी विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न थे। उनकी विद्या केवल इस जन्म में ही प्राप्त की हुयी नहीं थी अपितु पूर्वजन्मों के संस्कारों से प्राप्त विद्या थी। उनकी बुद्धि बड़ी विलक्षण थी। एक बार हमारे पूज्य गुरुदेव ब्रह्मलीन उड़िया बाबा जी, करपात्रजी, रामदास जी और हम एक स्थान पर वृन्दावन में ही चारों बैठे थे। श्री उड़िया बाबा जी ने करपात्री जी से पूछा कि ''बेटा। यह आचार्यों की वाणी तू कैसे बोल लेता है तुझे कैसे आ गयी बोलनी क्योंकि श्री वल्लभाचार्य जी आदि विभिन्न सम्प्रदायों के आचार्यों की वाणी तो यह केवल भक्तों को और वह भी बन्द कमरे में बैठकर सुनाते हैं तूने कहाँ से सीखी?'' इस पर करपात्री जी ने कहा कि ''महाराज अनूपशहर के एक पण्डित जी यहाँ उनके मन्दिर में थे उन्होने आचार्य की वाणी की पुस्तक मुझे दी तो मैंने उसे पढ़कर तुरन्त लौटा दी थी। बस इस प्रकार वह मुझे कण्ठस्थ हो गयी।'' इस प्रकार की विलक्षण स्मृति करपात्री जी की थी, जो भी एक बार पढ़ लेते थे उन्हें याद हो जाता था। वह जितने वेद शास्त्रों के मर्मज्ञ थे उतने ही तपस्वी भी थे। शास्त्रों में उनकी अगाध एवं एकान्त निष्ठा थी। मैं उनके साथ भी रहा हूँ और तब रहा हूँ जब उन्होने दण्ड भी ग्रहण नहीं किया था। हमने दो शास्त्रार्थ स्वयं देखे हैं उनमें एक तो मालवीय जी के साथ दूसरा अन्यत्र। उन शास्त्रार्थो का संक्षिप्त याथातथ्य विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

ऋषिकेश की कोयल घाटी में महामना मदन मोहन मालवीय जी से उनका शास्त्रार्थ लगभग ४१-४२ वर्ष पूर्व हुआ था उस समय मैं भी वहीं बैठा था। सारा वार्तालाप मेरे समक्ष हुआ था। मैं उस समय दण्डी संन्यासी था और उन्होंने तब तक संन्यास दीक्षा नहीं ली थी। वहाँ उपस्थित महानुभावों में गीता प्रेस के भक्त सेठ जयदयाल गोयनका तथा खुर्जा के सेठ गौरी शंकर गोयनका भी थे। उस समय स्वतन्त्रता आन्दोलन का जमाना था। अछूतोद्धार की हवा चल रही थी। मालवीय जी ने यह सामयिक प्रश्न उठा दिया कि ''प्रणवयुक्त वेद मन्त्रों में शूद्र-चाण्डाल का भी अधिकार है उन्हें इसका उपदेश दिया जा सकता है।'' स्वामी करपात्री जी ने इस पर कहा कि ''शास्त्रों में इसका निषेध है। शूद्र को सामने बैठा कर, सामने रखकर वेद मन्त्र नहीं कह सकते, इधर-उधर बैठकर सुन सकता है।'' इस पर पर्याप्त शास्त्रार्थ

हुआ और पक्ष–विपक्ष में मालवीय जी और करपात्री जी ने प्रबलतम शास्त्रीय वचन उपस्थित किये। इसी बीच सायंकाल हो गया मालवीय जी के साथ आये उनके नौकर ने उन्हें घड़ी दिखायी कि चलो समय हो गया है। मालवीय जी ने उससे कहा कि अब चलना कैसा? अब तो चाहे तीन दिन हो जाएँ शास्त्रार्थ निर्णय होने पर ही जायेंगे–बीच में चलना कैसा? उपस्थित समुदाय में सन्त, महात्मा, विद्वान, गृहस्थ, स्त्री–पुरुष सब ही थे–उन्हें अपने–अपने स्थानों पर पहुँचने की जल्दी थी। उनमें से कुछ खड़े हुये और कहने लगे कि ''महाराज आप क्या कहते हैं। आप तो दिग्गज हैं जो बिजारों की भांति लड़ते रहो हमें तो जाना है। फिर निश्चय हुआ कि कोई मध्यस्थ होने चाहिये जो निर्णय करें। करपात्री जी से पूछा कि कौन मध्यस्थ बनाया जाए? तो इस पर उन्होंने कहा कि मेरी ओर से कोई भी मध्यस्थ हो सकता है कोई आपत्ति नहीं होगी। कितनी उदारता आत्मविश्वास एवं शास्त्रनिष्ठा थी उनमें। कितनी महानता थी उनकी। श्री गौरी शंकर गोयनता खुर्जा वाले को मध्यस्थ बनाया गया। तो उन्होंने खड़े होकर कहा कि मैंने व्याकरण मध्यमा तक पढ़ी है, शास्त्रों का भी अवलोकन किया है श्री गौरी शंकर गोयनका ने कहा कि करपात्री जी महाराज ठीक कह रहे है वे शास्त्रों का जो पक्ष रख रहे है वह ठीक है। फिर मालवीय जी की ओर से भी जयदयाल गोयनका जी को कहा गया निर्णय देने के लिये वे खड़े हुये उन्होंने कहा कि एक प्रकार से म्हारी बुद्धि के बीच के मांहि ऐसी बात जचै है कि सुना भी सकते हैं और नहीं भी और वह तुरन्त बैठ गये। लोगों ने कहा यह नहीं चलेगा। कि दोनों के भले बने रहो फिर उन्हें स्पष्ट निर्णय देने को खड़ा किया गया तो जयदयाल जी ने कहा कि शास्त्रों में ऐसा आता है कि शास्त्रों को सुना सकते हैं परन्तु जोर से कहा ऐसा आता है कि नहीं भी सुना सकते। इस पर मालवीय जी ने रोकर कर कहा कि स्वामी जी आपका कथन शास्त्रानुसार ठीक है–परन्तु समय ऐसा आयेगा कि आने वाले समय में बात हमारी माननी पड़ेगी। इस पर करपात्री जी ने कहा कि हमारा–आपका आज शास्त्रार्थ है आने वाले समय के मानने की बात नहीं थी। इस पर मालवीय जी ने मौन होकर पराजय स्वीकार कर ली कि शास्त्रीय पक्ष तो आपका ही ठीक है।

एक दूसरा अवसर पुनः उपस्थित हुआ शास्त्रार्थ था। अमनोई गांव है अलीगढ़ जनपद में। सारा गांव आर्य समाजियों का है। वहाँ के राजा थे शंकरपाल सिंह वे भी हमारे गुरुदेव पूज्य उड़िया बाबा जी को ही गुरु मानते थे। उनकी बड़ी सेवा करते थे। उन्होंने श्रीमद्भागवत का सप्ताह करवाया–गुरु जी को भी बुलाया अन्य महात्मा विद्वान भी बुलाये गये थे। उन्होंने गड़ी, वृन्दावन आदि आर्य समाज के अनेक गुरुकुलों के स्नातकों को भी बुला रखा था। हम भी थे और करपात्री जी भी गये थे। पं० जीवन दत्त जी ब्रह्मचारी नरवर वाले भी विद्यमान थे। आर्य समाजियों ने कहा कि शास्त्रार्थ होगा सनातन धर्म से–विषय रखा गया कि जाति कर्म से हो। पूज्य गुरुदेव उड़िया बाबा जीने

कहा कि ठीक है शास्त्रार्थ करो। दोनों पक्ष के लोग बैठे। आर्य समाजियों ने अपना पक्ष रखते हुए वेद का यह मंत्र बोला और बार-बार इसी श्लोक को बोले और कहा कि ब्राह्मण भगवान के मुख से उत्पन्न हुये हैं, क्षत्रिय बाहु से, वैश्य पेट से और शूद्र पैरों के समान है। इसी को वे लोग बार-बार कहते रहे। तब करपात्री जी ने कहा कि ऐसा हम नहीं मानते। जिस मन्त्र का अर्थ अक्षरों में से ही निकला कि जाति जन्म से है या कर्म से है। वही ठीक है। करपात्री जी ने पूछा कि संस्कार पद्धति आपकी और हमारी एक ही है या अलग-अलग? आर्य समाजी ने कहा कि संस्कार पद्धति तो एक ही है। इस पर करपात्री जीने कहा कि जब यज्ञोपवीत होता है तब मन्त्र बोला जाता है "अष्ट वर्षं ब्राह्मणं उपनयेत", दोनों पद्धतियों में यही अर्थ है कि ब्राह्मण का अष्ट वर्ष में जनेऊ होना चाहिये। यह नहीं कहा कि ब्राह्मण के लड़के को जनेऊ अष्टम वर्ष होना चाहिये। उन्होंने कहा कि वह तो ब्राह्मण का अथवा आठ वर्ष में ब्राह्मण का जनेऊ होना चाहिये। इस पर जन्म से ही ब्राह्मणादि जाति होना सिद्ध हो गया। आर्य समाजी बन्धुओं ने स्वीकार किया और कहा कि हम तो समझते थे कि आर्य समाज में ही पण्डित हैं परन्तु अब हम मान गये कि सनातन धर्म में भी बड़े-बड़े विद्वान हैं जो शास्त्रार्थ को ठीक-ठीक ढंग से कर सकते हैं।

करपात्री जी की इस पर बड़ी प्रशंसा हुयी और उनकी अलौकिक प्रतिभा एवं बुद्धि प्राखर्य्य का सभी ने लोहा माना।

शास्त्रार्थ के उपर्युक्त दो प्रसंग हमारे सामने हुये और दोनों ही में हमने उनकी विलक्षण प्रतिभा को अनुभव किया। वर्तमान शताब्दी में उनके जैसा विद्वान, वेद शास्त्रों का ज्ञाता, व्याख्याता, शास्त्रों का मर्मज्ञ शायद ही कोई दूसरा हुआ है।

["जैसे अनन्त महौषधियों के पारस्परिक सम्प्रयोग-विप्रयोग जन्य (अनेकों महौषधियों के परस्पर संयोग और वियोग से उत्पन्न हुयी) शक्तियों के अभिभव या प्रादुर्भाव के विवेक का विज्ञान अन्वयव्यतिरेकादि लौकिक युक्तियों से शत जन्म में भी नहीं हो सकता, किन्तु केवल सर्वज्ञ-महर्षि-प्रणीत आयुर्वेदशास्त्रों से ही होता है। तद्वत् वर्णों के विचित्र संश्लेष-विश्लेषजन्य अचिन्त्य अद्भुत अलौकिक शक्तियाँ भी शास्त्रों से ही जानी जाती है। जैसे केवल एक श्रोत-इन्द्रिय से ही ग्रहण होने वाला 'शब्द' चक्षुरादि इन्द्रियों से अग्रहीत हुआ भी अप्रमित (अप्रमाणित) नहीं कहा जा सकता, वैसे ही केवल शास्त्रों से ही ज्ञात होने वाली और अन्य प्रमाणें से अप्रसिद्ध वस्तु भी अप्रमित नहीं कही जा सकती।"]

-करपात्री स्वामी

हा हन्त! महाकाल की निष्ठुरता

–पूज्यपाद १००८ श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी महाराज, चुरू (राजस्थान)

आद्य शंकराचार्य के पश्चात वैदिक धर्म का सूर्य सभी दिग–दिगन्तों में देदीप्यमान हो गया। भारतवर्ष के वाराणसी आदि सभी विद्या संस्थानों एवं धार्मिक नगरों में सभी मन्दिरों में शंख घंटा ध्वनि तथा वैदिक मन्त्रों का घोष निनादित होने लग गया था। चार्वाक, शून्यवादी तथा नास्तिकों के हृदय विदीर्ण हो गये थे और आर्यावर्त में पुनः सतयुग का दृश्य उपस्थित हो गया था। इतिहासवेता जानते हैं कि इसी समय मे वेद भाष्यकार सायणादि तथा वैयाकरण, नैयायिक, मीमांसक, साहित्यवेता, ज्योर्तिविद् एवं सभी वेदांगों के महान तत्ववेता भारत मही मण्डल में प्रादुर्भूत हो गये, परन्तु कुछ ही दिनों में बौद्धों की काली करतूत के कारण यवन, मलेच्छ, शक, हूणादिकों ने आर्यावर्त की दुर्गति कर डाली वैदिक ग्रंथों की होली जलाई गयी, भाष्यों को भाड़ों में भून डाला गया और पुराणों को पीसकर पानी में प्रवाहित कर दिया गया। और मन्दिरों को धराशायी कर दिया। सैकड़ों मन जनेऊ तोड़ डाले गये।

सतियों का सौभाग्य लूटा गया और बलात्कार द्वारा द्विजों को म्लेच्छ बनाया गया। नगरों के नाम बदल दिये गये यही इतना ही नहीं एक दूसरी गौरांग ने हिन्दु जाति के हृदय में यह भावना भर दी कि हमारे पूर्वज ऋषि महर्षि मूर्ख थे। सोलहवीं शताब्दी से २०वीं शताब्दी तक बंगाल, गुजरात, आदि देशों में जो सुधारकगण प्रादुर्भूत हुए उनका यही रवैया रहा। बुद्धिमानों को यह भली–भाँति विदित है। पश्चिम वेशधारी वैदिकों ने भी यही पाठ पढ़ाया। मैक्समूलर, बेवर–जोन्स, जेकोबी मैकडोनल, मेकाले आदिकों का यही दृष्टिकोण था। भारत के ही राजाराममोहन राय, श्री दयानन्द तथा राजनैतिक महापुरुषों के मस्तिक में भी यही भावना आ गयी।

परन्तु एक दिन ब्रह्मलोक में एक विचार गोष्ठी बैठी गोलोक से भगवान कृष्ण भी पधारे और

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युथानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।

इत्यादि विषयों पर मुक्तात्माओं ने निर्णय दिया कि शीघ्र ही एक दिव्य ज्योति को भारत वसुन्धरा पर प्रेषित करना चाहिये अस्तु। भगवति जाह्नवी के निकट ही एक ग्राम में हरिहरात्मक महादिव्यात्मा का प्रादुर्भाव हुआ।

श्री ब्रह्मचारी जीवन दत्त एवं पंडित स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रम के पास एक

गौरवर्ण ब्रह्मचारी ब्रह्म वर्चस्वी विशाल मूर्ति को मैंने अद्वैत सिद्धि, खण्डन खण्डन खाद्य, न्याय मुक्तावली, लघुशके शेखर मीमांसा वार्तिक आदि ग्रंथ कुञ्जों सहित देखा। सायंकाल अनेकों शास्त्रों के आचार्यो के साथ गंगातट पर शास्त्रार्थ भी चला और दूसरे दिन प्रातःकाल श्रीमद्भागवत की रास पञ्चाध्यायी प्रवचन उसी लंगोटी बन्ध महात्मा की पीयूष वाणी द्वारा श्रवण किया और उसी दिन रात्रि के बारह बजे तक एक पर्णशाला में यह विचार भी हुआ कि दिग्विजय की यात्रा कब से प्रारम्भ की जाय। भयंकर सनातन धर्म का ह्रास और वर्णाश्रमधर्म का विद्रोह किस प्रकार से दूर होगा। इन दिनों श्रीगाँधी जी गोलमेज कांफ्रेस में लन्दन गये थे। बड़ी आशायें थी। परन्तु उस महात्मा ने कहा कुछ होने वाला नहीं है और भी भयंकर धर्म नाश होगा। यह लंगोटो बन्ध फकीर केवल एक पतली लंगोटी रखता था और भिक्षा मांगकर हाथ में भी भोजन कर लेता था। गंगाजल भी सुलभता से प्राप्त हो जाता था। हम सभी छात्र मंडली ने परम हंस और करपात्री इस नाम से उनको विभूषित कर दिया परन्तु यह महात्मा यहां से चल दिये। ऋषिकेश, वृन्दावन, मथुरा, काशी आदि स्थानों में तथा भारत के सभी ग्रामों में जहाँ भी योग्य पंडित का नाम सुना तीन चार नैष्ठिक ब्रह्मचारियों के साथ धर्म रक्षार्थ यात्रा शुरू कर दी। चारों धाम तथा भगवति जाह्नवी माता की पदाति यात्रा चलने लगी। काशी, काश्मीर, कलकत्ता, कुम्भकोणम, नासिक, बम्बई सभी नगरों में धर्म की प्रचार की डिमडिम घोषणा प्रारम्भ हो गयी।

काशी आदि के महामहोपाध्याय गिरिधर शर्मा, चिन्न स्वामी, अनन्त कृष्ण शास्त्री, तर्कपंचानन श्री कृपालु जी आदि महारथियों ने धर्मसंघ की स्थापना का विध्येश्वरी महामाया के प्रांगण में बिगुल बजा दिया और कुम्भ के विशाल जन समूह में करपात्री जी चमकने लगे और आशा बन गयी कि भारत का भाग्य जागृत हो गया।

बिना राजनीति में प्रवेश किये कार्य सिद्ध न होगा, इसलिये रामराज्य की भूमिका के लिये एक महाग्रंथ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' इस महात्मा की स्वर्ण लेखनी से जेल में बैठे–बैठे ही लिख दिया। हिन्दू कोड बिल, मन्दिर प्रवेश बिल तथा गोरक्षार्थ सत्याग्रह आदि के लिए लाहौर, बम्बई, काशी, आगरा, दिल्ली की जेलों में यात्रा करनी पड़ी। ज्योतिष, वेद, महाभारत और रामायण इन पर किये गये भ्रान्तवादियों के आक्षेपों को समूलोन्मूलन करने के लिये रामायण मीमांसा, विचार पीयूष, वेदार्थ पारिजात आदिा महाग्रंथों का निर्माण करके विद्वानों को एक मार्ग दिखला दिया। परन्तु कलिदेवता को यह सब अच्छा नहीं लगा। उसने महाकाल के दरबार में अपने कलियुगी दृश्य की रक्षा के लिए आवेदन पत्र प्रस्तुत कर दिया। उस महाकाल ने पृथ्वी लोक के इस महात्मा को उठाकर ब्रह्मलोक में ब्रह्मलीन कर दिया। हम सभी भारतवासी ठगे से रह गये। पर हम सब को समवेत होकर उनके मार्ग पर चलकर धर्म रक्षा के उनके प्रयास को आगे चलाना चाहिये।

निरंकुश पाण्डित्य के धनी श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

–ले० १०८ श्री स्वामी दोमोदरानन्द तीर्थ जी, पक्काघाट, बागपत, जनपद मेरठ।

मैं राजस्थान पारीक संस्कृत महाविद्यालय में पढ़ता था कि भगवद् कृपा से अन्तःकरण में वैराग्य का उदय हुआ। संसार को छोड़कर संन्यास ग्रहण की प्रबल आकांक्षा से अभिभूत होकर मैंने वैशाख शुक्ला चतुर्दशी विक्रमाब्द १९९९ में विद्यालय छोड़ दिय। मैं उस समय दण्डी संन्यासियों के विषय में कुछ भी नहीं जानता था। उपर्युक्त विद्यालय के प्रधानाचार्य थे पं० सत्यनारायण शास्त्री जो बड़े विद्वान थे आयुर्वेद, ज्योतिष एवं व्याकरण तीन विषयों के आचार्य थे काव्यतीर्थ थे, वह यद्यपि राजस्थान के उक्त विद्यालय के प्राचार्य थे परन्तु पूर्वी उत्तर प्रदेश निवासी सरयूपारीण ब्राह्मण थे। मैं निरा विद्यार्थी था मुझे महात्माओं के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं था। सन्त महात्माओं से कोईपरिचय भी नहीं था बस यह दृढ़ निश्चय था कि ब्राह्मण शरीर से ही संन्यास दीक्षा ग्रहण करूंगा। मैंने उन्हीं शास्त्री जी के चरणों में निवेदन किया कि किसी उत्तम ब्राह्मण संन्यासी का पता बताने की कृपा करें, उन्होंने बहुत विचारोपरांत जिन महापुरुष का नाम मुझे बताया वह थे हमारे धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी महाराज। मैंने राजस्थान छोड़ दिया ऋषिकेश जा पहुँचा। मैंने सुना कि कैलास आश्रम में 'गिरि', 'पुरी' सम्प्रदाय के साधु रहते थे; उस समय वहाँ के मण्डलेश्वर श्री जनार्दनगिरि जी महाराज थे। वहाँ को जाते समय एक मार्ग में मिले महात्मा उनसे पूछने पर बताया कि दण्डी आश्रम ऋषिकेश में आप पधारें। जो महात्मा मिलता मैं बड़ी उत्सुकता से उसके ब्राह्मणत्व का परिचय प्राप्त करने का प्रयास करता। सभी तो अपने को ब्राह्मण–शरीर बताते। मैंने गिरि जी महाराज से जिज्ञासा की तो उन्होंने कहा कि काली कमली वाले क्षेत्र में जाओ वहाँ ऐसे महात्मा आपको मिल जायेंगे। मैं सद्गुरु की खोज में वहाँ भी गया परन्तु मुझे वहाँ बताया गया कि तुम मायाकुण्ड स्थित दण्डी आश्रम ऋषिकेश में जाओ; मैं वहां गया। वहां दण्डी संन्यासियों ने पूछा कि इस २८ वर्ष की कच्ची उम्र में अभी सेवा करो, अध्ययन करो। वहां आकर ब्रह्मचारी ने बताया कि रामकुंड–राममन्दिर, त्रिवेणीघाट पर स्वामी करपात्री जी का भाषण हो रहा है, मैं तत्काल चल पड़ा, त्रिवेणीघाट पर वीर राघवाचार्य जी महाराज का भाषण हो रहा था। अनेक सन्त, महात्मा मंच पर विराजमान थे, परन्तु अकस्मात सभा विसर्जित हो गयी और सब चले गये मैं पास पहुँचा तो वहाँ मेड़ता (राजस्थान) के एक संन्यासी थे कहने लगे 'तुम संन्यास क्यों लेते हो?' 'तुम झूठ क्यों बोलते हो, 'खर्च–खर्च भी है?'–भई निश्चय कर लो, वेदपाठियों से मुहूर्त निकलवा लो। ज्येष्ठ कृष्णा सप्तमी का मुहुर्त बताया। अगले दिन ब्रह्मचारी फिर बोला छोटी अवस्था

में क्यों संन्यास लेते हो? अभी कर्मकांड का अभ्यास करो, अध्ययन करो'–मैंने निवेदन किया कि मेरा तो दृढ़ निश्चय है संन्यास लेने का। तभी मुझे पता चला कि महाराज करपात्री जी कोयल घाटी स्थित एक कुटिया में ठहरे हैं–वहाँ दो कुटिया थी एक में थे स्वामी प्रभास भिक्षु जी महाराज और दूसरी में स्वामी करपात्री जी विराजमान थे। पतला–दुबला शरीर, मात्र लंघोटी एवं एक हल्का सा–उपरिवस्त्र धारण किये अलौकिक आभा से युक्त मुखमंडल वाले लगभग ३४–३५ वर्ष कए युवक संन्यासी विराजमान; कोई लेख लिख रहे थे। मैंने प्रणाम किया, बैठ गया। वह लेखन कार्य में लीन रहे। मैं बैठा रहा। फिर सहसा पूछा उन्होंने–कहाँ से आये हो? मैंने कहा–'राजस्थान से'। फिर बोले 'जाओ, गर्मी हो रही है। मैंने निवेदन किया– 'भवदभ्यःकाचित् प्रार्थना अस्ति।'

स्वामी जी ने पूछा – 'का सा प्रार्थना?'

मैंने बताया – 'भवदभ्यो दीक्षाम् गृहीतु इच्छामि।'

वे बोलें – 'का सा दीक्षा?'

मैंने निवेदन किया – 'संन्यास दीक्षैव।'

स्वामी जी का प्रश्न था – 'को हेतुः संन्यास ग्रहणे?'

स्वामी जी ने पूछा – 'कि विवाहसंस्कारः सज्जातः।'

मैने विनम्रतापूर्वक निवेदन किया – 'नैव।'

महाराज ने फिर पूछा – 'किम् अप्राप्यत्वात्?'

मेरा उत्तर था – 'महाराज! तस्मिन विषये मया प्रयत्नमपि न कृतं।'

स्वामी जी ने आगे प्रश्न किया – 'तहि किम् अधीतम् त्वया?'

मैंने निवेदन किया – 'व्याकरणशास्त्रस्य मध्यमा परीक्षा उतीर्णा। शास्त्री प्रथमखंडे प्रवेशं कृत्वा अधुना अध्ययनम् परित्यक्तम्।'

महाराज ने निर्देश दिया– 'सायंकाले श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्धस्य कथा भविष्यति, तच्छृणु।' अवकाशं लभ्यते चेत् प्रातःकाले मांडूक्य उपनिषद पाठ भविष्यति। तदपि श्रृणु।'

मैंने अपने संकोची स्वभाववश आगे कुछ भी निवेदन न कर गंगातट पर विचरता रहा।

कुछ दिन पश्चात गंगास्वरूप ब्रह्मचारी का निधन हुआ। उसी में महाराज स्वामी करपात्री जी भी पधारे थे। वहीं पर दंडी आश्रम में श्री विश्वेश्वरानन्द तीर्थ जी महाराज मुमुक्षु धाम काशी श्री विराजमान थे उन्हीं से मैंने संन्यास ले ली। ८–९ दिन तक उनके भाषण हुये थे। यद्यपि नित्य वहां जाता रहा श्री चरणों में उपस्थित होता रहा परन्तु मैं अपने संकोची स्वभाववशात् कभी कुछ भी उनके समक्ष निवेदन न कर सका बस उपदेश श्रवण कर हृदयंगम करता रहा–कभी उनको अपना परिचय तक नहीं दिया। उनके समक्ष निवेदन न कर सका बस उपदेश श्रवण कर हृदयंगम करता रहा–कभी उनको अपना

परिचय तक नहीं दिया। उनके सौम्य-स्वरूप, अद्भुत-वैराग्य, प्रकांड-पांडित्य, अनुपम-त्याग महान योग-साधना एवं कठोर तपस्या से प्रेरणा मात्र ग्रहण करता रहा और कृतकृत्य होता रहा। वेद, शास्त्र, दर्शन, पुराण, स्मृति सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय पर उनका पांडित्य निरंकुश था। उनके जैसा अद्भुत व्यक्तित्व का धनी संन्यासी भारत में दूसरा नहीं दिखता। उनके मन में देश धर्म की दुर्दशा से बड़ी पीड़ा होती थी। वह चाहते थे कि सत्कर्मों के अनुष्ठानादि से इस कलियुग को सतयुग बना दें। गंगासागर से अमरनाथ, बन्नू, कोहाट पेशावर तक, रामेश्वरम से गंगोत्री तक पैदल यात्राएं करते थे और हर ग्राम, नगर, मुहल्ले-मुहल्ले में धर्मोपदेश करके चिरप्रसुप्त भारतीय जनता को उद्बोधित करते थे। विशेषतः पंजाब आदि सीमांत प्रदेशों में उस समय जो इन योगी महात्मा ने स्पष्ट-स्पष्ट शब्दों में भविष्य वाणियाँ की थी वह अक्षरशः सत्य सिद्ध हुयीं। हमें पंजाब की वीर प्रजा में उनके द्वारा कहे गये वे शब्द आज भी अच्छी तरह स्मरण हो रहे हैं कि 'अंग्रेज जाने वाले हैं, हिन्दुओ! तुम संभल जाओ। अपने पैरा पर खड़े हो। अपना संगठन दृढ़ बनाओ। ईश्वर की प्रार्थना करो।' स्वामी जी बड़े ही निर्भीक एवं सत्य वक्ता थे। और सत्य कटु होता है। प्रत्येक मनुष्य के वश की बात नहीं है कि वह कटु सत्य को सहन कर ले। अतः यदा कदा स्वामी जी को उस परतन्त्र भारत में नेतृत्व की आलोचना भी करनी पड़ती थी जिसे लोग कभी-कभी कांग्रेस का विरोध मानकर सभा से उठकर चले भी जाते थे। वह स्वामी जैसे सतयुगी निस्पृह संत की सत्यवाणी को कांग्रेस की निंदा परक मानकर पलायन कर जाते। परन्तु स्वामी जी एक सच्चे देशभक्त, एक सच्चे कल्याणकारी के रूप में कुछ भी परवाह न करते हुए सतत् एक छोर से दूसरे छोर तक धर्म यात्राएं करते रहे। और अपने सिद्धांतो के प्रचार-प्रसार एवं धर्म संरक्षण के लिये उन्होंने आन्दोलन किये, जेल यात्राएं की, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया निर्वाचन जैसे लौकिक कार्य में भी सक्रियरूप से भाग लेकर धार्मिक सनातन सिद्धांत रक्षण में तत्पर रहे। उनके इस गोहत्याबन्दी आन्दोलन में सन १९४७ में अनेकों साधु, सन्त, महात्माओं, विद्वानों एवं सर्व साधारण जनता ने डटकर भाग लिया। उन्होने भारत की अखंडता एवं गौ की रक्षा के लिए सन्यासियों को कारागार भरने के लिए प्रेरित कर अपनी धर्मनिष्ठा एवं कर्मठता का अपूर्व परिचय दिया। हमने भी उस धर्मयुद्ध में भाग लेकर जेल यात्रा की और दिल्ली तिहाड़ जेल में कारावास किया। उनके जैसा महान सन्यासी युगों में अवतरित होता है। उन्होंने लगभग ५५ वर्षो तक अथक परिश्रम कर धर्म, कर्म, पूजा-पाठ, यज्ञ, अनुष्ठान, जप, तप, गो, ब्राह्मण, वेद, शास्त्र वर्ण-आश्रम कहाँ तक गिनायें सभी मूल सनातन भारतीय तत्त्वों को संरक्षण प्रदान कर स्थायित्व दिया। आज उनकी स्मृति शेष है। मार्गदर्शन के लिये उनके द्वारा विरचित ग्रंथों की धरोहर सनातन धर्म के पास विद्यमान है आवश्यकता है आज उसके व्यापक प्रचार-प्रसार की। सभी धर्म प्रेमियों का संगठित होकर इधर प्रयत्नशील होना चाहिये-यही कल्याण का मार्ग है।

पूज्य गुरुदेव के कुछ संस्मरण

-१००८ स्वामी श्री सदानन्द सरस्वती श्री वेदांती स्वामी जी महाराज,
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।

मैं अध्ययन करने हेतु सन् १९४१ में वाराणसी आया उस समय स्वामी जी महाराज गंगा तरंग नगवा में निवास करते थे। मैं रुइया संस्कृत विद्यालय नगवा में अध्ययन करता था। प्रतिदिन सायंकाल स्वामी जी का दर्शन करने के लिये गंगातरंग जाया करता था।

१९४५ में अस्सी घाट से रामगगर के सामने तक गंगा तट पर महाराज श्री का विशाल यज्ञ सम्पन्न हुआ। छात्र होने के नाते उस यज्ञ में मैं भी स्वयंसेवक का कार्य किया। उस समय पूज्य स्वामी जी प्रतिदिन ६ घन्टा तक अनवरत भाषण और शंका समाधन करते थे। उसको सुनकर प्रभावित हुआ और उनके शरण में आ गया। समय-समय पर कुछ पूछा करता था। जिसका समाधान श्री चरण करते थे उसी में से कुछ संस्मरण दे रहा हूँ।

एक बार दिल्ली में महाराज को पंडित किशनचन्द के यहाँ १०४ डिग्री ज्वर हो गया। मैंने कहा कि महाराज जी आप स्नान न करें। महाराज जी ने कहा कि यह बताओ तुम शिष्य हो या गुर? मैंने कहा कि मैं शिष्य हूँ तब कहाकि जल ले आओ मैं स्नान करूंगा। जल लाया महाराज जी ने स्नान और पूजन किया। इसे देखकर मुझे अनुभव हुआ कि महाराज जी को देहध्यास नहीं था।

गंगातरंग की घटना है कि महाराज जी को एक बार कुछ ज्वर और बहुत जोरों से खांसी आने लगी कई दिनों के बाद श्री बृजमोहन दीक्षित बुलाये गये उन्होंने कहा कि महाराज जी यात्रा स्थगित कर कुछ दिन विश्राम करें और शरीर पर ध्यान दें। महाराज जी ने कहा कि कवर्धा अधिवेशन के लिये वचन दे दिया है अत: वहाँ आना है। शरीर पर ध्यान तो अविवेकी लोग दिया करते हैं। उन्होंने एक चौपाई कहकर कवर्धा के लिये प्रस्थान कर दिया। वह चौपाई यह थी -

सेवहिं लखन सीय रघुवीरहिं।
जिमि अविवेकी पुरुष शरीरहिं।।

एक बहुत सम्पन्न एक भक्त महाराज जी के पास आये और उन्होंने कहा कि हम लोग भक्त हैं हमारा भी स्मरण कभी करते हैं। महाराज जी ने कहा यदि गुरु भगवान का स्मरण छोड़कर अपने शिष्य भक्तों का स्मरण करने लगे तो दोनों का पतन हो जाता है। अत: गुरु को सदा भगवान का स्मरण करना चाहिये। गुरुमन्त्र तथा गुरु

का स्मरण करने से दोनों का कल्याण होता है।

दुर्भाग्य है कि आज के अधिकांश गुरुलोग भगवान को छोड़ कर शिष्य-शिष्याओं का स्मरण करते हैं। इससे दोनों का पतन होता है।

एक बार कांग्रेस के विशिष्ट एक नेता आये उन्होंने कहा कि महाराज वस्तुतः हृदय से हम लोग आप की ओर है केवल शरीर कांग्रेस में है। महाराज जी ने कहा कि हृदय तो कोई देखता नहीं शरीर सब लोग देखते हैं इसलिए आप शरीर से रामराज्य में काम करें और हृदय कांग्रेस में लगाये रहें। निरुतर होकर वे चले गये।

एक बार सन्मार्ग के प्रधान सम्पादक श्री गंगाशंकर मिश्र गंगातरंग में कुआँ खुदवा रहे थे। कुआँ खोदकर तैयार हो गया किन्तु जल नहीं निकल रहा था। मिश्र जी बहुत दुःखी थे इतने में ही महाराज जी पैदल घूमते हुये गंगा स्नान कर कमण्डल में जल लिये हुये पहुंचे और कहा कि मिश्र क्यों दुःखी हो। कुएं की तरफ संकेत करते हुए कहा कि इसमें जल नहीं आ रहा है। महाराज जी यहाँ पहुँचकर अपने कमण्डल का जल छोड़ा। जल छोड़ते ही कुएं में जल की धारा निकल पड़ी। सभी लोग प्रसन्न हो गये। आज भी नगवा के पुराने लोग इस घटना को जानते हैं। मिश्र जी तो शिष्य ही बन गये।

एक बार महाराज जी से पूछा था कि संसार और ब्रह्म में भेद क्या है? महाराज जीने कहा कि वृत्ति जन्य ज्ञान को ही संसार कहते हैं। वृत्ति रहित बोध को ब्रह्म कहते हैं। ऐसे बहुत से वेदांत सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर दिया है। पुस्तक रूप में वह मेरी वेदांत प्रश्नोत्तरी के रूप में प्रकाशित हैं।

विन्ध्याचल लक्षचंडी यज्ञ के अवसर पर विन्ध्याचल पहाड़ पर टहल रहे थे गर्मी का दिन था। महाराज जी ने कहा कि गेरुवा तालाब से जल लाओ। एकांत है यहां नित्य क्रिया करें। मैं कमन्डल में जल लेकर आया। महाराज जी ने पूछा कि जल गरम है या ठंडा? मैंने कहा महाराज जी मैं समनस्क नहीं था। महाराज जी ने कहा कि साधना के लिये समनस्क न होना अच्छी बात है किन्तु अन्यमनस्क नहीं होना चाहिये।

अन्य बहु से संस्मरण हैं वह पुस्तक के रूप में प्रकाशित किये जायेंगे।

***

श्रीमत्करपात्रचरणसरसीरुपादुकावन्दनम्

-पूज्यपाद १००८ स्वामी श्री सुखबोधाश्रम जी महाराज, नरवर
गणेश मन्दिर, अनूप शहर (बुलन्दशहर)

वैराग्यं यस्य बाल्ये वयसि विकसितं येन तप्तं तपस्तत्-
स्त्रीपुंसैः प्रेक्षितं यत् तरुणिमनि महत् दत्तदन्ताङ्गुलीकैः ।।
वैदुष्यं सर्वशास्त्रेष्वपि विदितचरं विश्रुतं यस्य लोके-
सोऽयं श्रीपाणिपात्रो जयति हरिहरानन्दनामा यतीन्द्रः ।।१ ।।

बाल्यावस्था में ही जिनका वैराग्य विकसित हुआ, तरुण अवस्था में ही जिन्होंने ऐसा तप किया कि जिसको देखने वाले स्त्री-पुरुष दांतों तले उँगली दबा गए, सभी शास्त्रों में जानी मानी जिनकी विद्वता संसार में प्रसिद्ध है, ऐसे हरिहरानन्द सरस्वती श्री करपात्री जी महाराज का उत्कर्ष सबसे बढ़कर है ।।१ ।।

श्रीमान् हरिहरानन्दे यस्य संज्ञा सरस्वती-
यदानने पद्मसमेऽनरीनृत्यत् सरस्वती ।।२ ।।

जिनके मुखकमल में सरस्वती नृत्य करती थी, ऐसे यह श्रीमान् हरहिरानन्द सरस्वती कहे जाते हैं ।।२ ।।

श्रीकृष्णबोधाश्रम संज्ञकानाम्-
ज्योतिर्मयं पीठमधिष्ठितानाम् ।।
प्रेमास्पदं यः सुकृताभिधानो-
जयत्यसौ श्रीकरपात्रवर्य्यः ।।३ ।।

ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के प्रेमपात्र यह पवित्र नाम वाले श्री करपात्री जी महाराज है ।।३ ।।

करपात्राभिधानेन प्रसिद्धं भारताजिरे
धर्मसम्राजमाहुर्य धार्मिका वेदवादिनः ।।४ ।।

भारत में करपात्री नाम से प्रसिद्ध इन महात्मा को वेदों के जानने वाले धार्मिक विद्वान् धर्मसम्राट् कहते हैं ।।४ ।।

शङ्कराचार्य पीठानि येऽलङ्कुर्वन्ति साप्रतम्-
तेऽप्याचार्या यदावेशं शिरसा धारयन्त्यहो ।।५ ।।

इस समय शंकराचार्य के पीठों पर विराजमान सभी आचार्य इनकी आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं ।।५ ।।

किमतः परमैतस्य यशो गीयेत मादृशैः-
प्रसृतं सौरभं यस्य दिशासु विदिशासु च।।६।।

जिनके यश की सुगन्धि सर्वत्र फैल रही है, उनका इससे अधिक यशोगान मैं कैसे कर सकता हूं।।६।।

सर्वत्र यस्य करपात्र इति प्रसिद्धिः-
श्रीमान् प्रशस्तगुणपात्रमयं स एकः।
यत्सूक्तयो द्रुतविलम्बितगीति सौख्य-
सम्पादनेऽमृतरसोज्ज्वलनिर्झरिण्य।।७।।

अनेक उत्तमगुणों के एकमात्र पात्र यह करपात्री जी अद्‌भुत ही है। द्रुतविलम्बित छन्द के गायन का सुख प्राप्त कराने वाली इनकी सूक्तियाँ अमृत रस को बहाने वाली नदियाँ हैं।।७।।

शास्त्रेवगाधधिषणस्य च राजनीतौ-
कस्तस्य यः प्रतिभटो भवितुं समर्थः-
मत्ताः स्वतन्त्र गतयोऽपि गजा अकस्मात्-
श्रुत्वा स्खलन्ति खलु केसरिणो निनादम्।।८।।

सम्पूर्ण शास्त्रों में और राजनीति में भी जिनका अगाध-गम्भीर ज्ञान है, उनका प्रतिद्वन्द्वी बनने में किसकी सामर्थ्य है। मस्ती में झूमते हुये चले आने वाले मदोन्मत्त हाथी, सिंह की दहाड़ सुनते ही डगमगा जाते हैं।।८।।

धर्मग्लानिमवेक्ष्य यस्य हृदयं दूनं दयानिर्भरम्-
शान्तं शाश्वतमप्यभूद्विकलता कल्लोलिनी चञ्चलम्।
धेनूनामपि दुर्दशां प्रतिदिनं तासां वधं वीक्ष्य यः-
झञ्झावात निपातितद्रुमदलौपम्यं शरीरेऽश्रयत्।।९।।

धर्मग्लानि को देखकर जिनका निरंतर शान्त ध्यापूरित हृदय विकलता सरिता के संसर्ग से चंचल (क्षुब्ध) हो उठता। प्रतिदिन गायों की दुर्दशा को उनके पत्र पुष्पादि रहित वृक्ष को समता को प्राप्त हो गया है।।९।।

सप्ताहावधि भोजनं परिहरन् कृत्वाष्टमे पारणाम्-
सप्ताहानि पुनस्तथैव कृतवान् यः पारणामष्टमे।
यस्यैवं कतिचित् समा व्यतिययुः कृच्छ्रंतपः कुर्वतोः-
देहः काञ्चन सन्निभः पुनरभूत् पीतो हरिद्रासमः।।१०।।

सात सात दिन कुछ न खाकर आठवें दिन व्रतान्त भोजन करते हुये उन्हें कई साल बीत गए थे। सुवर्ण जैसा गौर वर्ण शरीर हल्दी जैसा पीला पड़ गया था। इनका यह कठोर तप हमने देखा था।।१०।।

श्रीमद्भागवतस्य चापि नियतं पारायणं श्रद्धया-
व्याख्यानं च सभासु जागरयितुं धर्मावनार्थं प्रजाः।
यश्चक्रे कृतिनां वरो नच पुनः कृत्वापि बद्धः क्वचित्-
ब्रह्माग्नावजुहोत् कृताकृतमिदं सर्वं परः संयमी।।११।।

इन दिनों श्रीमद्भागवत का साप्ताहिक पाठ भी श्रद्धापूर्वक होता था, धर्म रक्षा के निमित्त जनता को जगाने के लिये सभाओं में व्याख्यान भी होता था, यह सब करते हुये भी इनके फलों में उनकी आसक्ति नहीं थी, उन्होंने ज्ञान की अग्नि में इन कर्मफलों की आहुति दे दी थी।।११।।

विद्या यस्य परा परामुपगता काष्ठां तथैवापरा-
ऋग्वेदादिभिदा चतुर्दशविधाचाष्टादशत्वं गता।
द्वे विद्ये अपि वेदितव्यविषयेऽबोभूयिषातां तथा-
शय्यायां स्वयमागते रसवशात् कान्ते यथा कामिनः।।१२।।

वेदों में परा और अपरा इन दो विद्याओं का वर्णन मिलता है। ब्रह्मज्ञान को परा विद्या कहते हैं, चार वेद-६ वेदाङ्ग-आन्वीक्षिकी त्रयी-वार्ता और दण्डनीति यह १४ विद्याएँ हैं, इनमें पुराणन्याय मीमांसा और धर्मशास्त्र मिला देने से १८ हो जाती हैं। यह सब मिलकर अपरा विद्या है। यह दोनों विद्याएँ करपात्री जी की शय्या=शब्द रचना में ऐसे स्वयं आती थीं, जैसे प्रेमपास में खिंची दो प्रेमिकाएँ किसी कामी को शय्या पर अपने आप चली आती हैं।।१२।।

यः समन्वयसाम्राज्यसंरक्षणपदाभिधम्-
निबन्धं कृतवान् पूर्वं विद्याद्वयमतूतुषत्।।१३।।

इन्होंने बहुत पहले समन्वय साम्राज्य संरक्षण नाम का निबन्ध लिखा था, इन दोनों विद्याओं का विरोध हटाकर उन्हें सन्तुष्ट किया था।।१३।।

यैः कैश्चित् पण्डितंमन्यैः विरोधो दर्शितस्तयोः-
परिहृत्य विरोधं तं सौमनस्यमतिष्ठिपत्।।१४।।

किन्हीं अधकचरे पण्डितों ने इन दोनों में विरोध करा दिया था, करपात्री जी ने विरोध हटाकर प्रेम करा दिया था।।१४।।

प्रसन्ने तेन ते विद्ये परापरपदाभिधे-
मिथः सापत्न्यमुज्झित्वा वरमेनमुपेयतुः।।१५।।

इसलिए इन दोनों विद्याओं ने प्रसन्न होकर आपस का बैर भाव छोड़कर इन करपात्री जी का वरण कर लिया था।।१५।।

यथा परिजहारासौ निबन्धेऽस्मिन् पुरातने-
तथा दिङ्मात्रमेतस्मिन् लेखे प्रकटयाम्यहम्।।१६।।

इस पुराने 'समन्वय साम्राज्य संरक्षण' निबन्ध में जिस प्रकार इन दोनों विद्याओं के विरोध का परिहार किया गया है, मैं उसका संक्षेप यहाँ दिखाता हूँ।।१६।।

पूर्वं या कथिता विद्या परा सा ज्ञानमुच्यते-
कर्मोपास्त्यपरा विद्या कथिता वेदवादिभिः।।१७।।

ब्रह्मज्ञान का उपदेश देने वाली उपनिषत् परा विद्या है और कर्म तथा उपासना का उपदेश देने वाली १४ या १८ प्रकार की अपरा विद्या है।।१७।।

उपासना तु कर्मैव मानसं सर्वसम्मतम्-
देवतोद्देश्यकं दानं हविषः कर्म कायिकम्।।१८।।

एकाग्रमन से देवताओं के ध्यान को उपासना कहते हैं, यह मानसिक कर्म है। देवताओं के उद्देश्य से अग्नि में आहुति देना शारीरिक कर्म है।।१८।।

कर्मत्वस्याविशेषेण कर्मोपास्त्योः समुच्चयः-
सह सम्भवतीत्येवं न विरोधस्तयोर्मनाक्।।१९।।

कर्म और उपासना दोनों ही शारीरिक और मानसिक कर्म हैं, इसलिए इनमे आपस में विरोध का लेश भी नहीं है। इनका सहसमुच्चय=साथ २ रहना हो सकता है।।१९।।

यद्यप्यस्त्येनयोनैवं ज्ञानेन सह सम्भवः-
तथापि सम्भवत्येव क्रमशस्तु समुच्चयः।।२०।।

यद्यपि कर्म और उपासना का परमात्मविज्ञान के साथ सहसमुच्चय नहीं हो सकता, किन्तु क्रमसमुच्चय तो हो ही सकता है।।२०।।

न कर्मोपासने शक्ते सह स्थातुं कदाचन-
अक्रियेणाप्यसङ्गेन ज्ञानेन परमात्मनः।।२१।।

अक्रिय और असङ्ग ब्रह्मज्ञान के साथ कर्म और उपासना दोनों ही नहीं रह सकतीं।।।२१।।

ज्ञानाग्नौ प्रज्वलत्येव क्रियाकारकगह्वरो-
व्यवहारः समस्तोऽपि भस्मसाद्भवति क्षणात्।।२२।।

ज्ञान की अग्नि के प्रज्वलित होते ही क्रियाओं और कारकों से घिरा हुआ सभी व्यवहार भस्म हो जाता है।।२२।।

सम्बन्धोऽप्रतिबद्धश्चेत् दाह्यदाहकयोर्भवेत्-
दाह्यं न दह्यते कस्मात् निर्विघ्ने सति दाहके।।२३।।

दाह्य और दाहक के सम्बन्ध में यदि कोई प्रतिबन्ध न हो तो दाह्य का दाह कैसे रुक सकता है।।२३।।

यज्ञदानादिकं कर्म यदन्तःशुद्धिकारणम्-
शुद्धेऽन्तःकरणे सम्यक् ज्ञानं तिष्ठत्यचञ्चलम्।।२४।।

यज्ञ–दानादि शारीरिक और उपासना मानसिक यह सभी कर्म अन्तःकरण की शुद्धि के कारण हैं, शुद्ध अन्तःकरण में ही ज्ञान स्थिर रहता है।।२४।।

क्रमेणानेन कर्मापि कारणं ज्ञानजन्मनः-
ज्ञानेनापि तयोस्तस्मादस्ति क्रमसमुच्चयः।।२५।।

इस क्रम से कर्म भी ज्ञान की उत्पति का कारण है, इसलिये ज्ञान के साथ कर्म और उपासना का क्रमसमुच्चय हो सकता है।।२५।।

नैवातो यवयोर्भेद इत्यादिशति कोविदे-
करपात्र महाराजे द्वे विद्ये सम्प्रसेवतुः।।२६।।

इस प्रकार शास्त्र वचनों में प्राप्त हुये विरोधों का परिहार करके समन्वय साम्राज्य के संरक्षक श्री करपात्री जी महाराज के मुखारविन्द से यह सुनकर कि 'हमारा आपस में कोई विरोध नहीं है' दोनों विद्याएँ प्रसन्न होकर श्री करपात्री जी का वरण करने को प्रस्तुत हुयी।।२६।।

'उत त्व' इति मंत्रेण सामर्थ्ये प्रतिपादिते-
सम्प्रसादमनुप्राप्योभे विद्ये योगमीयतुः।।१७।।

'उत त्वः' इस मन्त्र में यह बताया गया है कि कुछ लोग देखते–सुनते हुये भी विद्या का रहस्य नहीं प्राप्त कर सकते। जिन पर यह प्रसन्न होती है उनके आगे विद्या का रहस्य इस प्रकार प्रकट होता है–जैसे प्रियतमा पत्नी का सर्वस्व अपने पति पर निछावर हो जाता है। इस अर्थ के अनुसार ही दोनों विद्याएँ आपस में मिलकर श्री करपात्री जी के जिह्वाग्र पर नृत्य करने लगी।।२७।।

समन्वयस्य साम्राज्यं रक्षितु प्रथम कृतिः-
'करपात्र' महाराजस्येयं समुपदर्शिता।।२८।।

सम्भवतः श्री करपात्री जी की यह प्रथम रचना है, इसमें समन्वय का साम्राज्य सुरक्षित है, इसका संक्षेप यहाँ दिखाया गया है।।२८।।

'ईशु' त्रिंशत्तमे वर्षे–तत्समीपस्थितेऽयथा-
करपात्र महाराजमुखादेवोद्‌वभौ कृतिः।।२९।।

सन् १९३० के आसपास श्री करपात्री जी महाराज के मुख से यह 'समन्वय साम्राज्य' संरक्षण निबन्ध प्रकट हुआ था।।२९।।

वेदार्थ पारिजाताख्यो यो निबन्धोऽधुनातनः।
सर्वातिशायी बोद्धव्यः सम्राजो धर्मपद्धतेः।।३०।।

सन् १९४९ में प्रकाशित हुआ यह वेदार्थ पारिजात ग्रंथ सर्वोकृष्ट है। धर्मसम्राट् श्री करपात्री जी ने इसमें दोनों विद्याओं के सभी रहस्य खोलकर रख दिये हैं।।३०।।

दयानन्दादिभिर्येयं दूषिता वेदसद्‌गदी-
करपात्र महाराजैः सोद्‌धृता पापकर्दमात्।।३१।।

दयानन्द-बेबर आदि तथाकथित विद्वानों द्वारा दूषित की गयी वेदवाणी का श्री करपात्री जी महाराज ने इस प्रकार उद्धार किया है-जैसे कीचड़ में फंसी हुयी गाय को उसमें से निकाल कर किसी ने बचा लिया हो।।३१।।

विभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरेदिति-
प्राचीनोक्तः स्फुटं ब्रूते वेदार्थानर्थकारणम्।।३२।।

वेदाङ्गों का और इतिहास-पुराण का जिसको अल्प ज्ञान है, वह वेदार्थ नहीं करता-अपितु वेदों पर कलम कुल्हाड़ा चलाने बैठता है।।३२।।

श्रुयते पण्डितं मन्यो विशुद्धानन्द नामकः-
कश्चिन्महाशयः प्रष्ठः पारिजातस्य खण्डने।।३३।।

सुनने में आया है कि कोई विशुद्धानन्द मिश्र महाशय आर्य समाज के आँसू पौंछने के लिये पारिजात के खण्डन में प्रवृत हुये हैं।।३३।।

दम्भीत्यादिभिरश्लीलैरपशब्दैरपि क्षिपन्-
यथा धूलिभिरादित्यं करपात्रं जिगीषति।।३४।।

उन्होंने सूर्य पर धूल उलीचने के समान करपात्री जी को अनेकों गालियाँ दी हैं और शास्त्रार्थ के लिये भी ललकारा है। अपने आपको शेर भी कहा है।।३४।।

पौरस्त्यैर्दाक्षिणात्यैः सकलबुधवरैर्यस्य कीर्तेः पताका-
पाश्चात्यैरुत्तरस्यैदिशि विदिशि ता सर्वलोकोर्ध भागे।
वेदार्थः पारिजाते श्रुतिभिरभिमतो दर्शितो येन साक्षात्-
पञ्चास्यं जेतुमेनं कथमिव यतते 'मिश्र' संज्ञः शृगालः।।३५।।

पूर्व-पश्चिम-दक्षिण और उत्तर दिशा के सभी विद्वानों ने जिनकी कीर्तिपताका को चारों ओर सबसे ऊपर उठाया है, जिन्होंने अपने पारिजात में वेदाङ्गों के और इतिहास-पुराण के अनुकूल वेदों का अर्थ किया है, उन्हें (सिंह सदृश स्वामी जी को) जीतने की हिम्मत रखने वाले मिश्र जी शृगाल ही सिद्ध होकर रहेंगे।।३५।।

वेदार्थकल्पद्रुम संज्ञके स्वेग्रंथेऽकरोदेव बहून् प्रलापान्-
तत् खण्डनं कर्तुमभिप्रवृत्ताः श्री शङ्कराचार्य महानुभावाः।।३६।।

इन्होंने 'वेदार्थकल्पद्रूम' नाम के अपने ग्रंथ में बहुत बकवाद की है। सुना है कि श्रीजगन्नाथपुरी के शंकराचार्य इनके ग्रंथ का खण्डन लिख रहे हैं।।३६।।

तैः श्री जगन्नाथपुरी प्रतिष्ठैः-साकं यदि स्थातुमभीप्सितं ते।
शास्त्रार्थमञ्चेऽवतराशुतहि-पिस्पधिवां पश्य हतां स्वकीयाम्।।३७।।

यदि इनसे शास्त्रार्थ करने की आपकी इच्छा है तो उतरो मैदान में और शीघ्र ही अपनी हैंकड़ी को मिट्टी में मिली हुई देखो।।३७।।

परमानन्दसमुद्रोल्लास निवासैकपूर्णिमाज्योत्स्ने।।
श्रीमत्करपात्रचरणसरसीरुह पादुके वन्दे।।३८।।

श्री करपात्री जी के चरण कमलों की पादुकाओं को हम प्रणाम करते हैं–जो परमानन्द समुद्र में बाढ़ लाने वाली पूर्णिमा की चांदनी हैं।।३७।।

संसृतिसागरनिपतल्लोक समुद्धार कारणी भूते।।
श्रीमत्करपात्रचरण सरसीरुह पादुके वन्दे।।३९।।

संसार सागर में डूबते उतराते प्राणियों का उद्धार करने वाली श्री करपात्री जी के चरण कमलों की पादुकाओं में हमारी वन्दना।।३९।।

श्रीमत्करपात्रचरण सरसीरुह पादुके वन्दे।।४०।।

***

भगवत्स्वरूप धर्मसम्राट्

–पूज्यपाद १००८ श्री स्वामी चिन्मयानन्द सरस्वती जी महाराज,
श्री धाम, वृन्दावन

स्वसुख निभृत, चेतस, निकुञ्ज बिहारी रसामृत मूर्ति, परकारुणिक, अगाध सुधासिन्धु के अजस्रस्रोत श्रीभगवान् अनुपम २ रूपों में अपने आपको अभिव्यक्त करते हैं। अभिव्यक्त प्रभु स्वमायावशीकृत लोकानुरञ्जनार्थ, स्वधर्म संस्थापनार्थ, साधु परित्राणार्थ मुदमयी कल्याणकारी लीलाओं से समन्वित विहरण करते हैं। सर्वज्ञ सर्व समर्थ प्रभु ही स्वयं को भक्त (आराधक और स्वयं को ही भजनीय (आराध्य)) के रूप में प्रकट करते है, उसी रूप में लीला भूमि भारतवर्ष में अवतरित हो जाते हैं। महामहिम सन्त विरक्त अमलात्मा परमहंस श्री प्रभु के ही स्वरूप होते हैं। उनके हृदय, आत्मा, मन सब कुछ आप ही होते हैं। ऐसे सर्वभूत हितेरता: सन्त भी आपके ही रूप होते हैं। उनकी जीवन लीलाओं में भी प्रभुप्रेरित लोककल्याणार्थ, धर्म संरक्षणार्थ अलौकिक प्रीति देखी जाती है। ऐसी ही परम विभूति भगवत्स्वरूप सर्वभूत हृदय श्री गुरुपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज थे।

श्री स्वामिपाद यावज्जीवन ब्रह्मनिष्ठा, धर्मनिष्ठा तथा भगवत्प्रीति से ओतप्रोत रहे। कर्म, उपासना और ज्ञान तीनों ही अंशों में आपकी अपार निष्ठा थी। त्रिकाण्ड के माहात्म्य में सम्यक् निष्ठा रखते थे। उनकी पारमार्थिकी निष्ठा अखण्डसच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म थी। व्यावहारिक जीवन में धर्म परायणता तथा भगवद्भाव का समादर था। धर्मनिष्ठा और ब्रह्मनिष्ठा का जो समन्वय आपके जीवन में था, जिज्ञासुओं के लिये आदर्श है। परमार्थ 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' की दृष्टि आपके जीवन में पूर्ण रूप में प्रतिष्ठित थी परन्तु व्यवहार धर्म को प्रमाण मानकर करते थे जब तक व्यावहारिक स्थिति का भान है तब तक धर्मानुकूल आचरण के पक्षपाती थे। परमार्थ की जिस अवस्था में व्यवहार छूट–सा जाता है, वहाँ व्यवहार भी परमार्थ हो जो जाता है। इन सब दृष्टियों को अपने जीवन में उतार कर दिखाया। अस्वस्थ स्थिति में भी जिस समय कुछ होश होता तो ब्रह्मदृष्टि का ही स्मरण करते, भगवन्नाम का ही स्मरण होता था। योगवासिष्ठ में पदार्थ–भावना की स्थिति में सब व्यवहार छूट–सा जाता है। ऐसे योगी के जीवन का निर्वाह अन्यों के द्वारा ही सम्भव होता है। श्री स्वामी जी के अन्तिम जीवन में यह 'पदार्थ–भावना' अवस्था पूर्णरूपेण देखी गयी। उनको अपने आसन, शौचालय तथा सेवा में रहने वाले ब्रह्मचारियों का विस्मरण हो जाता था, परन्तु भागवत् स्वरूप भगवन्नाम का एक क्षण भी विस्मरण नहीं हुआ।

महाराज श्री तपस्वी, धर्मनिष्ठ, त्यागी और सरल प्रकृति के सन्त थे। सच्चे अर्थ में महात्मा थे, जिसका लक्षण शास्त्रों में बताया गया है– मन, वचन और कर्म में जो एक सा होता है वह महात्मा माना जाता है और जिसके मन में कुछ दूसरा, वचन में कुछ दूसरा जिसका जीवन होता है वह दुरात्मा होता है–

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।
मनस्यन्यत् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम्।।

श्री महाराज जी महात्मा थे। उनकी मेधा और संस्कृत वाङ्मय का ज्ञान अगाध था। काशी के विद्वान् ब्राह्मण तो आप श्री को यज्ञ युग प्रवर्तक ही मानते हैं। आपने यज्ञों की विस्मृत तथा लुप्त प्राय परम्परा को पुनर्जीवित किया। अनेकानेक यज्ञों का आयोजन किया, कई यज्ञ तो ऐसे विशाल रूप में हुए जो सदियों से नहीं हो पाए थे। दिल्ली यज्ञ के बारे में लोगों का कहना है कि ऐसे यज्ञ का आयोजन धर्मराज युधिष्ठिर के बाद आज तक नहीं हुआ।

वेद-शास्त्रों के यथार्थ व्याख्याता

वेद और शास्त्र स्वामी जी के विचारानुसार पूरे विश्व के लिए शाश्वत संविधान है। उनमें जिन नियमों और आचारों का वर्णन किया गया है उनका पालन संसार के सुख और शान्ति का स्त्रोत है। इसमें आधुनिक विद्वानों द्वारा किसी प्रकार का संशोधन एवं परिवर्तन नहीं हो सकता, आवश्यकता केवल उसे ठीक ढंग से समझने और जीवन में उतारने की है। स्वामी जी ने वेदों की अपौरुषेयता का अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से समर्थन किया है और उसके सर्वोच्च प्रामाण्य को प्रतिष्ठा की है। उनका कहना था कि वेद अन्तिम प्रमाण हैं। उसके अनुरूप किसी भाषा में जो छोटे-छोटे ग्रंथ लिखे गये हैं, वे सब प्रमाण है। कोई भी ग्रंथ चाहे कितने भी बड़े विद्वान् का लिखा क्यों न हो यदि वह वेदशास्त्रानुरूप नहीं है तो उसे मान्यता नहीं मिलनी चाहिए क्योंकि उससे मनुष्य का सार्वकालिक एवं वास्तव हित साधन नहीं हो सकता।

सनातन धर्म के सजग प्रहरी

महाराज श्री सच्चे जागरूक चिन्तक थे। वर्तमान युग की समस्याओं को शास्त्रीय दृष्टि से जितनी गहराई और सूक्ष्मता के साथ आंकलन करते थे, उतनी ही गम्भीरता के साथ शास्त्रानुसारी समाधान भी वे ढूंढ़ने का प्रयास करते थे। आज के युग में विश्व के सभी विकसित देशों में पश्चिम के दार्शनिक 'मार्क्स और फ्रायड' के विचारों का प्रभाव है उतना और किसी दर्शन का प्रसार नहीं है। महाराज जी ने उनके भौतिकवादी कल्पित मान्यताओं का बड़ी गहराई से परीक्षण करते हुये उनका खोखलापन और उनकी निःसारता प्रतिपादित की है। इसके साथ ही उन्होंने भारतीय शास्त्रों की एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण के गम्भीर परिचिन्तन के साथ समाधान भी प्रस्तुत किया। मार्क्सवाद और रामराज्य, पूँजीवाद, समाजवाद आदि विषयक उनकी कृतियों में इनका अवलोकन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय मान्यता में अडिग आस्था होने के साथ उस दृष्टि से तथा समय पर होने वाले अनेक सामाजिक-धार्मिक प्रश्नों के समाधान में शास्त्रपोषित पक्ष को वह उपस्थापित करते थे। जब-जब विदेशी सत्ता से प्रभावित सरकार ने भारतीय धार्मिक संविधानों के विपरीत कदम उठाया और कार्यान्वित करना चाहा, महाराज जी ने

उनका डटकर विरोध किया तथा पूर्णरूपेण पारित न होने दिया। उदाहरण के लिये हिन्दू कोडबिल, परिवार नियोजन, गौवध आदि धर्म के विपरीत सरकार विधान लागू कर रही थी। इन सबको जन सहयोग प्राप्त कर रोककर भारतीयता की रक्षा की। समाज को पतनोन्मुख होने से बचाया। इसी प्रकार के विपरीत जहाँ से भी आवाज आती जैसे कतिपय विद्वान् 'संभोग से समाधि' अशास्त्रीय सिद्धान्त प्रस्थापित कर पुस्तकों द्वारा प्रचार करने लगे। इसका स्वामी जी ने डटकर शास्त्रीय विरोध किया तथा सिद्ध कर दिया कि 'संभोग से समाधि' का पन्थ अशास्त्रीय है। अतः सुख-शान्ति चाहने वालों को शास्त्रों का ही अनुसरण करना चाहिये। इस प्रकार भारतीय जनता को स्वस्थ मार्ग दर्शन प्रदान किया। वे सच्चे अर्थों में धर्म-प्राण एवं धर्मसम्राट् थे।

अध्यात्म-प्रेरक

श्री महाराज जी वर्तमान युग के आदर्श अध्यात्म प्रेरक थे। उनका जीवन आध्यात्मिक सांचे ढांचे में ढला हुआ था। उसी रीति से प्रत्येक समस्या का उचित समाधान भी देने का प्रयास करते थे। आध्यात्मिक दृष्टि से प्रवचन, लेखन एवं विचार अभिव्यक्त करते थे। उनके विचार से सच्चे अर्थों में आध्यात्मिक दृष्टि अपनाकर ही स्वयं का, देश का तथा समाज का कल्याण सम्भव है। एक बार बीमारी की स्थिति में अपने अनुयायी कार्यकारिणी समिति के सदस्यों की विचारधाराओं की गति विधि जानने के लिये स्वामी श्री निश्चलानन्द सरस्वती से पूछा कि ये लोग आपस में विचार आध्यात्मिक दृष्टि से करते हैं या नहीं? उनका सिद्धान्त था कि आध्यात्म्कि दृष्टिकोण को भूलते ही कोरा भौतिकवाद स्वार्थ का नग्न नृत्य बन जाता है।

आध्यात्मिक पुरुष ही सच्चा राजनैतिक, सच्चा समाज सुधारक, सच्चा देश भक्त तथा समाज सेवी हो सकता है। वह सबका आत्मा होता है, सबके प्रति आत्मीयता होती है, स्वार्थ परमार्थ के रहस्य को समझता है और सच्चा धर्मपालक तथा न्यायकुशल होता है। उसी के मार्ग दर्शन में देश की, समाज की समस्याओं को उचित समाधान हो सकता है।

श्री स्वामी जी भारत के केवल धार्मिक एवं आध्यात्मिक नेता ही नहीं थे, अपितु वे राजनैतिक नेता भी थे। जिस राजनीति को वे भारत के हित में समझते थे जिसके द्वारा देश में वेदों के ईश्वर राज्य, रामायण के रामराज्य और महाभारत के धर्मराज्य की स्थापना हो सकती थी, उसे प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से धर्मसंघ एवं रामराज्य परिषद की स्थापना की थी। श्री स्वामी जी भारत में वेदों तथा रामायण के रामराज्य को लाने के लिये व्यष्टि रामराज्य बनाने पर विशेष बल देते थे। वे कहते थे देश में तो रामराज्य हो, तब हो, कब हो, पहले हम आपको अपने हृदय में रामराज्य की प्रस्थापना कर लेनी चाहिये। आत्मराज्य की प्रतिष्ठा से ही कामराज्य का अन्त सम्भव है। आत्मनिष्ठ भगवद्भक्त होना ही रामराज्य की सुदृढ़ स्थापना है। उसके लिये धर्म

और उपासना सीढ़ी हैं। जो आत्मनिष्ठ हो गये उनकी दृष्टि में तो सर्वत्र रामराज्य हो ही गया, क्योंकि आत्मनिष्ठ भगवद्भक्त की जहाँ-जहाँ दृष्टि जाती है वहीं २ अपना दर्शन पाता है। 'यत्र यत्र मनोयाति तत्र तत्र समाधय:'। जो आत्मनिष्ठ होना चाहते हैं वे साधक, भक्त, धर्मात्मा भी सर्वभूत हितेरता: होते हैं। उनके जीवन में दैवी सम्पदा की प्रतिष्ठा परमापेक्षित है अत: रामराज्य के अधिकारी होते हैं। उच्छृङ्खल काम का उनके जीवन में स्थान नहीं रहता।

भारतीय समाज में दो प्रकार की प्रवृतियाँ पाई जाती हैं। प्रथम-काम ही जिनके जीवन का लक्ष्य होता है उसे काम राज्य करते हैं। द्वितीय आत्मा ही जिनका जीवन सर्वस्व है उसे आत्म राज्य या रामराज्य कहते हैं। दोनों के जीवन में खाना, पीना, चलना, सोना, मरना और सन्तानोत्पति देखे जाते हैं परन्तु एक का लक्ष्य विषयभोग है तो दूसरे का आत्म सुख। प्रथम के जीवन में उच्छृङ्खल समाज शोषक काम प्रवृत्तियाँ पाई जाती है तो द्वितीय में धर्म नियन्त्रित शास्त्रीय समाज सुख कारक प्रवृत्तियाँ। इस तरह प्रथम 'क्षयाय जगतो हिता:' (गीता १६/९) के अनुसार अपना तथा जगत् के हित का क्षय करने वाले होते हैं। ऐसी प्रवृति से स्वयं को बचाना, प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। इसके अतिरिक्त धर्म तथा शास्त्र नियन्त्रित सर्वकल्याणकारी प्रवृत्तियों को पालना चाहिये। 'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति' के अनुसार आत्मकल्याण के लिये धर्म और ब्रह्म को प्रमाण मानकर भगवदुन्मुखी बुद्धि, तदनुसार मन, तदनुसार इन्द्रियों की वैधानिक शास्त्रीय सुख में प्रवृत्ति होनी चाहिये। क्योंकि चित्त को चिदाकाश के अनुरूप बनाना चाहिये। श्री स्वामी जी प्रत्येक भारतवासी के जीवन में ऐसे रामराज्य को लाना चाहते थे।

श्री स्वामी जी सच्चे सनातन धर्मी पञ्चदेवोपासक थे। उनकी दैनिक दिनचर्या उपासना से ओत प्रोत देखी जाती थी। विशेष-विशेष पर्वो पर तत्तत् देवता की विशेष आराधना करते थे जैसे गणेश चतुर्थी, शिवरात्रि, ऋषि पञ्चमी, रामनवमी तथा श्रीकृष्ण जन्माष्टमी आदि। वे कहते थे -

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्।
काश्यांवास: सतां संगो गंगाम्भ: शिवपूजनम्।।

अर्थात् इस नि:सार संसार में काशीवास, सत्संग, गंगाजल और भगवान् शंकर की पूजा चार ही वस्तु हैं। जैसा कहते थे वैसी प्रीति उनके जीवन में देखी जाती थी।

आपने सनातन धर्म का मार्ग दर्शन कराने वाले कई ग्रंथ रत्न लिखे। राजनीति कैसी हो? 'विचार पीयूष' तथा 'रामराज्य और मार्क्सवाद' ग्रंथ लिखकर मार्ग दर्शन किया। 'चातुर्वर्ण्य विमर्श:' लिखकर वर्णाश्रम की पुष्टि की तथा 'भक्ति रसार्णव:' एवं भक्ति-सूधा आदि अनुपम ग्रंथ रचना की। 'वेदार्थ पारिजात' के दोनों खण्ड उनको अमर कृतियाँ हैं जो युग-युग तक सनातन धर्म प्रेमी जनता को धर्म और ब्रह्म की प्रेरणा देती रहेगी।

***

पूज्य श्री असम्भव-पूर्ति

–पूज्यपाद आचार्य श्री भागवतानन्द सरस्वती जी महाराज,
परमार्थ आश्रम सप्त सरोवर हरिद्वार

जैसे अखण्ड, अचल हिमालय ताप से पिघलता है और पिघलकर गंगा की दिव्य धारा बन जाता है, अगणित सूखे खेतों में पहुंचते ही सरस धन–धान्य परिपूर्ण कर देता है। इसी प्रकार अखण्ड, अद्वय सच्चिदानन्दघन स्वरूप ज्ञान ही भवाटवी में भटकते श्रान्त, क्लान्त पथिकों के भवताप संतप्त हृदयों को देखकर पिघलता है और गंगा की अच्छल धारावत् 'चल' बनकर उन्हें जीवनदान देता है।

जब हृदय में तीव्रतम जिज्ञासा जागृत होती है और उस जिज्ञासा को पूर्ण करने के लिये बेचैनी जगती है तो अन्तर्यामी प्रियतम हृदयेश्वर साकार प्रकट होकर उसकी जिज्ञासा को पूर्ण करता है, वही सन्त सद्गुरु है।

वेद, शास्त्र एवं धर्म के रहस्य को ठीक–ठीक परमात्मा ही समझता है। अतः जब इसमें अनर्थ होने लगता है तो वही परमात्मा साकार होकर उसकी रहस्य–ग्रंथि खोलकर समाज में रहता है। चाहे वह बौद्ध, जैन से प्रपीड़ित काल में शंकराचार्य को ले लें, चाहे वर्तमान में नास्तिकों से प्रपीड़ित धर्मसम्राट् अपने पूज्य स्वामी जी महाराज को ले लें। पूज्य श्री महाराज जी में भगवदीय समस्त गुणों का एक साथ प्राकट्य देखने में मिलता रहा है। बहुत बचपन से ही श्री चरणों में सत्संग करने का सौभाग्य मिलता रहा है। अथाह, अतल जलधि में गहराई तो भला पाने का कौन दुस्साहस करेगा तथापि 'अथावाच्यः सर्वः स्वमति परिणामावधिगृणन्' की दृष्टि से कुछ लिखने का साहस कर रहा हूँ।

'सत्' शब्द के सन् साधौ धीरशास्त्रयोः मान्ये सत्ये विद्यमाने इस मेदिनी कोश के आधार से अनेक अर्थ होते हैं। किन्तु सत् शब्द का अर्थ सन्त या साधु पुरुष में विवक्षित है।

'असन्नेव सम्भवति असद्ब्रह्मेति वेद् चेत्।
अस्ति ब्रह्मेति वेद् चेद् सन्तमेनं ततो विदुः।।'

अर्थात् त्रिकालाबाधित ब्रह्म 'मैं' आत्मस्वरूप चेतन हूँ–इस विज्ञान को उपलब्ध करने वाला ही सन्त है, सन्त तो भगवान् का स्वरूप है। इसलिए उसका कोई लक्षण नहीं किया जा सकता। जो सर्व है, सर्व से अलग भी है, जिसमें सर्व का भाव और अभाव दोनों प्रतीत हो रहा है, वही सर्वाधिष्ठान स्वरूप सन्त है। इस अर्थ की दृष्टि से पूज्यपाद धर्मसम्राट् यतिचक्र चूड़ामणि करपात्री जी महाराज में पूर्ण अर्थ चरितार्थ है।

क्रमशः उनमें विशेषताएँ जैसी और जितनी मुझ अल्पज्ञ को दिख सकी उनको लिखकर वाणी पवित्र कर रहा हूँ।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि व्यक्ति की रुचि प्रभुप्रीति या राजनीति–दोनों में से एक में ही होती है। किन्तु एक तरफ उनके द्वारा विरचित 'रामायण–मीमांसा' 'वेदों

की अपौरुषेयता और परम प्रामाण्य', 'वेदार्थ पारिजात' आदि ग्रंथ हैं तो दूसरी ओर 'मार्क्सवाद रामराज्य' को देखने में बड़ा विस्मय होता है। गोवध-आन्दोलन, धर्म-संघ की स्थापना, रामराज्य परिषद की स्थापना से असंख्य धर्म-संस्थाओं के प्राण-स्वरूप पूज्य श्री महाराज जी की सर्वतोन्मुखी प्रतिभा लक्षित होती है।

अद्‌भुत् पाण्डित्य के साथ-साथ अद्‌भुत सारल्य, अद्‌भुत् ब्रह्मनिष्ठा के साथ-साथ अद्‌भुत् उपासना की निष्ठा एक साथ उनकी विशेषता दिखाती है।

परम श्रद्धेय पूज्य 'श्री स्वामी जी महाराज पीताम्बरापीठ दतिया' के पास भी आप गये थे। तन्त्र-विद्या का एक बहुत प्रसिद्ध ग्रंथ 'श्री विद्या रत्नाकर' की रचना की, जिसे देखकर आपके तन्त्र-शास्त्र में अथाह ज्ञान का परिचय मिलता है। उपसना, निष्ठा तो मैंने अपने जीवन में आज तक ऐसी किसी में नहीं देखी है। अद्वैत वेदान्त-तत्व मर्मज्ञ होते हुये भी उनकी उपासना को निकट के लोग ही जान सकते हैं।

अदम्य साहस, अथक-परिश्रम, विजितेन्द्रिय, गुडाकेश रूप में उनको देखने से साक्षात् भगवान् शंकर के दर्शन होते थे। सहज वैराग्य उनके जीवन के अन्त तक रहा। श्रीमद्‌भागवत माहात्म्य में भक्ति, वैराग्य का मूर्त रूप में वर्णन आया है। मुझे भक्ति, ज्ञान, वैराग्य-तीनों एक साथ ही उनमें साकार दिखाई देते थे।

ज्ञान-गंगा, भक्ति 'यमुना, सत्कर्म सरस्वती की त्रिवेणी को उनको लेखनी ने जैसा बताया है वैसा विद्वत्‌जनों से छिपा नहीं है। मुझे तो विशेष रूप से उनकी अध्यापन शैली देखने को मिली है। कथा भी सुनने को मिली है। बहुत साधारण पढ़े लिखे लोगों को उन्हीं की साधारण भाषा में उन्हें समझाते हुये भी देखा है। कैसा ही विचित्र समन्वय आपके जीवन में था-यह वाणी वर्णन नहीं कर सकती। जैसे गन्ने का रस, मिश्री, गुड-आदि में मधुरता एक सी है तथापि बोलकर उनकी माधुर्य पृथकता बताई नहीं जा सकती वैसे ही उनमें विशेषताओं को जानते हुये भी लिखने में वाणी असमर्थ सी है।

एक स्वाभाविक उक्ति उनमें चरितार्थ होती दिखाई देती है, जैसा किसी कवि ने कहा है।

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णाः,
त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यम्,
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।।

दर्शनशास्त्र, धर्मशास्त्र, भक्तिशास्त्र, तन्त्रशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि विविध शास्त्रों का अतल ज्ञान उनमें प्रतियोगितापूर्वक देखा गया है। मेरी समझ से ऐसे विद्वान् सन्तप्रवर, करनी, कथनी, रहनी में एक से महात्मा, ज्ञान, वैराग्य भक्ति की मूर्ति रूप में जब कोई दूसरा उनका जैसा मिलना असम्भव है। मैं प्रेमाश्रुओं से उनके चरणों में श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूं और प्रेमियों से अनुरोध करता हूं कि उनके बताए हुये मार्ग पर चलें, उनकी कृतियों का मनन करें तो वे आत्मरूप से सबमें विराजमान् होते हुये सतत् शान्ति प्रदान करते रहेंगे।

ज्ञान-भक्ति-कर्म की त्रिवेणी

-पूज्यपाद १००८ श्री शंङ्करानन्द सरस्वती जी महाराज,
परमार्थ निकेतन सप्त सरोवर हरिद्वार

३० वर्ष पूर्व प्रातः स्मरणीय गुरुदेव (श्री १०८ स्वामी अखण्डानन्द जी सरस्वती वृन्दावन) के प्रसन्न मुखारविन्द से निकली गम्भीर भावापन्न श्रद्धासम्पन्न पावन वाणी को सभा में सुना-'धर्म-अधर्म का मर्म जैसा पूज्य करपात्री जी जानते हैं मेरी दृष्टि में वैसा दूसरा कोई नहीं'। यही वाक्य गुरुदेव ने एक बार व्यक्तिगत रूप में मुझसे एकान्त में भी कहा। तभी से मेरे हृदय में पूज्यपाद (करपात्री जी महाराज) के प्रति श्रद्धा हो गयी। प्रथम तो उनके लिखित 'वेदप्रमाण्य मीमांसा' 'वेदस्वरूप विमर्श' 'वेदों की अपौरुषेयता तथा प्रामाण्य' 'मार्क्सवाद और रामराज्य' 'भक्तिसुधा' आदि ग्रंथों का अध्ययन किया। इससे पूज्यपाद की अलौकिक प्रतिभा से प्रभावित होकर मैं उनके दर्शन, सत्संग का अवसर खोजने लगा।

प्रयास करने पर एक दो बार अल्पकाल के लिए अवसर मिला, परन्तु उतने से मुझे सन्तोष न हुआ। अध्ययन का व्यसन होने के कारण २० वर्ष तक दर्शन शास्त्रों का तथा श्रुति-स्मृति-इतिहास-पुराणों का अध्ययन-मनन-परिशीलन करता रहा। शङ्कालु स्वभाव के कारण इन सभी ग्रंथों के अध्ययन काल में सैंकड़ों शंकाओं का उदय हृदय में हुआ, उन्हें लिखता गया।

दैवयोग से पूज्यपाद का सुयोग प्राप्त हुआ। मेरी प्रार्थना सुनकर प्रातः १० से ११ तथा सायं ६ से ७ बजे तक विचार का अवसर उदार हृदय से दिया। ४० घन्टे विचार विमर्श सभी प्रश्नों पर हुआ। विषयान्तर का सञ्चार न करना और न होने देना आदि व्यवस्थित विचार शैली के कारण जितना कार्य एक घण्टे में पूज्यपाद कर देते थे, उतना कार्य १० घण्टे में भी अन्य विद्वानों से नहीं होता था। पूज्यपाद के सम्मुख उक्त श्रुति-स्मृति आदि तथा इनके भाष्यों से सम्बन्धित जो जो प्रश्न उपस्थित किये, उनका उत्तर प्रायः ग्रंथ का प्रकरण देखे बिना ही दे देते थे। वह उत्तर ऐसा सदुत्तर होता था कि अन्य विद्वान् ग्रंथ का पूर्वापर प्रकरण देखकर भी वैसा सदुत्तर नहीं दे सके। बीच-बीच में जो यौक्तिक आपत्ति उठाया था, उन्हें प्रबल युक्ति से काट कर ऐसी समुचित सङ्गति बता देते थे कि चित्त चकित होकर विचित्र आनन्द का अनुभव करता था।

प्रायः विद्वानों का एक एक दर्शन पर ही अधिकार होता है, परन्तु पूज्यपाद का आस्तिक नास्तिक सभी दर्शनों पर पूर्ण अधिकार था। वर्तमान में दर्शन मर्मज्ञ प्रायः स्मृति-इतिहास-पुराणादि की उपेक्षा करते हैं, इसलिए इनके मर्म से अनभिज्ञ होने के कारण इन ग्रंथो से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते। मेरे पूज्यपाद तो जैसे सर्वदर्शन मर्मज्ञ थे वैसे ही इतिहासादि के भी मर्मज्ञ थे। दर्शनशास्त्रों की तरह ही पुराण-इतिहासादि आर्षग्रंथों के प्रति समादर था। अतः इतिहासादि सम्बन्धित मेरे प्रश्नों का भी सदुत्तर तत्काल दे देते थे। इससे मुझे बहुत सन्तोष हुआ।

पूज्यपाद केवल सर्वशास्त्र मर्मज्ञ ही नहीं थे किन्तु तन्निष्ठ भी थे। उनका जीवन ज्ञान–भक्ति–कर्म की त्रिवेणी था। देखिये–

ज्ञाननिष्ठा–भगवान् शंकराचार्य के प्रस्थानत्रय में से पचासों प्रश्न जब मैंने उनके सामने उपस्थित किए तो प्रायः ग्रंथ देखे बिना ही अनुभव युक्त जो सदुत्तर उन्होंने दिए, उससे तो ऐसा लगता था कि स्वभाष्य संरक्षण के लिए मानो आद्य शंकराचार्य ही पूज्यपाद के रूप में प्रकट होकर उत्तर दे रहे हैं। यद्यपि प्रायः शांकरवेदान्त का ही समर्थन करते थे तथापि श्री रामानुजाचार्य आदि के वेदान्त सिद्धान्त का भी हृदय से समादर करते थे। क्योंकि एक बार प्रसंगानुसार मुझसे कहा कि 'सभी आचार्य देवताओं के अवतार थे, अतः सभी के सिद्धान्त समादरणीय है'। विचार (ज्ञान) का ही इतना समादर करते थे कि मुझ आस्तिक को नास्तिक जैन के 'न्यायकुमुदचन्द्र' ग्रंथ के अध्ययन का आदेश दिया। निष्पक्षभाव से विचार का हृदयगार में समादर होने के कारण ही आस्तिक–नास्तिक सभी के विचार प्रधान ग्रंथों का गम्भीरता से उन्होंने अध्ययन किया। अतः जब जिस दर्शन का प्रतिपादन करते थे तब उस दर्शन के विशेषज्ञ प्रधानाचार्य भी आश्चर्य चकित हो जाते थे। भूरि भूरि प्रशंसा करते थे।

भक्तिनिष्ठा–मैंने निकट से देखा है कि परमज्ञानी होकर भी अज्ञानी की तरह पूर्ण निष्ठा से प्रायः आठ बजे तक स्तोत्रपाठ, शिवाभिषेक, धूप दीपादि से पूजन, करते। पुनः मध्याह्न तथा रात्रि में भी पूजन करते। २४ एकादशी निर्जला व्रत करते। दशावतार की जयन्तियों में तथा अन्य मुख्य मुख्य व्रतों में उपवास करते। श्रीमद् भागवतादि ग्रंथों में से जब भगवल्लीला का ललितभाव से प्रतिपादित करते हुये लीला रस में लीन होकर आनन्दाश्रु बहाते थे, तब वृन्दावन–अयोध्या आदि के भक्त सन्त भी पूज्यपाद को भक्तिनिष्ठा सम्पन्न महान् भक्त कहने तथा मानने के लिए विवश हो जाते।

कर्मनिष्ठा–धर्म कर्म में तो उनकी ऐसी निष्ठा थी कि अनेकों कष्टों को सहकर भी उन्हें पालन करते थे। ब्राह्मण के हाथ का ही बना भोजन २४ घण्टे में एक बार ही करते, दुबारा दूध फलादि भी नहीं लेते थे। ४० वर्ष पर्यन्त नमक–मीठा नहीं खाया। मरणासन्न हो जाने पर भी आयुर्वेदीय औषधि का ही सेवन किया, अंग्रेजी दवा नहीं ली। मार्ग में पीपल, गाय आदि के आने पर प्रणाम करते। सनातन धर्म एवं जनताजनर्दन की सेवा रूप कर्म में पूरा जीवन लगा दिया। इसके लिए जेलों में असह्य यातनायें सही। ऐसी थी उनकी अचर कर्मनिष्ठा।

इस प्रकार पूज्यपाद के जीवन में ज्ञान–भक्ति–कर्म रूप त्रिवेणी की धार लगातार बहती थी। ऐसा मैंने निकट से प्रत्यक्ष देखा है। जिन लोगों को प्रत्यक्ष देखने का अवसर नहीं मिला उन्हें वेदार्थ पारिजात में ज्ञाननिष्ठा, रामायण–मीमांसा में तथा भक्तिसुधा में भक्तिनिष्ठा और चातुवर्ण संस्कृति विमर्श में कर्मनिष्ठा देखने को मिलेगी। त्रिवेणी रूप पूज्यपाद के वचनों की स्मृति तथा स्मृति रूप उनके ग्रंथ ही जब एकमात्र मेरे आधार हैं। जिन्होंने मेरी सैंकड़ों शंकाओं का समाधान किया उन पूज्यपाद की स्मृति सदा मेरी रक्षा करे, बस यही प्रार्थना है।

मेरे भगवान् श्री स्वामी करपात्री जी

–पूज्यपाद १००८ श्री परमहंस स्वामी वामदेव जी महाराज,

तरनतारन रोड़, अमृतसर (पंजाब)

विक्रम सम्वत् २००२ वैशाखमास में उज्जयनी नगरी के कुम्भ मेला में सम्मिलित होने हेतु भिन्न–भिन्न प्रदेशीय अनेक सन्त महात्माओं का आगमन हुआ। कुछ परिव्राजक लालपुल के समीप शिप्रा तट पर आम्रादि वृक्षावली के मध्य स्थित थे। मैं भी एक आम्र वृक्ष के नीचे आसन लगाये था। वैसे तो हम एक मास पूर्व पहुंच गये। परन्तु वैशाख मास के प्रारम्भ में अनेक प्रसिद्ध सन्त महात्माओं की चर्चा होने लगी। म०प्र० नृसिंह गिरि जी. म०प्र० कृष्णानन्द जी आदिक विद्वानों के प्रवचन होने लगे। उदासीन म०प्र० गंगेश्वरानन्द जी महाराज के पण्डाल में तो इसलिये अधिक आकर्षण था कि वे प्रज्ञा चक्षु होते हुये भी वेदमन्त्र का प्रमाण देते हुये उसके मण्डल सूक्त तथा मंत्र संख्या भी प्रस्तुत करते थे। वेदमंत्र प्रस्तुत करते समय उनकी यह वाक्यावली, बड़ी आकर्षक थी कि ''नोट करो यह मन्त्र अमुक मण्डल अमुक सूक्त तथा अमुक क्रम संख्या का है''।

उपरोक्त विद्वानों का शास्त्रानुसार सनातन धर्म के सिद्धान्तों का निरूपण अत्याकर्षक था। इस बीच वैसाख मास का स्वल्प समय बीत गया, स्वामी करपात्री जी अभी नहीं आये थे। महाकाल भगवान् के मन्दिर में हरिजन प्रवेश होगा, यह समाचार मेले में बहुचर्चित था। कुछ कहते, यह उचित नहीं। कुछ कहते, जब भगवान् सर्व के हैं तथा भगवान् के सर्व हैं तो भगवान् के मन्दिर में सर्व का प्रवेश क्यों नहीं? यह आक्षेप मृदुमतियों के हृदय में ऐसा गृह करता था कि मानो वह, परम्परागत व्यवस्थित मूर्ति दर्शन के सिद्धान्त को उखाड़ फेंकेगा।

प्रथम दर्शन

उपरोक्त आक्षेप के समाधान की जनता में बहुत प्यास थी। एक समाचार बिजली की तरह कोंधा। वह यह कि स्वामी करपात्री जी महाराज आ रहे हैं। मेरे संन्यास का समय अभी ६ वर्ष का था। पुनरपि गुरुजनों की सेवा सुश्रुषा में रत रहने के कारण सन्तों से सम्पर्क न था। अनेक देश अनेक वेष तथा सम्प्रदायों के सन्तों के सम्पर्क का यह प्रथम अवसर था। महाकाल में हरिजन प्रवेश का विषय लेकर बहुचर्चित यह महान् कोई देवता है या अवतार। तद्विषयकचर्चा से ऐसा प्रतीत होता था कि परम्परागत व्यवस्थित मूर्ति दर्शन का, तद्विषयक शंका कलंक से उद्धार करने का उत्तरदायित्व उसी पर है। पुन: एक दिन समाचार मिला कि स्वामी जी पधार गये हैं, महाकालेश्वर भगवान के मन्दिर के सामने क्षीर सागर के विस्तृत प्रांगण में व्याख्यान होंगे। उत्सुकता अधिक होने के कारण, दूर होने पर भी सभा के समय से पूर्व ही हम भी जा पहुँचे। महाराज श्री दण्ड को हस्त में ग्रहण किये, ब्रह्मचारी मार्कण्डेय एवं अन्य विद्वानों के साथ सभा में आ स्थित हुए। यहाँ ही हमारा प्रथम दर्शन हुआ।

प्रथम व्याख्यान

महाराज श्री के प्रथम व्याख्यान का विषय महाकाल भगवान् के मन्दिर में अछूतों का प्रवेश था। जिसका व्याख्यान वक्ष्यमाण प्रकार से किया। मनुष्य के शरीर की भगवत्स्मरण एवं धार्मिक जीवन बिताना ही विशेषता है। भारत में और भी उज्जैन से अधिक सुन्दर मन्दिर हैं। परन्तु प्रश्न होता है कि यदि ऐसा है तो पुनः यह विशाल जनसमुदाय सो भी दूर दूर से द्रव्य व्यय करके यहाँ क्यों आया है? इसका यही तो उत्तर देना होगा कि हिन्दु शास्त्र यहाँ इस वर्ष इस मास में उज्जयिनी नगरी के निवास महाकाल के दर्शन तथा शिप्रा के स्नान का बहुत पुण्य बता रहे हैं, अतः जनता यहां एकत्रित हुई है। प्रश्न यह होता है कि जब भगवान् सर्व का है तब मन्दिर में प्रविष्ट हो हरिजनों का पूजा करने का अधिकार क्यों नहीं? फिर तो यह भी एक प्रश्न किया जा सकता है, जब भगवान सर्व का है तो मसजिद में हिन्दुओं को शंखादि बजाकर पूजा करने का अधिकार क्यों नहीं? यदि कहा जाये कि कुरान-शरीफ के अनुसार ही मसजिद में पूजा की जा सकती है। जो हिन्दू शास्त्र को माने वह हिन्दू। हिन्दू होते हुए भी हरिजनों पर कार्य भार अधिक होने के कारण मन्दिर में प्रवेश करके उनको पूजा करने का विधान हिन्दुशास्त्र में नहीं। अपितु ब्राह्मणादिकों को षोडशोपचार पूजा करने से जो पुण्य होता है, वही पुण्य हरिजन को शिखर दर्शन मात्र से प्राप्त हो जाता है। पुण्य दृष्टि से प्रवेश की आवश्यकता तथा उनके साथ पक्षपात भी नहीं। अतः मन्दिर प्रवेशादि के प्रेरक विद्रोह की भावना उत्पन्न कर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। ऐसे कार्यो से धार्मिक भावना विनष्ट होती है धार्मिक भावनाओं के नष्ट होने पर मन धर्मांकुश से विहीन हो जायेगा। मानव के मन के धर्मांकुश से विहीन होने पर तो एक-एक व्यक्ति के लिये एक-एक पुलिसमैन नियुक्त कर दिया जये तब भी उचित मार्ग पर नहीं चलाया जा सकता। स्वामी जी के उपरोक्त वचन सत्य होने जा रहे हैं।

उपरोक्त वक्तव्य से सहस्त्रों मनुष्यों की जिज्ञासा शांत हुयी। सभा की समाप्ति में दण्ड ग्रहणकर सभा मण्डप से उतरते हुये स्वामी जी साक्षात् नारायण प्रतीत हो रहे थे। जैसा कि शास्त्र में लिखा है, ''दण्ड ग्रहण मात्रेणनरोनारायणो भवेत्।'' उस समय मैं भी स्वामी जी की भावभीनी दृष्टि से देख ही रहा थ, एक सज्जन ने प्रेम से स्वामी जी के चरणों में नतमस्तक हो ''अहह मेरे भगवान् श्री स्वामी जी'' कहकर नमस्कार किया। हम मृदुमति स्वामी जी की बुद्धि प्रखरता का वर्णन तो क्या धर्मविरोधिदुरुहकुतर्क उनके प्रवचन से शमन होने से ही कुछ अनुमान करते हैं।

शास्त्र चिन्तन

कुम्भ मेला प्रयाग में सम्वत् १९२२ के अवसर पर इतस्ततः से परिव्राजक एकत्रित हुए। हम भी नीमीग्राम के बाग में लगभग १५० परिव्राजकों के मध्य ठहरे थे। ''यहाँ विचार चला कि गुरु मुख से उच्चरित महावाक्य रूप प्रमाण से अहं ब्रह्मास्मि ऐसा

उत्पन्न बोध प्रमा रूप है। तथा अपरोक्ष भी है। परन्तु पटादि विषयक प्रत्ययों अथवा सुषुप्ति से व्यवहित अहं ब्रह्मास्मि यह प्रत्यय पूर्व प्रमारूप ज्ञान जन्म संस्कारों से उत्पन्न होने से प्रमारूप नहीं। स्मृति रूपता सम्भव है। स्मृति अपरोक्ष नहीं होती यह वृत्ति अपरोक्ष है। अतः यह प्रत्यय किंरूप है''। मैं भी इस जिज्ञासा को लेकर कई विशिष्ट विद्वानों के समीप गया पुनरपि कोई उचित समाधान न मिला। श्री स्वामी जी महाराज के आगमन की प्रतीक्षा करता रहा। एक दिन स्वामी जी के आगमन का श्रवण कर गया तो देखा अभी वहाँ कोई प्रबन्ध नहीं। स्वामी जी की मोटर ही उनकी कुटिया भी। देखते ही कहा क्या जिज्ञासा है। जिज्ञासा के प्रस्तुत करते ही कहा कि यह ज्ञान तो स्मृति रूप है। यह प्रत्यक्ष विषयक कैसे? इस पर कहा कि जिस प्रकार शाब्दबोध परोक्ष विषयक ही प्रायः होता है। पुनरपि सन्निहित विषयक शब्दबोध अपरोक्ष विषयक होता है, तथैव आत्मविषयक स्मृति ज्ञान भी अपरोक्ष होता है। पुनः तत्वानुसंधान ग्रंथ से भी यही बात प्रमाणित हो गयी।

विशेषता

स्वामी जी की यही विशेषता थी कि वे प्रश्न का उत्तर शास्त्रसम्प्रदाय से देते थे। उपरोक्त प्रश्न के सम्बन्ध में एक विद्वान ने कहा कि प्रबल प्रमाण तत्वमसि आदि महावाक्य से उत्पन्न यह ज्ञान नष्ट नहीं होता, अतः प्रमारूप है स्मृति रूप नहीं। अन्यों ने भी अन्य कुछ। परन्तु उचित समाधान प्रतीत न हुआ। स्वामी जी ने शास्त्र संमत समाधान किया। तत्वानुसंधान ग्रंथ में इसका विचार किया है। इससे यह व्यक्त हुआ कि स्वामी जी का वेदान्त के उन संस्कृत ग्रंथों का भी गम्भीर स्वाध्याय था जो आचर्य तक पठनापठन में प्रचलित नहीं है। अपने को धार्मिक मानने वाले भी विद्वान् पुराणेहितासों में मांस के प्रकरणों को यवन काल में प्रक्षिप्त मानते हैं। परन्तु स्वामी जी की यह विशेषता थी कि वे शास्त्र को सहसा प्रक्षिप्त नहीं मानते थे। मैंने जब महाभारत पढ़ा उसमें अनेक स्थलों का विवेचन नीलकंठ जी महाराज ने महाभारत की टीका में प्रस्तुत किया है। परन्तु उसमें एक प्रसंग राजा रन्ति देव का आया, जिसमें उसके रसोईघर में दो सौ गौमांस का भोजन ब्राह्मणों के लिये बनना लिखा है। उस पर नीलकंठ जी ने कुछ नहीं लिखा। मेरे हृदय में ऐसा भाव तो नहीं आया कि यह प्रक्षिप्त है तथापि चित्त में गोमांस भोजन की बात बहुत ही खटकती रही। स्वामी जी महाराज का इस सम्बन्ध में अद्भुत चिन्तन देखने को मिला, जिसे उन्होंने अपने वेदार्थ पारिजात ग्रंथ में भी लिखा है। स्वामी जी का कहना है कि गो शब्द का अर्थ वहाँ गो का दुग्ध है। क्यों वेद के गोभिः शृणीत इस वाक्य में 'गो' शब्द का अर्थ दुग्ध है। तथा मांस शब्द का अर्थ घनीभूत पदार्थ है। चिकित्सा शास्त्र में कुमारिका (ग्वारपाठा) औषध के गूदे के लिये एक प्रस्थ 'कुमारिका मासंम्' इस वाक्य में मांस शब्द का प्रयोग हुआ है। अतः महाभारत के इस कथा का अर्थ है कि रन्ति देव के यहाँ २०० गौओं के दुग्ध का घनीभूत पदार्थ खोआदि से निर्मित पदार्थ ब्राह्मणों के लिये बनते थे। प्रश्न होता है स्पष्ट

हो ऐसा क्यों नहीं लिख दिया? इस पर महाराज का कथन है कि महाभारत के आदि में यह प्रसंग है :–व्यास जी को लेखक ही आवश्यकता होने पर गणेश जी लेखक बने तो उन्होंने समय किया कि मेरी लेखनी का अवरोध न हो! तो व्यास जी ने कहा कि आप बिना समझे न लिखें। अतः जब लेखनी के रुकने की सम्भावना होती थी तो व्यास जी कूट श्लोक बोल देते थे किंचित् समझने में विलम्ब होने पर तुरन्त आगे श्लोकों का निर्माण कर लेते थे। इस कारण से ही महाभारत में ८८०० कूट श्लोकों का वर्णन है। यह श्लोक भी ऐसे ही समय का कूट श्लोक है।

धर्म विरोधी आक्षेपों लेखों के उत्तर देने हेतु स्वामी जी का यश देश–विदेश व्यापी था। अत्यन्त यशस्वी पुरुषों से जनसाधारण का साक्षात्सम्बन्ध न होना स्वाभाविक है। ऐसे प्रतिभावान यशस्वी पुरुष का यदि राज्य सत्ताधारी पुरुषों के विचारों से विरोध हो, राज सत्ताधारी भी वे जो अनपढ़ अथवा लोक शास्त्र राजनीति के पारंगत न हों, ऐसे लोगों के चुने हुये हों; उन राज सत्ताधारियों के पास प्रतिभा न होने के कारण वे प्रतिभावानों का मिथ्या अपयश करके ही अपना महत्व रख पाते हैं। भारत के प्रायः राजनीतिज्ञों ने यही मार्ग अपनाया। अतएव स्वामी जी के उपदेशों से जनसाधारण ने लाभ नहीं उठाया। परिणाम जो हुआ वह सामने है। मानव, धर्म के अंकुश से शून्य होकर अनाचार भ्रष्टाचार में ग्रस्त हो गया है। राजनैतिक नेताओं की संकीर्णता पदलोलुपता अदीर्घदर्शिता के कारण अपने ही देश में हिन्दू परिवार नियोजन तथा हिन्दूकोड जैसे बिल और विधानों के अपनाने व लादने से अल्प संख्यक होने की दिशा में जा रहे है।

अन्यथा प्रचार के कारण ही भारत का सन्त समाज भी स्वामी जी से दूर रहा। परन्तु प्रथम दर्शन काल से ही स्वामी जी के धार्मिक उपदेश धर्म के प्रति सजगता शास्त्रनिष्ठा आदिक गुणों से प्रभाविज होने से मैं स्वामी जी के समीप जाता रहा। क्योंकि मैं मिथ्या प्रचार से प्रभावित नहीं था। स्वामी जी मे सर्व के प्रति स्नेह एवं सरलता थी। शास्त्रनिष्ठ होने से शास्त्र की बात कहने में कोई संकोच न था। मैं दण्डी स्वामी न था न कोई यशस्विव्यक्ति, फिर भी स्वामी जी मुझसे स्नेह करते थे। यहाँ तक कि स्वामी जी ने दुर्गायन्त्र के पूजन का विधान भी मुझे प्रदान किया। कोई हरिजन भी आकर धर्म विषयक प्रश्न करे तो उसे सयुक्तिक तथा सप्रेम उत्तर देते थे। शास्त्र विहित धर्म की बात कहने में कोई संकोच न था। अतएव राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक नेताओं की असूया थी। अपनी असूया के आवरण हेतु उन नेताओं के नारे थे, एक संन्यासी को राजनीति से क्या प्रयोजन, स्वामी करपात्री तो पक्षपाती है, धर्म समय–समय पर बदलता है, शास्त्र किसी समय के लिए था, इत्यादि। भाव यह है कि स्वामी जी की प्रतिभा के सामने किसी की प्रतिभा सक्षम न थी, उपरोक्त नारों से ही राजनीतिज्ञों ने अपनी प्रतिष्ठा जीवित रखी थी। हिन्दू कोडबिल पर विचार करने हेतु ३०० राजनैतिक एवं सामाजिक नेताओं को आमन्त्रित, यह कहकर करना कि कोडबिल पर शास्त्र से

नहीं युक्ति से विचार किया जाये कि वह देशहित में है या नहीं, यह उनकी विचारकता की उदारता की कितनी उज्ज्वल झांकी है। राज नेताओं का विचार के लिये उपस्थित न होकर उसे केवल हिन्दुओं पर थोपना दकियानूसी होने का दर्पण है। आज जिस समय मैं यह लिख रहा हूँ एक बुद्धिमान मनुष्य ने कहा कि पंजाब में अशान्ति का कारण अंशतः हिन्दुकोडबिल भी है। क्योंकि उसका आश्रय लेकर पंजाब में बहुत से बहिन भाइयों के जमीन जायदाद बांटने के केस चल पड़े हैं। जिससे कि पारिवारिक अशांति उत्पन्न हो गयी है। उस बिल से बचने के लिए अल्स संख्यक की कोटि में आने हेतु कुछ धारायें भी संघर्ष का मूल बनी हैं। इस प्रकार के विशेष विचार में न जाकर मैं यही कहूँगा कि स्वामी जी में शास्त्र चिन्तन तदनुसार धर्मनिष्ठा, सरलता, सहज, स्नेह तथा हिन्दुओं के भावी पतन पर दृष्टि लेकर अनोखा वैशिष्ट्य (विशेषता) था। जिसे हमने नहीं अपनाया यही है भगवान् की अघटन घटना पटीयसी माया।

स्वामी जी का राजनैतिक ज्ञान तथा विचारधारा

हीगल, कान्ट, हाब्स तथा मार्क्स आदि पाश्चात्य विद्वानों से रचित राजनैतिक ग्रंथ तथा भारतीय अर्थशास्त्रों का स्वामी जी को कितना ज्ञान था, इसका अनुमान स्वामी जी रचित मार्क्सवाद और रामराज्य नामक ग्रंथ के अनुशीलन से ही लगाया जा सकता है। वह ग्रंथ अपनी विशेषता से अर्थशास्त्रियों का प्रिय बना, अतएव गोरखपुर प्रेस से हजारों की संख्या में छपा था। सन् १९६२ के चुनावों में स्वसंस्थापित रामराज्य परिषद् के घोषणा पत्र में कहा गया था कि गृहमन्त्रालय, अर्थमन्त्रालय आदि की तरह से एक धर्म मन्त्रालय भी आवश्यक है। वह सभी सम्प्रदाय के व्यक्तियों को धार्मिक बनाने का कार्य करेगा। हिन्दु-मुसलमान, ईसाई आदिक सर्व सम्प्रदायों की धार्मिकनिष्ठा के प्रचार प्रसार के लिये इस विभाग का एक कोष भी होगा। हर सम्प्रदाय की जनसंख्या के अनुपात से उसका व्यय किया जाये। उनकी विद्वता, यश तथा धर्मनिष्ठा के कारण जो लोग आज भी उनसेदूर हैं, उनको छोड़कर कौन ऐसा विचार होगा जो स्वामी के हृदय में वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को स्वीकार न करेगा। अतएव सनातन धर्म की कट्टरता के साथ पारसी, ईसाई तथा मुसलिमादि सभी सम्प्रदाय की धार्मिक भावनाओं के उत्थान का भाव उनमें था।

स्वामी जी ने अपने मंच पर खुलेआम यह घोषण करते थे कि ''एक दीनदार ईमानदार मुसलमान, वेदीन-बेईमान हिन्दू से अच्छा है'' इस घोषणा से ही पता चलता है, उनका चरित्र के प्रति कितना सम्मान था। जहाँ वैदिक सनातन हिन्दू धर्म के कट्टर नेता थे, जिनकी कट्टरता को देख तथाकथित हिन्दू धर्म हितैषियों के हृदय भी दहल जाते थे, उनका यह उद्घोष कोई अर्थ रखता है। उनकी यही उदार राजनीतिक विचारधारा थी। चरित्रवान हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे का हित कतरे हुये शान्त रह सकते हैं। किसी मुसलमान ने जो कट्टर मुस्लिमलीन जैसी पार्टी का हो, यह घोषणा नहीं की कि दीनदार

ईमानदार हिन्दू बेदीन बेईमान मुसलमान से अच्छा है। स्वामी जी की उपरोक्त उदारता होने पर भी मुसलमान नेताओं ने उनका साथ नहीं दिया। अत: हम तो इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि अपने जनसमुदाय की बुद्धि उससे हिन्दू धर्म तथा भारत की राजनीति पर हावी होने की भावनाओं ने मुस्लिम तथा ईसाई धार्मिक नेताओं को स्वामी जी की भावनाओं का सम्मान नहीं करने दिया। यदि इन नेताओं को भी सर्व धर्मोत्थान तथा मानवमात्र के चरित्रवान् होने से प्रेम होता तो स्वामी जी के साथ संगठन भी अवश्य होना था। सत्ता पर बने रहने की क्षुधा वाले नेताओं को एक सम्प्रदाय को बगल में लेकर–दूसरे सम्प्रदायों को धर्म निरपेक्षता के नाम पर दबाने का अवसर भी न मिलता। कुछ भाी हो स्वामी जी का शास्त्र चिन्तन राजनैतिक ज्ञान तथा विचारधारा और तार्किक बुद्धि, अलौकिक एवं सर्व हितकारिणी थी। मानवमात्र के हितैषी स्वामी जी महाराज का पार्थिव शरीर अब नहीं है। जो मानो भगवान् की ज्ञान कला के अंश को लेकर इस कठिन समय में हिन्दू धर्म की आवाज सुनाने ही को इस संसार में आया था। उनकी धार्मिक उदारताओं से हर वर्ग वंचित रहा यह समय का ही दुर्भाग्य है। अन्त में यही कहना होगा कि ''होइ है सोई जो राम रचि राखा'' स्वामी जी की भव्यमूर्ति हमारे नेत्रों में सं० २००१ के उज्जैन कुम्भ के सभा स्थल में नमस्कार करते हुये व्यक्ति के–मेरे श्रीभगवान् स्वामीजी ये उद्गार भरे शब्द हृदय में सदा ही झूमते रहेंगे।

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो। प्राणियों में सद्भावना हो।
विश्व का कल्याण हो। गोवध बन्द हो। हर हर महादेव।

'यह नहीं कहा जा सकता कि साइन्स के जरिए ऐसे ऐसे तत्वों का पता लगा है कि ईश्वर मानने की कोई आवश्यकता नहीं, पार्थिव, आप्य, तैजस तत्वों से ही सब काम चल जायेगा। क्योंकि रेलवे, तार, रेडियो, वायुयान आदि को देखकर यह प्रश्न होता हैं कि इसके बनाने वाले कौन हैं? केवल जड़ प्रकृति के हलचल से या परमाणुओं से किया विद्युत्कणों से ये सब बन गए–यह उत्तर नहीं दिया जा सकता, न तो इतने उत्तरों से लोगों को सन्तोष ही होता है, किन्तु बहुत सी उपाधियों का पूंछल्ला लगाकर अमुक अमुक उपाधिधारी अमुक साहब ने इसका निर्माण किया–यह कहा जाता है। जब ऐसी बात है तो बीसवीं शताब्दी के जिन उत्पादक, पालक, संहारक महा महायन्त्रों को देखकर न्यूलाइट की चकाचौंध में लोगों की आंखें चमत्कृत हो उठती हैं, उन महा–महायन्त्रों के आविष्कारक मनुष्य के मस्तिष्क रूप यन्त्र का निर्माता कौन हैं? सज्जनो! इस पर यही कहना पड़ेगा कि कोई सर्वशक्तिमान परमात्मा ही है। उस परमात्मा से आप सब लोग प्रार्थना करें।

–करपात्र स्वामी

सतयुगी महात्मा श्री करपात्री जी

–ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के विभिन्न अवसरो पर प्रगट उद्गारों से संकलित

''महात्माओं के वचनामृतों का पान कर उनका अनुष्ठान करो। औपनिषद प्राणमाहात्म्य की आख्यायिका के अनुसार व्यष्टिदेह की तरह समष्टिदेह में भी धर्म ही प्राण अर्थात प्रतिष्ठा है– 'धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा।' धर्म ही सभी पुरुषार्थों का साधक है। हमारे नेतागण गाँव–गाँव में रेडियो, बिजली आदि की व्यवस्था द्वारा उनकी उन्नति करने की बातें बताते हैं, किन्तु इस धर्म की ओर किसी का ध्यान ही नहीं जाता। देखो सत्य बात यह है कि यहाँ से आप हम सबको जाना है, यात्रा करनी है। सभी ऊर्ध्वगति चाहते हैं। एक धर्म ही ऊर्ध्वगति दे सकता है। व्यावहारिक वैषम्य का मूल भी धर्म ही है। आप धर्म की ग्रंथि (गांठ) बाँध लो तभी आप का यहाँ जाना सफल होगा। अन्यथा 'महती विनष्टिः' होगी–यह निश्चय जानो। यह केवल कहने की ही नहीं, आपके पूर्वजों ने उसे करके दिखाया। विषमता के कारण सर्वप्रथम द्रौपदी गल गयी। फिर बुद्धि गर्व से सहदेव, ततः रूपगर्व से नकुल, पश्चात प्रतिज्ञाहानि से अर्जुन और तदनन्तर बलाभिमान से भीम गल गये, किन्तु युधिष्ठिर ने किसी के पीछे नहीं देखा, अपना आदर्श नियतकर वे आगे ही चलते गये। आपको भी यही करना चाहिये। जब आप अपना लक्ष्य 'धर्म' बनाओगे, आदर्श सामने रखेगे, साथियों को लेकर चलोगे और पीछे मुड़कर नहीं देखोगे तभी सफलता मिलेगी। स्वामी करपात्री जी उसी धर्म की जय मनाते हैं, उसी धर्म की प्रतिष्ठा चाहते हैं। वे समस्त विश्व का कल्याण मानते हैं। 'भवन्तु भद्राणि समस्त लोके, ये भूतले ये दिविचान्तरिक्षे।'–'अज्ञानिनो ज्ञानविदो भवन्तु, यथात्मने चात्मनि तत्तथैव।' इस तरह जो सभी का कल्याण मानते हैं, भला वे कैसे किसी की हानि सोच सकते हैं।''

'वात्सव में स्वामी करपात्री जी बड़े ऊँचे महात्मा हैं। वे सत्युगी महात्मा हैं उनके मन में सदा सत्संकल्प उठा करते हैं; सनातन वैदिक धर्म के संरक्षण हेतु उन्होंने सम्पूर्ण जीवन लगा रखा है। और देखो! आप इन्हें जानते हो कि कौन हैं? यह पुरबिये हैं, पुरबिये बड़े जिद्दी(दृढ़ संकल्प) होते हैं, धर्म रक्षा के कार्य में वे बड़ी दृढ़तापूर्वक लगे हैं, सनातन–शाश्वत वैदिक धर्म के सिद्धांतों के संरक्षण में अडिग हैं, बड़े कट्टर हैं। उत्साहपूर्वक धर्म कार्यों में एवं धर्म प्रचार में लगे हैं, इनके पास चाहे एक श्रोता आये अथवा लाखों की भीड़ समुपस्थित हो–धर्म प्रचार के कार्य के प्रति इनके अदम्य उत्साह में कोई कमी नहीं दिखलायी पड़ती। इस धर्म कार्य में सदा सहयोग देने का हमने करपात्री जी को वचन दे रखा है, वे धर्म के विषय में जैसा कहते हैं हम वैस ही अनुगमन करते हैं–एक प्रकार से हम तो इनकी धर्मपत्नी हैं–ये धर्म कार्यों के बारे में जैसी आज्ञा करते हैं वैसा ही हम तो करते हैं।''

वे ब्रह्मविद वरिष्ठ उच्चकोटि के महात्मा हैं। ऐसे महात्मा के चरित्रचिन्तन लेखन से हृदय एवं लेखनी पवित्र होती है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा के उपासक श्री स्वामी करपात्री जी और कायाकल्प

-अनन्त श्री विभूषित श्रीमद्जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ज्योतिष्पीठ, उत्तराम्नाय बद्रिकाश्रम हिमालय

श्री हरिः

पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज का वेदों, शास्त्रों पर अटूट विश्वास था, आयुर्वेद शास्त्र पर भी उनकी अनन्य निष्ठा थी। आयुर्वेद की ही औषधि का प्रयोग करते थे। एक बार एक महात्मा ने उनको ज्योतिष्मती कल्प विधि की एक हस्त लिखित पुस्तक दिखाई और कहा कि उसकी उक्त पुस्तक हिमालय के किसी महात्मा के द्वारा प्राप्त हुयी थी।

एक बार जब हम पूज्य स्वामी जी के जन्म दिवस पर उनके दर्शन करने गये तो स्वामी जी ने हमसे ज्यीतिष्मती कल्प के सम्बन्ध में बतलाया और कहा कि तुम ज्योतिष्मती का पता लगाओ हम यह कल्प करना चाहते हैं। हमने ज्योतिष्मती के सम्बन्ध में दत्तिया के स्वामी जी से सुना था, वे नेत्र की ज्योति बढ़ाने और स्मरण शक्ति को सुरक्षित रखने के लिए इसे बांटते थे। प्रश्न करने पर उन्होंने बताया था कि यह कटनी के आस पास मिलती है और इसका नाम मालकांगनी है। हमने कटनी के आस-पास इसका पता लगाया परन्तु वहाँ से नही मिली। तब हमारे डाक्टर भीमराव ताथोड़ को वारासिवनी पत्र लिखाया, उन्होंने उत्तर भेजा कि मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले के पास बैहर के जङ्गलों में यह औषधि मिलती है।

हम बैहर के जङ्गलों में गये, सर्दी का समय था, औषधि को प्राप्त करने के लिये उसको पहले रक्ताक्षत एवं मौली से निमन्त्रित करना पड़ता था। फिर दूसरे दिन उसे तोड़ा जाता था। इसी प्रकार पन्द्रह दिन तक औषधि को निमन्त्रित कर तोड़ने का क्रम चला। पूज्य स्वामी करपात्री जी भी इसी बीच एक दिन के लिये उस स्थान पर पहुंचे। उन्होंने अपने हाथ से ज्योतिष्मती की लता का पूजन किया, फिर उसे दूसरे दिन तुड़वाया गया। उसका तेल निकलवाया। वाराणसी के नारद घाट में उक्त औषधि का विधिवत् पूजन श्री रामनाथ जी वैदिक द्वारा सम्पन्न हुआ। फिर उसमें गोघृत, गोदुग्ध, शहद डालकर पकाया गया फिर उसे धान्यराशि के अन्दर २१ दिन रखा गया। चीनी मिट्टी के बर्तन में मुख पर मिट्टी से बाँधा गया था।

नारद घाट में औषधि के संस्कार हो रहे थे और नवीन मन्दिर के पास मीरघाट में कल्प विज्ञान के अनुसार त्रिगर्भा कुटी का निर्माण हो रहा था। पूज्य स्वामी जी ने पंचकर्म किया पंचकर्म जामनगर आयुर्वेद शोध संस्थान के भूतपूर्व निदेशक एवं वर्तमान में वाराणसेय संस्कृत विश्व विद्यालय में आयुर्वेद विभाग के अध्यक्ष आचार्य

श्री विश्वनाथ द्विवेदी की देखरेख में सभी कार्य हो रहे थे। पंचकर्म बड़ी ही प्रसन्नतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

पण्डितों से मुहूर्त पूछकर भगवान विश्वनाथ जी का दर्शन करके उत्तम मुहूर्त में स्वामी जी ने त्रिगर्भा कुटी में प्रवेश किया औषधि लेना प्रारम्भ किया। कुटी के अन्दर घृत का दीपक जलता रहता था। कुटी के अन्दर हम आचायर्य विश्वनाथ जी एवं एक ब्रह्मचारी परिचर्या के लिये, केवल तीन ही व्यक्ति जा सकते थे। कुटी के अन्दर औषधि और दूध स्वामी जी ले रहे थे। औषधि के साथ भोजन में दूध साठी चावल एवं शहद का विधान था। उसी प्रकार क्रम चल रहा था। कल्प के समय स्वामी जी केवल संस्कृत में ही बोलते थे, इस बीच उन्होंने अनेकों आध्यात्मिक ग्रंथों का परिशीलन किया। हम प्रातः सायं दो–दो घन्टे बैठते थे, उस बीच उनसे आध्यात्मिक रहस्य पर चर्चा होती रहती थी। हम नवीन विश्वनाथ मन्दिर के कमरे में रहते थे जब कभी उन्हें आवश्यकता पड़ती थी, वे हमें रात को भी बुला लेते थे।

कल्प का उल्लेख आयुर्वेद के कई प्रामाणिक ग्रंथों में है चरक, औषधि कल्पलता एवं वाग्भट्ट द्वारा रचित रसरत्न समुच्चय आदि में इसका उल्लेख है। ज्योतिष्मती के सेवन से बड़ी विलक्षण बातें बतलाई है। रसरत्न समुच्चयकार ने लिखा है–

ज्योतिष्मती नाम लता पीता पीत फलोज्वला।
आषाढ़े पूर्व पक्षे स्याद् गृहीत्वा बीजमुत्तमम्।।
आहारेत्तिलवत्तैलं मुष्टिना वापि तत्पचेत्।
क्षीर तुल्यं चतुर्थांश माक्षिकं तैलशेषितम्।।
ततस्तत्कील कर्पूरत्वग्जातीफल मिश्रितम्।
स्निग्धभाण्डगतं धान्येष्वनुगुप्तं निधापयेत्।।
पिवेत् सूर्योदये तैलात्पलं याति विसंज्ञताम्।
ततः संज्ञां शनैर्लब्धा ततः क्रन्दति रोदिति।।
एवं मासे श्रुतधरः परस्मिन्सूर्य सन्निभः।
तृतीये पूज्यते देवैश्चतुर्थे नैव दृश्यते।
खेचरः पञ्चमे षष्ठे सिद्धैमिलति सप्तमे।
विष्णोः सम दिनं जीवेज्जीवन्मुक्तोष्टमे भवेत्।

अर्थात् ज्योतिष्मती नाम की लता पीता और पीतफला होती है। आषाढ़ के पूर्व पक्ष में उसके उत्तम बीजों को ग्रहण कर उत्तम तेल निकालें और औषधि के समान भाग दूध मिला कर चतुर्थांश मधु डालें। उसे मिट्टी के बर्तन में मन्द आँच में पकाये जब तेल मात्र शेष रह जाये तो उतार लें और ठण्डा करें, उसमें कंकोल, जायफल, कर्पूर, तज डाल कर बरनी में रखें और कपड़ मिट्टी करके उसे धान्यराशि में २९ दिन तक पकायें। फिर त्रिगर्भा कुटी में पंचकर्म करके बैठे। सूर्योदय के समय चार तोले

औषधि का पान करें, औषधि पान करने से बेहोशी आ जाती है धीरे–धीरे जब होश आता है तो वह रोता चिल्लाता है। भूख लगने पर साठी चावल और दूध मधु के साथ देना चाहिये। इस प्रकार एक मास में औषध करने से श्रुतधर हो जाता है, दूसरे मास में सूर्य के समान तेजस्वी हो जाता है, तृतीय मास में देवता उसकी पूजा करने लगते हैं। चौथे मास में वह अदृश्य हो जाता है पाँचवे मास में आकाश में विचरण करता है। छठे मास में सिद्धों से भेंट होती है। सातवें मास में विष्णु के बराबर हो जाता है। आठवें मास में जीवनमुक्त हो जाता है।

स्वामी जी ने जब इसका सेवन किया, किन्तु एक ही दिन एक तोला पी पाये, अधिक पीने से बेचैनी होती थी। क्रम केवल ४० दिन तक ही चल पाया। इतने में ही उनके शरीर में काफी परिवर्तन हो गया था। लोगों का कहना था कि उनकी आयु २५ वर्ष कम दिखाई पड़ने लगी थी। बीच में अनेकों विघ्न आये, बहुत से लोगों ने हमसे कहा यदि स्वामी जी को कुछ हो गया तो दोष तुम्हारे शिर पर आयेगा। हमने उनके आदेश को देखते हुए किसी भी बात की परवाह नहीं की। जब तक कल्प चला हम बराबर सब कार्यक्रम छोड़कर उनकी सेवा में रहे।

आज त्रिगर्भा कुटी तो है परन्तु कल्प करने वाला नहीं। अपनी बीमारी के दिनों में असह्य कष्ट रहने पर भी पूज्य स्वामी जी ने आयुर्वेद औषधि छोड़कर दूसरी औषधि नहीं ली। भारतीय संस्कृति और सभ्यता का इतना कट्टर उपासक अब कहाँ मिलेगा। अन्त में उनसे जो बातें हई और उनके द्वारा जो कार्य हुये वे हमें सदा स्मरण रहेंगे।

***

श्री करपात्री जी का नेतृत्व

–१००८ स्वामी श्री हरिबोधाश्रमः जी महाराज, पक्काघाट, बागपत

प्रातः स्मरणीय ब्रह्मीभूत अनन्त श्री विभूषित श्री हरिहरानन्द जी सरस्वती (श्री करपात्री जी महाराज) एकमात्र भारत के नेता थे जिन्होंने भारत को भारत के रूप में देखना चाहा। आज एक लम्बे काल के विदेशी शासन के फलस्वरूप जो विकृति भारत में आ गयी है उसे दूर करने का यदि किसी ने प्रयत्न किया तो इन श्री महाराज ने। ऐसे महात्मा के महत्व का मूल्याङ्कन साधारण स्वकीय बुद्धि के अनुसार श्री महाराज के सान्निध्य में प्राप्त विचारों के आधार पर मैं इस लेख में करने का प्रयत्न करता हूँ।

भारत से अंग्रेज चले गए। भारतीय नागरिकों ने समझा कि हम स्वतन्त्र हो गए। परन्तु हृदय तथा मस्तिष्क अब भी अंग्रेजियत का दास है। इसे भारतवासियों ने भुला दिया। फलस्वरूप जो सांस्कृतिक ह्रास इस स्वतन्त्रता काल में हुआ वह उससे कई गुना है जो मुसलमान तथा अंग्रेजों के शासन में हुआ। स्वामी जी ने भारतीय जनता को यह समझाने का भरसक प्रयत्न किया शासक धार्मिक तथा अपनी संस्कृति को समझने वाला होना चाहिये।

भारत की अखण्डता का नारा लगाने वाले करपात्री जी एकमात्र नेता थे। उन्होंने घोषित किया कि विभाजन हमारे ही नेताओं को निर्बलता का परिणाम है। अपनी मातृभूमि के अङ्गों को कटवाकर उसके लुञ्ज पुञ्ज शरीर की असहाय स्थिति पर स्वतन्त्रता का उत्सव मनाना जघन्य पाप है इसका इन्होंने डिम–डिम घोष किया।

गोवध निषेध तथा सर्व प्रकार से गोवंश रक्षा का प्राविधान हमारे विधान में हो इसे लेकर १९४७ में आन्दोलन किया परन्तु भारतीय मर्यादाओं के साथ खिलवाड़ करने वाले नेताओं ने इसकी ओर ध्यान न दिया। जीवन भर इस महात्मा ने इस ओर राष्ट्र का ध्यान आकर्षित करणार्थ अनेक आन्दोलन किये। इसी समय वर्तमान विधान की निर्बलताओं की ओर दृष्टिपात करते हुये शासन विधान शास्त्रीय हो इस पर बल दिया।

दूसरी गोलमेज से लौटने के पश्चात् श्री गांधी जी ने जो सुधारवाद का बीड़ा उठाया उससे यह स्पष्ट हो गया कि ये नेता अपने को धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में मनमाने ढंग से पाश्चात्य देशों के आधार पर हमारे राष्ट्र का नवनिर्माण करना चाहते हैं इससे सतर्क होकर नेताओं द्वारा समर्थित हिन्दू कोडबिल, मन्दर प्रवेश बिल आदि श्री महाराज ने विरोध किया।

भारतीय शिक्षा की जो प्रतिदिन अधोगति हो रही है उसे सुधारने के लिए धर्मसंघ शिक्षा मण्डल की स्थापना की। नव शिक्षा से शिक्षित होकर किस प्रकार

हमारी मातायें और बहिनें सीता, सावित्री के सतीत्व गौरव को भूलती जा रही है इसे दृष्टि में रखते हुये धर्मसंघ महिलामण्डल की स्थापना की। धर्मसंघ की स्थापना करके उसके तत्वाधान में अनेकों यज्ञों का आयोजन करके धार्मिक भावनाओं को बढ़ावा दिया तथा प्राणियों में सद्भावना का सञ्चार करने का यथासम्भव प्रयत्न किया। 'वेदार्थ पारिजात' लिखकर भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत वेद के वास्तविक स्वरूप को संसार के सामने रखा।

प्रजातन्त्र में नागरिकों को तीन भागों में बांटकर प्रजातन्त्र के साथ भारत में खिलवाड़ किया जा रहा है। हरिजन तथा मुसलमानों का प्रतिनिधित्व अलग-अलग है। अंग्रेजों के काल में भारतीय नेताओं ने इसका पर्याप्त विरोध किया था। परन्तु अब अपनी कुर्सी बचाये रखने हेतु इसे बढ़ावा दिया जा रहा है। श्री महाराज ने इसका विरोध किया तथा नागरिकों के साथ समान व्यवहार पर बल दिया।

आज धर्म पर कुठाराघात इस प्रकार बढ़ा है कि भ्रूण हत्या जैसे जघन्य पाप की भी वैध बना दिया गया है यद्यपि नपुंसक को श्राद्ध इत्यादि का कोई अधिकार नहीं परन्तु आज परिवार नियोजन का निर्लज्जतापूर्वक प्रचार प्रसार हो रहा है। नपुंसकता प्रत्येक घर में स्थान रखती है। श्री स्वामी जी ने इसका विरोध किया।

आज के राजनीतिक दलों के सामने राष्ट्रोत्थान का कोई कार्यक्रम न देखकर उन्होंने राम-राज्य परिषद् की स्थापना की। इसके सदस्य सभी धर्मों तथा जातियों के सदस्य हो सकेंगे तथा किसी भी व्यक्ति को योग्यता के आधार पर राष्ट्र में ऊँचे से ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठित किया जा सकता है।

आज साम्यवादी संसार में वर्गहीन क्रान्ति लाना चाहते हैं। वर्ग का समर्थन करने वाले देश अभी बहुमत में हैं परन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं कि वर्गों की क्या स्थिति हो कि साम्यवाद के वर्गहीन समाज का प्रबल विरोध किया जा सके। श्री महाराज ने अपने नेताओं तथा नागरिकों को जाति व्यवस्था के रूप में स्थाई श्रमविभाजन को आदर्श समाज के लिए आवश्यक सिद्ध किया तथा जाति व्यवस्था का विरोध करने वाले नेताओं को चेतावनी दी कि वे भारतीय समाज के महत्व को नष्ट करने का व्यर्थ प्रयास न करें।

महाराज के शाश्वत शास्त्रीय सिद्धान्तों का परिचय उनके अनेकानेक ग्रंथों से मिलता है। आशा है भारतीय जनता उनको पढ़कर अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करेगी।

***

हमारे श्री गुरुदेव

–श्री लक्ष्मण चैतन्य ब्रह्मचारी जी महाराज, धर्मसंघ शिक्षामण्डल, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।

परब्रह्मस्वरूप वेदशास्त्र में परम निष्णात, त्याग, तपस्या, उदारता के महासमुद्र, अपने सिद्धान्त के प्रति तथा निर्विच्छन्न सनातन मर्यादा के प्रति हिमालय से भी कठोर, स्वजनोपर भक्तों पर विशेषकर अपने इस अकिंचनदास पर करुणा के साक्षात् प्रतिमूर्ति, स्पष्ट, कहने में किसी के किसी भी दुर्गुण को उसके समक्ष कहने की निर्भीकता में महासिंह के सदृश्य निर्भीक, शास्त्रीय गूढ़ तत्व के सम्पादन निष्पादन, व्याकरण, न्याय साहित्य मीमांसा वेदान्त पुराण के दुरुह गम्भीर पंक्ति–स्थलों में उन विषयों के प्रतिपादन सम्पादन करने में बृहस्पति के समान अद्भुत, वैदुष्य तथा विषय प्रतिपादन की कथन शैली एवं व्याख्यान देने में सरस्वती के समान अवाध निर्बाध गतिशील, वाणी दर्शन करने में सांगोपांग अनन्तकाम के समान सुन्दर, बल पराक्रम अद्भुत, विराट विक्रम तेज, गऊ, ब्राह्मण, शास्त्र, धर्म, मन्दिर, ईश्वरदीन दुखियों के लिए धरणी माता के समान सहनशील, ऐसे थे हमारे परम पूज्य प्रातः स्मरणीय प्रेरणा के स्रोत बुद्धि के चैतन्य परम पूज्य श्री अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज उनकी जय–जयकार हो।

हमारे ग्राम के सन्निकट के ही महाराज श्री की पुनीत जन्मभूमि होने के कारण ही मेरे पितामह फिर मेरे पिता श्री महाराज श्री के चरणों के अनन्य भक्त थे, इसीलिए महाराज श्री के चरणों में हमारी प्रीति पैतृक परम्परा से प्राप्त है। सन् १९५६ में कवर्धा राजमहल में मेरी शुभ दीक्षा सम्पन्न हुयी थी। हम सब सदा ही महाराज श्री के चरणों के प्रताप से यहाँ तक पहुँचे हैं और आगे भी महाराज श्री के चरणों की कृपा से गऊ, ब्राह्मण की रक्षा में बढेंगे। हमारे महाराज श्री पारसमणि के पहाड़ थे जो छू गया सब कंचन हो गया, वह पहले कैसा कहीं भी रहा हो।

एक लोहा पूजा घर राखत एक घर बधिक परो,
यह दुविधा पारस नहीं देखत, कंचन करत खरो।

उनकी कृपा से अब हम जीवनमुक्त हैं, सन्तुष्ट है और निश्चिन्त हैं और समस्त भविष्य हस्तामलक की भाँति हमको प्रत्यक्ष है–

श्री गुरुपद नख मणिगण जोती सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती।

हमारे पूज्य श्री गुरु महाराज कहीं गये नहीं हैं आज भी अहर्निश हमको अपने 'आगे पीछे दायें–बायें, उठत–बैठत, चलत–सोवत–स्वप्न जागृत, रात, हृदय से वह मधुर मूरति क्षण न इति उत जात।' हे प्रभु श्री विश्वनाथ जी महाराज, श्री अन्नपूर्णा भगवती, हे! गंगा माता, गऊमाता हमारे महाराज की कृपा हम पर सदा ही ऐसी बनी रहे। हर–हर महादेव।

***

काशी के प्रकाश : ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी महाराज

–डा. विद्यानिवास मिश्र कुलपति काशी विद्यापीठ–वाराणसी

काशी को यह गौरव प्राप्त हैं कि यह नगरी विद्या, साधना, कला तीनों का अधिष्ठान रही है और आध्यात्मिक वैभव, आधिदैविक वैभव और आधिभौतिक वैभव से सम्पन्न रही है। भगवती विशालाक्षी की विशाल दृष्टि ने इस नगरी को बहुत विशाल और उदार बनाया है, इतना कि त्रिलोक और काशी समतुलित हो गए हैं। काशी का एक–एक रजः कण सोने के बराबर माना जाता है, काशी से मिट्टी कही प्रमाद से भी साथ बाहर कोई ले जाए तो उसे सोना चुराने जैसा पाप होता है ऐसी लोक में मान्यता है, इसका अर्थ केवल यही है कि काशी में हेम या तुच्छ कुछ भी नहीं। हेम या तुच्छ समझने वाली दृष्टि ही नहीं पनपते पाती क्योंकि विद्या की साधना से जोड़ने वाले निरीह निरहंकार महापुरुषों की अवच्छिन्न परम्परा काशी को विभासित करती रही है। पूज्य ब्रह्मलीन स्वामी करपात्री जी इस परम्परा के एक दीप्तिमान शिखर थे। पूज्य भैया साहब, पं० श्री नारायण चतुर्वेदी कहते हैं कि वे इस शताब्दी के विद्या के सूर्य थे। वे काशी में जन्में तो नहीं, पर यही उन्होंने मंगनीराम ब्रह्मचारी की पाठशाला (अब लुप्त) में अध्ययन प्रारम्भ किया, यही उन्होंने उत्तरकाल में भी शास्त्रों का अनुशीलन किया, कृच्छ से कृच्छ साधनायें की, अनेक समारम्भ किये और यही ं वे गंगा के तट पर रहते हुये ब्रह्मलीन हुये, वे काशीमय हो गये। विद्या अर्जित करना काशी के लिये बहुत सहज अभ्यास है, पर विद्या के साथ–साथ तप अर्जित करना, तप के साथ निरीह भाव बनाये रखना, निरीहभाव को भी अभिलाषाओं की अभिलाषा, मन्मथ के मन्मथ की भक्ति में सराबोर कर देना और उस भक्ति का रासेश्वरी राधा के चरणों में निवेदन कर देना, यह किसी एक व्यक्ति से यदि इधर मुधुसूदन सरस्वती के बाद किसी से हुआ है तो ब्रह्मलीन स्वामी जी थे।

पूज्य स्वामी जी अयोध्या वृन्दावन जाते थे, प्रवचन देते थे, पर काशी से उन्हें एक ऐसा तादात्म्य था कि उन्होंने कभी शंकराचार्य पद का अभिषेक नहीं स्वीकार किया। उन्होंने कोई आश्रम या संस्थान नहीं बनाया, जो बनाया भी उसे ऐसा छोड़ा कि उधर झांकने भी नही गये। वे काशी मात्र को सर्व विद्या का संस्थान समझते थे और उत्तरदायी गंगा प्रवाह को ही साधना की धारा समझते थे, काषाय मात्र को भागवत भाव का रंग मानते थे।

मुझे इस बात की कभी–कभी बड़ी कसक होती हैं कि उनके वैदुष्य को या उनके भागवत् भाव को या उनके तप का महत्व लोगों ने क्यों नहीं समझा,

विशेष रूप से काशी के बाहर के लोगों ने। लोगों ने उन्हें राजनीतिक साधु माना, उन्हें विवादास्पद माना, क्योंकि वे सरकारी बाबा कभी नहीं रहे, मन्त्रियों, न्यायाधीशों, इंजीनियरों, डाक्टरों, सेठों और ऊँचे अधिकारियों के विदेशी भारतप्रेमियों के बाबा नहीं रहे। वे समूह संचार साधनों के बाबा भी नहीं रहे। उन्होंने सन्मार्ग निकाला, दूसरों को सौंप दिया, उसे भी उन्होंने बन्द कर दिया, क्योंकि वे किसी से भी परिचालित नहीं हो सकते थे। कई बार बड़े-बड़े धनपतियों की सेवा उन्होंने ठुकरा दी, एक के बाद एक ठिकाना बदलते रहे। उन्होंने कोई गद्दी नहीं चलायी, कोई अलग सम्प्रदाय नहीं स्थापित किया, अपने को विशाल परम्परा के केवल प्रकाश वाहक नहीं, प्रकाश-केन्द्र के रूप में जाग्रत रखना है, इस भाव से बिना किसी एषणा के एक एषणा साधनी थी कि प्रकाश मन्द न पड़ने पाये। मैंने एक बार उनसे पूछा-महाराज जी आपने रामराज्य परिषद् क्यों स्थापित की, आप देख रहे हैं कि इसके पीछे जनमत नहीं है और आप वीतराग संन्यासी हैं, आपको राजसत्ता से कोई प्रयोजन भी नहीं है? उन्होंने बहुत देर तक मौन रहकर जो उत्तर दिया था, वह इस प्रकार है-''मैंने यह कार्य जानते हुये किया कि इस काषाय वस्त्र का यह कार्य नहीं है, पर मैंने देखा राजनीति का एक स्वरूप है, जिसे किसी को सामने रखना है, वह आधार लोगों को ज्ञात होना चाहिये और कोई उस काम को अपने हाथ में नहीं ले रहा है तो मुझे इसलिए लेने के लिए बाध्य होना पड़ा कि संन्यासी का कर्तव्य-अकर्तव्य कुछ न होते हुये भी जीवन यात्रा के अनिवार्य भोग के रूप में जीवन के आधार तत्वों के विषय में सजगता बनाये रखनी है। रामराज्य परिषद् मेरा लक्ष्य नहीं है, न इसके द्वारा सत्ता हथियाना लक्ष्य है, सत्ता को चुनौती देने वाली चेतना का स्फुरणमात्र लक्ष्य है। जो विदेशी विचारों से आक्रान्त व्यवस्था देश की प्रकृति की उपेक्षा करके चल रही है, उसका विकल्प देना एक काम है, जिसे करना गृहस्थ को चाहिये, पर वह नहीं करता तो संन्यासी तो सभी आश्रमों का विलयन है, उसे प्रत्येक आश्रम के दायित्व का स्मरण तो कराना ही होगा।''

पूज्य स्वामी जी ने यह भी कहा था बहुत सी मर्यादायें टूट रही हैं, बहुत सी व्यवस्थायें टूट रही है, पर इससे यह समझ लेना, कि कोई मर्यादा कोई व्यवस्था बनाये रखेन की बात न सोची जाए, उचित नहीं है। वे प्राणिमात्र के कल्याण को सामने रखते हुये एक जीवन की मर्यादा की ओर अगर भूतमात्र की सेवा के लिये अर्पित संन्यासी ध्यान न दिलाये तो उसके हाथ में धारण किये हुये दण्ड की सार्थकता न रह जाए।

पूज्य स्वामी जी समय के प्रवाह की बात को कुछ महत्व नहीं देते थे, वे इसे गड्डुलिकाप्रवाहमात्र मानते थे। इसका अर्थ यह नहीं कि वे ज्ञान-विज्ञान की नयी उपलब्धियों की उपेक्षा करते थे, नये-नये वादों, मतों के बारे में जानकारी प्राप्त

करते थे, पढ़ते थे, तकनीकी के विकास के बारे में पूछते रहते थे। एक बार उन्होंने प्लास्टिक के रासायनिक उपादानों के बारे में यह अनुमान लगाते हुये पूछा कि इसमें कुछ जीवन-विरोधी तत्व अवश्य हैं, क्योंकि यह नष्ट होने पर पुनः जैव पदार्थ में रूपान्तरित नहीं होता। मैंने उनसे कहा था कि महाराज जी आपका अनुमान ठीक है। प्लास्टिक वह कचरा है जो कचरा ही बना रहेगा, इसे आग, जल, मिट्टी, हवा कुछ भी आत्मसात् नहीं कर सकेंगे। इसी से पश्चिम के चिकित्सक बच्चों द्वारा इसके उपयोग के खतरों की ओर संकेत कर रहे हैं। वे प्रगति के विरोधी नहीं थे पर प्रगति की रूढ़िवादिता के विरोधी थे। वे देश-काल व्यक्ति की दृष्टि से ही किसी वस्तु की ग्राह्यता-अग्राह्यता की बात करते थे। वे हिन्दू धर्म का झंडा भी नहीं फहराना चाहते थे न किसी को प्रभावित करके हिन्दू बनाने के पक्षपाती। वे मुसलमान को अपने ईमान पर रहने का उपदेश देते थे, पर वे किसी संकोच या किसी मुसीबत में जो परीक्षित समाई नहीं है, उसे स्वीकार नहीं कर सकते थे। उन्हें इसका भी भय नहीं था कि लोग मुझे राजनीतिक व्यक्ति समझेंगे, प्रतिक्रियावादी समझेगें, पुराणपंथी समझेंगे। वे हर प्रकार के भय से मुक्त थे क्योंकि वे हर प्रकार के लाभ से मुक्त थे, वहाँ तक कि प्रतिष्ठा के यश के और यश तो छोटी बात है, मोक्ष के लोभ से भी मुक्त थे। मुझे स्मरण है कि एक बार महाभारत के विषय में बड़ी चर्चा हुयी, कुछ पुरातत्ववेत्ताओं ने बतलाया कि महाभारत एक सामान्य घटना थी, एक कबीलाई झगड़े को बहुत तूल दिया गया, उस काल के कोई विशेष महत्वपूर्ण भौतिक साक्ष्य नहीं है। लोगों ने महाराज जी से कहा एक बड़ा विद्वत् सम्मेलन बुलाइये, यह सिद्ध करने के लिये बुलाइए कि महाभारत की घटना लगभग ५००० वर्ष से और पहले हुयी और महाभारत में उस घटना का वास्तविक वर्णन है आदि आदि। महाराज जी ने कई विद्वानों को विचार-विमर्श के लिये बुलाया, मैं भी गया। महाराज जी बड़े मनोयोग से बाते सुनते रहे, बीच में किसी पुरातत्ववेत्ता के पक्ष की बात में कोई टोकता था तो डाट देते थे कि उन्हें पूरा पक्ष सामने रखने दो। मैंने निवेदन किया कि महाराज जी, महाभारत एक ऐसी सच्चाई भी तो है जो हमारे जीवन का अंग है, हमारे श्वास-प्रश्वास में है, उसकी वास्तविकता की क्या और जांच आवश्यक है। वह तो स्वतः जीवन की निष्ठा से प्रमाणित है, रही बात अतीत काल की एक घटना की जांच की, सो हमारे पास जितने साधन है भौतिक पदार्थों की जाँच के, उसकी सीमा है, जितना जाना गया है, उसकी सीमा है। इन सीमाओं के भीतर जो वास्तविकता उजागर होती है, उसको दूसरे साधनों से या दूसरे प्रमाणों से खण्डित करने की आवश्यकता नहीं है। महाभारत की ऐतिहासिकता की एक सीमित वैदुषित उपयोगिता है, उस उपयोगिता को नकारने के बजाय इस दृष्टि को ऊपर लाना हमारा कर्तव्य हो कि महाभारत एक

इतिहास का अतिक्रमण करने वाला पक्ष है, वह हमारे जातीय विकास में ही नहीं मनुष्यमात्र के विकास में निरन्तर प्रेरक है, वह पक्ष इस ऐतिहासिक सीमा के ऊपर बल देने से कहीं ओझल न हो जाए। महाराज जी का चित्त इतना निर्मल इतना विशद था कि एक व्यक्ति उनके संस्कृत विश्वविद्यालय के सर्वदर्शन व्याख्यानों में उपस्थित रहता। बौद्ध दर्शन के विभिन्न सौपानों के तत्वचिन्तन की जो व्याख्या उन्होंने प्रस्तुत की और जिस निर्मलता से अद्वैतियों द्वारा अद्यतन उठायी गयी शंकाओं का खण्डन किया, उससे लगता था कि बौद्धदर्शन का इतना बड़ा समर्थन कोई बौद्ध भी दे नहीं सकता। कई बौद्धदर्शन के पण्डित और स्वयं बौद्ध चकित हो गये। इस प्रतिपादन में उन्हें तीन दिन लगे, चौथे दिन उन्होंने एक ही घण्टे में अपने द्वारा स्थापित पूर्व पक्ष ढाह कर रख दिया। बिल्कुल नये तर्क नयी उपपत्तियां (परम्परा के अनुकूल पर परम्परा में शास्त्र में कही उसी प्रकार से विन्यस्त नहीं) रखते चले गये। और उनकी भाषा तो सचमुच गंगा का प्रवाह, कहीं उपराम न लेने वाली, पीने के लिए तीन-तीन चार-चार घण्टे तक कभी पानी की जरूरत नहीं पड़ी बस बीच-बीच में कुछ मुद्रायें बदलती थीं और सरस्वती अविराम एक छन्दोबद्ध नृत्य करने लगती थी। शास्त्र की बात करते समय इतने कठोर इतने निर्भय और भगवद्भक्ति की बात करते समय इतने तरल, इतनी रागाकुल कि समझ में नहीं आता था, यह एक व्यक्ति है। पर ऐसा अकेला व्यक्तित्व उनमें था, कौन-सी कृपा थी भगवती की कि ज्ञान और भाव का महायोग एक देह में, एक वाणी में, एक चित्त में सम्भव हो गया था।

भाव की बात क्या करें, स्मरण करते ही आँखों में आँसू आ जाते हैं। महाप्रयाण के दो एक महीन पहले की बात है, दर्शन करने गया, कई बार उन्होंने इसके पूर्व कहा था, तुम काशी नहीं आ जाते, उस बार गया तो पूजा पर बैठे थे, इशारे से बैठने को कहा, बैठा रहा। फिर पूजा से उठे प्रसाद दिया। किसी पार्श्वचर ने कहा महाराज जी आजकल दो ही ग्रन्थ सुनना चाहते है, पढ़ने को चिकित्सकों ने मना कर दिया है, एक भागवत दूसरा रामचरितमानस। कुछ पहले तो अमुक-अमुक द्वारा रचित भक्तों की कहानियाँ भी सुनते थे, पर अब बस यही दो ग्रंथ सुनते हैं और अश्रुपात करते जाते हैं। मैंने पूछा महाराज जीये ही दो ग्रंथ क्यों इतने प्रिय हैं, वेदार्थ-पारिजात आप लिख रहे हैं। महाराज जी बोले-वेद की बात और है, वह तो भगवत्स्वरूप है, वह कोई भाषा नहीं है पर मानुष शरीर को, मानुष चित्त को और मानुष कर्णेन्द्रिय को मनुष्य की वृत्ति से आत्मीयता होती है, और ये दो कृतियाँ इसलिए प्रिय हैं कि इनके लिखने वाले ने और किसी उद्देश्य से नहीं लिखा, अपने अन्तस्तम की शान्ति के लिये या अपनी अतृप्ति से प्रेरित होकर लिखा, उन्हें न यश चाहिए था, न भगवान् ही अभीष्ट थे, वे भगवत्कथा के रस से तृप्त नहीं हो पा रहे थे, वे इस अतृप्ति को बटोरना चाहते

थे, उन्होंने लिखा और सब तृप्तियाँ इस अतृप्ति पर न्यौछावार हैं। फिर रामचरित मानस से सुमन्त्र के लौटन का प्रसंग नामक प्रवचनों का टेप लिखा गया था, उसे देखकर प्रसंगादि का ठीक-ठीक शोधन करना था, भूमिका लिखनी थी। उन्होंने कहा तुम यह काम कर डालो। बाद में वह ग्रंथ छपा। मेरी भूमिका, छापने वाले संस्थान ने छोटी कर दी, उनकी कृपा, पर फिर महाराज जी को वह ग्रंथ दिखा न सका, न फिर उनके 'नयनं' गलदश्रुधारया वचनं गद्‌गद्‌या गिरा पुलकैर्निचितं वपुः कदा तव नाम ग्रहणे भविष्यति' वाली अभिद्रुत लाक्षा में एकीभूत श्यामछवि वाला रूप फिर देखने को मिला। लोग कहते हैं कि वे ब्रह्मलीन हुये, मुझे लगता है कि ब्रह्मपद से अभिधीयमान जीव का चैतन्य प्रकाश, वेदार्थ ज्योति, भास मात्र एक ऐसे भावयोग में समा गया है जिसे काशी कहें या गंगा कहें, वृन्दावन कहें या यमुना कहें, कैलास कहें या मानसरोवर कहें, समझ में नहीं आता। यही लगता है पूज्य स्वामी जी कहीं गये नहीं वे इस फक्कड़ नगरी में किसी आकाश के कोने में गूँज बनकर अवस्थित हैं। उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं, उनका बस उत्तरदाय है कि कभी यदि करो तो भारतीय मनीषा और भारतीय साधना की बात इसलिए न करो कि तुम भारत भूमि के हो, इसलिये करो कि इसमें जीव मात्र की प्यास और भूख को शमित करने वाली एक प्यास और भूख है। जहाँ वह बात इस भाव से होगी, वहाँ स्वामी जी होंगे, उनका दीप्त प्रभामण्डल वाला चेहरा होगा, अटकते हुये आपसी बातचीत का लहजा होगा, स्निग्ध और तरल दृष्टि होगी और उनके हाथों से दिया जाता प्रसाद होगा। मैं उन्हें श्रद्धाञ्जलि क्या दूं। मेरा अभाग्य कि मैं उनकी सन्निधि का आमंत्रण पाकर भी उस सन्निधि से वंचित रहा। काशी में रहने का निश्चय हुआ, पर वह सान्निध्य एक तरस भर रह गया है। चाहता था उनकी स्मृति में भगवद् भाव पर केन्द्रित ग्रंथ निकाला जाये, पर कोई उसके लिये आकुल नहीं दिखता। पूज्य स्वामी जी का भाव शरीर आज भक्तिसुधा, भावगत् सुधा, राधा सुधा और ज्ञान शरीर वेदार्थ पारिजात है, पर इनकी बातें कितनों तक पहुँचानी है, किस-किस तरह से पहुंचानी है, यह काशी के लोगों के सोचने की बात है। किमधिक उनकी वाणी की गूंज से भरी यह काशी, संस्कृत विश्वविद्यालय, गंगा तट, यह सारा परिसर प्रकाशहीन हो गया है। उनकी भौतिक सन्निधि थी तो वाचालता थी, वाग्मिता थी, जब उसके अभाव में किससे पूछे, कहाँ जायें, मानवीय मूल्यों के सम्बन्ध में रास्ता न दिखे तो किससे पूछें, कुछ समझ में नहीं आता, वही अनुभव होता है जो भगवान् श्री कृष्ण के लीला संवरण करने पर अर्जुन को हुआ, वैसा ही सूनापन, वैसी निरुपायता, वैसा ही अपनी अशक्तता का आभास, वैसा ही वंचित होने का भाव, उनसे कुछ सीखने की उम्र आयी, पर वे नहीं रहे। सन्मार्ग वर्ष में एक बार उनकी स्मृति जगाता है, उसका ऋणी हूँ। पर यह जगाना केवल निष्प्राण कर्मकाण्ड बनकर न रह जाए, वह मन में

सोचता हूँ और एक अकेलापन पाता हूँ और तब सबसे अकेले रहकर खट् खट् आगे चलने वाले उन चरणों में आँखें झुक जाती है, और मुँह से निकल पड़ता है ॐ नमो नारायणाय। कहाँ ही चित्काशी के सवितृमण्डल में मध्यवर्ती सरसिजाशन पर सन्निविष्ट हरिहररूप नारायण!

सिद्धान्त निकाला और सिद्धान्त जैसा भारतीय मनीषा का पत्र कोई और निकला नहीं, जैसे इक्षूरस (गन्ना) का ही परिणाम सिता, शर्करा, कन्द की मिठास इक्षुरस से विलक्षण होती है, वैसे शुद्ध सच्चिदानन्द से तत्त्वतः अपृथक होने पर भी भगवान का सगुण स्वरूप चमत्कार पूर्ण होता है। जैसे इक्षुदण्ड में दैवात् मीठा फल लग जाय या चन्दन वृक्ष में मनोहर पुष्प लग जाय, वैसे ही परमानन्दरस रूप निर्गुण ब्रह्म में सगुण, साकार ब्रह्म का होना है। तभी तो निर्गुण ब्रह्मानुभवी जनकादिकों का चित्त भी रामचन्द्र के सगुण-साकार स्वरूप पर मुग्ध हो गया था।

**इनहि बिलोकत अति अनुरागा।
बरबस ब्रह्म सुखहिं मन त्यागा।
सहज विराग रूप मन मोरा।
थकित होत जिमि चन्द चकोरा।।''**

***

श्री मलूक पीठ सेवा संस्थान न्यास, वृन्दावन

पु.श्रा.कृ.१२ सं. २०८०

श्रीहरये नमः

धर्मस्याऽस्तु जयो, ह्यधर्मनशनं, सद्भावना प्राणिषु
श्रेयो विश्वजनस्य, गो-कुल वधो भूयान्निरुद्धस्तथा।
गोमातुश्च जयोऽस्तु, हे हर-हर श्रीमन्महादेव! इ
त्युद्घोषः करपात्रिणः स्वभिनवश्रीशङ्करस्य श्रुतः॥ १॥

एवन्तस्य महात्मनो भरतभू शास्त्रीयराष्ट्रीयता
भावः सक्रिययोगदानमतुलं स्वाधीनतासङ्गने।
गोहत्याकविरोधहेतुविहिते राष्ट्रीयभावस्तरे
नेतृत्वं महति प्रदर्शनमखे प्राज्ञ-प्रमातुर्यते॥ २॥

एवंविधे जनिधरा-जनताहितार्थं
सम्पूर्णजीवनमभूद बहुशः प्रसङ्गे।
कारागृहे सहृदयः सुमना निरुद्धस्म्
तेजस्वि-योगि-मतिमच्छ्रुतिशास्त्रविज्ञः॥ ३॥

तच्छ्रीस्मृग्रिन्थपुनःप्रकाशो
भावीति विज्ञाय महान् प्रमोदः।
वृन्दा-मलूकस्थल-सेवनस्थ
राजेन्द्रदास-व्यपदेशभाजः॥ ४॥

अनेन ग्रन्थेन स्मृतिविकसितो राष्ट्रजन आ!
यतिश्रीप्राज्ञस्य प्रथितकरपात्रप्रतपसः।
प्रदीप्तं चारित्र्यं भरतभुवि बुद्ध्वाऽध्ययनतः
सदुद्योगी भावी सित-सित-कृतौ भारतकृते॥ ५॥

दासानुदासः -
राजेन्द्रदासः

पूज्य स्वामी करपात्री जी का लीला संवरण

–पण्डितराज बदरीनाथ शुक्ल, भूतपूर्व कुलपति संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

पूज्य स्वामी करपात्री जी का पार्थिव शरीर जिसे भगवती भागीरथी गंगा ने केदारघाट वाराणसी में प्रवहमान अपनी पावन धारा में अमूल्य रत्न के समान आत्मसात् किया, सच्चिदानन्द शिव का महनीय मन्दिर था उसमें प्रतिष्ठित शिव, करपात्री के नाम से अभिहित किये जाते थे। इस शरीर के माध्यम में जिस विद्या, धर्म, तप और त्याग का आदर्श प्रस्तुत हुआ था वह मानव जाति के मार्ग दर्शन के लिये प्रभाकर का नितांत निर्मल प्रकाश था, कदाचित ही ऐसा कोई मनुष्य हो, जिसे पूज्य स्वामी जी का दर्शन होने पर भी अपने जीवन को विद्या–धर्म आदि के अर्जन में अर्जित करनेकी भावना न होती रही हो। पूज्य स्वामी जी ने जिस समय प्रथम बार वाराणसी में पदार्पण किया और अपने उपदेशामृत की वर्षा आरम्भ की, उसी समय से पूज्य स्वामी जी के चरणों से मेरा सम्पर्क हुआ और मुझे अपने मानस का परिष्कार करने और अपनी ग्रहण शक्ति को सम्बर्धित करने की प्रेरणा मिली और उससे जो मुझे बौद्धिक और चारित्रिक उपलब्धि हुई उससे ही मेरा जीवन कृतार्थ हुआ।

विराट व्यक्तित्व

पूज्य स्वामी करपात्री जी व्यक्तित्व विराट था, उनका मानव प्रेम और मानव जाति के उत्थान का संकल्प महान था, वे केवल वैदिक सनातन धर्म के अग्रदूत मात्र न थे, अपितु विश्व के अन्य राष्ट्रों में प्रचलित धार्मिक धारणाओं के भी उद्वेलक थे। उनकी यह मान्यता था कि संसार में जहां कही भी धर्म के नाम से जो प्रचलित है वह सब उस सच्चे धर्म का जिसका वर्णन वेदशास्त्रों में उपलब्ध होता है, अंश है। अवश्य ही विभिन्न जातियों में अपनी सीमित रूढ़ियों अपने भाषागत विशेषताओं और अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार उसे रूपांतरित कर दिया। अतः पूज्य स्वामी जी का विचार था कि वेद शास्त्रों में वर्णित धार्मिक और आध्यात्मिक मान्यताओं की शास्त्र निर्दिष्ट अधिकारों के अनुरूप व्यापक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। जिससे विश्व के सम्पूर्ण मानव अपनी धार्मिक मान्यताओं में इस प्रकार का संशोधन कर सकें, जिससे उन्हें धर्म का अविकल रूप हृदयंगम हो सके और सभी लोग 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः', भगवद्गीता के इस शाश्वत निर्देश के अनुसार अपने धर्म का पालन करने में अपने को समर्पित कर सकें।

उनके व्यक्तित्व का विराट रूप उनके उन नारों से जिन्हें उन्होंने मानवमात्र को अर्पित किया, निर्विवाद रूप से प्रकट होता है, ये नारे–'धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो' इस रूप में प्रसिद्ध हैं। जनता इन्हीं नारों से श्री स्वामी जी का अभिवादन करती थी। जहाँ कोई सभा या समिति स्वामी जी के अनुयायियों द्वारा आयोजित होती थी, वहाँ सर्वत्र इन नारों से ही

कार्यक्रम का आरम्भ और अवसान होता था। इन नारों से पूज्य स्वामी जी के कार्यकारक भाव विषयक चिन्तन की गम्भीरता प्रकट होती है और साथ ही यह भी प्रकट होता है कि वे केवल हिन्दू जाति क्या सनातन धर्मी जनता के ही हित चिंतक न थे अपितु सारे विश्व के हित चिंतक थे। स्पष्ट है कि विश्व का कल्याण तब तक नहीं हो सकता जब तक प्राणियों में सद्भावना न हो। प्राणियों की सद्भावना का अर्थ है–सम्पूर्ण प्राणियों में एक ही सत् तत्व की अनुभूति देखना। जिसे भगवद्गीता में–

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव स्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।

इस शब्द से कहा गया है। सद्भावना का दूसरा अर्थ है–जो बात अपने को प्रतिकूल मालूम हो उसे दूसरों के प्रति न करना, और जो वस्तु अपने अनुकूल हो, उसे दूसरों को भी सुलभ कराने का प्रयत्न करना–'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत, यद्यदात्मन्, इष्येत तत् परेभ्योऽपि चिन्तयेत्।' प्राणियों में ये सद्भावना तब तक नहीं पनप सकती जब तक उनके अधर्म का उनकी मानसिक मलिनता और संकीर्णता का निराकरण न हो। अतः 'प्राणियों में सद्भावना हो' इस नारे के पूर्व अधर्म का नाश हो इस नारे को स्थान दिया गया। इस नारे की भी सार्थकता तब तक नहीं हो सकती जब तक धर्म का उत्कर्ष न हो। प्राणी की जब तक धार्मिक प्रवृत्ति न हो। अतः 'धर्म की जय हो' इस नारे को प्रथम स्थान दिया गया।

स्वामी जी की राजनीतिक दृष्टि

पूज्य स्वामी जी भारत के केवल धार्मिक एवं आध्यात्मिक नेता मात्र न थे अपितु वे राजनीतिक नेता भी थे। जिस राजनीति को वे भारत के हित में समझते थे और जिसके द्वारा देश में वेदों के ईश्वर राज्य, रामायण के रामराज्य और महाभारत के धर्मराज्य की स्थापना हो सकती थी उसे प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से पूज्य स्वामी जी ने धर्म–संघ और राम–राज्य–परिषद की स्थापना की थी। धर्म–संघ के माध्यम से भारतीय राजनीति का विवेचन विश्लेषण निरूपण और निर्धारण होता था और राम–राज्य–परिषद के माध्यम से उसके कार्यान्वयन का प्रयत्न किया जाता था। निश्चय ही भारत का भाग्य सूर्य अभी अपने वास्तविक रूप में उदित नहीं हुआ है जिसके कारण इन दोनों संगठनों का देश व्यापी प्रभाव अभी तक नहीं पड़ सका है। किंतु स्वामी जो इनसे किंचित भी विचलित नहीं होते थे उनका कहना था यदि भारत को अपने वात्सवरूप में जीवित रहना और विकसित होना है और उसकी स्वतन्त्रता को यदि सच्चे रूप में सार्थक होना है तो पूरे देश को इन संगठनों के आश्रय में आना ही होगा।

अपनी राजनीतिक मान्यता को बुद्धिगम्य बनाने और उसकी ओर देश को आकर्षित करने के विचार से पूज्य स्वामी जी ने मार्क्सवाद और रामराज्य नामक महान राजनीतिक ग्रंथ की रचना की है। इस ग्रंथ में विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में प्रचलित सभी

राजनीतिक विचारों की समीक्षा की गयी है और अकाट्य तर्कों और दूरदर्शिता पूर्ण विचारों से उनकी अग्राह्यता बताते हुए भारतीय राजनीति का प्रतिपादन किया गया है। और धर्म नियन्त्रित राज्य की स्थापना को ही विश्व कल्याण का आधार बतलाया गया है।

वेदशास्त्रों के यथार्थ व्याख्याता

वेद और शास्त्र स्वामी जी के विचारानुसार पूरे विश्व के लिये शाश्वत संविधान है। उनमें जिन नियमों और विचारों का वर्णन किया गया है उनका पालन संसार के सुख और शांति का स्रोत है। इसमें आधुनिक विद्वानों द्वारा किसी प्रकार का संशोधन या परिवर्तन नहीं हो सकता आवश्यकता केवल उसे ठीक ढंग से समझने और जीवन में उतारने की है। पूज्य स्वामी जी ने वेदों की अपौरुषेयता का अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से समर्थन किया है, और उसके सर्वोच्च प्रामाण्य की प्रतिष्ठा की है उनका कहना था कि वेद अन्तिम प्रमाण है उसके अनुरूप किसी भी भाषा में जो छोटे मोटे ग्रंथ लिखे गये हैं वे सब प्रमाण है।

कोई भी ग्रंथ चाहे कितने भी बड़े विद्वान का लिखा क्यों न हो यदि वह वेदशास्त्रानुरूप नहीं है तो उसे मान्यता नहीं मिलनी चाहिये क्योंकि उनसे मनुष्य का सार्वकालिक एवं वास्तविक हित साधन नहीं हो सकता। स्वामी जी को व्याकरण न्याय मीमांसा का अनुपम एवं सहज पांडित्य प्राप्त था अतएव वे वेद और शास्त्रों के यथार्थ व्याख्याता थो। वेद शास्त्रों के अभिमत बताने में उन्हें कभी कोई भ्रम नहीं होता था। वाराणसी की विप्रमण्डली उनके वैदुष्य और शास्त्रीय प्रतिपादन के समक्ष नत मस्तक थी। जो विद्वान जिन शास्त्रों का निरन्तर अध्यापन करते हैं उन्हें भी आश्चर्यचकित होना पड़ता था जब उन्हीं शास्त्रों की व्याख्या स्वामी जी के श्री मुख से सुनने को प्राप्त होती थी। शास्त्रीय प्रेमियों के विषय में विद्वानों को स्वामी जी से सदैव नया प्रकाश प्राप्त होता था।

महान गो रक्षक

पूज्य स्वामी जी इस तथ्य को सदैव सामने रखते थे कि वेद ब्राह्मण और गो धर्म के मूल है। वेदों का यथार्थ बोध ब्राह्मणों की आचार निष्ठा एवं गो जाति की सुरक्षा के बिना न तो धर्म की प्रतिष्ठा हो सकती है और न देश का लौकिक अभ्युदय हो सकता है। अतः इन तीनों के संरक्षण और संवर्धन के विषय में स्वामी जी सदैव प्रेरणा दिया करते थे। जीवन के उत्तरार्ध में वेद विद्या और गो रक्षा की ओर स्वामी जी अधिक सचेष्ट थे। पाश्चात्य विद्वानों और उनके अनुयायी भारतीय विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध में जो अनेक अप्रमाणिक विचार प्रस्तुत किय हैं, उनकी आलोचना करते हुए वेद के प्रामाणिक अर्थ को प्रकाश में लाने के उद्देश्य से स्वामी जी ने 'वेदार्थ पारिजात' नाम से वेद के नये भाष्य की रचना प्रारम्भ की थी जिसके दो खण्ड प्रकाशित हो चुके हें। गो रक्षा के लिये तो उन्होंने आत्म बलिदान तक का संकल्प ले रखा था और गो माता की रक्षा हो, गोहत्या बन्द हो, यह ध्वनि उनके प्रत्येक सांस की सहचर हो गयी थी।

देश का दुर्दैव

७ फरवरी १९८२ का दिन देश के दुर्दैव का दिन सामने आया। भारतीय सभ्यता और संस्कृति का पोषक उस अभागे दिन हमारे बीच से उठ गया। धार्मिकता आध्यात्मिकता एवं मनस्विता असहाय हो गयी। शिव ने अपने मन्दिर से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया और समस्त उपाधियों को ध्वस्त कर अपने वास्तव स्वरूप में समाहित हो गया। अब उस शिव हीन मन्दिर को जगन्माता गंगा की गोद में समर्पित होना है। यह समाचार विद्युत के समान सारे देश में फैल गया, जो जहाँ रहा वहीं अवाक् हो गया। इस प्रकार पूज्य स्वामी करपात्री जी का लीला संवरण हुआ जो अन्त काल तक मानव की स्मृति में ताजा बना रहेगा और मानवता के उत्थान की प्रेरणा देता रहेगा।

***

''भगवान अपने संकल्प से ही समस्त संसार को बनाते हैं। भगवान का ही अंश जीवात्मा है और भागवान की 'माया' का ही अंश जीव का 'मन' है। अतः भगवान और माया की शक्ति उसी तरह जीवात्मा और मन में रहती है, जैसे महाकाश की अवकाश प्रदत्त शक्ति घटाकाश में रहती हैं, जल की शीतलता, मधुरता उसके अंश तरंग में हुआ करती है, अग्नि का दहन प्रकाशन सामर्थ्य उसके अंश विस्फुल्लिंग (चिनगारी) में रहा करता है। इस दृष्टि से भगवान की सभी शक्तियाँ जीवात्मा में होती है। माया की शक्तियाँ मन में रहती है। इसीलिये शास्त्रों ने कहा है कि जीवात्मा अपने संकल्पों, विचारों से बहुत कुछ कार्य कर सकता है। अत्याचार, अनाचार, पापाचार, व्यभिचार, दुराचार आदिकों से 'संकल्प' की शक्ति कमजोर हो जाती है। सदाचार, सद्विचार, सद्धर्म, तपस्या आदि से संकल्प की शक्तियां दृढ़ हो जाती है।''

–करपात्र स्वामी

स्वामी करपात्रीजी महाराज

-प्रो.वि. वेङ्कटाचलम, कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

कठोपनिषद् के एक प्रसिद्ध मन्त्र में सामान्य मानवों की सहज बहिर्मुखी प्रवृति के उल्लेख के साथ यह कहा गया है कि लाखों-करोड़ों में एक महापुरुष जन्म लेता है, जो प्राणिमात्र की इस जन्मजात बहिर्मुखी वासना से हटकर, अपनी समस्त इन्द्रिय-चेतनाओं को अन्तर्मुख और आत्म-केन्द्रित बना कर, आत्मज्ञान की साधना से अमृतत्व की ओर अग्रसर होता है। मन्त्र इस प्रकार है :-

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयम्भूस्तस्मात् पराङ् पश्यति नान्तरात्मन्।
कश्चिद् धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षद् आवृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्।।१

मन्त्र का शाब्दिक अर्थ इस प्रकार है-विधाता ने मनुष्य की इन्द्रियों को बहिर्मुख ही बनाया है। फलस्वरूप मनुष्य सहज रूप में बाहरी वस्तुओं को ही देखता रहता है और उन्हीं में रमता रहता है। अपने ही अन्दर प्रतिष्ठित अपने ही आत्म स्वरूप को कभी देखने की चेष्टा तक नहीं कर पाता है। कभी-कभी कोई धीर-पुरुष अमृतत्व को (अर्थात जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति की अवस्था) प्राप्त करने की लालसा से अपनी इस बहिर्मुख दृष्टि को प्रत्यावर्तित कर उसे अपने ही भीतर प्रेरित कर इस अर्न्तदृष्टि से परिपाक से आत्मस्वरूप का साक्षात्कार करता है।

भारतवर्ष सदैव ऐसे साधकों एवं सिद्धों की साधना-स्थली एवं क्रीड़ास्थली रही है। मुमुक्षुओं और जीवन्मुक्त ज्ञानियों की इस अविछिन्न 'प्रवाह-नित्य' परम्परा में स्वामी करपात्री जी महाराज एक नये संतुलन एवं समन्वय के संस्थापक हैं। हम कह सकते हैं कि बहिर्मुखता एवं अन्तर्मुखता के इस शाश्वत द्वन्द्व-संघर्ष में स्वामी जी ने युगीन आकांक्षाओं और अपेक्षाओं को दृष्टिगत कर नये-नये प्रयोग किये और भावी पीढ़ियों के लिये एक नया आदर्श भी उपस्थापित किया है। इस दृष्टि में उनकी जीवन-लीला को एक नया आविष्कार कहना असंगत नहीं होगा।

स्वामी जी की बहुमुखी प्रतिभा एवं उनका बहु-आयामी जीवन इस बात का प्रमाण है कि वे तो लोग-जीवन से नितांत विरक्त उन संन्यासियों में सर्वथा नहीं थे जो स्वयं को प्राकृत जन-समुदाय से काटकर एकांत-साधना में तल्लीन रहते हैं, जिनके सम्बन्ध में आधुनिक युग के मूर्धन्य महाकवि नीलकण्ठ दीक्षित ने लिखा है :-

पततु नभः स्फुटतु मही चलन्तु गिरियो मिलन्तु वारिधयो।
अधरोत्तरमस्तु जगत का हानिर्वीतरागस्य।।२

अर्थात् आकाश गिर पड़े, पृथ्वी फटकर टुकड़े हो जाय, पहाड़ चलने लग जाय, समुद्र मिल कर जल-प्रलय ही उपस्थित करें, अथवा सारे संसार का जीवन ही अधरोत्तर एवं अस्त-व्यस्त हो जाय-ऐसी भयानक विकट विषमता की स्थिति में भी एक वीतराग

आत्माराम मुनि के लिये क्या फर्क पड़ता है? वह किसी भी स्थिति से क्या खोता है अथवा क्या पाता है? प्रातः स्मरणीय स्वामी करपात्री जी के जीवन दर्शन में लोक जीवन के प्रति उद्वेग पर आधृत वैराग्य का कोई स्थान नहीं था। वे तो भगवद्गीता के 'यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः' के प्रबल पक्षधर थे। स्वामी जी तो अपने देशवासियों के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक जीवन से पूर्णरूप से लिप्त थे। धार्मिक उत्थान के माध्यम से देश के सर्वोगीण विकास के वे महान स्वप्नदृष्टा थे। इस महत्ती भूमिका के निर्वाह के लिये अपेक्षित बहिर्मुखता का उन्होंने हृदय से स्वागत किया और राष्ट्रोद्धार के लिये पूर्णतया समर्पित अपने जीवन के किसी भी क्षण में सोचा नहीं होगा कि यह बहिर्मुखता उनकी अपनी आत्मिक अन्तर्मुखता में बाधक है। संसार के कल्याण के लिये अनवरत सक्रिय यह बहिर्मुखता और अन्तर्मुखता का ही देहली-द्वार था। ममकार के परित्याग के स्थान पर उसके उदात्तीकरण के वे पक्षधर थे। इस सम्बन्ध में भी नीलकण्ठ दीक्षित को मार्मिक उक्ति उनकी जीवन-गति के इस पक्ष को भली-भाँति आलोकित करती हैं। दीक्षित जी ने लिखा है :-

त्यक्तव्यो ममकारस्त्युक्तुं यदि शक्यते नासौ।
कर्तय्यो ममकारः किन्तु स सर्वत्र कर्तव्यः।।३

शिव एवं शक्ति के परम आराधक इस महाकवि के अनुसार ममकार में निहित बुराई का संस्कार करने का एकमात्र उपाय यह है कि वह ममता, क्षुद्र पारिवारिक या क्षेत्रीय सीमाओं के अन्दर आबद्ध न रहकर अपने भुजा-वलय में समस्त मानवता का आलिंगन करे। अपने प्रदेश, राष्ट्र या समग्र वसुधा-कुटुम्ब के उद्धार के लिये समर्पित लोककल्याणकारी किसी भी महान विभूति के जीवन की आधार-भित्ति भी यही है। आचार्य चूड़ामणि श्री शंकर-भगवत्पाद ने जिस प्रकार समग्र भारतवर्ष में अपने अद्वैत सिद्धांत की प्रतिष्ठापना के लिये प्रतिबद्ध होकर 'अहमिदं ममदेम्' के नैसर्गिक लोकव्यवहार को अपने जीवन में स्वीकारा, उसी प्रकार स्वामी करपात्रीजी ने 'विश्व का कल्याण हो' के प्रति अपने वसुधाव्यापी ममकार को अन्तिम क्षण तक जीवित रखकर कल्याणमयी बहिर्मुखता का एक प्रशस्त उदाहरण रखा। धार्मिक क्रांति के अग्रदूत के रूप में यदि स्वामी जी 'युद्धाय कृतनिश्चय' थे तो उनको इस धर्मयुद्ध के लिए प्रेरणा सूत्र मिला, गीता के उसी श्लोक के प्रारम्भिक पाद से-हतो वा प्राप्यसि स्वर्गम्'। अतएव उनकी यह राजनीतिक संघर्षात्मक धर्मनिष्ठामयी बहिर्मुखता सामान्य मनुष्यों की वासनामयी बहिर्मुखता से कोसों दूर थी वह तो 'हत्वापि स इमान् लोकान् न हन्ति न निबध्यते' की श्रेणी में आती थी। बहिर्मुखी व्यापारों में सतत लगे रहने पर भी, सांसारिक राजनीतिक प्रपञ्चों में नितांत संपृक्त रहने पर भी अपनी मौलिक अन्तर्मुखता में प्रतिष्ठित रहना योग-साधना की चरम सीमा है। इसका एक बड़ा रोचक काव्यात्मक वर्णन हमें बराहउपनिषद् में मिलता है।

पुंखानुपुंखविषयेक्षण तत्परोऽपि ब्रह्मावलोकनधियं न जहाति योगी।
संगीत-ताल-लय-वाद्य-वश गतापिमौलिस्थ कुम्भपरिरक्षणधीर्नटीव।।६

लोक नृत्य में एक विद्या आज भी कहीं-कहीं प्रचलित है जिसमें ग्रामीण महिला अपने सिर पर घड़ा रखकर (कभी-कभी एक घड़े के ऊपर दो तीन घड़े और जोड़कर) नाचती है। इस नाच में कुशल नर्तकी जहाँ एक ओर गीत के शब्दों के साथ, उसका ताल, उसका लय, बजाये जाने वाले वाद्य की ध्वनियों की द्रुत-विलम्बित गति और मन्द-मध्यम-तार स्थिति इत्यादि सभी बाहरी तत्वों पर पूरा ध्यान देकर क्षण-क्षण में उन सबके साथ संगत करती हुई नाचती हैं, वही दूसरी ओर वह अपने व्यक्तित्व में ही अन्तर्निहित घट की रक्षा के प्रति सतत् जागरूक रहती हुयी क्षणमात्र भी अपना ध्यान 'मौलिस्थ कुम्भ' से हटाती नहीं है। यह भी एक प्रकार की अन्तर्मुखता ही है। यद्यपि यह सत्य है कि वह सभी बाहरी तत्वों पर पूरी तत्परता रखती है, फिर भी पूरे नृत्य में उसके ध्यान का वास्तविक मुख्य केन्द्र बना रहता है सिर पर रखा हुआ घड़ा, जो लेशमात्र प्रमाद होने पर गिर सकता है और सारा नृत्य वही समूल नष्ट हो जाता। इस बात से इस नृत्य की असाधारणता स्पष्ट है कि इसमें एक प्रकार से बहिर्मुखता एवं अन्तर्मुखता का अद्भुत समन्वय है। हां, अन्य नृत्यों में भी संगीत, ताल, लय, वाद्य-ध्वनि इत्यादि अनेकानेक बाहरी तत्वों के साथ तालमेल रखना अनिवार्य रहता है, किन्तु इस घट-नृत्य का यही विशिष्ट चमत्कार और मौलिक अन्तर है कि इसमें अनेक बाहरी तत्वों के साथ-साथ स्वयं में अन्तर्निहित घट की रक्षा का महत्व सर्वोपरि है।७ इस प्रकार बाहरी व्यापारों के प्रति अनिवार्य बहिर्मुखताओं के साथ मौलिक अन्तर्मुखता का संतुलन रखना इस लोक-नृत्य कला का परम रहस्य है। वराहउपनिषद के ऋषि-कवि का कहना है एक सिद्ध योगी का जीवन भी ठीक इसी प्रकार का रहता है। अनन्त प्रकार के लौकिक व्यापारों के विक्षेपों की बहिर्मुखता के बीच में अपनी आध्यात्मिक अन्तर्मुखता का संतुलन रखना ही उसकी जीवन कला की चरम सिद्धि है। स्वामी करपात्री महाराज के जीवन को भी अन्तर्मुखता एवं बहिर्मुखता के ऐसे संतुलन का एक जीता-जागता समसामयिक उदाहरण कहा जा सकता है। यह तो बात ही भिन्न है कि भारतवर्ष के इतिहास में सन्तों एवं महापुरुषों की अति महत्ती परम्परा में ऐसे संतुलन के अनेक उदाहरण पूर्व में थे, वर्तमान में है और भविष्य में होते भी रहेंगे। इसे कौन इनकार करे, और क्यों? हमारा कहना इतना ही है कि ऐसे सन्त-'मणियों' से इसे भारत माता के विचित्र कण्ठहार में स्वामी करपात्री जी भी एक आधुनिक महामणि है।

प्राचीन पौराणिक युग के हमारे अनेक राजर्षियों के जीवन में भी यह समन्वय था। भारतीय संस्कृति की समय भूमिकाओं की मधुर काव्यात्मक प्रस्तुति

में सिद्ध-हस्त महाकवि कालिदास ने अपनी रचनाओं में राजत्व एवं ऋषित्व के संतुलन के अनेक आदर्श उपस्थापित किये हैं। राजा दिलीप और वशिष्ठ के मिलन के वर्णन में ''राज्याश्रममुनि मुनिः'' ८ कहकर वसिष्ठ मुनि के सामने राजा दिलीप को राज्यरूपी आश्रम के अधिष्ठाता ''मुनि'' कहा है। शाकुन्तल के अनेक प्रसंगों में महाकवि ने राजा दुष्यन्त की भी ऐसे ही राजर्षि के रूप में उभारा है। ९ पंचम अंक में प्रजापालन की बहिर्मुखी प्रवृत्तियों के बीच में ही एकांत-सुख की सेवा का एक सुन्दर वर्णन है।

प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा निषेवतेऽक्षान्तमना विविक्तम्।
यूथानि संचार्य रविप्रतप्तः शीतं दिवा स्थानमिव द्विपेन्द्रः।।१०

कवि कहता है-अपनी सन्तान के प्रति एक पिता का जो स्नेह-वात्सल्य होता है ऐसी ही भावना के साथ अपनी प्रजा के कार्यो का निर्वाह कर उन व्यग्रताओं के कारण मन में उत्पन्न अशांत के परिहार के लिए राजा दुष्यन्त अपने नित्य जीवन का कुछ समय एकांत-सुख में व्यतीत करता था। राजर्षि दुष्यन्त तब निःसन्तान थे और प्रजा ही उनके पुत्र-पौत्र थे। संन्यासी करपात्री जी के लिये भी समग्र भारतवासी ही पुत्र-पौत्र थे। उनके नित्य जीवन के क्रम में भी राजनीतिक सामाजिक व्यग्रताओं के बीच में वे भी एकांत आत्म-साधना के क्षण ढूंढ लेते थे। स्वामी करपात्री जी के विषय में महाकवि का यह वर्णन सटीक उतरता है। इसके विषय में महाकवि के शब्दों में एक लघु परिवर्तन मात्र करना चाहेंगे। ''अशांतमनाः'' में से अवग्रह हटाकर उसे ''शान्तमना'' इस रूप में संशोधित करना स्वामी जी के लिये उचित होगा। सम्भवतः वे प्रजा-कार्यों से कभी ''अशांत'' नहीं हुये होंगे। अतएव उनके विषय में यह कहना भी ठीक होगा कि वे प्रजा का लोक कल्याण कार्य पूरा कर ''शांतमनाः'' होकर प्रतिदिन एकांत सेवा में अन्तर्मुखता में भी रमते थे।।११

हमारे देश के प्राचीन सन्त-मनीषियों ने बहिर्मुखी जीवन के क्रिया कलापों के साथ आध्यात्मिक अन्तर्मुखता का आवश्यक संतुलन किस प्रकार रखा इसकी एक झलक हमें ऊपर चर्चित शास्त्रीय तथा साहित्यिक संदर्भों से प्राप्त होती है। किन्तु यह सोचना सर्वथा गलत होगा कि यह सब केवल ग्रांथिक-सत्य या सैद्धांतिक विकल्पनाएं है और कोरा वाग्जाल है, जिनका व्यावहारिक जीवन के साथ कोई सम्बन्ध-रिश्ता नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि ऐसे ग्रंथारूढ़ वर्णन प्राचीन काल के भारतीय मनस्वियों के व्यावहारिक जीवन की ही साहित्यिक प्रतिच्छाया या प्रतिध्वनि है। उस प्राचीन परम्परा से अनुप्राणित ऐसी समन्वित जीवनधारा हमारे देश में किसी न किसी रूप में आज तक अक्षुण्ण है। यदि हम इसी शताब्दी के प्रारम्भिक काल के प्रामाणिक इतिहास पर ही दृष्टिपात करें तो हमें ऐसे बहुत से इतिहास-सिद्ध उदाहरण मिल सकते हैं। स्वामी रामकृष्ण परमहंस एवं उनके वरिष्ठ शिष्य स्वामी विवेकानन्द के उदाहरण

तो आज भी लोक–स्मृति में बहुत ताजे हैं। इनमें जहाँ श्री रामकृष्ण परमहंस के जीवन में अन्तर्मुखता का पलड़ा पर्याप्त भारी था वहीं स्वामी विवेकानन्द में बहिर्मुखता का पक्ष कछ अधिक प्रखर था। ये तो प्रामाणिक ऐतिहासिक साक्ष्यों से समर्पित उदाहरण है। किंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि देश के अनेक भागों में ऐसे अनेक अन्तर्मुख तपस्वियों के उदाहरण थे, आज भी हैं जो स्वयं के इतिहास लिखने–लिखाने से सर्वथा विमुख हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी ने भी अपने जीवन में इन दोनों धाराओं का अपना एक संतुलन बनाये रखा। सत्याग्रह के आध्यात्मिक आधार पर प्रतिष्ठित रक्तहीन राजनीतिक क्रांति के लिए प्रतिबद्ध उनके जीवन में अन्तर्मुखता की धारा अन्तर्वाहिनी के रूप में सिमटकर रही होगी, किंतु थी अवश्य।

स्वामी करपात्री जी के जीवन में अन्तर्मुखता–बहिर्मुखता का यह सन्तुलन सूत्र श्री रामकृष्ण परमहंस एवं स्वामी विवेकानन्द के बीच का मध्यम मार्ग कहा जा सकता है। यह कहना कुछ कठिन है कि वे बहिर्मुखी में अन्तर्मुखी थे, अथवा अर्न्मुखी में बहिर्मुख। यदि दोनों में से एक विकल्प चुनना ही है, तो मैं कहूँगा, वे थे अन्तर्मुखी में बहिर्मुखी।

***

संस्मरण

–पं० पट्टाभिराम शास्त्री ''पद्म भूषण'' ४/७ हनुमानाघाट, वराणासी

पवित्रतम इस भारत में गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, कावेरी आदि पुण्य सलिला दिव्य नदियाँ वह रही हैं। अत्रि–भृगु–कुत्स–वसिष्ठ–गौतम–काश्यप–आंगिरस आदि गोत्र प्रवर्तक महर्षियों का इस पुण्य भूमि में जन्म हुआ है जिनके हम सन्तान है। तुलसीदास, कबीर, रमण महर्षि, शेषाद्रि आदि भक्त, साधु, सन्तों ने इस पुण्यभूमि को भगवन्नाम–प्रचार करते हुए पवित्रित किया है। अतएव निर्गुण नीरूप परब्रह्म सगुण सरूप जन्म लेकर शिष्टपालन दुष्टनिग्रह आदि सत्कर्मानुष्ठान के योग्य यह भूमि बन सकी। प्रति शतक में किसी न किसी रूप से सन्त, महात्मा उद्भूत होकर भारत के गौरव को बढ़ाते रहे हैं। चारों वेदों का सांग अध्ययन–अध्यापन, १८ पुराणों, १८ स्मृतियों असंख्य धर्मग्रंथों आस्तिक–नास्तिक दर्शनों, संख्यातीत काव्य नाटकों, स्तुतिग्रथों एवं अन्यान्य साहित्य ग्रंथों की रचना का सौभाग्य इसी पुण्य भूमि को ही प्राप्त है। वेद शस्त्रों का अध्ययन–अध्यापन, सत्कर्मों का अनुष्ठान–अनुष्ठापन, ज्ञान भक्ति कर्म मार्ग की प्रदर्शन की परम्परा इस पुण्य भूमि के समान विश्व में अन्यत्र चली नहीं है। विभिन्न वर्णाश्रम धर्मों को पालन करते हुये चिरन्तनों ने इस भूमि की अखंडता एवं एकता को सुरक्षित रक्खा है।

परिवर्तनशील कालचक्र ने पूर्वोक्त परम्परा को शनैःशनैः परिवर्तित कर दिया। मानवों ने मानवता को छोड़कर आसुरीवृत्ति को ग्रहण किया है। इस दुर्भाग्यपूर्ण अवस्था को दूर करने हेतु भगवान श्री करपात्र रूप से प्रकट हुये कहना अत्युक्ति नहीं है। १९३५ ई० में जगद्गुरु श्री काञ्ची कामकोटि पीठाधीश्वर शंकराचार्य श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती जी महाराज काशी पधारे थे। हनुमानघाट में स्थित अपने मठ में रहते हुये जगद्गुरु जी ने एक दिन मुझे आदेश दिया मठ के द्वार पर एक महात्मा खड़े हैं उन्हें अन्दर बुला लाओ। मैंने तुरन्त जाकर देखा कौपीन धारी दन्डी स्वामी जी द्वार को छोड़ कर चल दिये। उनके पीछे जाकर मैंने निवेदन किया कि जगद्गुरु जी आप को बुला रहे हैं। स्वामीजी बोले दर्शन हो चुका है कहकर चल दिये। जगद्गुरु के पास जाकर समाचार को कहा तो जगद्गुरु जी कहे कि प्रतिनित्य वे आते हैं द्वार पर खड़े होकर ध्यान करके चले जाते हैं। वे महात्मा है। उनके परिचय को प्राप्त करो। वे एक सिद्ध योगी है। मैं उन दिनों में छात्र भी था और गोयनका महाविद्यालय में अध्यापन भी करता था। गुरुजनों से पूछने पर पता चला कि वे करपात्र स्वामी जी है। यह मेरा प्रथम दर्शन है। पूज्य स्वामी जी नारद घाट में एक मकान में और नगवा में रहते थे, मैं उनके दर्शन तथा प्रवचनों को सुनने के लिये जाता था, किन्तु मैं दूर रहकर प्रणाम कर चला जाता था। एक समय मेरे भाई (फुआ का पुत्र) श्री चन्द्र शेखर अय्यर जो सुप्रीम कोर्ट

के जज थे उनके साथ दर्शनों के लिये नगवा गया था, तब पूज्य स्वामी जी से वार्तालाप हुआ। वे मेरे अध्ययन को सुनकर प्रसन्न हुए आशीर्वाद दिये। मैंने मन में निश्चय कर लिया कि सन्त महात्मा साधक अपनी साधना के बल से आराध्य देवता को ध्यान पूजन करते हुए आराध्य देवता के साथ एकता को प्राप्त कर लेते हैं। जगद्‌गुरु शंकराचार्य एवं पूज्य पाद करपात्र स्वामी जी का आराध्य देवता श्री महा त्रिपुर सुन्दरी ललिता पराम्बा श्रीराजराजेश्वरी है। तदात्मतापन्न दोनों की एकात्मकता में क्या संशय हो सकता है।

१९४२ ई० में पूज्य पाद करपात्र स्वामी जी दिल्ली में यमुना की रेती में माघ मास में शतकुण्डी रुद्रयाग की योजना बनाये थे। उसमें दक्षिण भारत से विशिष्ट वैदिक धनपाठियों के संग्रह के लिए आदेश दिये। तदनुसार लगभग ७५ विद्वानों को जो तैत्तिरीय शाखा के पारंगत थे बुलाकर ले गया था। पूज्यपाद स्वामी जी मुझे क्रम दृष्टा के रूप में नियुक्त कर जप पारायण हवन आदि को सम्हालने का आदेश दिये। दस दिन व्यापी अनुष्ठान था। उस समय पूज्य स्वामी जी के वैभव को मैंने अनुभव किया। स्वाध्यायाध्ययन ब्राह्मण के वाक्यशेष में कहा है कि वेद पाठियों के लिये पयःकुल्या, घृतकुल्या का प्रवाह होगा। मैंने इस याग में स्वामी जी के तपोबल से पयःकुल्या घृत कुल्या का प्रत्यक्ष अनुभव किया। सचमुच वह अभूतपूर्व याग था और मैं दृढ़ता से कह सकता हूँ कि योगी महापुरुष पूज्यपाद स्वामी जी का वह अनुष्ठान स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये 'योग' रूप से परिणत हुआ। 'क्षेम' के निमित्त पूज्यपाद ने लगातार कानपुर, प्रयाग, वाराणसी में दैव के आराधन रूप रुद्रयाग का अनुष्ठान कराया। जिनमें विशेषरूप से वेदार्थ चर्चा विद्वानों के द्वारा कराया। इन सभी अनुष्ठानों में मुझे संमिलित होने के लिये पूज्यपाद ने आदेश दिया। म०म०पं० गिरिधर शर्मा, म०म० अनन्तकृष्ण शास्त्री, म०म० चिन्नस्वामी शास्त्री जी आदि दिग्गजों को सम्मिलित कराकर वेदार्थ चर्चा कराये। एवं अष्टग्रह योग के अवसर पर कलकत्ता नगरी में एक विराट यज्ञ का अनुष्ठान कराये जिसमें अतिरुद्र, सहस्त्रचन्दी, महाविष्णु के समान अनुष्ठान हुये।

पूज्यपाद एक सिद्ध महात्मा थे। आप की अपने तपोबल से सभी दर्शनों शास्त्रों में अप्रतिहत गति थी। इनके प्रवचनों में मालूम पड़ता था कि महासरस्वती नृत्य करती थी। आप काशी लक्ष्मीकुन्ड के पास वृन्दावन विहारीभवन में जब रहते थे तब चातुर्मास्य के समय में पढ़ने के लिये जाता था तब कहा वेद भाष्य एवं दुर्मतों के खंडन रूप से ग्रंथ लिखना चाहिये, लोग वेदार्थ को अपने मनमाने लिख कर प्रचार करते हैं, इसमें ध्यान दो यह आदेश हुआ। स्वयं लिखने लगे। केदारघाट गंगा महल में रहकर चातुर्मास्य के दिनों में 'वेदार्थ पारिजात' नाम के ग्रंथ की रचना हुई। उन दिनों में मैं भी कुछ लिखकर सुनाता था, वे प्रसन्न होकर मुझे लिखने को प्रेरित करते थे।

कलकत्ता में रहते हुये एक समय मैं परिवार के साथ मसूरी गया था। उन

दिनों में पूज्यपाद स्वामी जी अपनी तीर्थाटन करते हुये मसूरी पहुँचे। भाग्य विशेष से मैं जहाँ ठहरा था वहीं पूज्य स्वामी जी ठहरे थे। मेरे साथ कविराज श्री विद्या के साधक पं० सीताराम शास्त्री भी थे। यह संगम भाग्य से घटा। २०, २५ दिन स्वामी जी चरणों में सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। तन्त्रशास्त्र एवं मन्त्रशास्त्र के रहस्यों की पूज्य स्वामी जी विवेचना करते थे। अन्तर्मुख से उन्हें विदित हुआ कि मैं बाला एवं पञ्चदशाक्षरी से दीक्षित हूं तो वे अकस्मात एक दिन षोडशाक्षरी का उपदेश देकर पूजन के लिये श्री यन्त्र एवं नर्मदेश्वर देकर अनुगृहीत किये। मेरी पत्नी एवं कन्याओं को बाला का उपेदश किये। 'पुण्यः पुण्येन भवति' शास्त्र से पूज्य स्वामी जी के मसूरी आगमन से मैं तथा मेरा परिवार धन्य हुये। कविराज पं० सीताराम शास्त्री धन्य-धन्य हुये क्योंकि पूज्यपाद स्वामी जी के कर-कमलों से अभिषिक्त होने का सौभाग्य प्राप्त किये। मैं इस अभिषेक से वंचित रह गया।

पूज्यपाद श्री स्वामी जी को मैंने विविध दृष्टिकोण से अनुभव किया है, वे अन्तर्मुखी थे 'एकस्मिन् विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति' का वे आश्रय थे, एक ओर सनातन धर्म प्रचाकर होकर भक्ति एवं ज्ञान मार्ग का उपदेशक थे, दार्शनिक तत्त्वों से परिचित होकर महालेखक थे, हृदयंगम प्रवचनों से मूर्तिमान श्रीकृष्ण को श्रोता सामाजिकों के सामने खड़ा कर देते थे, कर्म, भक्ति-ज्ञान योगी के लक्षण उनमें समन्वित थे। आजकल की भयंकर भारत स्थिति के लिये महापुरुष पूज्य स्वामी जी की बहुत ही आवश्यकता है। मैं श्री विश्वनाथ से प्रार्थना करता हूं कि ब्रह्मलीन पूज्यपाद स्वामी जी के संस्मरण इस भयंकर स्थिति से पवित्र भारत को बचावें। मेरा दृढ़ निश्चय है कि भगवतत्व की अपेक्षा भागवतों का संस्मरण अधिक बलवान् है। मैं भक्तजनों से अनुरोध करता हूं कि पूज्यपाद स्वामी जी के नाम से एक पीठ की प्रतिष्ठा करें ताकि जनता को प्रेरणा मिलती रहे।

***

प्रातः स्मरणीय श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के वैदुष्य की एक झलक

–कालिका प्रसाद शुक्ल, भूतपूर्व आचार्य, सम्पूर्णानन्द
संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

शताब्दियों से विदेशी आक्रमणों द्वारा भारत जर्जर हो गया था, दारिद्रय की प्रभुता के साम्राज्य ने जन–मानस को जर्जर कर दिया था। बड़े–बड़े मेधावी अपने कर्तव्य से मुख मोड़ किसी प्रकार जीवन–यापन कर रहे थे, मैं क्या कहूं, मेरा कर्तव्य क्या है, मैं किस देश का निवासी हूं, उसके प्रति मेरा क्या कर्तव्य है, यह विचार कोसों दूर किसी अरण्यानी में विलीन हो गये थे। यह दशा केवल राजनीति के कोने में सिमट कर किसी प्रकार काल यापन कर रहे थे। उन लोगों की भी रसना कानूनों के निगड बन्धनों से अभिभूत होकर जड़ता का अनुभव कर रही थी। अधार्मिक अत्याचारों के मेघ की गर्जना कान में अंगुली डाल चुपचाप घर के कोने में बैठ रहने के लिये विवश कर रही थी, 'भारत धर्म प्राण देश है', इससे सभी लोगों को शिक्षा लेनी चाहिये, इत्यादि सूक्तियाँ मनु याज्ञवल्क्य की निजी सम्पत्ति है, यह समझने के लिये जन मानस बाध्य था। कहाँ तक गिनाया जाय ऐसी असंख्य विडम्बनाओं से भारत निगडित होकर जर्जर हो उठा था। अपेक्षा थी किसी विशेष आलोक की, किसी विशेष प्रतिभा की, किसी विशेष निर्भयता की किसी अदम्य शक्ति की।

यह भारत भू, वसुन्धरा के नाम से विख्यात है। इसमें विविध रत्न निहित हैं, जो समय समय से आवश्यकतानुसार उद्‌भूत होते रहते हैं। उपर्युक्त विषम वेला में एक दिव्य प्रकाश हुआ, कालीघटाएं शनैःशनैः तितर बितर होने लगी, कमल खिल उठें, उलूक अपने अपने घोसलों में अन्तर्हित हो गये, रक्त कौपीन सुशोभित दण्डधारी एक विशिष्ट पुरुष की गम्भीर ध्वनि ने दिशाओं को मुखरित कर दिया, ''न भेत्तव्यम्, न भेत्तव्यम्।'' जनता ने शांति का श्वास लिया, एक विश्वास मन में आया कि अब हम लोग भारतीय रह जायेंगे। हमारा मूलधन–धर्म सुरक्षित रह जायेगा, आसुरी शक्ति नष्ट हो जायेगी, दैवी सम्पत्ति का अभ्युदय होगा। जन–जन में धार्मिक चेतना समुज्वल हो उठी, हर हर महादेव के नारे ने आसुरी शक्ति का वक्षःस्थल बींध डाला। 'धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो,' इस गगन भेदी दुन्दुभि की ध्वनि ने आसुरी शक्ति के कर्ण–कुहरों को विदीर्ण कर दिया। जन–मानस में एक अपूर्व उल्लास जग उठा। यह कषाय कौपीनधारी, दंडशोभित हस्त, भस्मच्छुरित कपाल, तेतःपुञ्ज पिञ्जरित चतुर्दिक, प्रसन्न मुखकमल थे–स्वामी श्री हरिहरानन्द सरस्वती करपात्री जी महाराज। जिनके अनभि–भवनीय आलोक ने एक अपूर्व प्रकाश धार्मिक जगत पर फैलाया।

इस महामनीषी ने देश के कोने–कोने में पदाति भ्रमण कर 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान् निबोधत', 'धर्म एव हतो–हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षित:' 'धर्म न जह्यात जीवितस्यापि हेतो:' यह सन्देश जनता के कर्ण–कुहुर तक पहुँचाया। इतना ही नहीं अपितु इसका तात्विक अर्थ समझाकर प्रगाढ़ निद्रा में सोये हुये जनता की निद्रा एवं अकर्मण्यता नष्ट कर कर्तव्य मार्ग पर अग्रसर किया। देश की धार्मिक जनता में एक नयी चेतना आयी, अपने कर्तव्य का बोध हुआ, नया उत्साह हुआ, प्रमाद नष्ट हुआ, हर हर महादेव के नारे से आकाश गूंज उठा रामराज्य परिषद की स्थापना हुयी, जिसका उद्देश्य था–रामराज्य की स्थापना।

इस प्रसङ्ग में एक दो घटनाओं का उल्लेख करना अप्रसाङ्गि न होगा। जब प्रात: स्मरणीय श्री स्वामी जी धर्म की विजय–वैजयन्ती हाथ में लेकर देश में भ्रमण कर रहे थे, धाार्मिक संदेश से जनता को आप्लावित कर रहे थे। अपने यात्रा प्रसंग में एक बार मद्रास पहुँचे। वहाँ जनता ने भाषण देने के लिये स्वामी जी से अनुरोध किया। स्वामी जी की स्वीकृति मिल जाने पर भाषण किस भाषा में हो, इस बात के उधेड़–बुन होने के पश्चात् निश्चितु हुआ कि हिन्दी में भाषण को यहाँ के कम लोग समझेंगे संस्कृत की अपेक्षा। अन्तत: मद्रास के मनीषियों की प्रार्थना स्वीकार कर स्वामी जी संस्कृत में भाषण शुरु किये। भाषण की भाषा कहीं–कहीं कोमलकांत पदावली युक्त कालिदास का स्मरण करती थी तो कहीं–कहीं वाण भट्ट की समास समलांकृत लच्छेदार भाषा का। दार्शनिक विषयों का विस्फोरण विचित्र शैली से इस प्रकार प्रस्तुत करते थे कि बड़े–बड़े गहन विषय एक साधारण कहानी जैसे प्रतीत होते थे। भाषण की भाषा इतनी प्रवाहमयी थी कि वहाँ की पंडितमंडली को विवश होकर आपका वैदुष्य स्वीकार करना पड़ा। कतिपय विद्वान इस दृष्टि से आये थे कि स्वामी जी का हिन्दी भाषण अवश्य बेजोड़ है किन्तु संस्कृत में भाषण एक आश्चर्यजनक है। अत: उनकी भाषा की अशुद्धि पर कुछ विशेष ध्यान रहता था। यह प्रसङ्ग मुझको विदन्मूर्धन्य स्वर्गीय श्री रामचन्द्र दीक्षित ने तब सुनाया था जब मैं उनके साथ वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय में अनुसंधान विभाग में कार्यरत था। मैंने विनीत भाव से कुछ आशंकित हृदय से पूछा कि ''माननीय दीक्षित जी! स्वामी जी के भाषण में अशुद्धियाँ कितनी रही? दीक्षित जी ने भाव विह्वल होकर कहा कि एक भी नहीं, केवल अरण्य अर्थ में जंगल शब्द का प्रयोग स्वामी जी छूट से करते थे। मैंने कहा कि उत्तर भारत में इस अर्थ में जंगल का प्रयोग बड़े–बड़े विद्वान लोग करते हैं। तब दीक्षित जी ने, जिनको त्रिकांड अमर कोश कंठ था, कहाकि अमर कोश में अरण्य अर्थ के पर्याय में जंगल शब्द नहीं है। मैंने सशंक एवं सरल भाव से कहा अमर कोश में अवश्य अरण्य अर्थ में जंगल शब्द का प्रयोग होना चाहिये। माननीय दीक्षित जी का मेरे ऊपर वात्सल्य स्नेह था ही, उन्होंने कहा कि दिखाओ। मेरे पास माहेश्वरी टीका समलंकृत अमर

कोश रखा था। मैंने झट उसे उठाया और दैवात वही पृष्ठ निकाला, जिसमें अरण्य के पर्याय लिखे थे। मूल में जंगल न देखकर मेरे होश उड़ गये, किन्तु जब मेरी दृष्टि माहेश्वरी टीका पर पड़ी, जिसमें ''जंगल इत्यपि केचित्'' अंकित था। मैं स्वस्थ हुआ और दीक्षित जी का वह उद्गार–''तब तो एक भी अशुद्धि नहीं थी।'' गद्गद् स्वर से मेरी पीठ थपथपाते हुये उन्होंने कहा, जो मुझे आज भी स्मरण है।

एक दूसरे प्रसंग का उल्लेख करना भी अनुचित नहीं जान पड़ता। श्रीमद्भागवत में श्री राधा का कहीं भी उल्लेख नहीं है यह विषय पंडित मण्डली में बहुत जोर पकड़ा था, और इस पर कल्पनाएं और समाधान विद्वानों द्वारा किये जा रहे थे। स्वामी जी ने नारद घाट पर अपने चातर्मास्य के प्रसंग में भागवत प्रवचन में एक दिन इस विषय पर चर्चा प्रारम्भ कर दी, उसके समाधान में श्रीमद्भागवत के ''तातो'' इस शब्द की व्याख्या करते हुये ''तातश्च ताता च'' इस प्रकार एक शेष कर राधा शब्द का उल्लेख ''ताता'' शब्द से यह सिद्ध कर दिया।

इस प्रकार के अनेकों उदाहरण पंडित मंडली में आज भी चर्चा का विषय बने हुये है जिसका उल्लेख एक वृहत पुस्तकाकार में हो सकता है। मैं इस छोटे से लेख में श्री स्वामी जी के चरणों में अपना मस्तक झुकाता हुआ विराम कर रहा हूं।

***

''दुनिया में जितने जन्तु हैं वे सब भगवान के अंश हैं। 'सियाराममय सब जग जानी।' इस भावना के बिना काम नहीं चलेगा। इसका अर्थ यही है कि यदि तुम दूसरों से न्याय चाहते हो, तो दूसरों के साथ न्याय का व्यवहार करो। धर्म संघ इसी पर जोर देता है। लोक मान्य तिलक जी भी कहते हैं कि 'शास्त्र को न माने, तो भी अहिंसा को मानना पड़ेगा। सारांश–हम किसी को भी न सतावें और दूसरा हमें न सतावे। यह अन्तर्राष्ट्रीय नियम बनना चाहिये कि एक दूसरे को न सतावे।''

–करपात्र स्वामी

महान् त्यागी एवं तपस्वी

–सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

(यह लेख द्विवेदी जी ने १९७६ में महाराज श्री की पावन जयन्ती के अवसर पर लिखा था)

पूज्य स्वामी करपात्री जी महान् त्यागी, तपोनिष्ठ महात्मा हैं। उनकी विद्वता और वाग्मिता से सभी परिचित है। साधारणत: वीतराग महात्मा लोग लोक जीवन से दूर रहते हैं–'प्रायेण देव–मुनय: स्वविमुक्ति हेतो: मौनें चरन्ति विजनेन परार्थकामा।' परन्तु स्वामी जी थोड़ा उनसे भिन्न हैं। वे धर्म की रक्षा करने के लिए निरंतर समाज को प्रेरणा देते रहे हैं। मैं उनके बहुत निकट संपर्क में नहीं जा पाया परन्तु उनकी कथा में कभी–कभी शामिल हुआ हूँ और उनके युक्तितर्कपूर्ण शास्त्रीय प्रवचनों से प्रभावित हुआ हूँ। स्वामी जी की विद्वता और धर्म–निष्ठा का मेरे मन में बहुत आदर है।

स्वामी जी बहुत दृढ़ संकल्प के व्यक्ति है। उनका शास्त्रों के ऊपर पूर्ण अधिकार भी है और अडिग विश्वास भी है। वे धर्म को किसी प्रकार के रहस्यात्मक अनुभूति के रूप में ही नहीं मानते, वैयक्तिक और सामाजिक आचरणों के साथ अविच्छेद्य भाव से संलग्न मानते हैं। इन धर्म–संगत आचरणों को वे गतिशील और परिवर्तनशील नहीं मानते बल्कि स्थिर और शाश्वत रूप में स्वीकार करते हैं, ऐसी मेरी धारणा है। यह निष्कर्ष मैंने उनके कुछ थोड़े से प्रवचनों को सुनकर ही निकाला है। आजकल सामाजिक व्यवस्था को स्थिर और शाश्वत नहीं माना जाता। जिन बातों को हम लोग परम्परा क्रम से धर्म से जुड़ा हुआ मानते हैं उनके विषय में आजकल की शिक्षा प्रणाली में प्रशिक्षित लोगा आस्था नहीं रख पाते। इस शिक्षा प्रणाली को किसी जमाने में उदार शिक्षा या 'लिबरल एजुकेशन' कहा गया था और अब भी उसे वैसा ही समझा जाता है। इसमें धर्म, नीति और सामाजिक व्यवहार आदि को अलग करके सोचने की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया जाता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि 'धर्म' को किसी रहस्यात्मक या आध्यात्मिक अनुभूति के रूप में सीमित कर दिया गया है। सामाजिक व्यवस्था और नैतिक आचरण को इस प्रकार की अनुभूति से जोड़ने का कोई प्रयास नहीं किया जाता और अगर किया भी जाता है तो उसे साधारण मनुष्य के लिये सुलभ नहीं किया जाता। स्वामी जी के प्रवचनों को जहाँ तक मैंने समझा है, वे इन सारी चीजों को अलग करने के पक्ष में नहीं जान पड़ते। वे प्राचीन ऋषियों के द्वारा सुझाई गई व्यवस्था को अकुण्ठ चित्त से स्वीकार करने के पक्ष में है।

स्वामी जी ने केवल अपने प्रवचनों से ही इस शास्त्र–सम्मत वर्ण और आश्रम की व्यवस्था और धर्माचरण के शुद्ध शास्त्र सम्मत रूप को उजागर करने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि कर्मयोगी की भाँति उसे लोक जीवन में प्रतिष्ठित करने के उपाय भी किये हैं। इस प्रकार स्वामी जी जहाँ एक ओर त्यागी महात्मा हैं वही दूरी ओर लोक–संग्रह के निरंतर प्रयासशील कर्मयोगी भी हैं।

लेकिन इन दोनों रूपों के अतिरिक्त उनका जो तीसरा रूप है वह मुझे बहुत आकृष्ट करता है। कहना यह चाहिये कि उनका तीसरा रूप ही मुझे सबसे अधिक आकृष्ट करता है। यह तीसरा रूप है उनका भक्त रूप। अपनी प्रगाढ़ विद्वत्ता और अक्लान्त कर्मनिष्ठा के आवरण में वस्तुतः स्वामी जी महान् भगवद्भक्त हैं। भक्ति का कोई प्रसंग आते ही उनका वह प्रेमिक रूप सब कुछ को पीछे छोड़कर श्रोताओं को अभिभूत कर देता है। श्रीमद्भागवत उनका अत्यन्त प्रिय ग्रंथ है। उसकी कथा सुनाते समय वे प्रायः भगवान् के परम प्रेमिक रूप में अपने आपको निमज्जित कर देते हैं। स्वामी जी की यह निष्ठा उनके अन्तरतम का सबसे प्रभावशाली पक्ष जान पड़ता है।

स्वामी जी ने प्राचीन भारतीय परम्परा को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिये बहुत प्रयत्न किया है। संस्कृत साहित्य का, विशेषकर उसके विचार-पक्ष को, ऐसी युक्तिपूर्ण स्थापना बहुत कम लोग कर सकते हैं। परमात्मा ने ही उन्हें इस शुभ कार्य के निमित्त पृथ्वी पर भेजा है। मैं महान् त्यागी और तपस्वी स्वामी जी को अपनी हार्दिक प्रणति निवेदन करता हूँ।

***

''अपने सिद्धान्त पर दृढ़ निष्ठा पूर्वक अटल बने रहने से ही संघटन हो सकताक है। यदि सर्वत्र झूठ का ही प्रचार हो, तो किसी पर किसी का विश्वास नहीं रहेगा। विश्वास के न रहने पर संघटन या एकमत्य असम्भव है। हषोकेश के घोर जन में-जहां मनुष्यों का गन्ध तक नहीं-बड़े-बड़े सांड दूर-दूर बैठे हैं, बीच में निर्बल गायें और बछड़े रहते हैं। वे इस तरह अपनी रचना कर वहां डटे रहते हैं कि सिंह तक की हिम्मत नहीं पड़ती कि निर्बल पर आक्रमण करे। अतः बात पर डटे रहने से ही संघटन एवं अस्तित्व की रक्षा होगी।''

-करपात्र स्वामी

प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी

–डा० गजानन शास्त्री सुसलगांवकर भू०पू० मीमांसा,
धर्म–शास्त्र विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी।

महान् मीमांसक कुमारिल भट्टपाद और भगवत्पूज्यपाद आद्य शंकराचार्य के पश्चात् वैदिक धर्म एवं भारतीय संस्कृति के प्रति जनजागरण का कार्य महाराज श्री ने ही किया। ऐसे महान कार्यो को सम्पन्न करना साधारण मनुष्य की शक्ति के बाहर है। जनकल्याणकारी महान् कार्यों के सम्पादनार्थ स्वयं भगवान् ही अपनी 'यदा यदाहि धर्मस्य' की प्रतिज्ञा के अनुसार यथासमय किसी पुण्य पुंजशाली धर्माचरण सम्पन्न तेजस्वी महापुरुष के रूप में अवतीर्ण हुआ करते हैं। अवतारी पुरुष के सभी लक्षण महाराज श्री में उपलब्ध होते हैं। आज कितनी ही शताब्दियों से यज्ञ भगवान् को लोग भूले हुये से थे, किन्तु श्री स्वामी जी महाराज ने सर्वप्रथम राजधानी दिल्ली में यज्ञ भगवान् का विश्वकल्याणकारी मनोहर दर्शन जनता को कराया, तब से यज्ञानुष्ठान के प्रति ऐसा जनजागरण हुआ कि यत्र तत्र सर्वत्र अनेकानेक यज्ञ आज तक होते चले आ रहे हैं। जिसके फलस्वरूप आज के कराल काल में जनता को अन्न मिल रहा है। महाराज श्री के मुखारविन्द से प्रवाहमयी श्रीमद्भागवत कथा के श्रवण करते समय तो श्री शुकाचार्य की मूर्ति के दर्शन का ही आनन्द आ जाता था। श्रीमद् वृन्दावनधाम तथा वहाँ होने वाली भगवद्लीला की छवि, सरस कथा सुनते समय दृष्टिगोचर सी होने लगती थी। भगवच्चरणारविन्दों के प्रति श्रोताओं के मन में भक्ति का उन्मेष होने लगता था। महाराज श्री के मुखारविन्द से भागवत कथा श्रवण का सौभाग्य जिन्हें प्राप्त हुआ है, सचमुच वे धन्य हैं। बड़े भाग्यशाली हैं, क्योंकि पूज्यपाद स्वामी करपात्री जी महाराज के मंगलमय विग्रह के रूप में ब्रह्मसंज्ञक परमेश्वर के ही उन्हें दर्शन हुये हैं। भगवद्वतार स्वामी श्री करपात्री जी महाराज इस वर्तमान युग के महापुरुष थे। इस अवतारी महापुरुष ने समस्त जनता को उसके कल्याणार्थ 'श्रीराम जय राम–जय–जय राम' इस महामन्त्र का उपदेश दिया है। उसी तरह 'धर्म की जय हो अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो और विश्व का कल्याण हो' गो की रक्षा हो, गो माता की जय हो, हर हर महादेव' के उद्घोष के द्वारा जगाने का अथक प्रयत्न किया है, जिसके फलस्वरूप कोटि–कोटि जनता के मानस ने अब तो गो हत्या बन्द कराने का संकल्प ही ले लिया है। इस संकल्प बल के समक्ष शासन को अब झुकना ही पेड़गा।

स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् स्वतन्त्रता के बजाय प्रवर्तमान उच्छृंखलता के तूफान को अपने प्रवचनों द्वारा रोकने का प्रयास किया। श्रीमद्भागवत कथा के द्वारा लोगों के हृदयों में भगवद्भक्ति को जगाना राष्ट्र के स्वरूप को नष्ट करने वाले मर्यादा विरोधी कानूनों को रोकने के लिए धर्मानुकूल राजनीतिक प्रवचनों द्वारा भारतीय समस्त जनता को यथेष्ट सचेष्ट किया है। 'मार्क्सवाद और रामराज्य' नामक ग्रंथ की रचना कर तथा भारत राष्ट्र को विदेशी कम्यूनिज्म के उमड़ते प्रवाह में प्रवाहित होने से

बचाया। भारतीय राजनीति के यथार्थ स्वरूप से जनता को परिचित कराया। धर्मानुकूल राजनीति ही भारतीय राजनीति है और धर्महीन राजनीति तो विधवा स्त्री के समान है। ऐसी राजनीति सर्वदा निष्फल रहती है और यदि कोई किसी प्रकार से फल हुआ भी तो यह विपरीत नाजायज फल होता है। अपने भारत राष्ट्र में चिरपरिचित रामराज्य के आदर्श को पुनः स्थापना करते हेतु रामराज्य परिषद् नाम की संस्था का निर्माण किया और उसकी सदस्यता की समस्या को ऐसी सहजता से सुलझा दिया कि जिससे मानवमात्र रामराज्य परिषद का सदस्य बन सके। सदस्यता शुल्क रुपया-पैसा न रखकर केवल 'दीनदार और ईमानदार' होना ही रखा गया इस संस्था का उद्देश्य धन बटोरना न होकर एकमात्र रामराज्य का आदर्श स्थापित करना है।

प्रातः स्मरणीय भगवद्वतार पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की नव-नवोन्मेषशालिनी अद्भुत प्रतिभा, आश्चर्य चकित कर देने वाली शास्त्रानुकूल तर्कशैली, वेद विषयक वैदुष्य, समस्त दर्शनशास्त्रों में अद्भुत अनुपम पाण्डित्य, मन्त्र शास्त्र, तन्त्रशास्त्र, धर्मशास्त्र के गहन कानन में अप्रतिहत गति तथा समय-समय पर झलकने वाली प्रत्युत्पन्नमति एवं अदम्य स्मरणशक्ति व लेखन शक्ति को देखकर तो बड़े से बड़े देशी-विदेशी सभी विचारशील विद्वान् गद्गद् हृदय हो जाते हैं।

आराध्यचरण स्वामी करपात्री जी महाराज की धर्माचरणशीलता जन कल्याणकारी दृढ़ सिद्धान्तों की स्पष्टवादिता तो प्रसिद्ध ही हैं। महाराज श्री को दैनिक जीवनचर्या सभी के लिए अनुकरणीय थी, उनका त्रिकाल स्नान, त्रिकाल भगवदर्चन, नैमित्तिक विशेष पूजन, वेदांतादि भिन्न-भिन्न शास्त्रों का अध्यापान, सभी से मधुर संभाषण करना, सभी से सरल, निर्मल व्यवहार करना, सभी के प्रश्नों का समुचित समाधान करना, शास्त्रीय चर्चा करना, कथा-प्रवचनादि के आमन्त्रण का निषेध न करना उत्तररात्रि में जाग जाना, अनेक स्तोत्रों का नित्य पाठ करना, ब्रह्ममुहूर्त में नित्य परिभ्रमण करना और प्रतिक्षण भवन्नाम जप करते रहना, स्वल्पाहार करना, योग साधनानुष्ठानादि साधनाएं बड़ी ही प्रशंसनीय थीं जो निरवरोध नित्य यथासमय चलतीरहती थीं।

उक्त दैनिक कार्यों के अतिरिक्त लेखन का भी कार्य नियमित रूप से प्रतिदिन चलता था जिसके फलस्वरूप पूज्यपाद स्वामी करपात्री जी महाराज की पवित्र लेखनी से कितने ही ग्रंथों का निर्माण हुआ। उनके सभी ग्रंथ, तर्क की कसौटी पर कसे हुये और प्रमाण परिप्लुत मार्मिक विचारों का प्रतिपादन करते हैं। अभी अभी दो वर्ष हुये हैं 'वेदार्थ-पारिजात' नाम का एक विशालकाय ग्रंथ दो भागों में प्रकाशित हुआ है, धार्मिक विद्वानों के लिए वस्तुतः यह पारिजात अर्थात कल्पवृक्ष ही है। मस्तिष्क एवं दाम्भिक व्यक्तियों द्वारा किये जाने वाले आक्षेपों का मुँह तोड़ उत्तर देने वाला यह ग्रंथ एक अजेय ब्रह्मास्त्र ही है। इसके मनन, चिंतन करते रहने से बुद्धि की सूक्ष्मता, सद्विचारों की पुष्टता, तर्क शक्ति की प्रगल्भता प्राप्त होती है तथा शास्त्रार्थ समरांगण में विजय श्री का लाभ निश्चित रूप से होता है। किन्तु जो लोग, गुरुसेवापूर्वक ससम्प्रदाय शास्त्रों का

अध्ययन नहीं कर पाये किन्तु अपने मन ही मन-माने ढंग से वेदों और शास्त्रों की पुस्तकों को वांचकर वेद और शास्त्रों के पारगामी विद्वान अपने को समझते हैं, वे पण्डितम्मन्यता के ज्वर से ग्रसित होकर गोमाता के स्तन पर चिपके हुये (गोचिट चमोकन या चिकनी) नामक कृमिविशेष के तुल्य से पारिजात से ज्ञानामृत का लाभ नहीं ले पाते। तथापि यह कोई आश्चर्य की बात नहीं हैं। भले ही गोमाता के दुग्धामृत से सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित होता है, किन्तु स्तन पर जमा हुआ भी उक्त कृमिविशेष अपने दुर्भाग्य से उस स्तर से दूध का एक कतरा भी नहीं पाता, उसे जहा-तहाँ रुधिर ही रुधिर मिलता है।

वेदार्थ पारिजात की तरह भक्ति-सुधा ग्रंथ के द्वारा भक्ति भागीरथी के निर्मल पावन प्रवाह में निमज्जन उन्मज्जन का सौभाग्य सभी के लिये सुलभ कर दिया है। तथा चातुर्वण्य संस्कृति विमर्श, वेद स्वरूप विमर्श, अहमर्थ और परमार्थ सार आदि ग्रंथों की रचना के द्वारा वर्णाश्रम संस्कृति के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान, एवं तत्वज्ञान और वेद के विराट स्वरूप का दर्शन बुद्धिमान जिज्ञासुओं के लिये सुलभ करा दिया गया।

ऐसी सर्वतोमुखी प्रतिभा की दैवी सम्पत्ति साधारण मनुष्य को प्राप्त नहीं रहती, वह तो भगवद्वतारी दिव्य देहधारी सन्त महापुरुष को ही सुलभ रहती है। दिव्य शक्तियों के साथ ही सन्त भगवद्भक्त महापुरुषों की उत्पत्ति होती है। वे परमेश्वर के ही अंशावतार रहते हैं। जनकल्याणार्थ ही साक्षात् परमेश्वर अपनी दिव्य शक्ति के साथ स्वामी जी जैसे महापुरुष के रूप में अवतीर्ण होते है और निर्धारित कार्य को सम्पन्न कर पुनः अपने मूल स्वरूप को प्राप्त कर लेते हैं।

आज हम लोगों के बीच में से पूज्यपाद अनन्त श्री विभूषित स्वामी करपात्री जी महाराज का दिव्य पार्थिव शरीर सदा सर्वदा के लिये ब्रह्मलीन हो गया है। अब हम अपने इन चर्मचक्षुओं से उनके दिव्य शरीर का दर्शन नहीं कर पा रहे हैं। अब हम विद्वानों के लिये, कोटि कोटि धार्मिक जनता के लिए कोई अवलंबन नहीं रहने से हम सभी निराधार हो गये हैं, इसलिए अपनी स्वार्थहानि के कारण आज उनका कोटि-कोटि भक्तगण शोकाकुल हो रहा है।

वस्तुतः पूज्यपाद स्वामी करपात्री जी महाराज तो अशोचनीय हैं, प्रशंसनीय हैं, क्योंकि जो अपने कर्तव्य का पालन करके कृतकृत्य हो जाता है वही अशोचनीय प्रशंसनीय कहलाता है। महाराज श्री जिस कार्य के लिये अवतीर्ण हुये थे, वह कार्य उन्होंने पूर्ण किया और अपने मूल स्वरूप में पुनः लीन हो गये हैं। अतः उनके प्रति भक्तगणों को शोक करना कदापि उचित नहीं है। जो लोग माया में अहर्निश फंसे रहने से कर्तव्य का पालन नहीं कर पाते वे शोचनीय हुआ करते हैं, उनके लिये ही पराधीन लोक शोक किया करते हैं। किन्तु कर्तव्य का पालन करने वाले दिव्य महापुरुषों के प्रति तो श्रद्धाञ्जलि के सुरभित सुमन ही अर्पण किये जाते हैं। अतः पूज्यपाद श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में हार्दिक श्रद्धा-भक्ति के साथ उनका मनश्चक्षुओं से दर्शन करते हुये अपनी श्रद्धाञ्जलि को अर्पण कर रहे हैं। महाराज श्री स्वामी चरणों की कीर्तिकाया सर्वदा अमर रहेगी। ***

धार्मिक जगत की अलौकिक विभूति

–श्रीमदाद्य पंचखंडपीठाधीश्वर महात्मा रामचन्द्र वीर जी महाराज
पंचखंडपीठ, विराटनगर, जयपुर।

स्वामी करपात्री जी महाराज एक निर्भीक तथा तेजस्वी धर्माचार्य थे। वे ५० वर्ष से से अधिक समय तक भारत के धार्मिक अभियानों, धर्म प्रचार व धर्म रक्षा के कार्यों में अग्रगण्य रहे।

दिल्ली के यमुना तट पर स्वामी जी ने महायज्ञ कराया था उस प्रकार का महायज्ञ भारत में एक सहस्त्र वर्षों में नहीं हुआ था। इसी यज्ञ में उन्होंने सनातन धर्म के प्रचार व प्रसार तथा धार्मिक मर्यादाओं के संरक्षण की एक महती योजना बनायी थी। धर्म संघ के माध्यम से उन्होंने हिन्दुत्व की रक्षा व प्रचार का अभियान चलाया। संस्कृत व संस्कृति के वे सजग प्रहरी थे। संस्कृत के विद्वानों के तो वे समर्थ सहायक ही जो थे।

गोहत्या के कलंक को मिटाने के लिये जहाँ एक ओर मैंने अनशनों का सहारा लिया वही स्वामी करपात्री जी महाराज ने दिल्ली, मथुरा व कलकत्ता में सत्याग्रह का बिगुल बजाया। मेरे अनशनों का यह प्रभाव हुआ कि कई सरकारों को गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने को बाध्य होना पड़ा। गोहत्या के विरुद्ध चलाये गये मेरे अनशनों को हमेशा उनका समर्थन प्राप्त हुआ।

कैदियों की लाठियां भी उन्हें झुका न पाई

१९६६ में सर्वदलीय गोरक्षा महाभियान समिति के तत्वावधान में गोहत्या बन्दी की मांग को लेकर दिल्ली में विशाल आन्दोलन चलाया गया। स्वामी करपात्री जीने विशाल जत्थे के साथ सत्याग्रह करते हुये गिरफ्तारी दी। मैंने दिल्ली के केन्द्रीय कारागार में अनशन शुरु किया। स्वामी जी उस समय तिहाड़ जेल में प्रतिदिन दो घन्टे तक मेरे पास विराजकर अपना स्नेह प्रदान करते रहे। जेल में हजारों गोभक्त स्वामी जी के अमृतमय सदुपदेश को सुनने के लिये लालायित रहा करते थे।

स्वामी करपात्री जी महाराज एक दिन तिहाड़ जेल में हजारों साधु–सन्तों व गृहस्थों को कथा सुना रहे थे कि कारागार के घोर अपराधी बन्दियों से उन पर प्राणघातक हमला कराया गया। अपराधियों ने लोहे की छड़ों से करपात्री जी महाराज तथा साधु सन्तों पर प्रहार कर उन्हे आहत कर डाला था। मैंने स्वयं देखा था कि स्वामी जी के एक नेत्र का आवरण फट गया था। उनकी पीठ पर छड़ों के नीले प्रहार स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। भीषण आघात सहकर भी स्वामी जी ने हाहाकार नहीं किया। मैं जब उनसे मिलने गया तब वे मन्द हास और प्रसन्नतायुक्त वार्तालाप करते रहे। गो–माता की रक्षा के लिये, धर्म व संस्कृति के रक्षण के लिये वे बड़ी से बड़ी यातनाएँ सहज ही सहन कर लेते थे।

सिद्धान्तों से समझौता नहीं

सरकार ने अनेक साधु नामधारी नेताओं को अपने जाल में फंसाकर भारत साधु समाज का गठन कराया था। वे साधु धर्म विरोधी नेताओं की चाटुकारिता में नहीं हिचकिचाते थे। किन्तु स्वामी करपात्री जी तथा उनके अनुयायी धर्माचार्यों ने कभी भी धर्म विरोधी शासन से समझौता नहीं किया। गोहत्या के लिये जिम्मेदार नेताओं की प्रशंसा में एक भी शब्द निकालकर सरस्वती का अपमान नहीं किया। स्वामी करपात्री जी जहाँ भारत विभाजन का विरोध करते हुए जेल में बन्द हुये वहीं हिन्दू कोड बिल व गोहत्या के कलंक का विरोध करते हुये जेलों में यातनाएं सहन करने को सदैव तत्पर रहे।

स्वामी जी विद्वत्ता की अनोखी खान थे। भारतीय ही नहीं पाश्चात्य दर्शनों का भी उन्होंने गहन अध्ययन किया था। मार्क्सवाद और रामराज्य जैसे महान ग्रंथ की रचना कर उन्होंने यह सिद्ध कर दिया था कि वे संसार के विभिन्न दर्शनों के समान अध्येता तथा तर्क शास्त्री हैं।

स्वामी जी भगवान श्री राम व कृष्ण दोनों के परम उपासक थे। वे महान साधक, त्यागी तपस्वी व निस्पृह विभूति थे। उनका हर क्षण धर्म रक्षा के चिन्तन में व्यतीत होता था। निश्चय ही युग–युगों तक वे धार्मिक जगत में याद किये जाते रहेंगे।

***

साक्षात परब्रह्म-स्वरूप स्वामी जी

–श्री पं जानकी नाथ शर्मा

परमाराध्य शुद्धज्ञानस्वरूप स्वनामधन्य स्वामी श्री करपात्री जी का वास्तविक जीवन चरित्र लक्ष–कोटि पृष्ठों में भी सम्भव नहीं। वे शुद्ध ब्रह्म ही रहे हैं और विकास में एक रस रहेंगे। उन्हें शिव–विष्णु–शक्ति आदि का संयुक्त विग्रह मानना ही उचित है। उनकी ज्ञान, कर्म, शुभेच्छा शक्तियों का वर्णन कथमपि शक्य नहीं है। उनकी कृपा शक्ति–उपासना, प्रवचन, लेखन, धर्म संस्थापन कार्य–अवर्णनीय, अद्भुत अचिंत्य एवं सर्वथादिव्य, लोकोत्तर रहे हैं और रहेंगे। उनमें अनेक गुणों का समावेश था और है। वे साक्षात परब्रह्म परमात्मा ही हैं। जो उनका कार्य है वह जारी रहेगा, पूर्ण होकर रहेगा और जो हो रहा है सर्वथा स्तुत्य है।

***

वे दिव्य विभूति थे

–डा. कर्ण सिंह जी

जम्मू कश्मीर के भूतपूर्व नरेश

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज इस युग के धर्माध्यक्ष तथा धर्मशास्त्रो के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने सनातन हिन्दू धर्म के संवर्धन, संरक्षण के लिए जो सेवाएं की, गोरक्षण तथा देववाणी संस्कृत के प्रचार व प्रसार के लिये जो कार्य किये उन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता।

हिन्दू समाज के समक्ष आ रही चुनौतियों के सम्बन्ध में एक बार काशी जाकर मैंने महाराज श्री से विस्तृत चर्चा की थी। धर्म पर किये जा रहे आघातों से उनके हृदय में भारी टीस थी। विदेशी धन के बल पर धर्म परिवर्तन के कुचक्र, स्वाधीन भारत में भी गोहत्या जैसे कलंक का जारी रहना, पृथकतावादी शक्तियों द्वारा भारत को तोड़ने के षड्यन्त्र आदि समस्याओं से वे चिन्तित थे।

मैंने पहली भेंट में ही अनुभव किया कि इस प्रकार की दिव्य विभूतियां युगों के बाद पैदा होती हैं। उनके प्रति मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि हैं।

***

भक्तिरस के अलौकिक व्याख्याकार, काशी की अद्वैती संन्यासियों की परम्परा के मुकुटमणि

–पद्म भूषण आचार्य श्री बलदेव उपाध्याय, वाराणसी

(प्रस्तुत लेख स्वामी जी के जीवन काल में ही सुप्रसिद्ध विद्वान् आचार्य श्रीयुत पं० बलदेव उपाध्याय जी द्वारा लिखा गया था, जिसे भक्ति सुधा की भावमयी भूमिका से संकलित कर, वर्तमानकालिक क्रिया में ही यथावत यहाँ प्रस्तुत किया गया है।)

स्वामी जी की वाणी तथा लेखनी दोनों ही धार्मिक जनता को आकृष्ट करने के लिये अद्‌भुत क्षमता रखती है। उनकी मधुर वाणी का चमत्कार उनके अद्‌भुत भाषणों में दृष्टिगोचर होता है, तो उनकी प्रौढ़ लेखनी का प्रभाव उनके प्रमेय–बहुल ग्रंथों में भूरिशः अनुभव–गम्य बनता है। इस तथ्य को दृष्टान्तों के सहारे बताने की आवश्यकता नहीं है।

स्वामी करपात्री जी महाराज का व्यक्तित्व अलौकिक है जिसमें दृढ़ कर्मठता का दीर्घ तपस्या के बल से उपार्जित विशुद्ध ज्ञान का तथा सात्त्विक हृदय में उद्वेलित परमानन्द से आप्लुत भक्ति का मधुमय सामञ्जस्य सद्यः प्रस्फुटित होता है। जिस किसी विषय के विश्लेषण में उनकी शेमुषी संलग्न होती है, वह विषय गम्भीर से गम्भीरतम, कठिन से कठिनतम होने पर भी श्रोताओं तथा पाठकों के हृदय में अत्यन्त सारल्य का वेष पहनकर उपस्थित हो जाता है। उनके भाषणों एवं ग्रंथो दोनों की एक मधुर दिशा है जिन्हें सुनकर एवं पढ़कर व्यक्ति के हृदय में तत्तत् विषयों के प्रति किसी प्रकार के संशय का लेश भी विद्यमान नहीं रहता। इसे दैवी चमत्कार ही समझना चाहिये। शास्त्रीय तथ्यों के विश्लेषण के समय उनकी वाणी जितनी तर्कनिष्ठ एवं युक्तिप्रवण होती है, भक्ति रस के विवरण में वह उतनी ही मधुर, सरल–सुबोध एवं आनन्दप्रसविनी बनती है। 'रासपञ्चाध्यायी' के रहस्यों के उद्‌घाटन की ओर इसलिये उनकी वाणी स्वतः प्रवृत्त होती है और उसमें नये–नये भावों की अभिव्यञ्जना, नूतन अर्थों की अभिव्यक्ति एवं भगवल्लीला के नवीन आयामों की स्फूर्ति दिखलाकर यह श्रोताओं के हृदय को आनन्द से आप्लावित कर देती है।

स्वामी जी श्रीमद्‌भागवत के अद्‌भुत व्याख्याकार हैं, नूतन गूढ़ भावों की सरल भाषा में प्रकटीकरण की कला में उनकी अद्‌भुत क्षमता है। रासपञ्चाध्यायी की मनोहर कथा प्रति वर्ष चातुर्मास्य में काशी में अथवा अन्य स्थानों पर वे कहा करते हैं और प्रति बार वे नयी–नयी लीलाओं की कल्पना किया करते हैं। राधामाधव की निकुञ्जलीला में प्रवेश कर वे अपनी विलक्षण अनुभूति को सुनाकर विज्ञ श्रोताओं को रसविभोर बना डालते हैं। उनके व्यक्तित्व में मस्तिष्क और हृदय दोनों की उदात्त वृत्तियों के जगाने की, उद्‌बुद्ध करने की तथा संचालित करने की विलक्षण प्रतिभा है।

श्रीमद्भागवत का गम्भीर आयोजन तथा अनुशीलन मानवों के शुष्क तथा

अनुरागविहीन हृदय में सरलता का उत्स उत्पन्न करने में सर्वथा समर्थ होता है– इस विषय में दो मत नहीं हो सकते। श्रीमद्भागवत के अध्ययन तथा मनन से ही भक्तिशास्त्र की पूर्ण प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई–यह हम नि:सन्देह कह सकते हैं। भक्तिरस का उदय, अभ्युदय, विचार एवं विश्लेषण–सब कुछ श्रीमद्भागवत के ही व्यापक अनुशीलन का परिणत फल हैं और इस महनीय कार्य के सम्पादन का श्रेय मिलना चाहिये काशी के अद्वैतवेदान्त के मनीषी संन्यासियों को ही, जिनकी अनुकम्पा से भागवत का गम्भीर अर्थ सर्वसाधारण के लिये सरल–सुबोध बन सका। वे तो इसी विश्वनाथपुरी के एक महनीय अद्वैत–वेदान्ती संन्यासी थे–श्रीधर स्वामी। स्वामी जी की 'भावार्थदीपिका' व्याख्या से भागवत का गूढ़ार्थ खुलता है तथा खिलता है। चतुर्दश शती के पूर्वार्ध (१३०० ई०–१३५० ई०) में विद्यमान, नृसिंह के परम उपासक श्रीधर स्वामी काशी की ही विभूति थे। १०वीं शती में विद्यमान मधुसूदन सरस्वती केवल शुष्क ज्ञान मार्ग के अनुयायी अद्वैतवादी आचार्य नहीं थे, प्रत्युत भक्तिरस के व्याख्याता एवं भक्तिस्निग्ध हृदय से सम्पन्न एक महामान्य साधक थे। 'अद्वैत सिद्धि' जैस अद्वैतज्ञानमण्डित ग्रंथरत्न के प्रणेता होने के साथ ही साथ वे 'भक्तिरसायन' जैसे भक्ति रस को शास्त्रीय प्रामाण्य देने वाले ग्रंथ के रचयिता भी थे। चौसट्ठी घाट पर विद्यमान अपने मठ में रहने वाले मधुसूदन सरस्वती जी काशी की ही प्रतिभाशाली विभूति थे। १८वीं शती में विराजमान स्वामी नारायण तीर्थ ने जहाँ वेदान्त के मूर्धन्य ग्रंथों का प्रणयन किया, वहीं वे 'शाण्डिल्यभक्तिसूत्र' की 'भक्तिचन्द्रिका' व्याख्या लिखकर भक्ति के तत्त्व, प्रकार तथा साधना को वेदमन्त्रों के द्वारा प्रतिष्ठित करने वाले व्याख्याकार थे। वे भी वाराणसी के ही संन्यासी सम्प्रदाय के अलंकार थे। हमारे करपात्री जी महाराज भी काशी के इसी भक्तिमार्गी भागवती अद्वैती संन्यासियों की परम्परा के मुकुटमणि है। उन्होंने 'भक्ति रसार्णव' का प्रणयन देववाणी में कर भक्तिरस के स्वरूप का विवेचन गम्भीर शास्त्रीय पद्धति से किया है। यह ग्रंथरत्न पूर्वनिर्दिष्ट मधुसूदन सरस्वती के 'भक्तिरसायन' की शैली में निबद्ध किया गया है, परन्तु उससे अनेक बातों से विलक्षणता रखता है।

'भक्तिरस' का विस्तृत तथा गम्भीर विवेचन इस ग्रंथ का मुख्य उद्देश्य है, परन्तु स्वामी जी को इतने से सन्तोष नहीं है। उन्होंने 'रसस्वरूपविमर्श: नामक प्रकरण में साहित्यशास्त्र के आचार्यो के द्वारा निर्णीत तथा विवेचित उन नाना मतों का भी विस्तार से विवेचन किया है जिनका उल्लेख काव्यप्रकाश एवं ध्वन्यालोक में किया गया है। उन्होंने भगवान् तथा उनके नाम, रूप, लीला और धाम का विवेचन बड़ी गम्भीरता से भक्तिशास्त्र के निर्णीत सिद्धान्तों की शैली में वैशद्य के साथ किया है। इतना ही नहीं, राधाकृष्ण वेद तथा शास्त्रों के द्वारा भजनीय तत्व के रूप में मुख्यतया सिद्ध किये गये हैं– इस तथ्य का विवरण देकर उन्होंने इस विषय के शोधकर्ताओं के लिये नूतन सामग्री प्रस्तुत की है साकार भक्ति के विवेचन के संग में निराकार ब्रह्म की प्रतिपत्ति को भक्तिरूप सिद्ध कर

स्वामी जी ने 'भक्तिर्मुक्तिशताधिका' सिद्धान्त की पुष्टि वेद, शास्त्र तथा युक्तियों के सहारे विद्वत्तापूर्ण ढंग से की है। वेद के तत्वों का भी स्थान-स्थान पर उन्मीलन है। प्रसिद्ध पुरुषसूक्त तथा देवीसूक्त के परम तात्पर्य का निर्णय करने में स्वामी जी ने निर्मल प्रतिभा प्रदर्शित की है। निष्कर्ष यह है कि 'भक्ति रसार्णव' 'भक्तिरसायन' की तुलना में अनेक नवीन तथ्यों को अपने में समाविष्ट करने के कारण विशिष्टतापूर्ण ग्रंथ है-आलोचकों को इस विषय में संशीति रखने का रंचक मात्र भी स्थान नहीं है।

श्री स्वामी जी महाराज द्वारा प्रणीत ग्रंथ-भक्ति-सुधा-भक्तिरसार्णव का ही अनुपूरक ग्रंथ है। दोनों में सम्बन्ध है तथा पार्थक्य भी है। 'भक्तिरसार्णव' भक्ति का सिद्धान्त दर्शन प्रस्तुत करता है, तो 'भक्ति-सुधा' भक्ति के व्यवहार दर्शन की निदर्शिका है। फलत: दोनों ग्रंथो में उपकार्योपारक भाव विद्यमान है। स्वामी जी का यह मौलिक ग्रंथ उनकी तप:पूत लेखनी का नि:सन्देह अद्भुत चमत्कार है। इसमें वर्णित तत्व नितान्तहृदयावर्जक, भक्तिरसान्वित तथा परमानन्ददायक हैं। इन लेखों में स्वामी जी के श्रीमद्भागवत के गम्भीर अनुशीलन तथा हृदयानुरञ्जक है। आध्यात्मिक तत्वों के विवेचन में लौकिक उदाहरणों का समावेश कर स्वामी जी महाराज गम्भीर विषयों का निरूपण इतनी सरलता से सीधा भाषा में करते है कि वह श्रोता तथा वक्ता के हृदय में हठात् प्रवेश कर जाता है, विषय के अन्तरङ्ग का उन्मीलन करदेता है तथा नवीन तत्वोन्मेष से अभूतपूर्व उल्लास का सर्जन करता है। श्रीमद्भभागवत के परिचित पदों में भी शब्दों के व्युत्पत्तिलभ्य अर्थों का निरूपण कर उनकी वाणी रहस्य भावों की अभिव्यक्ति करने में सफल होती है-यह लेखक की स्वानुभूति है। 'रासपञ्चाध्यायी' के गम्भीर भावों को इतना सरस-सुबोध विवेचन लेखक ने कहीं अन्यत्र नहीं देखा जो एक साथ ही तुलनात्मक है, विमर्शात्मक है तथा रसात्मक है। गोपियों के स्वरूप का ही इतना साङ्गोपाङ्ग सरल प्रतिपादन अन्यत्र दुर्लभ है।

तथ्य तो यह है कि अनन्त श्री विभूति स्वामी करपात्री जी महाराज हृदयावर्जिका विमना वाणी के प्रेरक जैसे मनीषी हैं, वैसे ही वे ललित ललाम लेखनी के धनी हैं। वाणी तथा लेखनी का यह मञ्जुल सामरस्य किस विद्वान् को अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ नहीं होता? वे शास्त्र के मर्म को उन्मीलन करने वाले ऐसे समर्थ वाग्मी हैं जिनके विषय में कहा गया है-'वाग्मी भवति वा न वा।' वे खूसट वेदान्ती नहीं है जो वेदान्त के शुष्क तत्त्वों के चिन्तन में अपनी प्रतिभा का उपयोग करता है, प्रत्युत वे रसामृतमूर्ति, सौन्दर्यसारसर्वस्व भगवान् निकुञ्जबिहारी की निकुञ्जलीला के परमाराधक भक्तिरसाप्लुत उपासक हैं जिनकी कमनीय वाणी से भक्तिरस के मधुमय कण बिखर पड़ते हैं उनकी लेखनी की यह अभिनव प्रसूति 'भक्ति-सुधा' मस्तिष्क की वस्तु नहीं है, प्रत्युत उनके हृदय का आनन्दमय उल्लास है। यह दिमागी कसरत नहीं है, बल्कि दिल की उफान है।

***

सतत प्रवहमान त्रिवेणी

–फूलचन्द्र पाण्डेय

प्रातराराध्य शुचिचरण वेद–विग्रह पूज्य स्वमी श्री करपात्री जी महाराजके रूप में त्याग–तपस्या–वैराग्य, ज्ञान–भक्ति–कर्म, अद्वैत–द्वैत–द्वैताद्वैत, मन्त्र–तन्त्र–यन्त्र, धारणा–ध्यान–समाधि, सत्–ज्योति–अमृत, वैष्णव–शैव–शाक्त, मस्तिष्क–हृदय–प्रज्ञा, लेखन–प्रवचन–कथावाचन, यज्ञ–अनुष्ठान–कर्म–काण्ड, अध्यात्म–समाज–राजनीति प्रभृति अन्यान्य विस्मयी त्रिवेणी–त्रियोगी के पुंजीभूत तेजोमय विश्व–विश्रुत व्यक्तित्व का अवतरण इतिहास में द्रष्टव्य है नहीं। उनके दिव्य–दैवी गुणों का विशद–विस्मृत विवेचन मनस्वी–मनीषी विद्याधरों के उद्धरणीय–संग्रहणीय शिलालेखी लेख–प्रबन्धों से सुधी पाठकों की जिज्ञासा–पिपासा एवं विविध अध्यात्म–क्षुधा संतृप्त–निवृत्त होगी। महाराज श्री द्वारा विभिन्न विषयों, दिशाओं, क्षेत्रों में प्रदत्त नये आयामों, स्थापित उच्चतम कीर्तिमानों–मानदण्डों का डिण्डिमघोष धर्म, अध्यात्म एवं वैचारिक जगत् में सर्वत्र श्रूयमाण है।

अल्पज्ञ मतिमन्द (अक्ल 'मन्द'?) अकिंचन मैं इस महती श्रुतिमती विभूति के गुण गण–परिगणन में भी सर्वथा सक्षम–समर्थ नहीं हूँ। तब इस विराट् व्यक्तित्व के किसी भी पक्ष पर कुछ कहना–लिखना उच्च पादप स्थित फल को किसी बौने द्वारा उचक कर तोड़ने जैसा उपहास्य सायास प्रयास ही है–'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः'। स्वतः प्रमाण प्रमाणक को याथातथ्य प्रशस्ति–प्रत्र प्रदान करने की अर्हता–योग्यता कहाँ किसमें है? पुनरपि मूर्द्धन्य मनीषियों द्वारा महाराज श्री की विशिष्ट स्तुतियों में से एक का सश्रद्ध पाठ करने का लोभ संवरण अवश्य नहीं कर पा रहा हूँ–करता हूँ।

हमारे महामति धर्म सम्राट् तन्त्र विद्या में भी कितने निष्णात् पारंगत, उच्च स्थान प्राप्त थे, यह बात बहुशः प्रचलित–परिज्ञात नहीं है। दतिया स्थित पीताम्बर पीठ के परिचय–प्रसंग में विद्वद्वरेण्य डा. विद्यानिवास ने यह स्तवन इस प्रकार किया है–

"तन्त्र का वास्तविक अभिप्राय समझने वाले बहुत कम हुये और उसे अपने जीवनमें उतारने वाले और भी कम। मैं दो महात्माओं को तन्त्र में पारंगत रूप में श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हूँ। दोनों ब्रह्मलीन हो चुके हैं। एक तो पूज्य स्वामी जी दत्तिया (ज्ञातव्य है कि दतिया स्थित पीताम्बरा पीठ के संस्थापक इन स्वामी जी का न तो पूर्वाश्रम का कोई अता–पता था और न संन्यास आश्रम का ही कोई नाम) और दूसरे पूज्य श्री करपात्री जी। अद्वैत सिद्धान्त के विद्वान दोनों थे, दोनों ने श्री विद्या की विधिवत् साधना की थी, दोनों कठिन तपस्या से तपकर निकले थे। दोनों ने तन्त्र का रहस्य यही समझा था कि सबकी बात सोचो, सम्पूर्ण की बात सोचो, भूमा की बात सोचो, अल्प में सुख नहीं........."

अन्यच्चैकं वृत्तम् (एक और किस्सा)·····ब्रह्मवन्दनादि वेदों के वर्तमान युग में पहले आध्यात्मिक पृष्ठभूमि-विहीन, भारतीय मानसिकता से सर्वथा अपरिचित कुछ विदेशी संस्कृतज्ञो (विद्वानों नहीं) ने तथा बाद में प्रायः ऐसे ही कतिपय भारतीयों ने भाष्यकार कहलाने के मोह में मनमाने शब्दार्थ कर अनर्गल प्रलाप युक्त अनुवाद कर डाले। इन सबसे वेदमाता के बाह्याभ्यन्तर सौन्दर्य स्वरूप को तो विकृत किया ही उसका केशकर्षण जन्य लज्जास्पद असह्य पापापर पर्याय अपमान भी किया कराया। वेद शास्त्रों के विप्रकृष्ट ज्ञान की इस दुरवस्था से परिखिन्न अवसन्न उद्विग्न वेदाग्रही शीर्षस्थ विचारकों-विद्वानों ने विनयावतन ही स्वामी करपात्री जी से वेदों के साधना-साधित प्राचीन आचार्यों के परम्परागत भाष्यों एवं मूलात्मस्वरूप की रक्षार्थ भाष्य लिखने का अनुरोध किया। करुणार्द्र स्वामी जी ने चिरन्तन महत्व के इस गुरुतर कार्य भार का वहन कर वेद भाष्य के भूमिका भाग 'वेदार्थ पारिजात' शीर्षक वृहत् ग्रंथ का पहले प्रकाश कराया। स्वभावतः असहिष्णु तथा विरोध-प्रवृत्ति-ग्रस्त आर्य समाजी बन्धुओं से न रहा, सहा गया। उन्होंने उत्तर स्वरूप 'वेदार्थ कल्पद्रुम खड़ा कर दिया। मैंने एक सज्जन जो वेदों के अंग्रेजी भाषा में अनुवाद-कार्य में संलग्न हैं, से कहा कि इस पंक-प्रक्षेपण की क्या आवश्यकता थी तो वह बोले के करपात्री जी का ग्रंथ खण्डन परक है। अतः उत्तर तो देना ही हुआ। मैंने बताया कि जादू तो सिर चढ़कर बोल गया-'वेदार्थ पारिजात' तो अन्तरराष्ट्रीय स्तर के एक लाख रूपये के सर्वोच्च 'विश्व भारती ' पुरस्कार से सम्मानित हो गया। अब आप अपने फल-छाया-विहीन 'कल्पद्रुम' (कल्पित द्रुम!) को विज्ञापन और प्रदर्शन के क्षेत्र से बाहर कही एकान्त कक्ष-कोण में भूमिगत कर उसे अस्तित्व की रक्षा करते रहिये।

इस प्रकार एकान्ततः धार्मिक एवं खण्डन परक ग्रंथरत्न पर उक्त पुरस्कार जिसका चयन अधिकारी विद्वानों, विशेषज्ञों के निर्णायक मण्डल ने किया, के माध्यम से पूज्य करपात्री जी महाराज के प्रखर पाण्डित्य, चरम वेद वैदुष्य, उत्कृष्टतम लेखन आदि को विश्व स्तर पर शिरोधार्य स्वीकृति अथ च मान्यता स्वतः सहज सम्भव हो गई।

महाराज श्री की ज्ञानामृतवर्षिणी, मनस्तोषिणी समलंकृत सरस वाणी-वाग्मिता के रसपान हेतु तो डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी, डा. बलदेव उपाध्याय, डा. सीताराम चतुर्वेदी सदृश सारस्वत समाज श्रोता रूप में उनके प्रवचन, कथा, कथा-आयोजनों में समुपस्थित रहता था। वस्तुतः 'अभिनव शंकर' के ब्रह्मवर्चस्वी चमत्कारी व्यक्तित्व, ज्ञान-विज्ञान से भरित-पूरित विपुल वाङ्मय, अज्ञानान्धकार संवारक सुधोपम सदुपदेशों की सतत् प्रवहमान त्रिवेणी में अवगाहन कर जनमानस अभीष्ट पुण्य-प्रसाद फल भावच्चन्द्र दिवाकर प्राप्त करता रहेगा। उनकी अमल-नवल-धवल दिगन्त व्यापिनी कीर्ति कौमुदी सदा सर्वदा सत्य सनातन-पथ आलोकित करती रहेगी।

***

प्रकाण्ड विद्वान : श्री स्वामी करपात्री जी

–स्वनामधन्य ब्रह्मलीन भक्त रामशरण दास, पिलखुवा।

धर्म की जय हो, अमर्ध का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो एवं विश्व का कल्याण हो–के उद्घोषक तथा गोरक्षा आन्दोलन के सूत्रधार श्री स्वामी करपात्री जी के नाम से विख्यात दण्डी संन्यासी श्री स्वामी हरिहरानन्द जी सरस्वती देश के उन निर्भीक एवं हिन्दूराष्ट्रवादी संन्यासियों में से थे जिनके प्रति भारत के ही नहीं विदेशों तक के हजारों व्यक्ति श्रद्धाभक्ति रखते थे।

जन्म–जात वैरागी बालक हरनारायण ने १६ वर्ष की आयु में ही घर छोड़ दिया। वह निकल पड़े किसी योग्य गुरु की खोज में और इसी समय उनकी भेंट प्रयाग के समीप कुरेश्वर नामक ग्राम में स्वामी श्री ब्रह्मानन्द जी सरस्वती (जो आगे चलकर ज्योतिष्पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य हुए) से हुयी। उन्होंने आदेश दिया कि 'तुम साङ्गवेद विद्यालय, नरवर (बुलन्दशहर) जाकर अभी अध्ययन करो एवं शास्त्रों में पाण्डित्य प्राप्त करो तदुपरान्त संन्यास लेना उचित है।' अध्ययन के उपरान्त हरनारायण ने हिमालय में जाकर घोर तपस्या की तथा कई वर्षो की कठिन साधना के पश्चात् लगभग २४ वर्ष की आयु में पूज्य ब्रह्मानन्द जी सरस्वती जी महाराज से काशी में दण्ड ग्रहण किया। कठिन व्रत पालन करते मात्र कोपीन धारणा करते, कर (हाथ) पर रखकर ही भोजन करते इसी कारण 'करपात्री जी' के नाम से सम्बोधित किया जाने लगे। सर्वत्र इनकी ख्याति फैलने से अनेक विद्वान इनकी ओर आकर्षित हुये जिनमें महामहोपाध्याय पं. गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, पं. कालूराम शास्त्री, पं. अखिलानन्द, शास्त्रार्थ महारथी पं. माधवाचार्य शास्त्री आदि के नाम प्रमुख हैं। विश्व कल्याण कामना से स्वामी जी ने अनेक यज्ञानुष्ठान सम्पन्न कराये। सनातन हिन्दू धर्म के संरक्षण के लिये सन् १९४० में 'धर्म संघ' नामक संस्था की स्थापना की। जब स्वामी जी ने देखा कि कांग्रेसी नेता मुस्लिमलीग के साथ गठबन्धन करके भारत को खण्डित कराकर पाकिस्तान बनाने की योजना स्वीकार कर रहे हैं–तो अखण्ड भारत के प्रबल समर्थक स्वामी करपात्री जी का हृदय हाहाकार कर उठा। उन्होंने सम्पूर्ण देश में भ्रमण करके हिन्दू जनता को पाकिस्तान के खतरे से सावधान किया तथा भारत को खण्डित करने के विरोध में प्रदर्शन करते हुये गिरफ्तार कर लिये गये।

स्वामी करपात्री जी ने भारत के स्वतन्त्र होते ही सम्पूर्ण गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाने की माँग की और २६ अप्रैल १९४७ को उन्होंने गोहत्या बन्दी हो, भारत अखण्ड हो के उद्घोषों के साथ संसद भवन पर प्रदर्शन किया उन्हें गिरफ्तार करके लाहौर जेल भेज दिया गया। सत्याग्रह चलता रहा पुनः मथुरा में सत्याग्रह स्वामी जी को पुनः बन्दी बनाकर आगरा जेल में डाल दिया गया । स्वामी जी ने गोरक्षा आन्दोलन में अनेकों बार जेल यातनाएँ सहन की।

कांग्रेसी शासन ने हिन्दुत्व को जड़ से समाप्त कर डालने के लिये हिन्दू

कोडबिल बनाने की घोषणा कि तो स्वामी करपात्री जी ने अपने अनन्य सहयोगी स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी के साथ इस बिल के विरोध में जबरदस्त आन्दोलन चलाया–पुनः उन्हें जेल यात्राएं करनी पड़ीं।

स्वामी जी का जीवन प्रारम्भ से ही संघर्षपूर्ण रहा है, वह अपने शास्त्रीय सिद्धान्तों पर हिमालय की तरह दृढ़ व्यक्तित्व के महापुरुष थे। वह समझौतावादी नहीं अपितु दृढ़ सिद्धान्तवादी थे। जिस सयम 'भारत साधु–समाज' नामक संस्था हिन्दू धर्म विरोधी कांग्रेसी शासन के प्रचार का साधन बनी हुयी थी उस समय स्वामी करपात्री जी निर्भीकतापूर्वक कांग्रेसी शासन की नीति का डटकर विरोध करने में संलग्न थे।

स्वामी करपात्री जी जहाँ शास्त्रार्थ महारथी, ओजस्वी वक्ता एवं प्रकाण्ड विद्वान थे वहाँ उनकी लेखनी में भी ओज था 'मार्क्सवाद और रामराज्य' नामक उनके ग्रंथ ने समस्त विश्व का ध्यान आकर्षित किया है जिसमे सम्पूर्ण पाश्चात्य दर्शनों की अकाट्य समालोचना है।

स्वामी करपात्री जी धर्म और राजनीति को अलग–अलग नहीं मानते। वह धर्म नियन्त्रित राजनीति के प्रबल समर्थक रहे। उनके मतानुसार 'धर्मनिरपेक्ष' का अर्थ 'हिन्दू विरोध' था। प्रधान मन्त्री इन्दिरा गांधी एवं अन्यों ने जब स्वामी जी पर गो रक्षा आन्दोलन की आड़ में राजनीतिक लाभ उठाने का आरोप लगाया तब स्वामी जी चुनावों की ही उपेक्षा करके दूसरी बार पुनः सत्याग्रह में कूद पड़े और जेल चले गये– आरोप लगाने वालों की आँखें खुल गयीं। स्वामी जी ने सिद्ध कर दिया कि उनकी दृष्टि में गोमाता की रक्षा का महत्व अधिक है, चुनावों का नहीं। जब देवी इन्दिरा जी ने स्थान–स्थान पर जाकर यह आरोप लगया कि – अंग्रेजों के समय गो रक्षा की माँग करने वाले कहाँ चले गये थे–तो स्वामी जी ने तत्काल उत्तर दिया था कि–'देवी जी को यह ज्ञान होना चाहिए– कि १८५७ के स्वाधीनता संग्राम से लेकर १९४६ तक हिन्दू अनेक बार गोरक्षा की न केवल माँग करते रहें अपितु गोहत्यारों के सिर काट–काट कर स्वयं भी फाँसी पर चढ़ते रहे। मंगलपाण्डेय, कूकासरदार रामसिंह, करारपुर के वीर गोभक्तों एवं हजारों अन्य गोभक्तों की गाथाएँ प्रधानमन्त्री जी ने पढ़ी होती तो यह निराधार बात न कहती।'

एक पुरानी घटना जो स्मृति पटल पर उभर रही है उसका उल्लेख करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। लगभग ५० वर्ष पूर्व प्रयाग कुम्भ के शुभावसर पर जब पूज्य श्री करपात्री जी पैदल विचरते थे, हाथ पर खाते थे, वृक्षों के तले रहते थे तो हम एक सुप्रसिद्ध सन्त पूज्य श्री योगानन्द जी महाराज एवं उनके अंग्रेज शिष्य राइट साहिब को लेकर उन्हें पूज्य स्वामी करपात्री जी का दर्शन कराने ले गये थे। पूज्य योगानन्द जी अमेरिका में रहते थे, जिनके लाखों अंग्रेज (विदेशी) शिष्य थे वह अपने अनेकों शिष्यों के साथ कुम्भ पर पधारे थे। वे लोग भी महाराज के दर्शन कर बड़े प्रभावित हुये। अमेरिका जाने पर एक हजार पृष्ठ के अंग्रेजी ग्रंथ में उन्होंने पूज्य करपात्री जी का भी बड़े सुन्दर शब्दों में वर्णन किया है। वह ग्रन्थ हिन्दी में भी छपा

है। उक्त ग्रंथ में प्रकाशित मिस्टर राइट की डायरी के कुछ शब्द पाठकों की जानकारी हेतु यहाँ उद्घृत करके लेख को विराम देते है:–मिस्टर राइट लिखते हैं कि–

"……हम लोग कार से उतर कर पैदल चले, रास्ते में साधुओं की धूनी का घना धुआँ भरा हुआ था, वालू में पैर धंस जाते थे। अन्ततः हम लोग मिट्टी और घास–फूस से बने छोटे–छोटे कुटीरों के समूह के बीच पहुंचकर एक कुटीर के सामने खड़े हो गये। प्रवेश द्वार बिल्कुल छोटा और किवाड़हीन था। ………यह था अपनी असाधारण विद्वता के लिए प्रसिद्ध युवक साधु करपात्री जी का आश्रम। यहां पर वे धान के पीले चमकीले पुआल के बिछौने पर पालथी मारे (धरती पर) बैठे थे, उनके शरीर पर जो एक मात्र वस्त्र था–और सम्भवतः एक मात्र सम्पत्ति भी वहथा एक गैरिक वस्त्रखण्ड जिसे उन्होंने कन्धों पर ओढ़ रखा था। ………हम लोगों ने किसी चौपाये के समान रेंगकर उस कुटी में प्रवेश किया और उनके चरणों में प्रमाण किया। उस समय उनके मुखमण्डल पर दिव्य हंसी खेल रही थी, प्रवेश द्वार पर एक लालटेन टिमटिमा रही थी, जिसके हिलते ही प्रकाश में कुटिया की दीवारों पर भिन्न भिन्न प्रकार की छायाएँ भी नाच रही थी। साधु महाराज के नेत्र प्रसन्नता से चमक रहे थे। उनकी श्वेत दन्तपंक्ति की शोभा देखते ही बनती थी, यद्यपि मैं उनकी हिन्दी समझ नहीं पाता था, तथापि उनके मुख के भाव सहज ही समझ में आ जाते थे। वे उत्साह् प्रेम और आध्यात्मिक गरिमा से ओत–प्रोत थे, उनकी महानता के विषय में किसी को सन्देह नहीं हो सकता।

"……..भौतिक विश्व के प्रति अनासक्त व्यक्ति के सुखी जीवन की कल्पना कीजिये। वस्त्र समस्या से मुक्त, भोजन के लिये विविध व्यंजनों की इच्छा से मुक्त, एक एक दिन के अन्त से रांधा गया भोजन ग्रहण करने में नियम का पालक, हाथ में भिक्षापात्र तक नहीं, धन की झंझट नहीं, रुपये पैसे के स्पर्श से दूर, परिग्रह वृत्ति से दूर, ईश्वर में सदैव प्रगाढ़ विश्वास, यातायात की चिन्ता नहीं–वे किसी वाहन पर नहीं चढ़ते, किन्तु निरन्तर पवित्र नदियों के किनारे किनारे पर्यटन करते रहते हैं, आसक्ति से दूर रहने के लिये वे किसी भी स्थान पर एक सप्ताह से अधिक नहीं रुकते।……और कैसा विनम्र भाव है उनका वेदों के असाधारण ज्ञाता। उनके चरण तलों में बैठते समय मेरे मन में एक भव्यता की भावना जागृत हो उठी। ऐसा प्रतीत हुआ कि उनका यह दर्शन वास्तविक और प्राचीन भारत को देखने की मेरी इच्छा का प्रत्युत्तर है, क्योकि वे आध्यात्मिक महापुरुषों की इस भूमि के सच्चे प्रतिनिधि हैं……।" एक विदेशी पर्यटक मिस्टर राइट की २५ जनवरी १९३६ की डायरी का यह भावनात्मक ऐतिहासिक पन्ना उन प्रकाण्ड विद्वान् पूज्य स्वामी करपात्री महाराज के अप्रतिम स्वरूप की ५० वर्ष की अलौकिक झांकी प्रस्तुत करता है–स्वामी करपात्री जी के जीवन का क्षण क्षण, देश, धर्म और गौ की सेवा में व्यतीत हुआ–उनके अनन्त चरित्रों का वर्णन अशक्य हैं कुछ अस्फुट से वाक्यों को एकत्र भर कर दिया है इन्हीं वाक्यों की शब्दाञ्जलि उन अनन्त, शब्द ब्रह्म में प्रबिलीन उन ब्रह्मस्वरूप स्वामी करपात्री को समर्पित है।

धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री महाराज की ब्रह्मलीनता से आस्तिक गोरक्षक समाज की अपूरणीय क्षति

–डा. रघुनाथ शर्मा, एम.ए., पी.एच.डी., प्राध्यापक
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डाधिष्ठान परात्पर परब्रह्म आनन्दकन्द परमानन्दघन पूर्णतम पुरुषोत्तम श्रीमन्नारायण ही अपनी वेद शास्त्रानुमोदित धर्मसेतु की रक्षा के लिए 'सम्भवामि युगे युगे' के न्याय से अनन्तानन्त श्रीविग्रहों में आविर्भूत होता है। उस अनन्त के विस्तार का अन्त नहीं, अतएव विभूतिमत् सत्व अथवा श्रीमदूर्जित तत्व उसके अपने ही दिव्याँश का आविर्भाव अथवा स्वात्मलीला विलास ही है। वह ही था धर्म सम्राट् अनन्त श्री सम्वलित स्वामी श्री करपात्री महाराज के श्रीविग्रह में मूर्तिमान।

'शास्त्रयोनि' अथवा शास्त्रैक समधिगम्य सच्चिदानन्द पूर्णतम अक्षरतत्व वेदादि सच्छास्त्रानुमोदित सत्य सनातन–धर्म, भारतीय संस्कृति, दर्शन, यज्ञपरम्परा एवं राजतन्त्र की रक्षा के लिए प्रायः ७६ वर्ष पूर्व विक्रम सम्वत् १९६४ के श्रावणमास के शुक्लपक्ष की द्वितीय रविवार (ईस्वी सन् १९०७) की श्री पं. रामनिधि ओझा जी को आलोकित करता हुआ अपनी लोक लीला का संवरण करके माघ शुक्ल चतुर्दशी विक्रम सम्वत् २०३८ रविवार, तदनुसार फरवरी ७, १९८२ को श्री विश्वनाथधाम वाराणसी में अपने दिव्यधाम में लीन हो गया। वह लोकविश्रुत धर्म सम्राट् अथवा अभिषिक्त अभिनव शंकराचार्य अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये हरनारायण अथवा ब्रह्मानन्द हो गया। जिस भगवुदुद्देश्य अर्थात् धर्म संस्थापनार्थाय वह तेजपुञ्ज इस धराधाम पर अवतीर्ण हुआ उसमें उसे अद्भुत साफल्य की प्राप्ति हुई। वह आजीवन श्रुति, युक्ति एवं अनुभव के आधार पर शास्त्रीय सनातन धर्म, हिन्दुत्व एवं गोमाता के विरोधियों के श्रुत्याभासों, युक्त्याभासों एवं अनुभवाभासों का अपनी सशक्त वाणी एवं लौह–लेखनी से खण्डन करते रहे। वह सनातन जगत् के प्राण में तथा वह ही थे लौह–महापुरुष।

जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रम जी महाराज के ब्रह्मी भाव काल से धार्मिक जगत् की जो सशक्त कड़ियाँ टूटनी आरम्भ हुई उनमें विद्यावागीश पं. दीनानाथ सारस्वत, शास्त्रार्थ महारथी पं. माधवाचार्य, पूज्यपाद स्वामी नरोत्तमाश्रम ही महाराज (मन्त्री स्वामी जी), महात्मा गुरुचरणदास जी, स्वामी परमानन्द सरस्वती तथा पिलखुवा के सन्त भक्त शरणदास थे। उन कड़ियों का महान कड़ा स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के ब्रह्मीभूत से टूटा। अब तो स्तम्भ ही गिर गया। सनातन जगत् प्रायः अनाथ हो गया।

शास्त्रीय पक्ष का विरोध प्राच्य हो अथवा पाश्चात्य, कार्लमार्क्स, स्वामी दयानन्द सरस्वती, पं. मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी, स्वामी रामदेव, मध्वाचार्य स्वामी विद्यामान्य तीर्थ, श्री माधव सदाशिव गोलवल्कर, श्री राहुल सान्कृत्यायन या फिर सर्वथा सिद्धान्त शून्य आचार्य रजनीश आदि श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की अकाट्य तर्क शक्ति एवं लेखनी से परास्त हुये। विदेश यात्रा के अशास्त्रीय पक्ष का समर्थन करने वाले अपने निकटतम सहयोगी शास्त्रार्थ महारथी श्री पं. माधवाचार्य शास्त्री जी का खण्डन भी श्री चरणों ने अपनी लौह-लेखनी से किया। श्री चरणों की युक्तियाँ एवं तर्क सदैव अकाट्य रहे।

ऋतम्भरा प्रज्ञा के धनी स्वामी श्री करपात्री जी महाराज आजीवन धर्म, संस्कृति, संस्कृत एवं हिन्दी भाषा के प्रचार में संलग्न रहे। उनके लिये धर्मरक्षा एवं गोरक्षा प्राय:पर्यायवाची शब्द थे। उनका व्यक्तित्व शास्त्र ग्रंथों में प्राप्त ऋषि तत्व का मूर्तिमान स्वरूप था। इस मन्वन्तर के चौबीसवें त्रेता युग में अवतरित मर्यादा पुरुषोत्तम कौसल्य-शुक्ति-मौक्तिक भगवान् श्री रामचन्द्र 'विग्रहवान् धर्म' कहाए तो यदि यह कहूँ कि इस ही मन्वन्तर के अठ्ठाईसवें कलियुग के इस प्रथम चरण में अवतीर्ण श्री स्वामी करपात्री जी महाराज भी मूर्तिमान धर्म अथवा रूपान्तर परिणत मर्यादा पुरुषोत्तम ही थे तो अत्युक्ति नहीं होगी। उनके श्रीविग्रह में आद्य जगद्‌गुरु श्री शंकराचार्य के ज्ञान, महाप्रभु चैतन्यदेव की भक्ति एवं व्यास-वसिष्ठ, मनु-नारद-शुक्र-बृहस्पति, कामन्दक आदि के प्रशासनतन्त्र की त्रिवेणी का साक्षात्कार होता था। प्राणियों में सद्‌भावना एवं विश्व कल्याण के तो वह प्रमुख सूत्रधार थे। वेदादि सच्छास्त्रों का वह अगाध पाण्डित्य, लेखनी एवं वाणी का अद्‌भुत ऐश्वर्य एवं ओज-प्रसाद-माधुर्यादि अब कहाँ प्राप्त होगा?

इस प्रकार के अगणित गुण-गण-गरिमा सम्पन्न आदर्श युग-महापुरुष का आकस्मिक ब्रह्मीभूत हो जाना मात्र धार्मिक जगत् का ही नहीं अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र एवं विश्व की अपूरणीय क्षति है। अपने जीवन काल में श्री चरणों ने सनातन धर्म पर होने वाले सभी प्रहारों को अपने ऊपर लिया, शेष आस्तिक जगत सर्वथा निश्चिन्त रहा। यदि वह निश्चिन्तता अथवा औदासीन्य अब भी बना रहा तो लुटेरे घर लूट ले जावेंगे। अवशिष्ट महापुरुषों को सचेत ही नहीं अपितु सचेष्ट रहना भी आवश्यक है। इस सम्बन्ध में गम्भीर चिन्तन की घड़ी अब सिर पर आ पड़ी है।

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की वाणी में प्राणशक्ति एवं सार्वकालिक शाश्वत मूल्य निहित थे। प्राय: दो वर्ष पूर्व श्री वृन्दावनधाम स्थित धर्म संघ महाविद्यालय रमणरेती में श्री चरण होली पर्व के दिनों निवास कर रहे थे। प्राय: प्रत्येक वर्ष इन दिनों महाराज श्री इस पावनधाम एवं स्थल में निवास श्रीमद् भागवदीय रासरहस्य पर प्रवचन किया करते थे। महाराज श्री के मुख से श्रीमद्‌भागवतप्रसंग श्रवण से ऐसा

अनुभ्व होता था माना साक्षात्गोपेश्वर महादेव ही भगवद्भक्ति रसाप्लावित हो भगवद् गुणानुवाद कर रहे हों। हाँ तो दो वर्ष के उस निवास के अवसर पर पूज्यपाद श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के करकमलों से ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर, स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम स्मृति समिति की विधिवत् स्थापना हुई। स्मृति समिति की स्थापना सेपूर्व वहाँ स्थानीय रामराज्य परिषद् की बैठक में श्री चरणों के समक्ष परिषद् की समस्याओं पर विचार विमर्श चल रहा था। प्राय: सभी वक्ताओं का मुख्यबल कार्य-कर्ताओं की न्यूनता और औदासीन्य पर था। स्मृति-समिति एवं रामराज्य परिषद् के सम्बन्ध से यह शरीर वहाँ उस समय उपस्थित था। कार्यवाही के अन्त में श्री चरणों ने अपने उद्बोधक प्रवचन में कहा, "आप अन्य लोगों की सहायता की बात क्यों करते हैं? यदि आपको अपने उद्देश्य की साधुता पर विश्वास है तो अकेले ही चल पड़ो। जिसको आना होगा स्वयं ही आ जायेगा। कोई आवे और आपकी सहायता करे तो ही आप चल पावें तो यह तो आपकी ही उदासनीता एवं अकर्मण्यता को स्पष्ट करेगा। आपको सदैव ऐसी स्थिति के लिए कटिबद्ध रहना चाहिये जिसमें अपने समुद्देश्य की प्राप्ति के लिये आपको अकेले ही चलना पड़े। सन्मार्ग में प्रवृत्तजीव की सहायता भगवान् स्वयं करते हैं- श्री चरणों के श्रीमुख से निर्गत यह वाक्य वेदशास्त्रानुमोदित सत्य सनातन धर्म, वर्णाश्रम व्यवस्था एवं सम्पूर्ण गोवशं की रक्षा में प्रवृत्त साधुजनों के मार्ग को सदैव आलोकित करेंगे। उन्हें इस पावन वाणी में सदैव सम्बल प्राप्त होगा।

विदेशी शासन के कट्टर विरोधी श्री स्वामी करपात्री जी महाराज यद्यपि भारत की अखण्डता के प्रबल पक्षपाती थे तथापि कभी भी इस देश को अपनी मातृ-पितृ भूमि मानने वाले मुसलमानों के विरोधी नहीं थे। भारत विभाजन के पश्चात् श्री चरण अपने सार्वजनिक भाषणों में कहा करते थे, "एक वेदीन, बेईमान तथा धर्मशास्त्रानुमोदित धर्म पर विश्वास न रखने वाले एक हिन्दू की अपेक्षा एक दीनदार, ईमानदार मुसलमान को जिसे अपने कुरान हदीस शरीफ रोजा नमाजादि पर विश्वास है हजार गुना अच्छा है। इस प्रकार के मुसलमान से नहीं अपितु उस प्रकार के हिन्दू से देश को खतरा हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि एक हिन्दू सच्चा हिन्दू तथा एक मुसलमान सच्चा मुसलमान रहे।" श्री स्वामी जी महाराज हिन्दू-मुस्लिम सद्भाव के पक्षपाती है। छल-बल से किये जाने वाले धर्म-परिवर्तनों के वह सदा विरोधी थे।

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज शास्त्रीय-जन्मना वर्णाश्रम मर्यादा के पक्षपाती थे तथा हरिजनों को हिन्दू समाज का अभिन्न अङ्ग मानते थे। हरिजनों के प्रति की जाने वालनी अहिंसा, द्वेष भावना एवं अत्याचारों के प्रबल विरोधी थे। हरिजनों के देवदर्शन के सम्बन्ध में श्री स्वामी जी कहा करते थे, "सार्वजनिक मन्दिरों में ऐसे नियम बनने चाहिये, जिनके अन्तर्गत जहाँ से शंकराचार्य, काशी नरेश और हम लोग दर्शन करते हैं वहीं से

हरिजन भी दर्शन कर सकें।'' यह नियम स्वामी जी द्वारा निर्मित मन्दिरों में प्रचलित था। हरिजनों को भी अनावश्यक राजनीति से प्रेरित होकर धर्म द्वेष का परिहार करना चाहिये।

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज वेदादि सच्छास्त्रों, रामायण, महाभारत एवं पुराणों के विश्व कोष थे। इस आर्ष वाङ्मय का विरोधी भले ही देशी हो अथवा विदेशी वह श्री चरणों के तर्कों के समक्ष नतमस्तक हुआ। उनकी लौह–लेखनी से प्रसूत ५० से अधिक सद्ग्रंथ श्री चरणों के लोकोत्तर वैदुष्य एवं भारतीय संस्कृति के प्रति उनको उदात्त भावनाओं के ज्वलन्त उदाहरण हैं। धर्म के क्षेत्र में 'वेदार्थ–पारिजात', दर्शन के क्षेत्र में 'शाङ्कर–भाष्य–शंका–मीमांसा', इतिहास के क्षेत्र में 'रामायण मीमांसा', सामाजिक क्षेत्र में 'विचार पीयूष', भक्ति के क्षेत्र में 'भक्ति रसार्णव' तथा राजनीति के क्षेत्र में 'मार्क्सवाद और रामराज्य' उनके प्रतिनिधि ग्रंथ है।

सुनते थे ब्रह्मीभूत होने से प्रायः डेढ़ वर्ष पूर्व से स्वामी जी महाराज का स्वास्थ्य निर्णायक स्थिति में नहीं था। उन दिनों ऐसा कहा जाता था कि श्री चरणों की स्थिति ऐसी थी जिसमें उन्होंने अपने पराये को पहचानना भी छोड़ दिया था। वह भले–बुरे का अन्तर किये बिना सबको अच्छा ही कहते थे। मेरे विचार से ब्रह्मविदवरिष्ठ तत्वीभूत महापुरुष श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के सम्बन्ध में इस प्रकार का प्रलाप अनुचित है। लोक लीला संवरण की भावना से प्रेरित होकर श्री स्वामी जी महाराज ने काशीवास का निर्णय लिया तथा अपने मूलभूत तत्व अद्वैत में प्रवेश कर गये। उस स्थिति में 'अकार्पण्य' एवं 'अजाति' ही है–'यथा न जायते किञ्चिज्जायमानं समन्ततः' –अथवा 'तस्मादेवं विदित्वैनमद्वैते योजयेत्स्मृतिम्–अद्वैतं समनुप्राप्य जड़वल्लोकमाचरेत्।' अथवा–'तत्वीभूतस्दारामस्तत्त्वानप्रच्युतो भवेत्।' श्री चरण विषयक यह प्रसाद तत्वज्ञों का परितोषक है। अतएव उस अवस्था में निर्णयादि लेने से विमुखता ही थी, असमर्थता नहीं। उस काल में भी आवश्यकता पड़ने पर श्री चरणें ने ऐतिहासिक निर्णय लिये, यथा धर्म–संघ शिक्षा मण्डल की मार्गशीषें कृष्ण सं० २०३८ तदनुसार नवम्बर १६, १९८१ की बैठक के निर्णय।

सम्भवतः गोलोक में एकत्रित इस काल के कतिपय गोभक्तों, ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज, श्री जयदयाल गोयनका, भाई हनुमान प्रसाद पोद्दार, पं० दीनदयाल जी सारस्वत, भारत गोसेवक समाज के प्राण लाला हरदेव सहाय, शास्त्रार्थ महारथी पं० श्री माध्वाचार्य ही शास्त्री पूज्यपाद स्वामी श्री नरोत्तमाश्रम (मन्त्री स्वामी), स्वामी परमानन्द सरस्वती, गोभक्त भामाशाह लाला लछिमनदास अग्रवाल, पिलखुवा के सन्त भक्तरामशरणदास सुप्रसिद्ध सनातनी नेता श्री मदनगोपाल सिंहल मेरठ आदि अनेकों सन्तों ने वहाँ बैठक की होगी तथा की होगी गोरक्षाके गम्भीर प्रश्न को मीमांसा। इस विषय के सबल नेतृत्व के लिये उन महापुरुषों ने धर्म सम्राट् को वहां बुला लिया। यह सभी महापुरुष वहाँ गोलोक में संगठित प्रयास

करेंगे तथा इस भू लोक में इस पुनीत कार्य में प्रवृत्त आचार्यों सन्तों एवं महापुरुषों को अपना सशक्त आशीर्वाद एवं शक्ति प्रेषित करेंगे। इस महा सम्बल को प्राप्त कर तथा इन महापुरुषों के उच्चादर्शों को ध्यान में रख जो भी सम्प्रदाय एवं बालिदान किये जायेंगे वह भगवत्कृपया विफल नहीं जावेंगे।

ब्रह्मीभूत अनन्त श्री स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का श्री विग्रह अब इस लौक में नहीं रहा परन्तु कृतित्व ग्रंथ महारत्न हम लोगों के बीच उनका वाङ्मय श्री विग्रह है। उनके यह सद्ग्रंथ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आस्तिकों का मार्ग निर्देशन करेंगे। वह युगस्रष्टा आदर्श महापुरुष थे। उनका ब्रह्मभाव प्राप्त करने से एक और युग की समाप्ति हो गयी।

इस प्रकार के विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न महापुरुष का आकस्मिक ब्रह्मीभाव को प्राप्त हो जाना सारे राष्ट्र के लिए अपूर्व एवं अपूरणीय क्षति है। उनके अभाव में जगतगुरु श्री शंकराचार्यों, धर्माचार्य, साधु–सन्त महापुरुषों का उत्तरदायित्व सहस्त्रगुणित हो गया है। श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की समस्त शिष्य एवं भक्तमण्डली का परम कर्तव्य है कि पारस्परिक भेद–भाव एवं रागद्वेष का सर्वतोभावेन परित्याग करके उनके द्वारा निर्दिष्ट एवं उपदिष्ट सन्मार्ग का अनुसरण करते हुये वेदादि सच्छास्त्र प्रतिपादित सत्य सनातन धर्म, वर्णाश्रमव्यवस्था, गोवंशरक्षा तथा राष्ट्र रक्षा में इस प्रकार प्रवृत्त हों जिससे धर्म की जय, अधर्म का नाश, प्राणियों में सद्भावना, विश्व का कल्याण, गोमाता की जय एवं गोहत्या बन्दी हर हर महादेव की कृपा से अविलम्ब सिद्ध हों तथा धर्म निरपेक्ष शासनतन्त्र के स्थान पर धर्म सापेक्ष्य पक्षपातविहीन रामराज्य की विजय पताका सर्वत्र सहराए। उन्हीं के इन ईश्वरीय उद्देश्यों में सफलता की शक्ति वह 'भूत तत्व' परमेश्वर सबको प्रदान करें।

***

'विधर्म परधर्म से बचकर स्वधर्मपालन करते हुये भगवान की आराधना करने पर ही लौकिक, पारलौकिक उन्नति तथा अन्त में भगवान् की प्राप्ति होती है। इसी से अभीष्ट की सिद्धि होगी और संघटन का भी यह सीधा–सादा रास्ता है। आपके पड़ौसी मुसलमान बन्धु पाँच–पाँच बार नमाज पढ़कर–परमेश्वर की उपासना करते है, क्या आपको अपने शास्त्र, धर्म तथा अपनी उपासनाओं में वैसा प्रेम है? आप लोग टोला टोला मुहल्ला–मुहल्ला, ग्राम–ग्राम, नगर–नगर में धर्म शंघ की शाखायें बनाएं, सत्सङ्ग, कीर्तन, कथा आदि का प्रबन्ध करें, इससे आपको बल मिलेगा, सुधार का अवकाश मिलेगा।'

आध्यात्मिक विभूति करपात्री जी

–सत्येन्द्र कुमार गुप्त, प्रधान सम्पादक दैनिक आज
(काशी संस्करण) वाराणसी

'काशी की आध्यात्मिक विभूति स्वामी करपात्री जी के तिरोधान से आध्यात्मिक तथा धार्मिक क्षेत्र की अपूरणीय क्षति हुई है। आप पिछले महीनों में अत्यन्त अस्वस्थ थे किन्तु इधर धीरे धीरे स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। माधी पूर्णिमा के सन्धि काल पर आपका महाप्रस्थान विशेष दृष्टव्य वरदपुत्र थे। आपने रामराज्य परिषद्, धर्म संघ, धर्म संघ शिक्षा मण्डल की स्थापना कर वैदिक धर्म के प्रसाद तथा आध्यात्मिक जागृति का महान कार्य किया था। काशी में आपने कुछ वर्ष पूर्व केदार घाट पर वेद शास्त्रानुसन्धान केन्द्र की स्थापना की थी। आप वैदिक विज्ञान और भागवत धर्म के महान पण्डित थे। देश में आध्यात्मिक और सांस्कृतिक जागरण के लिये आपने 'सन्मार्ग–दैनिक', पाक्षिक–'सिद्धान्त' तथा 'धर्म–चर्चा' नामक पत्र पत्रिकाओं का संस्थापन और प्रकाशन किया। गोरक्षा के आन्दोलन को भी आपने व्यापक रूप प्रदान किया था। धार्मिक साधना, अनुष्ठान और व्याख्यान प्रवचनों में व्यस्त रहने पर भी आपने अनेक गौरव ग्रन्थों का प्रणयन किया है। उसमें 'वेदार्थ–पारिजात', 'रामायण–मीमांसा', 'श्री विद्या–रत्नाकर', 'भक्ति–सुधा', 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'संघर्ष और शान्ति', 'पूंजीवाद, समाजवाद और रामराज्य',–विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। आपके लेखन में जैसे अगाध पाण्डित्य का दर्शन होता है वैसा ही वैदुष्य आपके भागवत और मानस के आध्यात्मिक प्रवचनों से भी परिलक्षित होता था। देश के अनेक शंकराचार्य, सन्त महात्मा, विद्वान् आपके प्रवचनों तथा व्याख्यानों से मार्ग दर्शन प्राप्त करते थे। उत्तर प्रदेश के राज्यपाल ने काशी आकर सरकार की ओर से आपकी सारस्वत साधना का सम्मान किया था। आप आध्यात्मिक क्षेत्र की महान विभूति थे। धार्मिक तथा सांस्कृतिक उन्नयन, भारतीय वैदिक–परम्पराओं के संरक्षण एवं संवर्धन में आपका योगदान चिरस्मरणीय रहेगा। वैदिक शास्त्रानुसन्धान केन्द्र तथा धर्मसंघ शिक्षा मण्डल की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक प्रवृत्तियों को सजीव और सतत गतिशील रखना ही उनका सच्चा स्मारक तथा सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

***

"शत शत प्रणाम"

–ईश्वर देव मिश्र सम्पादक 'दैनिक जनवार्ता' प्रकाशन (प्रा.लि.) वाराणसी।

धर्म सम्राट करपात्री जी महाराज के ब्रह्मीभूत होने की खबर से न केवल हिन्दू धर्मावलम्बियों को आघात लगा है अपितु अन्य धर्मों के अनुयायी भी मर्माहत हुए है जो दूसरे धर्म को आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। स्वामी जी के निधन से भारतीय धर्म, दर्शन, वेदान्त, मीमांसा, पुराण, शास्त्र, संस्कृत–साहित्य आदि का अन्यतम विद्वान उठ गया। वे विद्या, ज्ञान, त्याग, तपस्या और अध्यात्म साधना की प्रतिमूर्ति थे। भारतीय दर्शन और संस्कृत साहित्य के अगाध विद्वान स्वामी करपात्री जी ने अपने जीवन के पचास वर्ष हिन्दू धर्म शास्त्रों के गहन विवेचन और शास्त्रसम्मत हिन्दू संस्कृति की रक्षा और उन्नयन में लगाये। उन्होंने धर्म की जय, अधर्म का नाश, प्राणियों में सद्भावना और विश्व के कल्याण की हमेशा हमेशा कोशिश की थी। वे कट्टर पन्थी धर्मावलम्बियों से अलग मानव मात्र के कल्याण की भावना से देश के आध्यात्मिक और नैतिक उत्थान के लिए सदैव जूझते रहे। मूर्तिपूजा, अवतारवाद, वर्णव्यवस्था आदि के समर्थक होते हुए भी असहिष्णु नहीं थे। उन्होंने सनातन धर्म की ध्वजा को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाने की दृष्टि से आदि शंकराचार्य के अधूरे कार्य को आगे बढ़ाने का लक्ष्य लेकर अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ की स्थापना की। संस्कृत और धर्मशास्त्रों के अध्ययन–अध्यापन को आगे बढ़ाने की दृष्टि से उन्होंने शिक्षा मण्डल के तत्वावधान में संस्कृत विद्यालयों की स्थापना की और इस दिशा में अपने धर्मानुयायियों को प्रेरित किया।

स्वतन्त्रता के बाद अब लोकतन्त्रीय शासन व्यवस्था कायम हुयी तो स्वामी जी ने धर्म नियन्त्रित राजनीति और अर्थनीति का सिद्धान्त प्रतिपादित किया और रामराज्य परिषद की स्थापना कर धर्म और राजनीति को समन्वित करने का प्रयास किया। चूंकि वे राजनीति के आदमी नहीं थे इसलिये इस कार्य में उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली। हिन्दी, हिन्दू, संस्कृत, गौ और राष्ट्ररक्षा के लिये प्राणों की आहुति देने के वे पक्षधर थे। सदाचार को चरित्र का आधार मानने वाले इस महात्मा ने शिक्षा को भी धर्म सम्मत रखने पर बल दिया था। इन्होंने देश के विभिन्न भागों में शतमुख कोटि, लक्षचण्डी, अतिरुद्र, महाविष्णु, शतचण्डी आदि यज्ञ किये और बड़े–बड़े नास्तिकों को आस्तिक बनाया। इस महान त्यागी और तपस्वी महात्मा ने अपनी विद्वत्ता और वाग्मिता से समाज को हमेशा लोक कल्याण और धर्माचरण के लिये अनुप्राणित किया है। वीतराग महात्मा होते हुए भी इन्होंने लोक जीवन से अपना सम्पर्क बनाये रक्खा, क्योंकि वे लोक कल्याण चाहते थे।

स्वामी जी ने 'सन्मार्ग' दैनिक और 'सिद्धान्त' पत्रिका के माध्यम से आम आदमी के समक्ष आदर्शोन्मुख यथार्थ रखने का संकल्प लिया था उसमें भी वे काफी हद तक सफल हुए थे किन्तु कालान्तर में परिस्थितियों वश वह मिशन पूरा नहीं हो

पाया और उन्हें अपने पत्रों के कई संस्करण बन्द करने पड़े। उन्होंने अपने समाचार पत्रों के माध्यम से विद्वानों और पत्रकारों को उचित सम्मान दिया और काशी में तो सन्मार्ग के जन्म के साथ ही सम्पादकीय विभाग के लोगों के लिये सम्मान-जनक पारिश्रमिक मिलना प्रारम्भ हुआ। स्वामी जी की शव यात्रा में काशी एवं देश के विभिन्न भागों से जितना बड़ा जनसमूह उमड़ आया था वह उनकी लोकप्रियता का सबूत था। उनके ब्रह्मीभूत होने के सम्बन्ध में जो समाचार मिला है वह इस बात का संकेतक है कि उन्होंने अपनी इच्छानुसार शरीर त्याग किया है। नियमित रूप से पूजा-पाठ करके एक शुभ मुहूर्त में उनका ब्रह्मलीन होना उनके जैसे योगियों, तपस्वियों के ही वश की बात है। धर्मप्राण सनातनी जनता के लिये स्वामी जी का निधन वज्रपात के समान है। फिर भी उनके करोड़ो भक्त यह मानकर कि जिसे इस संसार में आना है उसे जाना भी है, इस आघात को स्वीकार करेंगे। स्वामी जी को सही श्रद्धाञ्जलि यही होगी कि सम्पूर्ण मानव समाज जीवन में नैतिक मूल्यों को महत्व दे और मानवता के कल्याण के लिये कार्य करें। हम इस महामानव के श्री चरणों में अपना शत शत प्रणाम अर्पित करते हैं।'

***

श्री चरणों में शत शत प्रणाम

-भगवान दास अरोड़ा, सम्पादक दैनिक 'गाण्डीव' वाराणसी

हिन्दुत्व रक्षक शिरोमणि श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के स्वर्ग गमन का समाचार सुन कर कौन हिन्दू होगा जिसे आघात न पहुँचा होगा। हिन्दू धर्म, संस्कृति और सभ्यता की रक्षा में महाराज श्री ने अपना सारा जीवन लगा दिया। धार्मिक जगत में उन्हें अद्वितीय स्थान प्राप्त था, धर्म क्षेत्र में जहां कहीं भी कोई विवाद उठा खड़ा होता था, श्री स्वामी जी की व्यवस्था उसमें निर्णायक मानी जाती थी। यदि ऐसा कहा जाय कि महाराज जी आदि शंकराचार्य के ही अवतार थे तो गलत न होगा। भगवान शंकराचार्य की ही भाँति करपात्री जी महाराज ने भी तीन तीन शंकराचार्यों को पीठासीन कर उस परम्परा को अक्षुण्य बनाये रक्खा।

विद्वत्ता में वर्तमान युग में उनका कोई सानी नहीं था। किसी को उनके विचारों से सहमति हो या न हो, उनके अकाट्य तर्कों के सामने तो हर व्यक्ति नतमस्तक हो जाता था।

गौरक्षा हेतु स्वामी जी महाराज ने अनेक बार देशव्यापी आन्दोलन चलाये तथा हिन्दूवादी हिन्दू कोड बिल के विरुद्ध भी गहरा संघर्ष किया जो हिन्दुत्व के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में उल्लिखित होगा।

हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान के करपात्री जी महाराज अनन्य समर्थक और पोषक थे। इसके लिये उन्होंने अनेक सारगर्भित ग्रन्थ लिखे तथा 'सन्मार्ग', 'धर्म-चर्चा' और 'सिद्धान्त' नामक अनेक पत्र-पत्रिकाओं का वाराणसी और कलकत्ता से प्रकाशन किया जो आज भी जारी है।

हिन्दू धर्म का जो स्वरूप उनके मन में था उस पर कभी उन्होंने समझौता नहीं किया। यही कारण था कि काशी विश्वनाथ मन्दिर में हरिजन प्रवेश होने पर उन्होंने उस मन्दिर का बहिष्कार कर अलग से अपने 'नये विश्वनाथ मन्दिर' की स्थापना कर ली और फिर कभी काशी विश्वनाथ मन्दिर में दर्शन-पूजन करने नहीं गये।

हिन्दू धर्म की उस महान विभूति को खोकर आज हिन्दू अपने को अनाथ समझ रहा है। उनके तिरोधान से हिन्दुत्व की जो महान क्षति हुई है, वह कभी पूरी न की जा सकेगी।

धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो-महाराज श्री के यह जयघोष इतने प्रसिद्ध हुए कि यह जन-जन के घोष बन गये और सच कहा जाए तो इन चार जयघोषों के माध्यम से महाराज श्री ने हिन्दू धर्म का जो सन्देश संसार को दिया, रहती दुनिया तक वह मानवमात्र के श्रोतों को पवित्र करता हुआ भारत के धर्म संस्कृति और सभ्यता की श्रेष्ठता की अमिट छाप विश्व भर में मुखरित करते रहेंगे।

हरिजनों के मन्दिर प्रवेश के प्रश्न पर तथा हिन्दुत्व की परिभाषा पर महाराज श्री के मान्यताओं से सहमत ने होते हुए भी श्री चरणों के प्रति हमारे मन में अपार श्रद्धा और सम्मान था और सदैव रहेगा। उनके स्वर्गगमन पर आज हम अपनी ओर से 'गाण्डीव' के लाखों पाठकों की ओर से हिन्दू मात्र की ओर से उनके श्री चरणों में शत-शत प्रणाम करते हैं।

***

श्री करपात्री जी

–पं. बालकराम जी शास्त्री,
प्राचार्य श्रीचण्डी संस्कृत पाठशाला हापुड़

भगवन्। आपकी स्मृति में आपके पादारविन्द के दर्शन हो रहे हैं, अतः श्रद्धा पूर्वक विहित भूयोभूयः अभिवादन स्वीकार हो।

अभितो ब्रह्म निर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम्।।

एक समय ऐसा था जब प्रातः स्मरणीय श्री करपात्री जी महाराज तथा जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्राम जी महाराज, दोनों तपस्वी सन्त (नर नारायण स्वरूप) जनता को स्वधर्म पालन का उपदेश करते हुये नग्नपद यात्रा करते थे, उस यात्रा में हापुड़ के उत्तर असौड़ा ग्राम से बाहर मन्दिर के समीप जब ये सन्त सहयोगियों के साथ विश्रामार्थ विराजमान थे तब जन समूह उनके स्वागत के लिये तथा दर्शन लाभ पाने के लिये अधिक संख्या में उपस्थित था, मैं भी हापुड़ से गया था। उनके समीप बैठकर चरण स्पर्श का लाभ लेते हुये मैंने देखा कि उनके चरण तक में कांटे चुभे हुये हैं, प्रयत्न करके काँटे निकाल दिये वह स्थिति संदेश दे रही थी कि करपात्री जी देहाध्यास से उठ गये हैं। ब्रह्म विद् ब्रह्मैव भवति।

उनका सर्वस्व विश्व के लिये समर्पित था (स्वदेशे भुवनत्रयम्) विश्व का कल्याण हो। परोपकाराय सतां विभूतयः – के आप उदाहरण थे, सदाचार, स्वधर्म पालन के आदर्श थे। अनेक अवसर, कुम्भ पर्व आदि के समय में उनके श्री मुख से निःसृत वचनामृत सुनने को मिले। वृन्दावन में श्रीमद् भागवत की व्याख्या करते समय उनका स्वरूप दर्शनीय था, जिस प्रसंग में बोल रहे हैं। मानो उसी देश काल में उपस्थित हो–जन समूह मूक–शान्त उनकी ओर निहार रहा था। वे धन्य थे। प्रतिपक्षियों से शास्त्रार्थ विचार भी सुना। उनका कहना था –'वादे वादे जायते तत्व बोधः।'

अनेक ग्रंथों को लिखकर प्रकाशन के पश्चात् वेदार्थ पारिजात जैसा ग्रन्थ लिखकर अपना ज्ञान व अनुभव जनता के श्रेय के लिये समर्पित कर गये। उनके लेखों के स्वाध्याय से निश्चित है कि उनकी जिह्वा तथा लेखनी पर भगवती सरस्वती देवी विराजमान थी। किमधिकम्–उनकी समता में वही थे।

उनके स्मृति ग्रन्थ से स्मृति के साथ–साथ शिक्षाप्रद उपदेश–जिनसे जीवन का लक्ष्य ज्ञात हो तथा उस लक्ष्य की उपलब्धि के सरल उपाय प्राप्त हो सकेंगे।

वह ग्रन्थ जनता के लिये धर्म ग्रन्थ भी होगा। उन महामहिम महात्मा के श्री चरणों में सादर सहस्रशः अभिवादन स्वीकार हो।

***

भारतीय संस्कृति के अद्वितीय आलोक-स्तम्भ

–पद्मश्री आचार्य पं. क्षेमचन्द्र 'सुमन', देहली शाहदरा

भारतीय संस्कृति के अद्वितीय आलोक–स्तम्भ करपात्री जी महाराज इस देश के ऐसे मनीषी और प्रेरक पुरुष थे, जिनका सारा ही जीवन शास्त्र–चर्चा और जन–कल्याण में व्यतीत हुआ था। वे जहाँ उत्कृष्ट मानव और चूडान्त मनीषी थे वहाँ उदात्त व्यक्तित्व के श्री पावन आदर्श थे। उन्होंने अपने प्रत्येक कार्य–कलाप में धर्म व संस्कृति के प्रचार व संरक्षण की भावनाओं को ही प्राधान्य दिया था। कैसी भी कठिन–से–कठिन परिस्थितियों में समरस रहकर कार्य करते रहना उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य था।

स्वामी करपात्री उन साधुओं में नहीं थे जो किसी गहन गुफा या आश्रम में बैठकर एकान्त साधन करने में विश्वास करते हैं। सनातन हिन्दू–जीवन–दर्शन का प्रचार करने के लिये सन् १९४० में आपने 'अखिल भारतवर्षीय धर्म संघ' नामक संस्था की स्थापना की। देश में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव को रोकने के लिये आपने 'धर्म संघ शिक्षामण्डल' नामक संस्थान के माध्यम से देश में यत्र–तत्र अनेक ऐसे विद्यालय भी स्थापित किये जिनमें भारतीय धर्म–ग्रंथों की शिक्षा–दीक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। भारतीय राजनीति में धर्म को उचित स्थान दिलाने की दृष्टि से आपने सन् १९५२ ई. में 'अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्' की स्थापना करके उसके माध्यम से भारतीय संसद और विभिन्न प्रदेशों की विधान–सभाओं में भी अपने प्रतिनिधि भेजने का निश्चय किया और उसमें आप काफी सफल भी हुये। 'हिन्दू कोड बिल' और 'गोहत्या'–जैसे प्रश्नों पर आपने सत्तारुढ़ दल की नीतियों का डटकर विरोध किया। आपने सन् १९६६ ई. में गो–हत्या–विरोधी आन्दोलन का सफल नेतृत्व भी किया था और आप जीवन–पर्यन्त गो–वध पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए सतत संघर्ष करते रहे।

साहित्य व पत्रकारिता की सेवा

स्वामी जी एक उत्कृष्ट धर्म–प्रचारक और कर्मठ संगठक होने के साथ–साथ हिन्दी के उच्च कोटि के लेखक भी थे। आपने दो दर्जन से अधिक ग्रंथों की रचना की थी, जिनमें 'रामायण मीमांसा', 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'संघर्ष और शान्ति', 'विचार पीयूष', 'भक्ति सुधा', 'वेद स्वरूप विमर्श', 'विदेश यात्रा–शास्त्रीय पक्ष', 'वेदार्थ पारिजात', 'भक्ति रसार्णव', 'धर्म और राजनीति', 'श्री विद्या रत्नाकर', 'चातुर्वर्ण्य संस्कृति विमर्श', 'संकीर्तन मीमांसा एवं वर्णाश्रम धर्म', 'वेद का स्वरूप और प्रामाण्य', 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू धर्म', 'पूँजीवाद, समाजवाद और रामराज्य', तथा 'वेद प्रामाण्य मीमांसा' आदि उल्लेखनीय हैं। आपके इन ग्रन्थों में से कई पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कार भी प्रदान किया गया था। भारतीय वाङ्मय का कोई भी अंग आपकी प्रतिभापूर्ण दृष्टि से अछूता नहीं बचा था। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आपकी

देन सर्वथा अभिनन्दनीय एवं अविस्मरणीय है। यह आपके व्यक्तित्व का अभूतपूर्व चमत्कार ही था कि आपने 'सन्मार्ग' जैसे दैनिक पत्र का प्रकाशन दिल्ली से प्रारम्भ किया था, जो आजकल काशी और कलकत्ता से एक साथ प्रकाशित होता है। 'सन्मार्ग' का स्थान हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में अपनी स्पष्ट और निर्भीक नीति के कारण सर्वथा अनुपम और अभिनन्दनीय है। आपने 'सिद्धान्त' नामक एक पाक्षिक और साप्ताहिक विचार पत्र का प्रकाशन भी किया था, जो अनेक वर्ष तक सफलता पूर्वक चलता रहा था। विश्व शान्ति के सन्देश वाहक।

इन सब लोकोपयोगी कार्यों के साथ-साथ उन्होंने विश्वशान्ति के पावन सन्देश को आधार बनाकर सन् १९४४ ई. में दिल्ली में यमुना तट पर जो 'शतमुख कोटि यज्ञ' का ऐतिहासिक अनुष्ठान किया था, उसे देखने के लिये नित्य प्रति देश के सहस्त्रों नर-नारी एकत्र हुये थे। ऐसा ही एक आयोजन आपने कानपुर में गंगा के उस पार सन् १९४४ ई. में ही किया था। कानपुर के पश्चात् काशी में नगवा के समीप गंगा के पावन तट पर भी आपने एक ऐसा ही महान् अनुष्ठान किया था जिसमें १०८ बार 'श्रीमद् भागवत' का सप्ताह-पाठ भी आयोजित किया गया था। इस यज्ञ के बाद आपने लखनऊ तथा उदयपुर में 'लक्ष चण्डी महायज्ञ' का अनुष्ठान भी सम्पन्न किया था। आपकी ऐसी मान्यता थी कि देश के चहुमुखी कल्याण और मंगल के लिये ऐसे यज्ञों का विधान अत्यन्त आवश्यक है।

यह अत्यन्त हर्ष और उल्लास का अवसर है कि अब उनकी स्मृति में मेरठ धर्म संघ द्वारा एक स्मृति-ग्रन्थ प्रकाशित करने का शुभ निश्चय किया गया है। मैं भी अपनी श्रद्धा के सुमन उनके श्री चरणों में समर्पित करता हुआ यह कामना करता हूँ कि हमारी दिग्भ्रमित जनता उनके जीवन और कार्यों से प्रेरणा प्राप्त करके अपने को कृतार्थ करने की ओर अग्रसर हो।

***

'स्वामी जी सरस्वती के वरदपुत्र थे, धर्माचार्य थे भारतीय संस्कृति के महान् ज्ञाता और व्याख्याता थे। उनके कतिपय विचारों से मतभेद करने वाले भी उनके प्रति श्रद्धा से नत रहे। गोवंश की हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध एवं अखण्ड भारत के लिये स्वामी जी के प्रयत्न सराहनीय थे। जब तक भारत राष्ट्र का अस्तित्व रहेगा स्वामी जी का नाम सदैव अमर रहेगा।'

-अटल बिहारी वाजपेयी संसद सदस्य, भा.ज.पा.दिल्ली।

सन्ति सन्तः कियन्तः

–(शास्त्रार्थ केसरी)डा. वीराचार्य शास्त्री
एम.एम., पी.एच.डी., साहित्याचार्य, विद्याभास्कर
सम्पादक 'लोकालोक' मासिक, कमला नगर, दिल्ली

विश्ववन्द्य परमपूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज इस युग की महनीय विभूतियों में अग्रणी थे। धर्म, राष्ट्र, राजनीति और अर्थनीति को उन्होंने अभिनव आयाम प्रदान किये थे। कोटि–कोटि व्यक्तियों के वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन को भी उन्होंने नयी दिशा–नये क्षितिजों का आभास कराया था। मैं स्वयं को प्राक्तन जन्म के पुण्यों से परम सौभाग्यशाली मानता हूं। (वैकुण्ठवासी) पूज्य पितृचरण शास्त्रार्थ महारथी श्री पं. माधवाचार्य जी शास्त्री के साथ धर्म संचार यात्राओं में अनन्त श्री स्वामी जी महाराज के पुण्य दर्शनों का अगनित बार लाभ प्राप्त किया। कुरमा तराई, धनपुरी (म.प्र.), झाझा (बिहार) तथा पैतपुरा (उ.प्र.) आदि स्थानों में तो ऐसा सुखद संयोग बना कि मैं एवं पूज्य महाराज श्री दोनों ही केवल आमन्त्रित थे। अतः उनकी पावन सन्निधि का अत्यन्त निकटता से अनुभव किया। संस्मरणों की मणिमाला आज जीवन को प्रेरणा प्रदान करती है।

सन् १९४७, अगस्त मास। धर्मयुद्ध पूरी तीव्रता से चल रहा था। पाँच माँगों के समर्थन में हजारो सत्याग्रही प्रतिदिन सत्याग्रह करते पकड़े जाते। मैंने प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करके मध्यमा प्रथम खंड में प्रवेश लिया था। निगम बोध घाट के निकटवर्ती धर्म संघ शिविर में निरन्तर–प्रवचन, भजन, कथा, संकीर्तन का कार्यक्रम मञ्च पर चलता रहता था। सभी धर्माचार्य, स्वनाम धन्य कविरत्न पं. अखिलानन्द जी शर्मा, म.म. श्री गिरिधर जी शर्मा चतुर्वेदी एवं पूज्य पितृ चरण आदि मूर्धन्य मनीषी मञ्च पर विराजमान थे। अचानक पूज्य पिताजी ने मेरी ओर संकेत करते हुए मञ्च संचालक महोदय से कुछ कहा और उन्होंने मेरे नाम की घोषणा कर डाली। पूज्य पिता जी द्वारा लिखित ''हमारी पाँच माँगे'' पुस्तक का पहला श्लोक मुझे याद था। मंगलाचरण और 'श्रीराम जयराम......' के उपरान्त मैंने इस श्लोक को तार स्वर से पढ़ा–

अघ्न्यास्तु गौर्भारत भूरखण्डा, धर्मः स्वतन्त्रोऽथ निरंकुशोऽस्तु।
दैवार्चना चागम सम्मता स्याच्छास्त्रान्विता शासन पद्धतिश्च।।

–और वाल सुलभ चञ्चलता के साथ मैंने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा ''हमारी पाँच माँगे पूरी करो–पूरी करो।'' इतना बोलने के तत्काल बाद मैं बैठने लगा तो पूज्यचरण स्वामी करपात्री जी महाराज ने अपने निकट बुलाया और अपने वरदहस्त का स्पर्श मेरे मस्तक पर रखते हुए आशीर्वाद प्रदान किया। मैं आज भी उस अभय हस्त का स्पर्श अनुभव करके रोमाञ्चित एवं गद्‌गद् हो जाता हूँ।

पैतपुरा (उ.प्र.) के अवसर पर मैं प्रातः काल महाराज जी के दर्शनार्थ उनके विश्राम स्थल पर गया। वे अभी-अभी पूजा से उठे थे। कस्तूरी लेकर अगुरु धूप की मिश्रित सुगंध से वातावरण सुगंधित था। कुशासन पर महाराज श्री विराजमान थे। अभिनव शंकराचार्य की सन्निधि का विरल सुख मुझे अभिभूत कर रहा था। पूज्य पिताजी के साथ उन दिनों महाराज श्री को 'विदेश यात्रा' के शास्त्रीय पक्ष पर चर्चा चल रही थी। उन्होंने उस मास का 'लोकालोक' का अङ्क-जो मैंने समर्पित किया था-

अकृत्या पर सन्तापमगत्वा खल मन्दिरम्।
अनुल्लंघ्य सतां मार्ग यत्स्वल्पमति तद् बहु।।

यह सांकेतिक रहस्योपदेश मेरा जीवन दर्शन बना हुआ है। ऐसे सन्त दुर्लभ हैं, जो प्रेरणा के स्त्रोत बनकर जीवन धारा को आदर्शोन्मुखी बनाने की क्षमता रखते हैं। यतिचक्रचूड़ामणि महाराज जी ऐसे ही सन्त थे।

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तुते सर्वत एव सर्व।

***

''प्राणियों के अन्तः करण में शुभाशुभकर्म संस्कार से स्थिर रहते हैं। कर्म भी कायिक वाचिक और मानसिक भेद से तीन प्रकार के होते हैं। उनमें भी कोई कर्म पुण्य, पाप का आरम्भक न होकर केवल सुख, दुःख भोग का ही आरम्भक है। कोई सुख दुःख का हेतु होता हुआ भी पुण्य पाप का भी आरम्भक होता है। कोई केवल पुण्य का ही आरम्भक होता है। ये समस्त भेद विधि प्रतिवेषात्मक शास्त्र सामर्थ्य से ही श्रुतार्थापत्ति द्वारा ज्ञात होते हैं। जिन कर्मों का विधि, निषेध के साथ सम्बन्ध नहीं है वे केवल प्रारम्ब फल सुखादि के ही उपयोगी हैं। उनका पुण्य तथा पाप में परिगणन नहीं होता, जिनका विधि के साथ सम्बन्ध है ऐसे तप आदि दुःख रूप भी प्राक्तन दुष्कृत के फल नहीं हैं, किन्तु पुण्य हैं। एवं जिसका निषेध है वह सुख रूप भी परदाररमथाथि प्राक्तन सुकृत का फल नहीं है किन्तु यह सब पाप है।''

-करपात्र स्वामी

स्वामी करपात्री जी : भारत के भविष्य के सन्देश वाहक

–आचार्य विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'

परम श्रद्धेय स्वामी करपात्री जी एवम् श्रद्धास्पद स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के सन्दर्भ में मेरे मन का सुदामा अपने बाल–सखा श्यामसुन्दर वाजपेयी का स्मरण कर उठा है। हम दोनों (सु) कुमारावस्था से ही परम मित्र रहे हैं। आयुर्वेदाचार्य पं. श्यामसुन्दर वाजपेयी की एक विशेषता रही है–वे मेरे लिए मेदा के अनुकूल भोजन तथा मेधा के लिए उपयुक्त ज्ञान जुटाते रहे हैं। देश–विभाजन की पूर्व–पीठिका में जब मैं लाहौर से मेरठ आया तो उन्होंने मेदा और मेधा दोनों के पोषण के लिए दैनिक (रामराज्य) का आयोजन किया। मैं उसका प्रधान सम्पादक बना। तभी श्यामसुन्दर जी ने उक्त दोनों महापुरुषों से मेरा परिचय कराया।

स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी के बारे में क्या कहूँ? वे तो मेरे लिए महर्षि वेदव्यास थे। जिन्होंने महाभारत को भली प्रकार पढ़ा है, वे जानते हैं कि समय–असमय पर जब भी अवसर देखा महर्षि पांडवों की सहायता के लिए उपस्थित। सन्मार्ग पर लगाया, सत्परामर्श दिया और फिर अन्तर्धान। यही स्थिति मेरे सम्बन्ध में स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी की रही है। मेरी कौरव–काया अपने पोषण के लिए सदा ही मेरे पांडित्य–पांडव से टकराती रही। मेरे बाहर और भीतर एक महाभारत होता रहा। मैंने देखा कि मेरठ, दिल्ली और शिमला के मेरे संघर्ष–रत जीवन में सदा ही कृष्णबोधाश्रम जी ने जाने कब कहाँ से आते रहे और मुझे बोध देकर अन्तर्धान होते रहे। वे मधुर संस्मरण हैं, उन पर फिर कभी।

वे साक्षात् ब्रह्मा थे

प्रातः स्मरणीय परम श्रद्धेय स्वामी करपात्री जी महाराज को मैं ब्रह्मा की संज्ञा देता हूँ। महर्षि वेदव्यास को विविध आयामी साहित्य रचने की प्रेरणा ब्रह्मा ने ही दी थी। कृष्णबोधाश्रम जी को शंकराचार्य के सिंहासन पर बिठाने वाले भी करपात्री जी ही थे। करपात्री जी ब्रह्मा ही नहीं साक्षात् परमब्रह्म थे। ब्रह्म की भाँति सूक्ष्म और मन–वाणी से अगम अगोचर। करपात्री जी ज्ञान–निधि थे। भारतवर्ष उनसे धन्य हुआ।

मेरे सामने परमपावनी भगवती यमुना नदी का वह पुण्य–तट साकार हो उठा है, जहाँ कई वर्षो तक स्वामी करपात्री जी महाराज लोगों को 'सन्मार्ग' दिखाने के लिए समाधि लगाये बैठे रहे। आगम–निगम का ज्ञान बोध कराते रहे थे। निगम बोध घाट पर एक दिन प्रातः मैंने देखा कि विदेश के अनगिन पत्रकारों का वहाँ पर जमघट लगा हुआ है। छुरी–काँटे से नाश्ता निभाने वाले सभी प्रकार के टेबिल–मैनर्स से दूर गोरी चमड़ी के विदेशी पत्रकार और उनके साथ मेमनों की तरह मिमियाती मेमें करपात्री के समक्ष धरती पर घुटने टेके पत्ते के समान मिष्टान्न–नमकीन और मिट्टी के कुल्हड़ में दूध से कलेवा कर रहे हैं। बड़ा स्वादिष्ट था सब। एक अंग्रेज ने धीरे से

मुझसे पूछा–'करपात्री का क्या मतलब है?' मैंने समझाया तो वह पत्रकार दंग रह गया। उसकी अवाक् की वाणी फूटी–धन्य हैं, यह भारतवर्ष, जहाँ ऐसी अनासक्त विभूतियाँ जन्म लेती है।

मैंने देखा कि करपात्री जी पर विदेशी पत्रकार प्रश्नों की बौछार कर रहे हैं और वह सूक्ष्मदेही वामन विराट् होकर समस्त शंकाओं का समाधान कर रहे हैं–विशाल प्रश्न–भू–पटल को सहजभाव से नाप रहा है। सबका गर्वोन्नत मस्तक पातालोन्मुख हो रहा है। अधिकांश प्रश्न अर्थशास्त्र–सम्बन्धी थे, जो देश–विदेश की अर्थ–नीति से जुड़े थे, धर्म, राजनीति की प्रासंगिकता के साथ सब का सटीक उत्तर दिया जा रहा था। मैंने अनुभव किया कि करपात्री जी कोरे धर्माचार्य ही नहीं हैं, बल्कि वे एक विक्षण अर्थ–शास्त्री भी हैं, राजनीतिविद् भी हैं, राजनीतिज्ञ भी हैं, नीतिज्ञ भी हैं और कूटनीतिज्ञ भी। महान् मेधा का ऐसा धनी मुझे भी आशीर्वाद दे गया।

मेरा विश्वास है कि यदि करपात्री जी के जीवन–दर्शन को सही ढंग से समझा जाय तो आज के रुग्ण भारत को सही औषधि मिल सकती है। धर्म, धर्म–निरपेक्षता और साम्प्रदायिकता की जो राजनीति परक व्याख्याएँ आज तक की जाती रही हैं, असल में वे व्याख्याएँ ही देश की एकता और अखंडता के मार्ग में बड़ा व्यवधान बनी हुई हैं। मेरे विचार में विराट् व्यापक विचारों के धनी स्वामी करपात्री जी भारत के भविष्य के सन्देश वाहक थे। मेरी उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि।

***

–ए–२६ लाजपतनगर साहिबाबाद(उ.प्र.) –२०१००५

–"सचमुच राजकुमारी प्रभावती राजे देश की एक अद्भुत रत्न हैं। उस दिन 'हिन्दू कोड विरोधी सम्मेलन' में उन दो महात्माओं के सामने राजकुमारी ने बड़े सुन्दर शब्दों में मेरे अंग्रेजी के भाषण का अनुवाद किया। मैं तो तभी प्रभावित हो गया। इसी प्रकार की कट्टरता जैसी इस राजकुमारी और दो महात्माओं में हैं, जितनी बढ़ेगी देश का उतना ही कल्याण होगा। यह देवी सचमुच 'गार्गी' एवं 'मैत्रेयी' की मूर्ति है। स्वामी करपात्री जी बहुत ही विद्वान हैं और यदि ऐसे व्यक्ति समाज का सुधार करें तो समाज का कल्याण हो सकता है।"

कान्सटीट्यूशन क्लब दिल्ली में हिन्दू कोड पर विचार के अवसर पर श्री डा. पट्टाभि सीतारमैया, अध्यक्ष अ.भा. कांग्रेस द्वारा व्यक्त भाव। (सन् १९४९)

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का एक संस्मरण

–प्रो. रामगोविन्द शुक्ल,
धर्मशास्त्रविभागाध्यक्ष सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी

पण्डित मदनमोहन मालवीय से हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में जो बाद ऋषिकेश में हरिद्वार कुम्भ के अवसर पर हुआ था, उससे भारतवर्ष के प्रबुद्ध समाज से लेकर सामान्य जन तक स्वामी जी चर्चा के विषय बन गये थे। उस अवसर पर 'मननीय प्रश्नोत्तर' के रूप में स्वामी जी महाराज के तथा श्री जयदयाल गोयनका और हनुमान प्रसाद पोद्दार के विचारों को भी प्रथमत: ग्रंथ रूप दिया गया था। स्वामी जी को महामना मालवीय जी ने हिन्दू धर्म के जागरण के लिये लोक में आने का आग्रह भी किया था। इसी सिलसिले में स्वामी जी हिमालय से उतर कर भारत के भू–भाग में विचरने लगे थे। वे पैदल ही चलते थे। अकेले विचरण करते थे। एक दिन वे अयोध्या जी पहुँचे। वहाँ अयोध्या के सर्वमान्य विद्वान् श्री पण्डित रूद्र प्रसाद अवस्थी से भेंट हुई। जिनके पाण्डित्य से स्वामी जी अध्ययन काल से ही परिचित थे। इसी अवसर पर मेरे पूज्य पिता पण्डित श्री सूर्यनारायण शुक्ल काशी से अयोध्या गये थे। मेरे पिता जी के साथ पं. श्री रूद्रपसाद अवस्थी जो उनके समवयस्क शिष्य साथ में थे और स्वर्गद्वार दर्शन करने जा रहे थे। उधर से सीढ़ियों से उतरते हुये स्वामी जी का परिचय श्री अवस्थी जी ने दिया। तब तक स्वामी जी निकट आ गये थे। श्री अवस्थी जी द्वारा पिता जी महाराज द्वारा प्रकाशित अद्वैत मत विमर्श का तथा अद्वैत मत निराश का खण्डन माध्वमुख भङ्ग और माध्वभ्रान्ति निराश ग्रन्थ में लिखा। उसके बाद जो उन्होंने माध्वमुखभङ्ग के खण्डन में लिखा उसका उत्तर आपने क्यों नहीं दिया। पिता जी ने उत्तर दिया कि उनके ग्रन्थ में जो कुछ लिखा है वह पिष्ट पेषण मात्र है और उस ग्रन्थ के लेखक श्री नृसिंहाचार्य बड़खेलर इस समय गौरमेण्ट संस्कृत कालेज बनारस में मेरे साथ अध्यापक हैं। उन्होंने मुझसे निवेदन किया है कि अब इसमें मेरे ऊपर कृपा कर कलम न चलावें। मैंने उनके निवेदन पर उनसे चवन दे दिया है कि ठीक है यदि आपके ग्रन्थ में कोई महत्वपूर्ण अंश अथवा विवादास्पद अंश नहीं लिखा है और फिर मैं न लिखने के लिये वचनबद्ध हूँ। स्वामी जी महाराज ने कहा ठीक है, अब इसका खण्डन मै लिखूंगा। उसके बाद महाराज श्री ने काशी में आकर 'समन्वय साम्राज्य समक्षमण्' ग्रंथ लिखा और यही इस परम्परा की समाप्ति हो गयी। इससे स्वामी जी का पुस्तकों के प्रति कितना आकर्षण था और वे समन्वयवाद के अतिरिक्त खण्डन, मण्डनवाद को पसन्द नहीं करते थे।

स्वामी जी महाराज अनेक ग्रंथों के रचयिता व्याख्याकार, भाष्यकार अनुवादक तथा विशिष्ट कोटि के प्रचारक के रूप में लोगों से जाने गये।

एक बार कानपुर नगर में अखिल भारतवर्षीय धर्म संघ के महाधिवेशन में 'सर्ववेदशाखा सम्मेलन' के अवसर पर शास्त्रार्थ चल रहा था। जिसमें आर्य समाज के विशिष्ट विद्वान् भी ब्रह्मदत्त जिज्ञासु और वाराणेय संस्कृत विश्वविद्यालचय के प्राध्यापक डा. गुन्थर से विद्वानों का विचार विमर्श चल रहा था। आर्य समाज का पक्ष था वेद का संहिता भाग ही वेद है ब्राह्मण भाग नहीं। इसका उतर महामहोपाध्याय श्रीपण्डित गिरधर शर्मा चतुर्वेदी जी दे रहे थे। शास्त्रार्थ के अन्त में स्वामी जी महाराज ने जो शास्त्रार्थ का निष्कर्ष व्यक्त किया उसमें श्री स्वामी जी ने कहा कि ब्राह्मण वेद ही नहीं वेदों का राजा है मन्त्र उसके हुकुम से चलते हैं। इस पर गिरधर शर्मा जी ने अपनी अरुचि व्यक्त की। श्री स्वामी जी ने सभा समाप्त होने के बाद तत्काल पण्डित श्री नकछेदराम द्विवेदी की लिखी हुई पुस्तक 'सनातन धर्मोद्धार' में चिन्ह लगाकर उनके पास भेजा और कहा कि इस पूरे प्रकरण को देखकर वे बतावें कि क्या मैं भ्रम में हूँ। दूसरे दिन श्री चतुर्वेदी जी ने अपना ही भ्रम स्वीकार किया और स्वामी जी के पक्ष का बड़े ढंग से प्रतिपादन किया। जिस पर डा. गुनथर ने सहमति व्यक्त की किन्तु श्री ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी केवल कोलाहल करते रहे। जिस पर स्वामी जी ने उनकी उपेक्षा कर दी और शास्त्रार्थ अन्य विषयों पर चला।

इसी सभा में एक दिन उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री डा. सम्पूर्णानन्द जी ने पुराणों की अनेक कथाओं को जिसमें तुलसी की कथा प्रमुख थी प्रक्षिप्त तथा फूहड़ बताया। स्वामी जी ने संयोजकों से कहा कि सम्पूर्णानन्द जी को आधा घण्टा के लिये रोको वे उत्तर भी सुनते जायें। स्वामी जी ने भक्ति और तुलसी का जो रोचक तथा सारगर्भित समन्वय किया उसे श्री सम्पूर्णानन्द जी ने बड़े ध्यान और गौर से सुना और स्वामी जी से प्रणाम करते हुये कहा कि 'इस प्रकार की कथाओं का वास्तविक अर्थ सामान्य लोगों को समझ में नहीं आता यह कार्य आप जैसे लोग ही कर सकते है। यदि आपने ऐसा किया तो मुझे बड़ा हर्ष होगा।'

एक दिन पं. रूद्र प्रसाद अवस्थी जी के साथ मैं स्वामी जी से मिलने गया। अवस्थी जी ने वेदान्त के कई स्थल स्वामी से पूछे। स्वामी जी ने उस विषय का प्रतिपादन किया उससे अवस्थी जी बहुत प्रसन्न हुये। अन्य चर्चाओं के प्रसङ्ग में श्री स्वामी जी ने कहा कि 'रामाभ्युदय यात्रा' में जो आपने भूमिका में राम जन्म के लिये खीर के बटवारा के सम्बन्ध में विचार लिखे हैं बहुत अच्छे हैं। यह भूमिका मैंने ही अवस्थी जी के नाम से लिखी थी। मैंने कहा कि वह मैंने ही लिखा था आप उसको हाँ कर दीजिये। अवस्थी जी ने भी कहा जब आप इसको ठीक मानते हैं तो मुझको परम सन्तोष है।

एक बार स्वामी जी अपने शिष्य अलखनिरञ्जन को मुक्तावली पढ़ा रहे थे। इसी बीच मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी ने मुझे देखते ही कहा आओ, बैठो आज मैं तुम्हारे ही बाप, पूत की टीका के आधार पर मुक्तावली पढ़ा रहा हूँ, हमारे इस

शिष्य को पहले तुम पढ़ा दिया करो, फिर हम पढ़ायेगे। ये तुम्हारे यहाँ जाया करेगा। मैं तो इतने से ही निहाल हो गया था। तब तक स्वामी जी ने कहा तुम्हारा अनुभव बड़ा अच्छा है लेकिन कहीं-कहीं अपने पिताजी की पूरी टीका का अनुवाद नहीं किये हो अगले संस्करण में उसे पूरा कर दो।

इस प्रकार स्वामी जी के निकट में रहने के नाते उनके संस्मरणों की चर्चा से तो ग्रंथ बन जायेगा। मैंने देखा कि भगवान् शंकराचार्य का जन्म मीमांसकों के द्वारा बौद्ध धर्म को पछाड़ दिये जाने के बाद हुआ था। भारतीय जनजीवन बौद्धाचार से ऊब चुका था। किन्तु स्वामी जी का जन्म तो हिन्दू धर्म को प्रणामी सम्प्रदयाय के ढांचा में ढालने वाले महात्मा गान्धी के निवेदन पर वे सनातन वैदिक धर्म के संरक्षण के लिये समाज में उतरे। वे भी रुग्ण होने के नाते दैहिक और कोंग्रस के नाते मौलिक समर्थन से भी वञ्चित रहे। "इकला चलो रे" की नीति पर सारे भारतवर्ष में उन्होंने सनातन धर्म की ज्योति जलायी। स्वामी करपात्री जी अद्वैत मत का प्रचारक होने के नाते यदि शंकराचार्य थे तो यज्ञों का पुनरूज्जवीन करने के नाते वे कुमारिल भट्ट भी थे। यदि वेद भाष्यों के उद्धारक होने के नाते सायणाचार्य थे तो हिन्दू धर्म के पूरे विधान के अभ्यासी होने के नाते वे याज्ञवल्क्य या विश्व रूपाचार्य थे। यज्ञों में एक से लेकर तीन पशु तक का वध देखकर भगवान् बुद्ध हा हृदय दया से द्रवीभूत हो गया। किन्तु आज लाखों की संख्या में बकरे की कौन कहे, गायों की भी हत्या प्रतिदिन देखकर भी महात्मा गान्धी के हृदय में अहिंसा नहीं जागी। किन्तु स्वामी करपात्री जी ने बिना पशु हिंसा का यज्ञ प्रवर्तित किया। और सर्वथा हिंसा बन्द कर दी जाये इसके लिये शासन से यातना सहते ही रहे। इस प्रकार स्वामी जी भगवान् बुद्ध और महात्मा महावीर से भी अधिक अहिंसावादी थे। उनका पाण्डित्य अगाध था। उनका अभ्यास अप्रतिम था। वे संसार के अच्छे ज्ञाता होते हुए भी समाधिस्थ थे। उनमें क्या गुण नहीं थे, जब यह सोचता हूँ, तो ध्यान में आता है कि वे इस हिंसक, भ्रष्टाचारी, शोषक, राक्षसी युग में रहने लायक नहीं थे और वे कलियुग के इस प्रथम चरण केआरम्भ में ही आये और चले गये। काशी में मृत्यु होने के नाते सदा के लिये चले गये। उनके अवतार की भी सम्भावना नहीं रही। वे छोड़ गये अपनी ग्रंथ राशि और अपना संस्मरण, जिनका संरक्षण और प्रचार करना हमारा कर्तव्य है।

***

> "संन्यास के मूर्त्तावतार स्वामी श्री करपात्री जी गिरफ्तारी वह अनर्थ है जिससे चाहे हिन्दू न हिले हों, पर गत ५० साल के दिल्ली के इतिहास में अभूतपूर्व भूकम्प द्वारा राजधानी उनकी सजा की रात में हिलकर (भूकम्प द्वारा) यह स्पष्ट कर चुकी है कि दैवी जगत यह अन्याय मौनपूर्वक सहन न करेगा।"

-म.म.पं. गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी जयपुर।

धर्म-सम्राट स्वामी करपात्री जी का वैदुष्य

-आचार्य श्यामलाल शर्मा,
प्रधानाचार्य श्री धर्मसंघ महाविद्यालय, दिल्ली

विश्व भर में ऐसा प्रबुद्ध बुद्धिजीवी कौन होगा जो अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी के विश्व विदित वैदुष्य से अपरिचित हो। उनकी विद्वता, भाषण-कला, लेखन शैली विषय विवेचन गाम्भीर्य प्रायः प्राचीन महर्षियों के साहित्य के अवगाहन से आंशिक अनुमानित होती है। जिस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड का प्रकाशक अम्बर मणि सूर्य समस्त ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करता है, पर उसका भी प्रकाशन दीप-ज्योति से अर्चना रूप में किया ही जाता है, ठीक उसी प्रकार महाराज श्री का वैदुष्य किन शब्दों मे किया जाये? यह विचार धारा "नमः पतत्यात्म समं पतत्रिणः" के आधार पर अपनी तुच्छ लेखनी से उनके वैदुष्य की समर्चा ही करनी है। अस्तु?

महाराज श्री के प्रथम बार दर्शन का सौभाग्य सन् १९३७ में परमपूज्य यति मण्डली मण्डित पण्डित स्वामी अनन्त श्री विश्वेश्वराश्रम जी महाराज (पण्डित स्वामी जी) के निर्वाण महोत्सव पर हुआ था, जो साङ्ग वेद महाविद्यालय नरवर नरौरा बुलन्दशहर के विशाल प्राङ्गण में कलिमल हारिणी परमपावनी भागीरथी के तट पर मनाया जा रहा था। उस समय देश के कोने-कोने से मूर्धन्य विद्वान् पण्डित स्वामी जी को श्रद्धाँजलि अर्पित करने तथा धर्म-सम्राट् के भागीरथी के प्रवाह की भांति अनवरत भाषण-माला से हृदय को पवित्र और आह्लादित करने के लिए समुपस्थित थे। ग्रामीण महिलायें भी दार्शनिक विचारों से संवलित तथा संस्कृत की प्रचुर शब्दावली से ओत-प्रोत भाषणों को मन्त्र मुग्ध होकर पांच पांच घन्टे तक सुनने के लिये उमड़ पड़ती थीं। विद्वानों और शिक्षित पठित जन-समुदाय की तो बात ही क्या?

उस समय मैंने महाराज श्री की एक पुस्तिका मुझे जहाँ तक स्मरण है "शङ्कर सिद्धान्त और उनके समाधान" शीर्षक जो जयदयाल जी गोयन्दका ने लिखी थी देखने को मिली। गोयन्दका जी ने जो जो आक्षेप किये थे, महाराज जी ने उनका कितनी मीठी और प्राञ्जल भाषा में उतर लिखा था, जिसका वर्णन करना कठिन है। यह पुस्तक संस्कृत में लिखी गई थी-पुस्तक माध्यम से महाराज श्री से साक्षात् परिचय का द्वार भी खुल गया। जिसके फलस्वरूप आज तक उनके आदेश का पालन करने का सुअवसर मुझे प्राप्त है। नरवर के किसी विद्वान् से यह भी सुना कि पंडित स्वामी धर्म सम्राट् को अद्वैत-सिद्धि, खंडन-खंड-खाद्य पढ़ाते थे। उस समय परमश्रद्धेय विद्वन्मूर्धन्य महाविद्यालय के प्राचार्य स्वनाम-धन्य पंडित प्रवर आचार्य विजय प्रकाश जी भी वेदान्त पढ़ने के लिये बैठते थे। कभी-कभी स्वामी जी और आचार्य जी का शास्त्रार्थ पंडित स्वामी जी कराया करते थे। पंडित स्वामी जी के दोनों ही शिष्य थे, अन्त में दोनों विभूतियों को अत्यन्त स्नेह के साथ अपनी पंजाबी भाषा में बोलते हुये कहते थे,

''अजी विजय प्रकाश तुसी तो ग्रन्थ की, ग्रन्थों की बात बोलेगा–पर यह करपात्री तो ग्रन्थों दे बाहर की बातें बोलता है, तुसी बाहर की बातें कहां से लायेगा, इस प्रकार के एक महापुरुष की वाणी से निकले शब्द अपना न केवल महत्व रखते हैं,अपितु महाराज श्री के उत्कट वैदुष्य के प्रमाण–पत्र भी हैं।

इसके पश्चात् अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ की स्थापना कर अनन्त श्री विभूषित स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज जो धर्म सम्राट् की ही द्वितीय प्रतिमा थी, को अध्यक्ष बनाया जो कालान्तर में ज्योतिर्मठ के शङ्कराचार्य पद पर अभिषिक्त हुये। दोनों महाविभूतियों ने देश में व्यापक रूप से अधर्म का उन्मूलन और धर्म की ध्वजा फहराने का संकल्प कर देश में सनातन धर्म का प्रसार प्रचार करना आरम्भ किया। उसी समय देश को स्वतन्त्र कराने का पाश्चात्य राजनीति से प्रभावित धर्म और ईश्वर अविश्वासी नेताओं ने आन्दोलन चला रक्खा था–ईश्वर और धर्म के कट्टर पक्षपाती धर्म सम्राट् ने भी देश की स्वतन्त्रता के लिये अपने अनेक भाषण देने के साथ देश की अखण्डता के लिये प्रबल संघर्ष किया, पर आज के धर्म विरोधी नेताओं ने जनता को धोखा दिया और यह कहा कि किसी वस्तु को तोड़कर ही मिलाया जा सकता है। स्वराज्य के बाद देश को अखंड कर लेंगे और दूध की नदी बहा देंगे। आज इस धोखा रूप आश्वासन की जवनिका हठ गयी। उसी समय महाराज श्री ने ''मार्क्सवाद और रामराज्य'' नामक अनूठा ग्रन्थ का प्रणयन किया। जिसको पढ़कर और अनुशीलन कर केवल भारत के ही मनीषी नहीं अपितु विदेशी विद्वान भी दांतों के नीचे अंगुली दबा गये। अत्यन्त प्राचीन काल की विदेशी राजनीति से आरम्भ कर साम्राज्यवाद, समाजवाद, कम्यूनिज्म, लेनिनवाद, मार्क्सवाद आदि सभी वादों का वैचारिक और व्यवहारिक पक्षों को सामने रखकर शास्त्र, युक्ति और तर्क के बल पर समस्त वादों को अव्यवहार्य और जनशोषक सिद्ध कर दिखाया। सभी वाद नाम मात्र से अविचारित रमणीय हैं केले के स्तम्भ की भांति थोथे और अनुपादेय हैं। इनमें सुख और शान्ति की तो गन्ध भी नहीं है। अन्त में रामराज्य के नाम से भारतीय राजनीति को सुख शान्ति का साधन बताया क्योंकि कणक, कामन्दक, मनु और याज्ञवल्क्य आदि महर्षियों के तपोपूत विचारों को जनता के सामने रक्खा। रामराज्य परिषद् की स्थापना द्वारा रामराज्य का आदर्श रक्खा–महाराज ने यह सिद्ध कर दिखाया कि ''बिना धर्म के राजनीति विधवा है।'' राजनीति पर धर्म का अंकुश होना ही चाहिये। पर यह देश का दुर्भाग्य ही था कि इस आधुनिक विज्ञान और प्रलोभन के चकाचौंध में चुंधिपाये तात्कालिक सत्ता और पदलोभियों ने इधर जनता को झुकने नहीं दिया। जिसका दुष्परिणाम न केवल गरीब समाज भोग रहा है, अपितु बड़े–बड़े व्यापारियों, नेताओं, शिक्षाविदों, विधिवेत्ताओं के होश उड़ रहे हैं। शासन मौन है, केवल अपनी धुनी और टूटी हुयी कुर्सी को

दोनों हाथों से पकड़ रहा है। धर्म सम्राट् का नारा था, ''देश अखंड हो'', ''विधान शास्त्रीय हो'', पर अब पछिताये होत का जब चिड़िया चुग गई खेत। ऐसा निर्भीक सिद्धान्तवादी नेता भी न मालूम कब आयेगा–मार्क्सवाद और रामराज्य, ग्रन्थ में देश की सुस्थिर परम्परा को बनाये रखने के अनेक शास्त्रीय उपाय थे।

महाराज श्री प्रणीत छोटे–बड़े लगभग ६० ग्रन्थों का उल्लेख कहाँ तक किया जाये और उनके वैदुष्य को अंकित करने के लिये कहाँ तक चेष्टा की जाये। उनके विविध विषयों के मनन और मन्थन का दिग्दर्शन ही कराया जा सकता है। 'चातुर्वण्य विमर्श' नामक दो भागों में संस्कृत भाषा में लिखा ग्रन्थ चारों वर्णो का उद्‌व उनके कर्म आदि का शास्त्रीय विवेचन है। सुधारवाद के नाम पर भ्रान्त करने वाले अनर्गल 'मिथ्या–प्रवादियो' को सच्चा शास्त्रीय सन्मार्ग उन्होंने दिखाकर सिद्ध कर दिया कि बिना शरीर परिवर्तन के जाति–परिवर्तन का बकवास केवल भोले समाज को ही मार्ग भ्रष्ट कर सकता है।

किसी विजातीय पर धर्म असहिष्णु ने रामकथा लिखकर राम के आदर्श पर आक्षेप किया। धर्म सम्राट् ने एक हजार पृष्ठों का रामायण मीमांसा नामक ग्रन्थ लिखकर आक्षेप कर्ताओं के मुख कृष्ण मसी से सदैव के लिये काले कर दिये–इस ग्रन्थ में सौ से अधिक विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में लिखे गये राम चरितों के प्रमाण प्रस्तुत किये गये हैं। कहा नहीं जाता कि उन्होंने भिन्न–भिन्न भाषाओं की रामायण कब पढ़ी और कहाँ पढ़ी, देखी? तीन बार पूजा करना, रात्रि में भाषणों द्वारा भिन्न–भिन्न स्थानों में एकत्रित सभाओं को सम्बोधित करना–प्रभात में विद्वज्जन मनोरन्जिनी अपूर्व कृष्ण चरित्रों का कथन करना। महात्माओं और विद्वानों को सतत् विषयों का पठन–पाठन करना। ग्रन्थों का लिखना। बाहर से आने वाले भक्तों, शिष्यों से बात–चीत करना। कहाँ तक कहें, वे एक विलक्षण प्रतापी प्रभाव शाली महामनीषी थे। जो देश और समाज को गम्भीर साहित्य निधि दे गये।

इसके अतिरिक्त उन्हों साहित्य शास्त्र की भी अभिवृद्धि की है। उनकी नव नवोन्मेष शालिनी प्रतिभा का परिचायिक ''भक्ति रसार्णव'' नामक ग्रन्थ उस न्यूनता का पूरक सिद्ध हुआ है, जिसको विश्वनाथ, आनन्द वर्धनाचार्य जयदेव, रसगंगाधर कार भी पूरा न कर पाये। रस सिद्धान्त के सम्बन्ध में किसी आचार्य ने आठ रसों का वर्णन किया है, तो किसी ने नौ रसों का, रस गंगाधर कार ने भक्ति को रस न मानकर भावन मान कर छोड़ दिया है। पर धर्म–सम्राट् जी ने भक्ति को रस सिद्ध कर दिया है। बोलती हुयी सजीव संस्कृत भाषा में लिखा हुआ यह ग्रन्थ महाराज जी की अनूठी प्रतिभा की छाप विद्वानों के हृदय पर बैठा चुका है। कहाँ तक कहा जाये। उनके वैदुष्य की छाप उनके ग्रन्थों के अध्ययन करने से अध्येता के हृदय पर अमिट और स्थायी पड़े बिना नहीं रह सकती।

उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में ''वेदार्थ पारिजात'' नामक ग्रन्थ रत्न पारिजात के रूप में ही समाज को समर्पित किया है, जो लगभग २५०० पृष्ठों से अधिक है और दो भागों में प्रकाशित हुआ है। जिसमें वेद क्या है? वेद का निर्माता कौन है? क्या मन्त्र मात्र ही वेद है? क्या चार जिल्द ही वेद है? उपनिषद् भाग, ब्राह्मण भाग, आरण्यक भाग वेद है वा नहीं? इसके अतिरिक्त विदेशियों के उठाये गये आक्षेपों का उत्तर वैदिक मन्त्रों में प्रक्षेप बताने वालो को उत्तर दिया है। यह ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। उनके वैदुष्य के सम्बन्ध में क्या कहा जाये, जो भी लिखा जाये, वह सब स्वल्प है। उनकी प्रखर प्रज्ञा के प्रसाद से जनता लाभ उठाये, यही प्रभु से प्रार्थना है। उनके परिश्रम को जनता तक पहुंचाने वाले भावुक भक्त और श्रद्धालु इस कार्य में सर्वात्मना लगे हुए हैं, वे भी धन्य हैं तथा प्रशंसा के पात्र हैं। धर्म सम्राट् उनके निर्मल स्वान्त में विराजमान होकर उन्हें प्रेरणा देते रहें, ऐसी मेरी प्रार्थना है।

***

अप्रतिम व्यक्तित्व वैदुष्य के प्रतिनिधि स्वामी करपात्री जी महाराज

–वासुदेव शास्त्री 'अतुल' महामन्त्री–अखिल भारतीय रामराज्य परिषद।

स्वामी श्री करपात्री जी महाराज जिस समय श्रीमद् भागवत की रसमयी कथाओं पर प्रवचन करते थे उस समय उनके मुखारविन्द से प्रवाहपूर्ण सानुप्रासिक शब्दावलियों को सुनकर उनके दिव्य कान्तिमान मुख, मंजुल अंगुलियों की मुद्राओं को देखकर मालूम होता था कि साक्षात् शुकदेव जी किंवा अष्टादश पुराणों के स्रष्टा भगवान् वेद व्यास व्याख्या कर रहे हैं।

कथा स्थल पर स्थित विद्वान् श्रोताओं की भावभंगिमा को श्री स्वामी जी बड़ी चतुराई से परखते थे। एक बार वाराणसी धर्म संघ में श्रीमद् भागवत पर प्रवचन चल रहा था और स्वामी जी–"नौमीड्यतेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराय" इस श्लोक की व्याख्या करते हुये कह रहे थे, हे ईड्य? ते त्याम् नौमि यह शब्द सुनते ही व्याकरण के एक महान् पण्डित ने हँस दिया। विद्वान् का आशय यह था कि "नमः के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है द्वितीया नहीं। स्वामी जी द्वितीया विभक्ति का प्रयोग कर रहे हैं।" स्वामी जी तत्काल ही उस विद्वान् की हँसी को समझ गये और कहने लगे–त्वाम् अनुकूलमितुम् नौमि यहाँ अनुकूलार्थ में द्वितीया है। वह पण्डित स्तब्ध रह गये। एक एक शब्दों का व्याकरण वेदान्त तन्त्र आगम आदि से क्या सम्बन्ध होता है। इसकी पूरी की पूरी व्याख्या बड़े समारोह के साथ स्वामी जी करते थे।

स्वामी जी जिस समय उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र का भाष्य पढ़ाते थे और उसकी साङ्गोपाङ्ग व्याख्या करते थे उस समय उनकी व्याख्यान कलाओं से उनमें भगवान् शंकराचार्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

जिस समय रामानुज वेदान्त पर प्रवचन करते थे और आलवन्दार स्तोत्र को सुनकर भाव–विभोर होकर सजल नयन हो जाते थे उस समय उनके श्री विग्रह में भगवान् रामानुजाचार्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

जिस समय रामायण की रामकथा और रामभक्ति का विवेचन करते थे और भगवती सीता के परम पुनीत चरित्र का विश्लेषण करते थे उस समय उनके भाव विह्वल सजल नयनों से राम प्रतिष्ठापनाचार्य भगवान् रामानन्दाचार्य की झलक उनमें दिखाई पड़ती थी।

स्वामी जी बौद्ध दर्शन के पूर्व पक्ष को जब सभाओं में समारोह के साथ उपस्थापित करते थे तो उस समय उनमें ऐसा अभिनिवेश देखने को मिलता था मानो साक्षात् भगवान बुद्ध ही आ गये हैं। वहीं उत्तर पक्ष को स्थापित करते समय मालूम होता था कि पुनः कुमारिल भट्ट और आदि शंकर आ गये।

सभाओं में भौतिक जड़वादी मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को पूर्व पक्ष के रूप में विविध तर्क और युक्तियों से जिस समय उपस्थापित करते थे उस समय ऐसा लगता था मानो भौतिक जड़वाद ही सब कुछ है धर्म–ईश्वर शास्त्र नाम की कोई वस्तु ही नहीं है तो सब काल्पनिक है।

मार्क्स के पूर्व पक्ष का शास्त्रीय तर्कों और युक्तियों से जिस समय खण्डन करते थे और भारतीय धर्म–नीति, अर्थनीति, समाजनीति, राजनीति की व्याख्या करते थे और भारतीय धर्म सापेक्ष राजनीति को प्रतिष्ठित करते थे उस समय उनके दिव्य कमनीय मधुर मनोहर आकृति में वृहस्पति, शुक्र, कामन्दक और कौटिल्य की झलक दिखाई पड़ती थी।

नेती, धोती, नेवली, शंख प्रक्षालन, वज्रौली आदि हठयोग की क्रियाओं और विविध प्रकार के आसनों को जब वे करते थे तो स्वामी जी की उन चेष्टाओं को देखकर यही आभास होता था कि अष्टांगयोग दर्शन के प्रणेता भगवान् भाष्यकार पतञ्जलि ही योग क्रिया कलाप को साकार बना रहे हैं।

चुनाव के अवसर पर रामराज्य परिषद की सभाओं में जब विभिन्न पार्टियों के चुनाव घोषणा पत्रों और उनके राजनयिक कूटनीतिज्ञ गति विधियों की समालोचना करते थे तो एक अद्भुत महान् क्रान्तिकारी नेता के रूप में दिखाई पड़ते थे।

अखिल भारतवर्षीय धर्म संघ, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद्, गोरक्षा समिति आदि अनेक संघटनों की राष्ट्रीय एवं धार्मिक विचार गोष्ठियों में जब विचारणीय विषयों पर वाद विवाद के समय समुचित समाधान करते थे तो स्वामी करपात्री जी में महर्षि चाणक्य के स्वरूप की झलक दिखाई पड़ती थी।

सर्ववेद शाखा सम्मेलनों के अवसर पर वेदवेदाङ्गादि विषयों पर शास्त्रार्थ करते समय शास्त्रीय पक्षों के समर्थन में प्रतिपक्षी को अत्यल्प समय में मधुर शब्दों में निरुत्तर कर देते थे। उस समय स्वामी करपात्री जी में देवगुरु वृहस्पति की झलक दिखाई पड़ती थी।

स्वामी करपात्री जी लेखन कला के महान् सिद्धहस्त योगी थे। धर्म और राजननीति आदि विविध विषयों, धर्म विरोधी, शास्त्र विरोधी आक्षेपों के खण्डन में उनकी लेखनी अजस्त्र, अबाध गति से प्रवाहित होती थी। उनकी लेखनी की तीव्र गति और प्रवाह को देखकर महाभारत के महान् लेखक भगवान् गणपति की लेखनी की उनकी लेखनी में झलक मिलती थी।

'मार्क्सवाद और रामराज्य' में विश्व के राजधर्म की व्याख्या और समीक्षा, 'वेदार्थ पारिजात' में वेदों पर किये गये आक्षेपों समाधान और वेद मन्त्रों पर किये गये भाष्य को अवलोकन करने से स्वामी जी में भगवान् भाष्यकार एवं सायण, उव्वट, महीधर आदि आचार्यों से भी अधिक ज्ञान विज्ञान सम्पन्नता दिखाई पड़ती है।

स्वामी जी की आँख के पलकों में निद्रा की झलक कभी नहीं दिखाई पड़ती थी। मैं उनके साथ रहता था तो देखता था थोड़ी सी नींद आते ही तुरन्त जग जाते थे और घड़ी उठाकर समय देखते थे। कभी-कभी समय पूछते भी थे। रात्रि में लगभग दो बजे ही स्नानादि से निवृत्त होकर जप करते थे और चार बजे से ६ बजे तक पैदल टहलते हुए अनेक स्तोत्रों का पाठ करते थे। प्रातः काल की पूजा में श्रीविद्या की उपासना, श्रीचक्र का विधिवत् अर्चन, मध्यान्ह में पूजन के पश्चात् आसन एवं शीर्षासन में सप्तशती पाठ सायंकाल लगभग ५ बजे हाथ की चक्की का पिसा हुआ आटा, मूंग की दाल, चावल यह भी ब्राह्मण के घर के अन्न की नमक रहित भिक्षा करते थे और केवल गंगा जल ही पीते थे सायं काल स्नान के पश्चात्, रुद्राभिषेक यह उपासना का क्रम नियमित चलता था। अन्य समय में लेखन, भाषण, अध्यापन आदि का कार्यक्रम निरन्तर चलता रहता था। स्वामी जी की तपश्चर्या दर्शन में अतीत भारत के उपमन्यु, गौतम आदि महातपस्वियो की झलक साकार रूप में दिखाई पड़ती थी।

स्वामी जी शक्ति उपासना, गणपति-उपासना, सूर्योपासना और विष्णु उपासना में अनन्य निष्ठा रखते थे और सभी की उपासना करते थे। वस्तुतः स्वामी करपात्री जी को परम शाक्त, परम गाणपत्य, परम सौर, परम शैव, परम वैष्णव कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

स्वामी करपात्री जी महाराज परम सिद्ध सन्त थे। दिल्ली के श्री रघुनाथ प्रसाद तर्क भास्कर (वर्तमान स्वामी भास्करानन्द सरस्वती) एक बहुत बड़े सेठ को स्वामी जी के पास ले जाना चाहते थे। उसकी इच्छा थी कि मुझे स्वामी श्री करपात्री जी का चरण स्पर्श करा दो तो एक करोड़ रुपया दूंगा। तर्क भास्कर जी ने स्वामी जी से बताया कि वह सेठ प्रातः काल आपके दर्शनों के लिये आवेंगे। स्वामी जी उसी रात्रि में अन्यत्र चल दिये और कहा कि उस सेठ को हमारे पास मत ले आओ।

विधान सभा निर्वाचन सन् १९७४ के सन्दर्भ में दिसम्बर सन् १९७३ में मेरठ जिले के बागपत में चुनाव सभा के पश्चात् स्वामी जी जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्ण बोधाश्रम जी महाराज की तपस्थली में ठहरे थे। उस सभा में मैं भी था और मेरे गुरु भाई प्रबल जी भी थे। स्वामी जी से मैंने ही रामराज्य परिषद् के चुनाव कोष की चर्चा की तो स्वामी जी ने कहा कि रामराज्य परिषद् को बहुत से लोग अर्थ देना चाहते हैं कि स्वामी जी स्वयं मुझसे माँगें तो मैं उन्हें अर्थ प्रदान करुं। परन्तु मैंने आज तक अपने जीवन में किसी से कहीं पर भी कभी भी अर्थ नहीं माँगा है। सोचता हूँ अब चलने का समय आ रहा है जीवन भर किसी से नहीं माँगा तो अब क्यों माँगू। किसी पूंजीपति से बिना पैसे लिये ही चुनाव लड़ना भीएक बहुत बड़ा आदर्श है। बिना पैसा लिये त्यागपूर्वक लड़ना भी एक तप है, राजधर्म की निःस्वार्थ सेवा है।

संस्था से सम्बद्ध कुछ पूंजीपतियों की दुर्नीति के कारण असन्तुष्ट होकर स्वामी जी सन् १९६३ में श्री धर्म संघ शिक्षामण्डल दुर्गाकुण्ड वाराणसी में ठहरना बन्द कर दिया था। तब सन्मार्ग के प्रधान सम्पादक श्री पं.गंगाशंकर मिश्र ने भी धर्म संघ छोड़कर नारद घाट पर अपना आवास बनाया। तब स्वामी जी मिश्र के यहाँ ठहरने लगे।

सन् १९७१ में नारद घाट छोड़कर मिश्र पोखरा स्थित वृन्दावन विहारी भवन में निवास करने आये। और मुझसे कहा कि नारद घाट से हमारी सभी पुस्तकें उठा लाओ। मैं लाने के लिये तैयार हुआ तो रामराज्य परिषद् के तत्कालीन राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पं. नन्दलाल शास्त्री ने कहा कि नारद घाट स्थित मकान में स्वामी जी का भी नाम है। सामान मत ले आओ उसमें कब्जा बना रहेगा। मैंने यह समाचार स्वामी जी महाराज से बताया तो स्वामी जी ने कहा कि हमें कब्जा करना होता तो जोशी मठ की सम्पत्ति को कब्जा कर लेता जो इधर-उधर हो रही है-महात्मओं को किसी के मकान को कब्जा नहीं करना चाहिये, सांप की तरह रहना चाहिये। फिर स्वामी जी ने कहा कि मैंने धर्म संघ में गायत्री द्वारा निर्मित भवन को जब से छोड़ दिया तब से उसमें कभी लघु शंका भी नहीं किया।

सन् १९६६-६७ में दिल्ली में सर्वदलीय गोरक्षा समिति द्वारा विशाल गोरक्षा आन्दोलन स्वामी करपात्री जी महाराज के नेतृत्व में चला। उस समय स्वामी जी उस समिति के अध्यक्ष थे। उन दिनों जेल यात्रा तथा दिल्ली में मैं स्वामी जी के साथ रहा।

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी का एवं पुरी के शंकराचार्य जी का अनशन चल रहा था। स्वामी जी के पास अनशन को तुड़वाने के लिये श्री जयप्रकाश नारायण श्री द्वारका प्रसाद मिश्र आदि अनेक नेता पधारते रहे। उन्हीं दिनों राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सर संघ चालक श्री गोलवल्कर जी भी आये स्वामी जी से कहा कि- शंकराचार्य और ब्रह्मचारी जी का अगर बलिदान हो गया तो सारे देश में क्रान्ति मच जायेगी और हम क्रान्ति मचा देंगे।

श्री गोलवल्कर जी की बातें सुनकर स्वामी जी ने कहा श्यामा प्रसाद मुखर्जी का बलिदान हुआ तो आपने क्या क्रान्ति किया? क्या हवा में लाठी घुमाने से क्रान्ति होगी? बलिदान के बाद तो शोक सभा होगी या क्रान्ति? यदि क्रान्ति करना है तो शंकराचार्य और ब्रह्मचारी जी के जीते जी ही क्रान्ति दिखायें। स्वामी जी ने पुनः कहा कि इस समय यदि भारत की सम्पूर्ण जेलें भर दी गयी तो कुछ क्रान्ति हो सकती है। इस पर श्री गोलवल्कर जीने कहा था कि एक सप्ताह के अन्दर मैं प्रयास करूंगा भारत की सभी जेल भर दी जायेगी। परन्तु जेल भरना सम्भव हो न सका।

देश में राजनैतिक ओर सामाजिक, धार्मिक संगठनों ने स्वामी जी के नेतृत्व की उपेक्षा किया जिसके कारण देश को खण्डित रूप में देखा जा रहा है और आज भी गोवंश हत्या जारी है। हिन्दू मान्यताओं को नष्ट करने वाले अधार्मिक कानून लागू हैं।

स्वामी जी के द्वारा स्थापित रामराज्य परिषद् एक विचारधारा है। वह अपने स्वरूप में आज भी प्रवाहित है, अडिग है। उसके कार्यकर्ता निष्ठा के साथ कार्यरत है। कुछ लोग आक्षेप करते हैं कि परिषद् के नेता चुनाव में सफल नहीं हो रहे हैं। परन्तु अन्य दल के नेता तो फिसल रहे है। उनमें सिद्धान्त और आदर्श तो अब उठ ही गया है। वे सफल होकर भी प्रशासन संचालन में विफल सिद्ध हो रहे हैं। रामराज्य परिषद् के नेता सैद्धान्तिक दृष्टि से विफल होकर भी सफल हैं, सुस्थिर हैं, समाज को देश को गुमराह नहीं कर रहे हैं। नैतिक दृष्टि से रामराज्य परिषद् विफल नहीं कहा जा सकता।

देश, धर्म, संस्कृति, गोवंश रक्षा, राष्ट्रीयएकता, अखण्डता, समन्वय सामञ्जस्य स्थापना के लिये जितने भी अवतार हुये हैं उनकी तुलना स्वामी करपात्री जी महाराज के देश, काल परिस्थिति के अनुसार कृत, कार्य, त्याग, बलिदान आदि सर्वोपरि सिद्ध होते हैं और भारतीय इतिहास में एक गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं।

देश में धर्म प्रतिष्ठा के लिये भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम राघवेन्द्र श्री राम के कोमल चरणारविन्द में दण्डकारण्यके कण्टक चुभे थे। ऋषियों ने भगवान् श्री राम के उन्हीं चरण कमलों के ध्यान के लिये प्रेरित किया है–

स्मरतां हृदि विन्यस्य सिद्धं दण्डक कण्टकै।
यत्पाद पल्लवंराम आत्मज्योति रगात्प्रभु।। –'श्रीमद्भागवत'

यहाँ तो राष्ट्र रक्षा, धर्म रक्षा, गो रक्षा के लिये तो स्वामी करपात्री जी महाराज के चरण कमलों में नहीं दिल्ली के तिहाड़ जेल में कांग्रेसी और जनसंघी प्रशासन में दिनांक २९ जून १९६७ को वाम नेत्र कमल पर लौह शलाका के भयंकर आघात हुये हैं जिस स्मरण पर अब तो यही कहना होगा कि –

स्मरतां हृदि विन्यस्य करपात्र महायशम्।
विद्धं लोह शलाकाभिर्वाम नेत्रं सुकोमलम्।।

***

वे सच्चे अर्थों में सरस्वती-पुत्र थे

–विशनचन्द सेठ (भूतपूर्व संसद सदस्य)

हिन्दू महासभा के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री

श्री स्वामी करपात्री जी महाराज न केवल आध्यात्मिक विभूति थे। अपितु, वे एक कुशल राजनीतिज्ञ भी थे, यह उस समय स्पष्ट हो गया था जब रामराज्य परिषद राजस्थान विधान सभा में प्रमुख विरोधी दल के रूप में उभर कर सामने आई। उ.प्र., म.प्र. तथा कुछ अन्य प्रान्तों में भी रामराज्य परिषद के सदस्य विधान सभाओं में पहुँचे थे। लोक सभा में भी उसमें कुछ सदस्य निर्वाचित हुये थे जिनमें पंडित नन्दलाल शास्त्री का नाम विशेष उल्लेखनीय था।

हिन्दू महासभा, रामराज्य परिषद तथा जनसंघ इन तीनों को हिन्दुत्वनिष्ठ दल माना जाता था। वैस जनसंघ ने अपने को सैकुलर घोषित किया हुआ था।

१९५७ के आम चुनावों में जब ये दल बुरी तरह पराजित हुए तो हिन्दू महासभा की ओर से गोरक्षपीठाधीश्वर पूज्य महन्त दिगिवजयनाथ जी महाराज, श्री निर्मल चन्द्र चटर्जी तथा मैंने विचार किया कि यदि ये तीनों दल आपस में न टकराए होते तथा संयुक्त मोर्चा बनाकर चुनाव लड़ा होता तो इनके काफी सदस्य संसद तथा विधान सभाओं में पहुँच सकते थे। इस सम्बन्ध में हम लोगों ने प्रयास किये तथा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के तत्कालीन सरसंघ चालक पूज्य श्री गुरु जी (गोलवलकर जी) से मेरा इस सम्बन्ध में पत्र–व्यवहार भी हुआ। जनसंघ के नेताओं से भी वार्ता हुई उधर रामराज्य परिषद के संस्थापक श्री करपात्री जी वृन्दावनवास कर रहे थे।

वृन्दावन में प्रवचन

धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज को श्री वृन्दावनधाम से बहुत प्रेम था। वे हर वर्ष वृन्दावन पधारते तथा धर्म संघ विद्यालय में उनके प्रवचनों की धूम मचा करती थी। धर्मसंघ विद्यालय मेरे निवास स्थान (रमणरेती) के समक्ष ही है।

१९७१ में मैं वृन्दावन पहुँचा ही था कि पता लगा कि पूज्य स्वामी जी प्रवचन हेतु पधारे हुए हैं। मैं धर्मसंघ विद्यालय में उनके प्रवचन सुनने गया तो देखा कि वृन्दावन के सभी उच्च कोटि की विभूतियां भारी संख्या में उनके प्रवचन सुन रही है। वृन्दावन धाम के सभी सम्प्रदायों के आचार्य मंत्रमुग्ध होकर उनके प्रवचन सुनते थे। तो लगता था कि जैसे साक्षात शुकदेव जी धर्मसभा को सम्बोधित कर रहे हों।

प्रथम बार ही उनके अलौकिक प्रवचन का मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्रवचन के उपरान्त मैं एकान्त में उनसे मिला। मुझे देखते ही वे बहुत प्रसन्न हुए तथा यह बात जानकर आल्हादित हो उठे कि मैं 'राजनीति के पचड़े' से निकल कर अपना शेष जीवन प्रभु भक्ति में बिताने के लिये इस दिव्य भूमि में आ गया हूँ। उन्होंने कहा–

''सामान्यतः राजनीतिक सज्जन जीवन–पर्यन्त इसी पचड़े में पड़े रहते हैं। आपने आदर्श उपस्थित किया है।''

बातचीत के दौरान हिन्दुत्व तथा सनातनधर्म पर चारों ओर से किये जा रहे प्रहारों की भी चर्चा हुई। स्वामी जी ने कहा कि जब तक धर्म की अवहेलना की जाती रहेगी, धर्म शास्त्रों की उपेक्षा होती रहेगी देश में अशांति बढ़ती रहेगी। गोहत्या के कलंक के जारी रहने से भी उनके हृदय में भारी टीस थी। गोहत्या के कलंक को बन्द कराने के लिये पूज्य स्वामी जी वस्तुतः सबसे आगे रहकर प्रयास शील रहे।

वे युग पुरुष थे

मैं हर वर्ष उनके प्रवचन सुना करता था। मैंने अनुभव किया कि पूज्य स्वामी जी एक युग पुरुष थे तथा उनके लेखन, प्रवचनों व प्रकाण्ड पांडित्य का लोहा बड़े–बड़े विद्वान, शिक्षा शास्त्री व राजनेता भी मानते थे। श्री राहुल सांकृत्यायन जैसे विद्वान ने भी यह स्वीकार किया था कि यह संन्यासी उद्‌भट विद्वान तथा जटिल विषयों का अध्येता है। उनके लिखे ग्रन्थों, भावना व भाव से आचार्य श्रेणी के सज्जन भी चकित होते थे। काशी की तरह वृन्दावनधाम के आचार्य श्री स्वामी जी की विद्वता व गम्भीर पांडित्य का लोहा मानते थे।

हिन्दू महासभा का महामन्त्री व संसद सदस्य के नाते मुझे अनेक धर्माचार्यों व साधु–सन्तों से मिलने का अवसर प्राप्त होता रहा। अनेक धर्माचार्यों को हम सब सत्तारूढ़ नेताओं के आगे पीछे घूमते, मालाएँ हाथों में लिये उनके स्वागत को उत्सुक हुआ देखा करते थे तो हमें पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज का तेजस्वी रूप सामने आ जाता था जो पहले अंग्रेजी शासन से टकराते रहे तथा बाद में धर्म व हिन्दुत्व के मान बिन्दुओं की रक्षा के लिये अपनी ही कांग्रेस सरकार से संघर्ष करने में कभी नहीं हिचकिचाए। वे सच्चे अर्थो में बहुत ही तेजस्वी संन्यासी थे। वे धर्म सम्राट् थे। उनके श्री चरणों में विनम्र श्रद्धांजलि।

***

''मुझे तो स्वामी करपात्री जी के अन्दर गुरु तेगबहादुर की आत्मा का दर्शन हुआ है जो धर्म पर विपत्ति देखकर व्याकुल हो उठी है और उसके लिये कठिन से कठिन यातनायें सहने के लिये तैयार हुई है।''

प्रमुख हिन्दू नेता 'भाई परमानन्द जी
लाहौर जेल में स्वामी जी से भेंट के उपरान्त।
अप्रैल, १९४७

धर्म सम्राट् के कुछ दिव्य संस्मरण

–पं. गोविन्द प्रसाद चतुर्वेदी शास्त्री,
धर्माधिकारी विदिशा। (म. प्र.)

बीसवीं शताब्दी में हमारे देश में धर्म–सम्राट् पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के रूप में एक ऐसी विभूति का प्रादुर्भाव हुआ जिसने धार्मिक ही नहीं आध्यात्मिक व राजनैतिक क्षेत्र में भी एक नवीन चेतना का संचार किया।

उस दिव्य अमलात्मा महाविभूति के सान्निध्य में व्यतीत समय की मधुर स्मृतियाँ रह–रह कर याद आती हैं जो उनके प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्ति के लिये उनके ही चरणारविन्दों में श्रद्धा सुमन रूप समर्पित हैं।

हम तो दुकान समेट रहे हैं

लुधियाना में अखिल भारतवर्षीय धर्म संघ के महाधिवेशन के दिनों में एक प्रोफेसर साहब महाराज श्री से पूजन के बाद मिले और अपने कॉलेज में व एक दो अन्य कार्यक्रमों में उनसे प्रवचन हेतु समय देने की प्रार्थना की।

प्रोफेसर साहब के विस्तृत कार्यक्रमों को सुनकर महाराज श्री करपात्री जी ने कहा ''भाई कोई एक कार्यक्रम में आ जावेंगे हम तो अब अपनी दुकान समेट रहे हैं भजन पूजन में अधिक समय देना चाहते हैं। लौकिक कार्यों में अधिक समय देने का समय नहीं रहा''।

शिष्यों से कह जावेंगे

सम्वत् २०२१ में प्रयाग कुम्भ में महाराज श्री ने धर्म संघ के मंच से वर्णाश्रमव्यवस्था पर बड़ा गम्भीर वक्तव्य दिया उसे सुनकर एक व्यक्ति ने एक स्लिप भेजकर महाराज से भविष्य में वर्णाश्रम पर न बोलने का अनुरोध किया स्लिप को पढ़कर स्वामी जी ने कहा ''भाई हम तो जब तक इस लोक में हैं वर्णाश्रम का प्रचार करते रहेंगे और जाते समय इसका पालन व प्रचार के लिये अपने शिष्यों से कह जावेंगे।'' सभा में तालियाँ बज उठीं और वह व्यक्ति चुपचाप धर्म संघ के पण्डाल से खिसग गया।

पहिले तैरना सीखो फिर पानी में उतरना

महाराज श्री के विदिशा दौरे में एक दिन गोरक्षा पर गम्भीर चर्चा चल रही थी। अनेक राजनैतिक संस्थाओं के लोग स्वामी जी से भेंट करने उनके स्थान श्री चिंतामणि गणेश मन्दिर में आये थे तब एक नेता जी जो उस समय आनरेरी मजिस्ट्रेट भी थे, महाराज श्री से बोले ''महाराज जी गोरक्षा की बात चल रही है सरकार से गोहत्या की माँग के पहिले सनातनियों को गोपालन की आदत डालनी चाहिये।'' करपात्री जी महाराज एकदम तपककर बोले, ''यह तो ऐसा ही सुझाव है जैसे कोई

कहे पहिले तैरना सीख लो फिर पानी में उतरना, अजी साहब जिस प्रकार पानी में उतरे बिना कोई तैरना नहीं सीख सकता उसी प्रकार गोहत्या बन्दी कानून के बिना आज गोपालन सम्भव नहीं है। आज शहरों में गाय रखना जुर्म है नगर निगम वाले घरों से गाय निकालकर कांजी हाऊस में बन्द कर देते हैं। शहर से बाहर गाये रखने को बाध्य करते हैं, नहीं ले जाने पर भारी जुर्माना करते हैं। ऐसी स्थिति में गोपालन की आदत कैसे डाली जाये। अत: सरकार को पहिले गोहत्या बन्दी कानून बनाकर गोसंवर्धन की सुविधा देनी चाहिये तब गोपालन हो सकेगा।'' महाराज श्री के इस तर्क पूर्ण उत्तर को सुनकर आनरेरी मजिस्ट्रेट साहब चुप हो गये।

वेदार्थ पारिजात लिख रहे हैं

ज्येष्ठ मास में विदिशा के पास मरखेड़ा में अ.भा. धर्मसंघ के विशेषाधिवेशन में महाराज श्री पधारे थे। एक दिन दोपहरी में एक पण्डित आकर स्वामी जी की कुटी का द्वार खट-खटाने लगे। पण्डित के साथ एक व्यक्ति और था द्वार खटखटाकर पण्डित जी ने अपने साथी से कहा-‘‘दोपहरी है स्वामी जी विश्राम कर रहे होंगे''। उसी क्षण महाराज ने द्वार खोलते हुये कहा, ‘‘नहीं भाई वेदार्थ पारिजात लिख रहे हैं'' पण्डित जी सहमे बोले ‘‘महाराज क्षमा करें हम संसारी जीव है आप महात्मा हैं इतनी तेज दोपहरी में भी ग्रंथ रचना कर रहे हैं, आपको विश्राम कहां''?

इनको पहिचानते हो

रामायण महाभारत काल निर्णय के लिये काशी के वृन्दावन विहारी भवन में देश के इतिहासज्ञों का एक अधिवेशन बुलाया गया इसी अवसर पर अ. भा. धर्म संघ की कार्यकारिणी की भी बैठक थी। महाराज श्री की प्रतिभा के सामने आधुनिक इतिहासकार तो कोई आगे आये नहीं धर्मसंघ की बैठक अवश्य हुई। बैठक की समाप्ति पर काशी के श्री जगन्नाथ पंचौली (जन्नू गुरु) नामक एक ब्राह्मण देवता महाराज श्री को प्रणाम कर समीप में आकर बैठ गये, महाराज श्री उनका मुझसे परिचय कराते हुये बोले-‘‘इनको पहिचानते हो''। मैंने कहा, ‘‘नहीं तो'' महाराज विनोदी स्वर में बोले, ‘‘यह एक सेर भांग एक बार में खा जाते हैं''। महाराज का इतना था कि वे ब्राह्मण देवता बोले, ‘‘महाराज मुझे अब नशा ही नहीं आता मैंने तो अफीम की नागिन बनाकर लम्बी-लम्बी बत्ती बनाकर कई दिन खाई। अब ये वस्तुएं इतनी मंहगी हो गयी कि ले ही नहीं सकते''। महाराज बोले ‘‘छोड़ो इन सब व्यसनों को भगवान् का भजन ही सस्ता है उसी को करो और हमको भी पूजन करने दो।''

***

स्वामी करपात्री जी

–परिपूर्णानन्द वर्मा

ख्यातिलब्ध पत्रकार, कानपुर

करपात्री जी से मेरी न तो घनिष्ठता थी और न मैं उनके निकटस्थ होने का दावा कर सकता हूँ। पर जीवन में तीन बार ही उनसे मिलने का जो सौभाग्य हुआ था उससे यह अनुभव अवश्य हुआ कि उनका जितना विरोध किया जाता था तथा जितना हठधर्मी समझा जाता था, वैसी बात थी नहीं। ''रामराज्य'' की जिस कल्पना का वे प्रतिपादन करते थे, उसका कुछ अंश भी भारत के किसी राजनैतिक दल ने यदि अपनाया होता तो देश का बड़ा कल्याण होता। ''धर्म निरपेक्ष'' राज्य की कल्पना को या विधान को सभी राजनैतिक दलों ने इतनी नासमझी तक अपना लिया है कि हिन्दू सनातनी अपनी गीता, धर्मशास्त्र या कोई स्मृति भी स्कूल, कालेज में पढ़ नहीं सकता। वर्षो पहले उत्तर प्रदेश के एक शिक्षा निदेशक ने एक इण्टर कालेज को सरकारी सहायता इसलिए बन्द कर दी कि उसने लड़कों के एक उत्सव में गीता के प्रथम अध्याय का संवाद प्रस्तुत किया था। स्कूल के भाग्य से डाक्टर सम्पूर्णानन्द जी शिक्षा मन्त्री थे। उन्होंने निदेशक को लथाड़ा था तथा ग्रांट चालू करा दी थी। डॉ. सम्पूर्णानन्द जी ने हर माध्यमिक शिक्षण संस्था में ''रामलीला'' को नाटक के रूप में प्रस्तुत कराया था पर उनके मुख्य मन्त्री पद से हटते ही यह कार्य बन्द करा दिया गया। करपात्री जी महाराज ऐसी ''धर्म निरपेक्षता'' के कट्टर विरोधी थे और हम उनसे सहमत थे।

राजनैतिक मामले या छुआछूत के सम्बन्ध में हमारा उनका मतभेद था पर यह कहना नितांत अनुचित है कि वे हरिजनों से घृणा करते थे। उनसे बातचीत में मैंने इतना जरूर समझा था कि वे ''जन्मना वर्ण'' से अधिक महत्व देते थे ''कर्मणावर्ण'' पर। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में उन्हें विश्वास था पर वे उसके वैदिक काल के रूप के अधिक हिमायती थे, न कि पौराणिक युग की बिगड़ी स्थिति के। मन्दिर–प्रवेश के विषय पर मेरी उनकी कभी बात नहीं हुई। पर जिस हिन्दुत्व की रक्षा के लिये वह सतत प्रयत्नशील थे आज वही कार्य विश्व हिन्दू संघ तथा धर्म संघ भी कर रहा है। उसके प्रेरणा श्रोत करपात्री जी अवश्य थे–यह निश्चित है।

करपात्री जी तपस्वी थे, ऐसा उनसे एक बार ही मिलने से स्पष्ट हो जाता था। उनकी वाणी में ओज ही नहीं था, सात्विक भावना से निकला प्रवाह था। स्वभाव के सरल, मृदुल तथा सबसे बड़ा गुण था दूसरों की बात को सुनना। मेरी उनकी पहली भेंट बडे कुअवसर पर हुई। पूज्य बापू–महात्मा गाँधी की हत्या के बाद कुछ लोग भ्रमवश गिरफ्तार कर लिये गये थे। उनमें श्री करपात्री जी भी थे। मैं वाराणसी के सेंट्रल जेल का मुआयना कर रहा था कि एक कोठरी में करपात्री

जी बड़ी श्रद्धा से अपने साथ लाये ठाकुर जी का पूजन कर रहे थे। उन्हें सीकचों के भीतर देखकर मुझे दु:ख हुआ था–मैंने उन्हें और उनके ठाकुर जी को प्रणाम किया। करपात्री जी ने केवल मुस्करा कर मुझे आशीर्वाद दिया। जेल वालों ने मुझे विश्वास दिलाया कि उनके लिये पूरी सुविधा दी जाती है। केवल दूध ग्रहण करते हैं। गंगा जल का भी प्रबन्ध है।

इसके बाद वर्षो बीत गये। वे कानपुर आये थे। सत्ती–चौरा घाट पर बगलामुखी पीठ में ठहरे थे। इस पवित्र स्थल के जीर्णोद्धार में तथा ब्रिटिश काल में नष्ट मन्दिर के पुन: स्थापन में मैंने अपने भरसक बड़ा परिश्रम किया था। करपात्री जी के आगमन की मुझे सूचना मिली। तीसरे प्रहर मैं उनसे मिलने गया। डेढ़ घन्टे प्रतीक्षा की–वे आसन कर रहे थे। जब भेंट हुई उस समय लगभग ४५ मिनट तक क्या बाते हुई यह तो नहीं लिखूंगा पर मैंने पाया कि उस महापुरुष का रोम–रोम हिन्दू–सनातन धर्म की सेवा के लिये पुकार रहा है। ऐसे दीवानों की टोली चाहता है जो धर्म का डंका फहराये। उनका न तो किसी धर्म से–दूसरे मजहब से कोई विरोध था, ना बैर भाव। राष्ट्रीय एकीकरण तथा सभी धर्मों के प्रति आदर वे चाहते थे पर स्व–धर्म की निर्मल गंगा को देश में पुन: बहा देना चाहते थे। वह शासन के अहिंसात्मक ढंग से उसी अंश तक विरोधी थे जिस अंश तक धार्मिक विषयों में बाधक हो। उन्हें और कोई लोभ नहीं था। उनसे बात करने से मुझे यह स्पष्ट लगा कि वे ''अन्त: शाक्ता, बहि:शैवा'' हैं। इस पर और अधिक नहीं लिख सकूंगा। उनसे इस वार्ता में मैं इस तरह आसक्त को गया कि मैंने अनुभव किया कि उनके प्रकांड पांडित्य के सम्मुख मैं एक शिशुमात्र हूँ।

करपात्री जी से मेरी अन्तिम और तीसरी भेंट उनके गंगा तट के निवास स्थान पर हुई थी। मुझे बुलाया गया था। शाम का समय था। भक्त मंडली जमा थी। मैं इतनी अधिक बातें करने लगा कि कुछ भक्तों ने टोका:–

''आप ही कहियेगा कि महाराज से भी सुनियेगा।'' करपात्री जी ने टोकने वालों को मना किया। फिर, हम दोनों ने अनेक विषयों पर चर्चा की और अन्त में करपात्री जी ने कहा कि ''हम फिर मिलेंगे और 'धर्म तथा राजनीति' पर बात करेंगे।'' पर यह अवसर फिर नहीं आया। भारत ने एक महान तपस्वी तथा विचारक खो दिया।

***

वे तेजस्वी व संघर्षशील संन्यासी थे

–सुप्रसिद्ध पत्रकार, श्री शिवकुमार गोयल
पिलखुवा।

पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की मेरे परिवार पर अनन्य कृपा–दृष्टि थी। मेरे पिता श्री भक्त रामशरण दास जी उनके धर्म संघ के अनन्य समर्थक थे तथा पूज्य स्वामी जी पिताजी से अपार स्नेह करते थे। जब कभी स्वामी जी ने गोरक्षा आन्दोलन, हिन्दू कोड बिल विरोधी आन्दोलन तथा धार्मिक मर्यादाओं की रक्षा सम्बन्धी अभियान चलाये, पिताजी ने न केवल लेखनी के माध्यम से उनमें सक्रिय योगदान किया अपितु स्वयं भी सत्याग्रह कर जेल जाने को सदैव तत्पर रहे।

सनातन धर्म पर कहीं से भी आक्षेप होता कि पिता जी डटकर उसका उत्तर देने को सदैव तत्पर रहते थे। यहाँ तक कि गाँधी जी ने उनके विरुद्ध लेख लिखकर उन्हें चुनौती दे डाली। पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज ने उस समय पिताजी को पत्र लिखकर उन्हें चुनौती दे डाली। पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज ने उस समय पिताजी को पत्र लिखकर उनके लेख का न केवल समर्थन किया अपितु स्वयं भी गांधी जी के इन विचारों को अपने भाषणों में धज्जियां उड़ा डाली थी।

एक बार सर्वोदयी नेता श्री जयप्रकाश पिलखुवा में सर्वोदय इण्टर कॉलेज का शिलान्यास करने पधारे। उन्होंने धर्म शास्त्रों का मखौल उड़ाने वाली कुछ बातें कह डाली। पिताजी उनसे विचार विमर्श कर उनकी बातों का उत्तर देने लगे। पूरा विवरण समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ। एक दिन स्वामी जी का पत्र मिला–"आपने जयप्रकाश जी को बहुत तर्कपूर्ण उत्तर दिये हैं। इसी प्रकार तेजस्विता के साथ लेखनी चलती रहनी चाहिये।"

इस घटना के बाद पूज्य स्वामी जी दिल्ली आये तो उन्होंने पिताजी को दिल्ली बुलवाया तथा जपप्रकाश जी के साथ हुए वाद–विवाद का पूरा वर्णन रुचि के साथ सुनते रहे। आशीर्वाद देते हुए बोले–"आप तो शास्त्रार्थ महारथियों वाला कार्य कर रहे हैं।" पिताजी उनके श्री चरणों में झुक गये थे–ये शब्द सुनकर।

सनातन धर्म पर कोई भी नेता प्रहार करता तो पिताजी उनके भाषणों व लेखों की कतरने अपने पास सुरक्षित रखते। सनातन धर्म जगत की तमाम गतिविधियों से वे परिचित रहते। स्वामी जी जब कभी दिल्ली आते पिताजी को सूचना अवश्य भिजवाते। पिताजी व मैं धर्म संघ विद्यालय पहुंचते तो महाराज श्री सभी उपस्थित सज्जनों को टरका देते–"खोलो अपना थैला और बताओ देश में क्या–क्या हो रहा है?" मैं उनके अपार स्नेह को देखकर दंग रह जाता। वे घन्टों–घन्टों तक पिताजी से देश की स्थिति पर चर्चा करते रहते। उन्हें लेख लिखने के सुझाव देते। मार्कण्डेय ब्रह्मचारी जी से कहते–"भई, उस लेख का उत्तर रामशरण देंगे। हमने इन्हें बता दिया है।"

वे अकस्मात पिलखुवा पधारे

सन् १९६२ के दिनों की बात है। लोक सभा के चुनाव होने वाले थे।

एक दिन मैं पिताजी के पास बैठा हुआ था कि सामने से एक सज्जन तेजी से आये बोले–"महात्माओं से भरी गाड़ी आप के यहाँ आ रही है।"

पिताजी के साथ–साथ हम सब उठे तथा मौहल्ले की गली तक चहुँचे। गाड़ी तब तक चौक तक पहुंच चुकी थी। हमने देखा कि गाड़ी से शास्त्रार्थ महारथी पं. माधवाचार्य शास्त्रार्थ महारथी उतर रहे हैं। उन्होंने बताया कि स्वामी करपात्री जी महाराज आये हैं तो हम सब हक्के बक्के रह गये।

'धर्म की जय हो' के उद्घोषो के बीच हमने स्वामी जी महाराज का स्वागत किया। उन्हे पिताजी के संग्रहालय में ले गये। देखते ही देखते सैंकड़ों व्यक्ति इकट्ठे हो गये।

स्वामी जी ने पिता जी से कहा–"हम लोग विशेष उद्देश्य से आये हैं।"

पिता जी ने हाथ जोड़ कर कहा–"महाराज श्री आज्ञा कीजिये।"

"हम आपको मेरठ क्षेत्र से रामराज्य परिषद का लोकसभा प्रत्याशी बनाना चाहते हैं–आप का नामांकन पत्र दाखिल कराने आये हैं।"–स्वामी जी ने कहा।

"महाराज श्री, यह तो आप जानते ही हैं कि राजनीति के दाव–पेचों से मैं सर्वथा अनभिज्ञ हूं। मुझे तो आप धर्मसंघ का एक सैनिक ही बना रहने दे। लोकसभा में पं. माधवाचार्य जी महाराज जैसी विभूति जाने चाहिये। आप मेरे घर दर्शन पधारे–क्या यह संसद की सीट से कम महत्व की बात है मेरे लिये।" पिताजी ने हाथ जोड़ कर कहा।

स्वामी जी जोर से हंस कर बोले–"माधवाचार्य जी, हम पहले ही कह रहे थे, रामशरण को जाल में फंसाना आसान नहीं है। इन्हें तो धर्मरक्षा के मोर्चे पर ही लगे रहने दो।"

धार्मिक पत्रकारिता के उन्नायक

पूज्य स्वामी जी ने सनातन धर्म के प्रचार के उद्देश्य से अनेक पत्र–पत्रिकाओ का प्रकाशन शुरु कराया। पूज्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के परामर्श से दैनिक 'सन्मार्ग' का दिल्ली, काशी तथा कलकत्ता से प्रकाशन किया गया। धर्मसंघ के मुख पत्र के रूप में मासिक 'सन्मार्ग' एवं पाक्षिक 'सिद्धांत' प्रकाशित हुआ। काशी के महान पत्रकार पं. गंगाशंकर मिश्र को 'सन्मार्ग' के सम्पादन का भार सौंपा गया। कुछ ही दिनों में 'सन्मार्ग' प्रमुख हिन्दी दैनिकों मे माना जाने लगा।

'सन्मार्ग' के दिल्ली संस्करण का सम्पादन पं. चन्द्रशेखर शास्त्री (वर्तमान में पुरी पीठाधीश्वर श्री शंकराचार्य स्वामी निरंजन देवतीर्थ ही महाराज) करते थे। उन दिनों 'सन्मार्ग' में प्रकाशित पिता जी (भक्त रामशरण दास) के किसी लेख को दिल्ली प्रशासन ने आपत्तिजनक करार दे दिया था। 'सन्मार्ग' में जक कुछ दिनों तक पिताजी के लेख नहीं छपे तो पूज्य स्वामी जी ने पूछा–"रामशरणदास के लेख क्यों नहीं आ

रहे है?'' ''महाराज, उनके गर्म आक्रामक लेखों से दिल्ली प्रशासन नाराज है। इसलिये नहीं छाप रहे''– 'सन्मार्ग'के उप सम्पादक श्री जयवंशी झा ने विनम्रता से उत्तर दिया।

''आप लोग उनकी भाषा को थोड़ा नम्र कर लिया करें। उनके सामयिक लेख तो आने ही चाहिए''–स्वामी जी ने रास्ता सुझाया और अगले ही दिन से पिताजी के लेख पुनः छपने लगे।

इस प्रकार पूज्य स्वामी जी पत्रकारिता के प्रति स्वयं भी रुचि लेते थे। 'सन्मार्ग' व 'सिद्धांत' में प्रकाशित लेखों के बारे में वे प्रायः अपनी सम्मति सम्पादको को देते रहा करते थे। धार्मिक क्षेत्र की पत्रकारिता के उन्नयन में महाराज श्री का सक्रिय अनुपम योगदान रहा।

डा. लोहिया प्रभावित हुए

१९६६ में गोहत्या बन्दी आन्दोलन के सिलसिले में महाराज श्री दिल्ली की तिहाड़ जेल में बन्द थे। मेरे पिता श्री भक्त रामशरणदास जी आर्य संन्यासी महात्मा अमर स्वामी जी के साथ सत्याग्रह करते हुये गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल भेज दिये गये। शास्त्रार्थ महारथी पं. माधवाचार्य शास्त्री तथा उनके तीनों पुत्र भी जेल में बन्द थे। तिहाड़ जेल में स्वामी जी के कारण कुम्भ जैसा धार्मिक दृश्य उपस्थित हो गया था।

मैं गोरक्षा आन्दोलन के प्रचार का कार्य देखता था। अतः प्रतिदिन तिहाड़ जेल जाना होता था। मैंने एक दिन देखा कि समाजवादी नेता डॉ. राम मनोहर लोहिया, जो किसी आन्दोलन के कारण जेल में बन्द थे, पूज्य स्वामी जी के दर्शन करने उनकी बैरक में आये। लोहिया जो समाजवादी थे किन्तु स्वामी जी के व्यक्तित्व व पांडित्य से प्रभावित थे। उन्होंने स्वामी जी से धर्म और गोरक्षा के बारे में अनेक प्रश्न किये तथा उनके तर्कपूर्ण उत्तर सुनकर चकित रह गये। अन्त में बोले–''महाराज, मैं जेल से रिहा होते ही गोहत्या बन्दी के लिये पूरा प्रयास करूंगा।''

हिन्दू महासभा के अध्यक्ष प्रो. रामसिह जी भी तिहाड़ जेल में थे। डा. लोहिया स्वामी जी की बैरक से बाहर निकले तो प्रो. रामसिंह जी ने हंसकर कहा– ''आज तो आप एक महान विभूति के दर्शन करके आ रहे हैं।'' लोहिया जी ने उत्तर दिया–''भाई, मैं स्वामी करपात्री जी के संघर्षमय जीवन के प्रति बहुत आदर रखता हूं। बड़े–बड़े धर्माचार्य नेहरु के आगे दुम हिलाते घूमते थे, साधु समाज सरकारी संथा बना चापलूसी करता रहा है किन्तु मैं प्रारम्भ से ही इस निर्भीक संन्यासी को सरकार के सामने सीना ताने संघर्ष करते देखता रहा हूं।''

वे कुछ देर मौन हुये व बोले–''जब से मैंने स्वामी जी का ''रामराज्य और मार्क्सवाद'' ग्रंथ देखा है तब से मैं यह भी मानने लगा हूं कि यह सन्त घोर अध्ययनशील तथा प्रकांड पंडित भी है। उनसे वैचारिक मतभेद अलग बात हैं किन्तु उनकी विद्वत्ता के समक्ष तो नतमस्तक होना ही पड़ता है।''

इसके बाद डा. लोहिया ने गोरक्षा आन्दोलन के समर्थन में ने केवल वक्तव्य दिया अपितु ब्रह्मचारी प्रभुदत्त जी का अनशन तुड़वाने वे स्वयं वृन्दावन तक गये।

स्वामी जी देश के पहले संन्यासी थे जिन्होंने भारत विभाजन का न केवल वक्तव्यों से विरोध किया अपितु 'भारत अखण्ड हो' का उद्घोष करते हुए सत्याग्रह कर अपने को गिरफ्तार भी कराया। उस समय हिन्दू महासभा के महान क्रांतिकारी नेता स्वातन्त्र्यवीर सावरकार ने कहा था–"आज देश को, हिन्दू समाज को स्वामी करपात्री जी जैसे निर्भीक धर्माचार्य की आवश्यकता है।"

स्वामी जी ने अंग्रेजों के शासन काल में ही गोहत्या के कलंक को दूर करने के लिये अभियान चलाकर ब्रिटिश सत्ता को खुली चुनौती देते हुए कहा था–"धर्म प्राण हिन्दू समाज गोहत्या जैसे कलंक को सहन कदापि नहीं करेगा। वह बड़े से बड़ा बलिदान देने के लिये तत्पर है।"

सरकार की ओर से जब कभी हिन्दुत्व पर प्रहार किया गया स्वामी जी ने निर्भीकता के साथ उस चुनौती को स्वीकार कर मुंह तोड़ उत्तर दिया। यही कारण था कि बड़े-बड़े कांग्रेसी नेता भी स्वामी जी की तेजस्विता की धाक मानते थे।

महिलाओं का उद्धार :-

भारत विभाजन के दौरान पूर्वी बंगाल के नोआखाली व अन्य स्थानों पर मुस्लिम गुण्डों ने हजारों हिन्दू ललनाओं का अपहरण कर उनके सतीत्व से खिलवाड़ की तो पूरे देश में तहलका मच गया था। बाद में कुछ गर्भवती हिन्दू युवतियों को उनके चंगुल से मुक्त कराकर भारत लाया गया तो यह समस्या सामने आई कि महिलाओं का क्या किया जाये?

पूज्य स्वामी करपात्री जी उन दिनों सनातनधर्मी जगत के सर्वमान्य नेता माने जाते थे। सभी की दृष्टि महाराज श्री की ओर थी। उन्होंने धर्म संघ के मंच से स्पष्ट घोषणा की "धर्मशास्त्रों के अनुसार अपहृत की गई हिन्दू युवतियों का कोई दोष नहीं है। यदि वे जबरन बलात्कार की शिकार बनाई गई तो उनका क्या दोष? उन्हें हिन्दू समाज में ससम्मान वापस ले लिया जाना चाहिये गंगाजल का सेवन कराकर उन्हें शुद्ध माना जाना चाहिए।"

स्वामी जी के इस उद्घोष के बाद हजारों हिन्दू युवतियों को समाज में पूर्ववत् स्थान मिल गया था।

इसी प्रकार जब ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने सीमावर्ती क्षेत्रों के लोभ व दबाव के बल पर ईसाई बने वनवासियों को पुनः सनातन धर्म में दीक्षित करने का अभियान चलाया तो स्वामी जी ने कहा था– "विदेशी मिशनरियों ने हमारे धन पर डाका डाला और मौका मिलने पर हमने उसे पुनः प्राप्त कर लिया। इससे अच्छी बात और क्या होगी?"

वाराणसी में मैं एक बार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के पास बैठा था। जर्मनी के कोई संस्कृत विद्वान उनसे इन्टरव्यू लेने आये हुये थे। उन्होंने चलती बार पूछा–''काशी में और किस से मिलना चाहिये?'' आचार्य ने कहा–''आप स्वामी करपात्री जी महाराज से भेंट अवश्य करें। भारत की प्राचीन संस्कृति के वे मूर्त रूप हैं। संस्कृति व संस्कृत के तो वे एकमात्र प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं।'' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वामी जी के प्रति कितनी अगाध श्रद्धा रखते हैं। यह मैंने पहली बार अनुभव किया।

पूज्य महाराज श्री की पिताजी पर कृपा दृष्टि व अपार स्नेह था यह पिताजी के ब्रह्मलीन होने के बाद उस समय पता लगा जब स्वामी जी निधन का समाचार मिलते ही भावविह्वल हो उठे थे। शास्त्रार्थ पंचानन पं. प्रेमाचार्य शास्त्री तथा श्री देवदत्त शास्त्री वाराणसी में उनके दर्शन करने गये तो वे बोले–''रामशरण के अभाव की पूर्ति नहीं हो सकती। सनातन धर्मी जगत में ऐसा खरा व्यक्तित्व व शास्त्रीय मर्यादाओं का संरक्षक दूसरा नहीं है।''

मुझे भिजवाये संदेश में भी उन्होंने कहा था–''उनके चित्र संग्रहालय को बनाये रखना, सनातन धर्म के प्रचार में यथासम्भव योगदान करते रहना। यह तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम ऐसी दुर्लभ विभूति के पुत्र हो।''

पूज्य स्वामी जी के इन शब्दों को पढ़कर मैं धन्य हो उठा था कि हमारा कितना सौभाग्य है कि जो ऐसी आध्यात्मिक विभूति की हमारे परिवार पर इतनी कृपा व स्नेह रहा।

***

अपने वर्णाश्रम के अधिकारानुसार श्रौत–स्मार्त एवं तद्–अविरुद्ध मार्ग पर चलने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वनस्थ, संन्यासी कि बहुता संसार के सभी स्त्री–पुरुष–ये सभी 'साधु' हैं। इन शास्त्रानुमोदित सन्मार्गस्थ साधुओं के त्राणार्थ ही भगवान का अवतार है। दुष्कृतियों का विनाश और धर्म–संस्थापन भी इनके परित्राण में ही उपयुक्त हो जाता है।

–करपात्र स्वामी

न तस्य प्रतिमा अस्ति

–श्री आचार्य रामनाथ सुमन धौलाना, गाजियाबाद

वाणी और आचरण, सिद्धान्त और व्यवहार, विद्या और तप तथा लेखनी और वाग्मिता का अप्रतिम सामञ्जस्य ईसा की इस शताब्दी में यदि कहीं एक व्यक्ति के देखने को मिला है तो निःसन्देह अनन्त श्री विभूषित यतिचक्रचूड़ामणि धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज में हैं। जिन महानुभावों ने एक बार भी उनके दर्शन किये हैं वे उनकी प्रभविष्णुता से प्रभावित हुये बिना नहीं रहे। जिनने उनकी वाणी को एक बार भी सुना है वे उनकी विद्वता, शास्त्रों पर अधिकार एवं विषय प्रतिपादन प्रतिभा की प्रशंसा किये बिना नहीं रहे। जिनको उनके किसी निबन्ध अथवा ग्रंथ का अध्ययन करने का अवसर मिला है वे उनपकी शास्त्रानुकूल विवेचन शैली, लौकिक दृष्टान्तों का पदे–पदे निदर्शन तथा सिद्धान्त पक्ष की पुष्टिपुरःसर प्रतिष्ठा देखकर मुग्ध हुये बिना नहीं रहते। आद्य शंकराचार्य भगवन् के तिरोभाव के उपरान्त ऐसी बहुमुखी प्रतिभा का आविर्भाव निश्चय ही, धार्मिक जगत्पर अकारणकरुण वरुणाकरुणालय भगवान् आशुतोष की कृपा का ही परिणाम था। भक्ति और ज्ञान के क्षेत्र में सिद्धान्त और व्यवहार का अदभुत सामंजस्य देखकर आचार्य बलदेव उपाध्याय का यह कथन सर्वथा सटीक प्रतीत होता है कि –''आध्यात्मिक तत्वों के विवेचन में लौकिक उदाहरणों का समावेश कर स्वामी जी महाराज गम्भीर विषयों का निरुपण उतनी सरलता से सीधी भाषा में करते हैं कि वह श्रोता तथा वक्ता के हृदय में हठात् प्रवेश कर जाता है।·····वे खूसट वेदान्ती नहीं है जो वेदान्त के शुष्क तत्वों के चिन्तन में अपनी प्रतिभा का उपयोग करता है, प्रत्युत, वे रसाभृतमूर्ति, सौन्दर्य सार सर्वस्व भगवान् निकुञ्ज बिहारी की निकुञ्जलीला के परमाराधक भक्तिरसाप्लुत उपासक हैं जिनकी कमनीय वाणी से भक्तिरस के मधुमय कण बिखर पड़ते हैं।''

सनातन धर्म के मूर्त्त अवतार श्रद्धेय स्वामी जी ने अपने ग्रंथों में सनातन धर्म के उन सभी सिद्धान्तों का सशक्त लेखनी से समर्थन किया है जिनके विषय में पाश्चात्य ही नहीं उनके मानस पुत्र भारतीय कहे जाने वाले तथा अपने को वैदिक कहने वाले तथा कथित विद्वानों ने विचिकित्सा प्रदर्शित की है अथवा जिनका खण्डन करने का दुःसाहस दिखाया है। वेदों को अपौरुषेयता, वेदों का स्वतः प्रामाण्य, वेद शाखाओं का शास्त्रीय विवेक, मन्त्र–ब्राह्मण भाग का वेदत्व, रामायण महाभारत काल मीमांसा तथा रामायण मीमांसा जैसे विपुलकाय निबन्ध–ग्रंथों द्वारा जहाँ स्वामी जी ने सिद्धान्तों के आधारभूत वैदिक तथा ऐतिहासिक साहित्य की प्रामाणिकता की पुष्टि की है वहीं अवतार मीमांसा, निराकार से साकार, निर्गुण या सगुण, मूर्ति पूजा, मृतकश्राद्ध, जन्मना जाति तथा स्वर्गलोक आदि की मान्यता का प्रबल युक्तियों द्वारा शास्त्रानुसारी प्रतिपादन किया है। शिव–विष्णु–गणपति–गायत्री तथा भगवती आदि के स्वरूप का

उनका तात्विक विवेचन जहाँ उनके वैदुष्य का बोध कराता है वहीं उनकी अद्वैत वेदान्त निष्ठा का पदे-पदे परिचय कराता है। कतिपय प्रसंग में स्वामी जी द्वारा किये गये विवेचन को देखने से हमारे कथन की पुष्टि सुतरां स्वतः हो जायेगी।

क-''वेद अपौरुषेय है, इनका कोई कर्ता नहीं, यदि कोई कर्ता होता तो उसका स्मरण होता। वैदिक सम्प्रदाय अविच्छिन्न होने पर भी कर्ता का स्मरण न होना अपौरुषेयत्व का हेतु है। प्रलय में भी सम्प्रदाय का विच्छेद नहीं होता, अपितु कर्मोपासनादिजन्य संस्कारों वाले ब्रह्मा को सुप्तप्रतिबुद्धन्याय से गत कल्प के वेदों को आनुपूर्वी का स्मरण हो जाता है।''

'वाचा विरुपनित्यया' तथा 'गो ब्राह्मण विद्धाति पूर्व यो वै वेदाश्च प्रहिणोति तस्मै।' आदि मन्त्र वेद को नित्य बताते हैं और सृष्टि के आदि में ब्रह्मा के निर्माण का उल्लेख तो करते हैं, वेदों के निर्माण का नहीं। परमात्मा ब्रह्मा का निर्माण करके उन्हें वेद दे देता है। बौद्ध, अष्टक, वामदेव, विश्वामित्रादि ऋषियों को तथा वैशेषिक हिरण्य गर्भ को वेदों के कर्ता के रूप में जो स्मरण करते हैं यह उनका अज्ञान है, क्योंकि यदि यह सत्य बात होती तो बोद्धों और वैशेषिकों में मत भेद न होता। कुमार सम्भव आदि के कर्ता के विषय में कोई विवाद नहीं करता। मनु 'अनादि निधना नित्य वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।' कहकर तथा व्यास 'अतएव च नित्यत्वम्' कहकर वेद की नित्यता का ही समर्थन करते हैं। इत्यादि,

ख-निर्गुण-निराकार ब्रह्मा के सगुण-साकार रूप में अवतार लेने का प्रतिपादन करते हुये श्रद्धेय स्वामी जी कहते हैं-वेदान्तवेद्य, अदृश्य, अग्राहय भगवान् अपनी अचिन्त्य दिव्य लीलाशक्ति से परममनोहर, सगुण-साकार सच्चिदानन्द रूप में व्यक्त होकर अमलात्मा परमहंसों के भजनीय बनकर उनके भक्तियोग के विधायक बनते हैं।

तथा परमहंसानां मुनीनाममलग्त्मनाम्।
भक्तियोगविधानाथ कथं पश्येम हि स्त्रियः।। (भागवत)

गुलाब के बीज या नाल में शाखा-उपशाखा, कणक-पत्रादि की उतादिनी शक्ति की अपेक्षा जैसे सौगन्ध्य-माधुर्य सौरम्य सम्पन्न पुष्प के उत्पादन की शक्ति विलक्षण है वैसे ही भगवान् में प्रप........................... की अपेक्षा स्वरूपभूत मधुर मनोहर ....मूर्ति का प्रादुर्भाव करने वाली शक्ति भी है। जब कौतुकी कृपालु की लीला से विलक्षण जीव साकार होता है (क्योंकि सर्वमत से जीव निराकार दशा चिरवयव है) और स्पर्शविहीन आकश स्पर्शयुक्त वायु के रूप में, रूपरहित वायु रूपावन तेज के रूप में ....विहीन तेज रसयुक्त जल के रूप में तथा गन्धविहीन जल गन्धवती पृथ्वी के रूप में अवतीर्ण होता है तब क्या वे प्रभु निराकार होकर भी साकार रूप में प्रकट नहीं हो सकते?

ग-मूर्ति पूजा का समर्थन प्रतिपादन करते हुये स्वामी जी कहते हैं-'स्वामी'

दयानन्द का यह कहना निःसार है कि 'मूर्ति पूजा, नाम स्मरण आदि मिथ्या है क्योंकि वेद आदि सत्य ग्रंथों में इन बातों का कहीं चिह्न भी नहीं पाया जाता है।' मूर्ति पूजा का निषेध करने वाला कोई भी वाक्य वेद में उपलब्ध नहीं है, अतः मूर्तिपूजा का खण्डन करना अप्रमाणित है।

'संवत्सरम्य प्रतिमां यांत्वा राव्युपास्महे।
सा न आयुष्मतीं प्रजां रायस्पोषेण संसृज।' अथर्व ३।१०।३।।

यह मन्त्र मूर्तिपूजा की ही प्रतिपादक है। आर्य समाज मूर्तिपूजा को इसलिये नहीं मानते कि पत्थर की मूर्ति अचेतन है। सदा चैतन्यगुण विशिष्ट सर्वत्र व्यापक परमात्मा की ही उपासना का वे विधान करते है। परन्तु इस मन्त्र में संवत्सर की प्रतिमा की उपासना विहित है। यह भी अचेतन की ही उपासना हुई। स्वामी दयानन्द ने स्वयं ही इस मन्त्र की व्याख्या इस तरह से की है-विद्वान् लोग संवत्सर की जिस क्षण आदि काल के विभाग करने वाली रात्रि की उपासना करते हैं, हम लोग भी उसी का सेवन करें। पृ. ३४६।।

परिमाण, रूप, गुण को सब कोई अचेतन मानते हैं। संवत्सर भी एक वर्ष के परिमाण वाला काल ही है। उसमें रहने वाला गुण विशेष ही परिमाण है। यह काल और उसमें रहने वाला गुण दोनों अचेतन है। इस तरह अचेतन काल की उपासना का विधायक यह मन्त्र मूर्ति-पूजा का समर्थक है। इतना ही नहीं, संस्कार विधि में स्वामी दयानन्द स्वयं लिखते हैं-'ओषधे त्रायस्व' हे औषध तुम इस बालक की रक्षा करो, इसका कुछ भी नुकसान न पहुंचाओ।' यह प्रार्थना कुशा से की जाती है। अचेतन तृण की प्रार्थना करना मूर्तिपूजा ही तो है। 'ओं विष्णोर्द्रंष्ट्रोऽसि' इस मन्त्र में छुरे, को विष्णु की दाढ़ बताया गया है। क्या निराकार की भी दाढ़ हो सकती है? 'ॐ शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता.।' इस मन्त्र में भी छुरे से प्रार्थना की गयी है स्वामी दयानन्द ने इसकी व्याख्या की है-'हे छुरे, तू इस बच्चे को मत मार।' अचेतन छुरे से प्रार्थना मूर्तिपूजा नहीं तो क्या है?

घ-पितृ-श्राद्ध जैसे किसी भी विषय पर श्रद्धेय स्वामी जी की लेखनी चलते ही प्रमाणों का अम्बार उपस्थित हो जाता है। विरोध पक्ष के कुतर्को तथा अर्थ के अनर्थो का अत्यन्त दृढ़ता के साथ खण्डन करते हुये स्वपत्रा की वे पुष्टि करते चले जाते हैं। यम-पितर श्राद्ध के स्वरूप का सविस्तार विवेचन करते हुये वे लिखते हैं-

''यमाय सोमः पवते यमाय क्रियते हविः।
यमं ह यज्ञो गच्छति अग्नि दूतो अरंकृतः।।'' अथर्व १८।२।१।।

स्वामी दयानन्द यहाँ यम पद से न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट आदि का ग्रहण करते हैं तब क्या इन्हीं के लिये सोम आदि की आहुति उनके मत से दी जायेगी? इनके लिये अग्नि को दूत किस तरह बनाया जायेगा? वेद में तो-योममार प्रथमोमर्त्यानाम्······यमं

राजानं हविषा सपर्यत।। अयवं १८। ३। ३।। यमराज को मनुष्यों में सबसे पहले मरने वाला प्राणी बताया गया है। 'यमो वा अकामयत. ।। तै. ब्राह्मण ३। १। ५।। यहाँ पितृराज्य पर विजय पाने के लिये यज्ञ के अनुष्ठान की बात यम के सम्बन्ध में कही गयी है। 'अङ्गिरैभिर्यज्ञियैः. अथर्व ।।१८। १। ६।। इत्यादि मन्त्र में यम का पिता विवस्वान् बताया गया है। पितृगणस का स्वरूप बताते हुये मनु महाराज कहते हैं कि ''हिरण्य गर्भ के मरीचि आदि पुत्रों के पुत्र 'अग्निष्वात' नाम से देवताओं के पितर कहे जाते हैं। अत्रि से उत्पन्न सन्तान 'बर्हिषद' के नाम से बोली जाती है जो देव, दानव यज्ञ गन्धर्वादि के पितर कहे जाते है। ब्राह्मणों के पितर सोमपा कहे जाते हैं जो भृगु की सन्तान हैं, क्षत्रियों के पितर हविर्भुज कहलाते हैं जो अङ्गिरा के पुत्र हैं, वैश्यों के पितर आज्यपा हैं जो पुलस्त्य के पुत्र हैं और शूद्रों के पितर सुकाली है जो वसिष्ठ के पुत्र है। ऋषियों से पितर उत्पन्न हुये और पितरों से देव-दानव। देव-दानवें से यह चराचर जगत् उत्पन्न हुआ है।' श्राद्ध का स्वरूप आचार्य आपस्तम्ब ने इस प्रकार बताया है- 'मनु ने प्रजा के कल्याण के लिये श्राद्ध शब्द को एक कर्म विशेष का वाचक माना है। इस कर्म के देवता पितर हैं। इसमें ब्राह्मण आवाहनीय अग्नि का काम करते हैं। जैसे देवताओं तक हवि को पहुँचाने के लिये उसको अग्नि में अर्पित किया जाता है उसी प्रकार पितरों को कव्य पहुंचाने के लिये श्राद्ध में ब्राह्मण भोजन कराया जाता है। यह कार्य प्रत्येक मास में करना चाहिये। इस प्रकार ब्रह्मपुराण, नृसिंहपुराण, वृहस्पति, मरीचि, याज्ञवल्क्य आदि के प्रमाणों से यह प्रतीत होता है कि केवल मृत व्यक्ति को निमित्त बनाकर ब्राह्मणों को भोजन कराना ही श्राद्धपद का अर्थ है। इसका जीवित पिता, पितामह प्रभृति को आदरपूर्वक भोजन कराने से किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है।

ड-वेदान्त के अद्वैत सिद्धान्त को व्यवहार के धरातल पर सिद्ध करने वाला श्रद्धेय स्वामी जी का अप्रतिम व्यक्तित्व वस्तुतः गुरोर्गरीयान् और महतो महीयान् है। अपने 'सर्वसिद्धान्त समन्वय' निबन्ध में नास्तिक-चार्वाक तक का समन्वय करके वे अपनी प्रतिभाव युक्ति कौशल से बड़े से बड़े विद्वान् को भी हतप्रभ कर देते हैं। वे लिखते है-चाहे कैसा भी नास्तिक क्यों न हो वह अपने अभाव से घबराता है। वह यही चाहता है कि मैं सदा बना रहूं।······जगत् की अनेकानेक वस्तुओं में चाहे जितना भी सन्देह हो, परन्तु 'मैं हूँ या नहीं' ऐसा आत्मविषयक सन्देह किसी को भी नहीं होता। जगत्, परमेश्वर, धर्म, कर्म सभी का अभाव सिद्ध करने वाले शून्यवादी को भी अनिच्छया स्वात्मा का अस्तित्व मानना ही पड़ता है। कारण जो सबके अभाव का सिद्ध करने वाला है यदि वह रह गया तब तो स्वाति रिक्त ही सबका अभाव सिद्ध होगा, अपना अभाव नहीं सिद्ध हो सकता। इस प्रकार सर्वनिराकर्ता, सर्वनिषेध की अवधि के साक्षी स्वात्मा को स्वीकार करना ही पड़ेगा अन्यथा शून्य भी अप्रामाणिक

हो जायेगा। अतः वही अत्यन्त अबाधित सर्वबाध का अधिष्ठान एवं साक्षीभूत अस्तित्व या सत्ता ही भगवान् का 'सत्' रूप है। इसी प्रकार बोध व प्रकाश के लिये प्राणिमात्र में उत्सुकता भगवान् का 'चित्' रूप है और संसार के प्राणिमात्र के देह, इन्द्रिय, मन, बुद्धि-अहंकार आदि की सभी चेष्टाओं व हलचलों का एकमात्र उद्देश्य आनन्द जिसे नास्तिक से नास्तिक भी नहीं नकार सकता, भगवान् का 'आनन्द' रूप ही है। इस तरह सभी 'सच्चिदानन्द' भगवान् के उपासक है।''

इस प्रकार हम कहते हैं कि ज्ञान और भक्ति को सांसारिक क्लेश कष्टों के निवारण का समान रूप से साधन समझने वाले आचार्यों की मणिमाला में सुमेरु स्थानीय, परम श्रद्धास्पद, युगपुरुष धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज अद्वितीय व्यक्तित्व के निधान रहे हैं। उनकी ज्ञानगरिमा, भक्तिमहिमा, शीलशुचित एवं सिद्धान्त निष्ठा वन्दनीय है, अभिनन्दनीय है। उनके भक्त अपने हृदय में उनका ध्यान करते समय कहते हैं कि 'न त्वत्समो ऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव।।' उनका प्रत्यक्ष देहदर्शन न होने पर सहसा मुख से यह वाक्य निकल पड़ता है-

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।

***

श्री राम भक्त करपात्री जी

–महन्त रामकृष्ण दास महात्यागी

मन्दिर श्री राम हनुमान वाटिका, नयी दिल्ली–११०००२

भक्ति रसार्णव व भक्ति सुधा ग्रंथ, पूज्य करपात्री जी महाराज के हृदय में भगवद्भक्ति के उच्छवलित बिन्दु हैं। प्रभु के नाम स्मरण–करते ही, उनके हृदय से भगवान के प्रति व्यक्त होने वाले विशेषण भक्ति प्रवाह के प्रबल प्रवेग का ही द्योतक हैं।

स्वामी करपात्री जी महाराज की दीक्षा भले ही अद्वैत शांकर सम्प्रदाय में हुई हो किन्तु वे मन, कर्म, वचन, हृदय से परम रामभक्त थे। उनकी प्रगाढ़ रामभक्ति अनेकशः भक्तों का प्रेरणा स्त्रोत रहा है व है।

राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक आदि विविध सभाओं व गोष्ठियों में वे श्रीमद् वाल्मीकि रामायण के–

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय, देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्र यमानिलेभ्यो, नमोऽस्तु चन्द्रार्क मरुद्गणेभ्यः।।

उपरोक्त श्लोक से ही मंगलाचरण करते थे वे ''श्री राम जय राम जय जय राम'' का संकीर्तन करते थे व करवाते थे। स्वामी जी को उपरोक्त राम–नाम कीर्तन अतिप्रिय था। और वे कहा करते थे कि यह कीर्तन प्राचीन भारत का राष्ट्रगान है। इसके गान से राष्ट्र का अभ्युदय होता है। ''मार्क्सवाद और रामराज्य'' ग्रंथ में आधुनिक प्रचलित सभी प्रकार के राजनैतिक वादों का तर्क युक्ति व आध्यात्मिकता के आधार पर खण्डन करके राजनैतिक जगत में रामराज्य को ही सुप्रतिष्ठित किया। भारत की अखंडता के रक्षा के लिये अप्रैल १९४७ में सत्याग्रह किया व जेल की यातनाएं सहे। उसी समय विशुद्ध राजनैतिक संगठन का अभाव खटका व विशुद्ध राजनैतिक दल की स्थापना की। राजनैतिक संगठन का नामकरण भी मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के आदर्श को सामने रखकर उन्हीं के नाम के साथ अपने दल का नाम ''रामराज्य परिषद'' रखा।

भगवान राम के आदर्श व मर्यादा का पालन ही विश्व कल्याण का उपाय है ऐसा उनका दृढ़ मत था। सनातन धर्म की परम्पराओं व भगवद् अवतारों या शास्त्रों के विरुद्ध किसी ने कुछ कहा या लिखा, उसका सक्रिय विरोध करते थे। भगवान राम के लीला–चरित के विरोध मे लिखे गये ग्रंथों की समुचित समीक्षा किया जो ''रामायण मीमांसा'' के नाम से प्रकाशित है। उक्त ग्रंथ के परिशिष्ट में रामोपासना को ध्यान, विनियोगादि तांत्रिक विधियों से प्रतिष्ठित किया है।

स्वामीजी नित्य राम रक्षा स्तोत्र का पाठ करते थे अस्वस्थता में भी राम रक्षा स्तोत्र, भगवद् गीता, रामचरित व महिमा का श्रवण करते थे। स्वामी जी का हृदय भगवद् लीला कथा सुनते हुये भर जाता था। अश्रुपात होने लगता था। उनका सम्पूर्ण जीवन राम भक्ति व सनातन धर्म के लिये समर्पित था।

पूज्यपाद श्री करपात्री जी महाराज के त्याग, तप व निष्ठामय जीवन व राम भक्ति से भक्त जनों की प्रेरणा लेनी चाहिये।

***

प्रकाण्ड विद्वान : स्वामी श्री करपात्र जी महाराज

–श्री दिनेश सिंह

संसद सदस्य, १–त्यागराज मार्ग, नई दिल्ली।

सरयूपारीण ब्राह्मणों का ग्राम है ओझोली जनपद गोरखपुर में। हमारे पूर्वज कालाकांकर के राजा साहिब पं. राम निधि ओझा के व्यक्तित्व, धर्मज्ञता, पांडित्य एवं सदाचरण से ऐसे प्रभावित हुये कि उन्हें सपरिवार प्रतापगढ़ के ग्राम भटनी में पधारने का निवेदन किया और इस प्रकार ओझा जी सपरिवार ओझोली से भटनी आकर रहने लगे। यहीं स्वामी जी ने सन् १९०७ में जन्म लिया। इस प्रकार विद्वानों के इस पवित्र कुल से हमारे वंश का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। अपने पिता के धार्मिक संस्कार स्वामी जी में भरने स्वाभाविक थे। स्वामी करपात्री जी हमारे यहाँ के निवासी थे। वह एक प्रकांड विद्वान एवं महात्मा थे, वैदिक, तान्त्रिक एवं शास्त्रीय विषयों पर उन्होंने अत्यन्त मौलिक ग्रंथों की रचनाएं की हैं। ऐसे उद्भट् विद्वान की विद्वत्ता से लोग प्रेरणा ले ऐसी मैं हृदय से कामना करता हूँ।

***

लोकोत्तर व्यक्तित्व

–श्री रामजी मिश्र

प्रसारण अधिशासी, आकाशवाणी, अल्मोड़ा

प्रख्यात है भारत भूमि नर रत्न प्रसू है। इसने समय–समय पर ऐसी अनेक विभूतियों को जन्म दिया है, जिन्होंने अपने कर्म एवं ज्ञान की प्रभावमयी रश्मियों से भारत ही नहीं, अपितु समस्त तमसाच्छन्न जगती को आलोकित किया है। राम, कृष्ण, शंकराचार्य एवं पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज के मननीय जीवन के इतिहास के पृष्ठ इस बात का समर्थन एवं सम्पोषण करते हैं। संसार में ऐसे व्यक्तित्व से विभूषित महापुरुष उँगलियों पर गिने जा सकते हैं जिनकी महत्ता, उदारता, प्रभाव और स्वभाव की विनम्रता से उस समय का सम्पूर्ण वातावरण प्रभावित होने से नहीं बच सकता। वर्तमान समय में इस प्रकार के व्यक्तित्व से सम्पन्न परम पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी थे, जिनके दिल दिमाग ने सारे संसार की चिंतन धारा के मूल को प्रभावित किया है। उनकी उपलब्धि और अविचल चारित्रिक दृढ़ता का समादर मानव जाति के सम्मान का आवश्यक अंग है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में महापुरुषों, विश्वविभूतियों को अपना अंशभू: तेज कहा है–

यद् यद्विभूतिमत् सत्वं, श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं, मम् तेजोऽंशसम्भवम्।।

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि परम पूज्य महाराज श्री विश्व की महनीय विभूति थे उनमें धर्म और राजनीति का अलौकिक सामञ्जस्य प्रादुर्भूत था। वे प्राणिमात्र के कल्याण तथा विश्व के कल्याण की कामना करते थे और यही उनका उद्घोष था। महापुरुषों के वास्तविक चरित्र की अभिव्यक्ति तो उनके नित्य के व्यवहार से होती है। पूज्य महाराज श्री के साथ यात्रा करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त था, यात्रा क्रम में भी उनके कार्यक्रमों, नित्य प्रति के व्यवहारों में कोई लोप नहीं आता था। जनसभाओं में वे नियमपूर्वक समय पर अवश्य पहुंचते थे। कभी–कभी तो भिक्षा करने के तत्काल बाद वे मंच पर पहुँचकर जनसभाओं को सम्बोधित करते थे। श्रद्धालुजन उनमें मूर्तिमान सनातन धर्म मानते थे। राजनैतिक तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में उनके लोकातिशायी अद्भुत चरित्रों का पार नहीं है। किसी भी क्षेत्र में उनके गुणों का अन्त नहीं था, वे धर्म और नियम के बड़े पक्के थे; उनकी सारी जिन्दगी आस्तिकता से देदीप्यमान थी। पूज्य महाराज श्री का व्यक्तित्व एक हीरे के समान था जिसे किसी भी ओर से देखा जाए सुन्दर ही लगता है। वे विभिन्न पर्यवेक्षक को विभिन्न रूपों में दिखाई देते थे यह बात पर्यवेक्षक पर निर्भर थी कि वह उनको किस चश्मे से, किस स्थान पर खड़े होकर, किस पृष्ठ भूमि में देखता है। पूज्य महाराज श्री के व्यक्तित्व में दार्शनिक, राजनेता और तपस्वी के गुण एक साथ अद्भुत सामंजस्य के साथ अनुस्यूत थे।

नास्तिकता के इस दुर्दान्त समय में कभी भी किसी एक व्यक्ति ने भांतक्रांत

विशाल जन समूह के ऐसे दीर्घव्यापी संघर्ष का नेतृत्व और स्वरूप प्रदान करने में इतना बड़ा योगदान नहीं किया था। किसी भी धर्मोपदेष्टा का मूल्यांकन उसे युग और उसकी उन समस्याओं के सन्दर्भ में होना चाहिये जिसका कि उसे सामना करना पड़ा था। स्वामी करपात्री जी महाराज निर्विवाद रूप से अपने इस शताब्दी के चुने हुये महान विशिष्टतम् व्यक्तियों में से एक थे। वे एक युगपुरुष थे जो आज की और आगे की आने वाली पीढ़ियों के लिये प्रकाश स्तम्भ की भांति दीप्य तथा प्रकाश बिखेरते हुये देदीप्यमान हैं। ऐसे महान राष्ट्रनायक सनातन धर्म संरक्षक भारत माता के अनुपम रत्न परम पूज्य महाराज श्री की आत्मा को अपनी श्रद्धामयी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। उनकी कीर्ति दिगदिगन्त व्याप्त है और तब तक रहेगी जब तक गंगा में गंगाजल तथा हिमालय में हिम रहेगा।

***

श्री करपात्री जी

–मनीषा राम शास्त्री, शामली।

वास्वत में अध्यात्म मार्ग पर चलकर ही इस जीव का कल्याण हो सकता है। इस परम सत्य का प्रसार व प्रचार करने के लिए ही ब्रह्मस्वरूप विरक्त सन्त शिरोमणि श्री करपात्री जी महाराज इस धर्म प्राण देश में ज्ञान–वैराग्य और भक्ति के मार्ग को पुष्ट कर अपने अनुभवगम्यशास्त्र ज्ञान तथा विशुद्ध शरीर से एक उदाहरण उपस्थित कर ब्रह्मलीन हो गये।

महाराज ने अपने सदुपदेश से गाँव–गाँव और नगरों, जिलों में पैदल ही भ्रमण कर जो सच्चे धर्म का उपदेश दिया है उसे भूलना कठिन है। हमारे सामने जो उनके द्वारा रचित अमूल्य ग्रंथ हैं। ये ग्रंथ वेदादि शास्त्रों के समान ही आस्तिक मनुष्यों को सन्मार्ग दिखाते रहेंगे। इस प्रकार के ग्रंथों को धार्मिक लोग प्रमाण मान कर यदि स्वाध्याय करते रहेंगे तो माया पिशाची का मानमर्दन होता रहेगा। प्राणिमात्र का मोह मदान्धर नष्ट होकर दु:ख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति होती रहेगी। आज तक किसी सन्त ने इतना ज्ञान का भण्डार नहीं दिया कि जितना ज्ञान वैराग्यरसिक इन महात्मा ने प्रदान किया है। बड़े–बड़े तार्किक भी श्री चरणों में नतमस्तक होते देखे गये हैं कभी किसी धनीमानी नेता के प्रभाव में आकर सत्य सिद्धाँत से यह सन्त कभी विचलित नहीं हुए। देश की धार्मिक, राजनैतिक, बौद्धिक उन्नति का मार्ग अपने प्रवचनो में तथा अपने रचित ग्रंथों में महाराज ने सिद्ध कर दिया कि–''सत्य वक्ता त्यागी पुरुष देश को लाखों में से एक भी नहीं मिलेंगे मैं ऐसे सन्तों का प्राप्त होना भाग्योदय ही मानता हूँ।''

श्री चरणों में नतमस्तक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

वन्दनीय विभूति : स्वामी करपात्री जी

–डा. सुरेन्द्र शर्मा, 'सुशील'
एम.एम., पी–एच.डी. साहित्यरत्न
मन्त्री–भक्तरामशरणदास स्मृति ग्रंथ समिति, गाजियाबाद

यूं तो इस संसार में सब प्राणी जन्म लेते हैं और अपनी बुद्धि से धर्माधर्म का निर्णय करके परलोकवासी हो जाते हैं किंतु ऐसा तो कोई विरला ही जन्म लेता है जिससे उसका कुल भी पवित्र हो जाय और जननी भी कृतार्थ हो जाती है–निम्नाङ्कित पंक्तियों में यही भाव है–

'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था, वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपारसंवित्सुखसागरेऽस्मिंल्लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः।।'
'पुत्रवती जुगति जग सोई।'
'यः प्रीणयेत् सुचरितैः पितरं स पुत्र।'

ऐसे ही विरले, 'महापुरुष' अथवा 'आप्तपुरुष' की संज्ञा प्राप्त करते हैं और दैवी शक्ति के प्रतिनिधि रूप में धर्म का उत्थान और अधर्म का पतन करते हैं। स्पष्ट भी है कि साधारण बुद्धि वाले व्यक्तियों से महापुरुषों की बुद्धि विलक्षण ही होती है, महापुरुष अपने जीवन में देश और धर्म के सुधार की चिंता करते हैं जबकि साधारण बुद्धि वाले 'अयंः निजः परोवेति' की गणना में तल्लीन रहते हैं। आज के इस भौतिकवादी युग में किसी भी जनसमूह का किञ्चिन्मात्र नेतृत्व करने वाले व्यक्ति को समाज झट से 'महापुरुष' की संज्ञा दे देता है फिर चाहे वे 'महापुरुष' देश और धर्म के घोर शत्रु अथवा द्रोही ही क्यों न रहे हों, यह विचारधारा नितांत अनुचित है। सत्य तो यह है कि देश और धर्म के सांगोपांग हितचिंतन में जिसने मनसा वाचा कर्मणा अपना जीवन समर्पित कर दिया हो वही व्यक्ति 'महापुरुष' की संज्ञा से अभिहित होगा। धर्मसम्राट पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ऐसे आप्तपुरुषों में अग्रगण्य थे उन्होंने अपने जन्म से जहाँ अपने वंश को पवित्र कर दिया वहीं उन जैसे सुपुत्र को जन्म देकर कृतार्थ जननी पुत्रवती हो गयी। २०वीं शताब्दी में जिन महापुरुषों ने अपनी प्रगाढ़ विद्वता एवं अक्लांत कर्मनिष्ठा से भारतीय संस्कृति का विशुद्ध नवजागरण किया उनमें पूज्य स्वामी जी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनकी ओजमयी वाणी का जिन लोगों ने दर्शन किया है उनकी आजकल के ढुलमुलपंथियों जैसा नहीं अपितु हिम्राद्रि की भाँति अडिग था, उनका चरित्र जाह्नवी जैसा निर्मल था, गौरक्षा, उनके जीवन की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन चुका था। उनकी इस उल्लेखनीय विशेषता से कौन अभागा हिन्दू अपरिचित है कि जो वे मंच से एक बार कह देते थे वह शास्त्रानुमोदित तो होती ही थी, सिंह की दहाड़ जैसी भी होती थी, साथ ही उनकी स्पष्ट घोषणा होती थी कि – है कोई माई का लाल! जो हमारे प्रश्नों का उतर दे? यदि किसी सज्जन को शास्त्र की कुलकुली उठ

रही हो तो वह मैदान में आकर उसे मिटा ले।'' चाहे सारे संसार ने उसका विरोध किया हो परन्तु जो बात शास्त्र सम्मत होती थी उसे वे डंके की चोट कहते थे। उन्होंने परिस्थिति में ढलकर कभी भी सिद्धान्त में लोच नहीं आने दिया इस विषय में उनका यह वाक्य कितना हृदयंगम करने योग्य है कि ''प्रवाह के साथ मुर्दा बहता है जीवित व्यक्ति प्रवाह को चीरकर अपना रास्ता बनाता है।'' सिद्धान्त की इस दृढ़ता में फिर चाहे उनके सामने भारत विभाजन का प्रश्न हो, या हिन्दूकोड का या गोहत्या बन्दी का या दहेज पर सरकारी नियन्त्रण का या जनेऊ तोड़ो आन्दोलन का या मन्दिर मर्यादा का–स्वामी जी ने सभी पर शास्त्रीय आज्ञा निर्देश करते हुए अपना सिद्धान्त शास्त्रीय पक्ष को ही माना। स्वमतिप्रभव तर्कों से शास्त्रीय सिद्धान्तों पर चोट करने वाले तथाकथित भगवानों, अवतारों, सुधारकों, विद्वानों, पण्डितों, कथावाचकों तथा शोधकर्ताओं आदि पर यदि किसी ने निर्भीक होकर लेखनी चलायी है तो स्वामी करपात्री जी उनमें सर्वप्रथम हैं। उनकी इस लेखनी के नीचे फिर चाहे सम्भोग से समाधि की ओर ले जाने वाला रजनीश आया हो, या अधुनातन अवतार आये हों, या गोलवल्कर जी रहे हों, या महापण्डित राहुल सांकृत्यायन भी क्यों न हो, अथवा विदेश यात्रा के पक्षधर पं. माधवाचार्य शास्त्री हों (केवल पं. जी के पक्ष पर ही पूज्य स्वामी जी ने असहमति प्रकट की थी शेष पक्षों पर दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध था) या कामिल बुल्के हों–पूज्य स्वामी जी ने सभी को शास्त्रीय पक्ष से अवगत कराया था। विनम्र भाषा किन्तु शास्त्रीय पक्ष का प्रबल पोषण उनकी अपनी महती विलक्षणता थी।

स्वामी करपात्री जी के जीवन के विविध पक्षों में जहाँ उनका अद्‌भुत वैदुष्य, असीम त्याग, असाधारण तप, प्रशंसनीय वैराग्य और सनातन सिद्धान्त पोषण आदि सभी की व्यापक प्रसिद्धि विश्व विश्रुत है वही उनके द्वारा प्रतिपादित सनातन सिद्धान्तों की जानबूझकर अवहेलना करके भारत सरकार द्वारा उनको शान्तिभङ्ग करने के आरोप में जेल की दर्दनाक यातनाएं देना भी किसी को अश्रुत नहीं है। कौन हिन्दु धर्मावलम्बी नहीं जानता की गोरक्षा के प्रसंग में पूज्य स्वामी जी और उनके अनेक अनुयायियों को तिहाड़ जेल में वर्णनातीत यातनाएं दी गयी। विश्वस्तसूत्र आज भी भर्राते हुए गले से कह उठते हैं कि उन्हीं दिनों स्वामी जी की एक आँख की ज्योति भी जाती रही, जेल में भगवद्भजन एवं उपदेश में रत श्री करपात्री जी पर लोहे के डंडों से नम्बरी सजा–यापता कैदियों द्वारा अकस्मता भीषण हमला किया गया जिससे स्वामी जी तत्काल बेहोश होकर गिर पड़े कई प्रहार उनके सिर, कमर, हाथ और पैर आदि पर किये गये व तो एक महात्मा ने उनके शरीर पर गिरकर उन प्रहारों को अपने ऊपर ले लिया अन्यथा स्वामी जी का इस आघात से प्राणांत भी हो सकता था।' अब पाठक तटस्थ होकर विचार करें कि जिस महापुरुष ने अपना सम्पूर्ण जीवन भीषण तपस्या और अश्रुत त्याग में लगाकर ईमानदारी से राष्ट्र और धर्म की अहर्निश सेवा की हो,

जिसने अपनी वाचिक सेवा से लाखों करोड़ों लोगों को स्वधर्म (स्वकर्त्तव्य) का पाठ पढ़ाया हो, जिसने करोड़ों लोगों के अभ्युदय के लिये अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को समर्पित कर रखा हो, ऐसे उस दिव्यदेही को जेलों में अमानवीय कष्ट देकर भारत सरकार ने किस कल्याण की कामना की है? जिस सरकार ने ऐसी दिव्य विभूति को अपने शासनकाल में ऐसे कठोर दण्ड दिये हों वह सरकार फिर अपने अभ्युदय का स्वप्न देखे यह कदापि संभव नहीं।

यद्यपि यह सत्य है कि आसुरी शक्ति का जब-जब शासन रहा है तभी उसने साधु-सन्तों को प्रताड़ित किया है किन्तु यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि ऐसे राजाओं का और राज्यों का आज भी पुतला बनाकर फूंका जाता है। स्मरण ओर अनुकरण तो उन्हीं राजाओं और राज्यों का किया जाता है जिनमें वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे सन्तों के सत्परामर्श से ही शासन व्यवस्था चलती हो। राजा दिलीप के राज्य में सुव्यवस्था का और कोई ईति न होने का एकमात्र कारण महर्षि वशिष्ठ का ब्रह्मवर्चस्व ही था-

पुरुषायुषजीविन्यो तिरातङ्कातिरीतयः।
यन्मदीयाः प्रजास्तस्य हेतुस्त्वद्ब्रह्मवर्चसम्।। **रघुवंश, १/६३**

आज सम्पूर्ण समाज को यदि समत्व का भाव और पारम्परिक सौहार्द्र का प्रत्यक्ष दर्शन करना है तो उसे भौतिकवाद की आँधी से अपने घटक को बचाकर, आध्यात्मिक उपायों को मनसा वाचा कर्मणा अपने जीवन में उतारने वाले साधु-सन्तों और महात्माओं के चरणों में जाना होना, स्वकर्तव्य को समझना होगा साथ ही शास्त्रीय सिद्धान्तों में श्रद्धा विश्वास रखकर उनका यथासम्भव पालन करना होगा, तभी इस विषम विश्व में शान्ति सम्भव है। शाश्वत सिद्धान्त है कि विश्व शांति मिलेगी। पूज्यपाद स्वामी करपात्री जी महाराज के प्रति सच्चे श्रद्धासुमन समर्पित इसी शिव संकल्प से करें कि उनके सदपुदेशों का यथासम्भव, यथाशक्ति पालन करें।

बोलो भक्त और भगवान की जय।

***

कर्मनिष्ठ तपस्वी, करपात्री स्वामी

–वाणीभूषण राजेन्द्रमोहन कटारा सम्पादक निरावरण–हाथरस।

इस युग में इस वर्तमान समय में प्राय: साधु सन्त महात्मा वैरागी और संन्यासी अपने को संसारी लोगों से कहीं अधिक ऊपर मानते हुये कर्मो से विरक्ति दिखाते हैं और देश, धर्म, समाज के हित का कोई भी कार्य करने में आगे नहीं आते तब निर्विवाद रूप में यह बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि ब्रह्मलीन स्वामी श्री करपात्री जी महाराज एक ऐसे संन्यासी हुए जिनका जीवन आरम्भ काल से जन–जन के कल्याण में संलग्न रहा। वे यदि चाहते तो न जाने कितनी बड़ी चल और अचल सम्पत्ति अर्जित कर जाते परन्तु बार–बार सिद्धियों के घिराव में आने पर भी निस्पृह निष्कलंक और निरपेक्ष ही बने रहे। मैंने प्रथम बार रामघाट की कुटी पर माघ के कट–कटाते शीत और वर्षा के फुहारों में भी उड़िया बाबा जी के सत्संग में उन महान विभूति को दैनिक नरवर पाठशाला से पधारते और तीन–तीन घण्टे तक एक आसन से केवल एक लंगोटी और कटिवस्त्र धारण किये पाषाणवत् बैठे देखा। एक दो दिन नहीं महीनों यही क्रम रहा। मुझ पर उस वीतराग तपस्वी के साधन की गहरी छाप पड़ी और सम्पर्क स्थापित हुआ। बहुत दिनों के पश्चात् एक बार स्वामी जी महाराज आलू वाले बाबा के स्थान पर पधारे और मेरे आग्रह पर जब भिक्षा को आये तो कर ही (हाथ) आपका भोजन पात्र था जल भी अंजुली से ग्रहण करते थे इसीलिये लोग उन्हें करपात्री कहने लगे थे। आगरा में आपके ब्रह्म सम्बन्धी तथा भक्ति परक संयुक्त प्रवचनों ने बड़े से बड़े विद्वानों को मुग्ध कर प्रशंसा करने को विवश कर दिया। मैं उस समय खिलाफत आन्दोलन के प्रभाव में पड़कर भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में कार्यरत था तभी स्वामी जी महाराज को भी स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में अभिमत पाया और जब उनसे बातें हुई तो उन्होंने कहा कि जहाँ अन्य प्रकार के उपाय किये जा रहे हैं वहाँ परमपिता परमात्मा से भी स्वतन्त्रता के लिये अनुष्ठान उपासना आराधना द्वारा शक्ति प्राप्ति करने में हम प्रयत्नशील है। यद्यपि वे ब्रह्मविद् वरिष्ठ थे इसमें सन्देह नहीं परन्तु नारद, विश्वामित्र और समर्थ रामदास की भांति अधार्मिकता को भी समाप्त करने का दृढ़ निश्चय किये हुये थे जिसे देश और विदेश के अधिकांश लोगों ने देखा और जाना। 'मार्क्सवाद और रामराज्य' तथा अन्य अनेक ग्रन्थ लिखकर तथा अपने व्यक्तिगत धार्मिक कार्यक्रमों को चलाते हुये राजनीतिक क्षेत्र में भी अनवरत प्रयत्नशील रहे। गोरक्षा तथा भारत में रामराज्य की स्थापना के लिये जो कार्य महाराज श्री ने किया वह इतिहास के पृष्ठों मे सदैव स्मरण किया जाता रहेगा। शंकराचार्य जैसे धर्म गुरु का पद भी आप कर्तव्य के आगे अधिक नहीं मानते थे। महाराज श्री की आभा–प्रतिभा मेधवपन तथा सनातन धर्म की कट्टरता एवं उत्कृष्ट साधन किसी से छिपे नहीं हैं। आपने धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थतियों के सम्बन्ध में समय–समय पर जो भी भविष्यवाणियाँ की वे सभी की सभी यथा समय सही उतरती रहीं।

एक बार नहीं अनेक बार कई एक देश के बड़े नेताओं से जिनका नामोल्लेख उचित नहीं, पूछा कि गोरक्षा एवं रामराज्य के सम्बन्ध में पूज्य स्वामी करपात्री जी की माँग का मिलकर समाधान क्यों नहीं कर लिया जाता तो उनका स्पष्ट उत्तर था कि स्वामी जी के पास ऐसी सिद्धि है कि सामने पहुँचने पर व्यक्तियों के विचार ही बदल जाते हैं और देश में धर्म-निरपेक्षता का जो वातावरण बनाया गया है उनके तर्कों और दलीलों के आगे टिक न सकेगा। इसलिये सरकार के बड़े लोगों ने उनके सामने न जाने का ही निश्चय कर रखा है। जिसका प्रमाण श्री गुलजारी लाल जी नन्दा अभी विद्यमान है। किसी भी विषय के शास्त्रार्थ में अपना पक्ष जिस दृढ़ता से आप रखते थे वह वास्तव में देखते ही बनता था। धार्मिक मर्यादाओं और भारतीय संस्कृति के विरुद्ध कोई और किसी की कैसी भी बात सुनना उन्हे भाता नहीं था। प्रत्येक स्थिति और प्रत्येक काल में शास्त्र को ही प्रमाण मानना उन्हें अभीष्ट था। इससे अधिक और क्या हो सकता है। एक बार तिलकराम के अहाता में एक सम्मेलन में ब्रह्मलीन ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वाकी कृष्णबोध आश्रम जी महाराज ने कहा था कि 'करपात्री स्वामी साक्षात् शंकर के अवतार हैं और इनकी बात न मानने पर जनता तथा देश का हित नहीं हो सकता। कई बार लोगों के द्वारा यह कहे जाने पर कि निरावरण नाम बदल दिया जाये महाराज श्री ने स्वीकार नहीं किया और बहुतों के समक्ष अपना आशीर्वाद देते हुये स्पष्ट कहा कि कटारा जी को हमारी अन्तः प्रेरणा प्राप्त है और वास्तविकता यह है कि वे ईश्वर की भाँति हम सबके सदा साथ हैं।'

***

भविष्य दृष्टा महापुरुष

-परमविदुषी ऋषि कन्या सुश्री चित्रा देवी शर्मा, बहादुरगढ़, (हरियाणा)

'भारतीय वैदिक संस्कृति का प्रबल पोषक, मध्यकालीन मार्तण्ड बिना अवसर के ही अस्त हो गया। शिवलोकवाली अमर-सेनानी धर्मावतार श्री करपात्री जी महाराज के भौतिक संघात से यद्यपि हमारा वियोग हो गया है तथापि चिदानन्दमय एवं यशस्वी देह से वे अनन्तकाल के लिये अमर हो गये हैं। स्थान स्थान पर शोक सभाएँ हुयी और हो रही हैं। मुझे भी सभा के लिये कहा गया। किन्तु मेरे लिये तो यह असमंजस उपस्थित हो गया, कारण कि -

''सोचिय गृही जो मोह बस, करै कर्म पथ त्याग।
सोचिय यति प्रपंच रत, विगत विवेक विराग।।''

शोक सभाएँ वे करें जिन्होंने महाराज जी के विचारों का समर्थन न किया हो अथवा जिनकी आँखों से वह महापुरुष ओझल हो गये हों। मैंने तो सन् १९३६ में

हरिद्वार में भविष्य दृष्टा इस महापुरुष का प्रथम प्रवचन सुना था। उसी दिन से अपना तन, मन, धन इस उपदेष्टा के मूलभूत विचारों के अनुसार कार्यों में अर्पण कर दिया। फिर शोक क्यों?

मेरी आँखों से यह महापुरुष ओझल भी नहीं हुये। कारण, कि 'भक्ति सुधा', के तीनों भाग, 'विचार पीयूष', 'वेदार्थ-पारिजात', 'मार्क्वाद और रामराज्य', 'पूंजीवाद-समाजवाद और रामराज्य', तथा 'रामायण मीमांसा'-जैसे ग्रंथों के रूप में, जब तक मैं रहूँगी, वे साहित्य लोकालोक के दिव्य पुरुष मेरे सन्मुख ही रहेंगे। फिर शोक क्यों?

'लोकेऽस्मिन्द्विधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानष।'

शास्त्र सम्मत इन दोनों निष्ठाओं का इस लोक संग्रही महात्मा ने पूर्णतया पालन किया। ''द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमण्डलभेदिनी' आजन्म धर्म कार्यरत इस महात्मा का मेरे हृदय पर वैसा ही प्रभाव रहा है जैसा कि धर्म-शास्त्रों ने धर्म रक्षक का कहा है। फिर शोक क्यों? कार्य विशेष के द्वारा ही सत्पुरुष अपने आप को प्रगट करते हैं। स्वामी करपात्री जी के कार्यों में विश्व कल्याण की सद्भावना निहित है।

'पर उपकार वचन मन काया। संत सहज सुभाव खगराया।।'

ज्ञान-वैराग्य-निधि, अनुपम प्रतिभा सम्पन्न यह महात्मा प्रस्थान से पूर्व ही भारतीय धर्म-धरा पर अपना कीर्ति-स्तम्भ कर चुके थे।'

-०''श्री करपात्री-कीर्ति-स्तम्भ''०-

हे जगद्गुरु श्री पाणिपात्र, हे श्रुति दिवस के सूर्य प्रचण्ड।
हे वसुधा-भूषण गतत्रिदूषण, चिदानन्दधन बोध अखण्ड।।
हे श्रुतिपथपालक, कलिकुलघालक, अरिदलशासक शान्तमना।
हे स्वयम्भू अंशक धर्म प्रशंसक, दम्भ, दम्भ प्रध्वंसक तपोषना।।
ऋषिवन्दित भारत वसुधा पै, जब मोह पटल विस्तार हुआ।
तब दिव्यज्ञान आलोक लिये, 'श्रीचरणों' का अवतार हुआ।।
धर्म की जय हो अधर्मनाश, यह 'रामवाण' जय घोष लिये।
पुनः धर्मयुद्ध में कूद पड़े, सब सुरों ने जय जयकार किये।।
कहीं अद्वैत-ज्ञान कहीं कर्मकाण्ड, कहीं विधि उपासन वर्णन की।
कहीं वर्ण-धर्म उपदेष्टा बन, शोभा दरशायी नरतन की।।
कहीं 'धर्मसंघ' संस्थापन कर, कहीं 'महिलासंघ' बनाया है।
कहीं रामराज्य जयघोष किये, धर्मध्वज नभ में फहराया है।।
कहीं वेदशास्त्र सम्मेलन करः कहीं शास्त्रार्थ रचाया है।
कहीं ज्योतिष जल पै काई को, प्रयत्न से दूर हटाया है।।
कहीं ब्रह्म कुमारियाँ बादल बल, सूरज को ढकने आती हैं।

पै वचन पावन की रचना में, वे अपना पता न पाती है।।
शिष्य संग अनेक लिये, जब पोपपाल चढ़ि आया ळै।
तब शास्त्रार्थ की घोषणा में निज सिंगीनाद बजाया है।।
हे धर्मवीर! हे कर्मवीर! जग में कीन्हा उजियारा है।
भौतिक बादल भेदन में, अद्‌भुत प्रयास तुम्हारा है।।
'श्रुति पथ' रघुवर अनुगामी, था कर्तव्य कर्म से काम तुम्हें।
तुम स्वयं भू हो या वृहस्पति हो, क्या कहूं अभिनन्दन में?
मैं 'चित्रा' अकिंचन धन्य हुई, श्री चरण कमल रज वन्दन में।।

महाराज श्री के कीर्तिस्तम्भ पर मेरे ये भाव सुमन समर्पित है। आशा है मेरी यह श्रद्धाञ्जलि उस दिवंगत दिव्य पुरुष को अवश्य ही स्वीकृत होगी।

***

ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज साक्षात्भगवतावतार

-लेखक-पं. गोवधर्ननाथ मिश्र सदस्य

केन्द्रीय धर्मसंघ एवं रामराज्य परिषद, अध्यक्ष पण्डित परिषद हाथरस।

नमस्तस्मै, मुनीन्द्राय, कुर्म हे करपात्रिणे।
येषां वेद भाष्येण, चकास्ति सकलं जगत्।।
सनातनस्य धर्मस्य, सत्सिद्धान्त प्रचारकाः।
ब्रह्मलीनाः स्वामिपादाः श्रीमन्तः करपात्रिणः।।

धर्म सम्राट् यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित प्रातः स्मरणीय परमाराध्य गुरुदेव स्वामी करपात्री जी महाराज साक्षात्भगवतावतार थे। सन् १९३२ में पूज्य श्री स्वामी जी महाराज विचरते हुये हाथरस नगर में स्वर्गीय पं. शिव लाल गौड़ के आश्रम पर पधारे। उस समय हाथरस नगर को दूसरी काशी कहते थे। जिस समय पूज्य स्वामी जी महाराज ने यहाँ के विद्वानों के मध्य श्रीमद्भागवत प्रवचन किया, उस समय समस्त विद्वान मण्डल तेजस्वी वीतराग निर्भीक संन्यासी की अलौकिक प्रतिभा देखकर अवाक् रह गया तथा उस समय पूज्य महाराज श्री की भाषा इस प्रकार थी "जिस प्रकार माया ब्रह्म के संश्लेषजन्य अन्योन्याश्रय की अविच्छिन शक्यता के सम्बन्धाकर्ष और समवायी कारण से हेतु हेतु महं भू तत्व का आविर्भाव होता है, उसी प्रकार रेल की सवारी में स्थावर चीजें जंगम प्रतीत होती हैं।" पुनः महाराज श्री सन् १९३६ में श्रीकृष्ण, ब्रह्मचर्याश्रम पर पधारे, उस समय श्रीमद्भागवत के एकादश स्कंध पर- "कोनु राजन्निन्द्रिय वान मुकन्द चरणाम्बुजम्।" की व्याख्या निरन्तर दो सप्ताह तक

बोलने पर भी पूर्ण न हो सकी। यह देखकर समस्त विद्वान कहने लगे कि यह संन्यासी तो साक्षात् शुकावतार है।

एक बार वृन्दावन धाम में ब्रह्मीभूत पूज्यपाद स्वामी श्री उड़िया बाबा के आश्रम का निर्माण हो रहा था, उस समय पूज्य श्री चरण भी स्वामीरामदेव जी महाराज के साथ वृन्दावनधाम में मिर्जापुर वाली धर्मशाला में वेणुगीत पर 'नद्यस्तदातदुपधार्य मुकुन्द गीत, मावर्त लक्षित मनोभव मग्नवेगाः।' की तन्मय होकर व्याख्या कर रहे थे। सौभाग्य से मैं भी वहाँ पहुंच गया। उस पीयूष वर्षा के समय व्रज मण्डल के बड़े-बड़े सम्प्रदायाचार्य कहने लगे कि श्रीमद्भागवत हमारी निधि है। यह संन्यासी इस प्रकार के भाव कहाँ से इस प्रकार विलक्षण ढंग से प्रवचन कर रहा है। इसी श्लोक पर महाराज श्री निरन्तर चिरकाल तक बोलते रहे।

जिस समय भारतीय संसद भवन में मन्दिर प्रवेशादि बिलों द्वारा सनातन धर्म पर कुठाराघात होना प्रारम्भ हुआ, उस समय पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने भारत के विद्वानों व सनातनियों को साथ लेकर सन् १९४० ई. विजयादशमी के शुभ दिन 'धर्म संघ' की स्थापना की थी, उस समय पराम्बा की कृपा से चार जय घोष प्राप्त हुये "धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो।"

वीतराग तपोभूमि समस्त शास्त्र पारंगत विद्वान महात्मा पूज्य श्री स्वमी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज जो आगे चलकर ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य के रूप में विराजमान हुये, जिनकी मेरे ऊपर पुत्रवत् असीम कृपा रही तथा मेरी हठ को कभी नहीं टाला-उन साक्षात् नारायण स्वरूप को साथ लेकर अखिल भारतीय धर्म संघ का प्रचार-प्रसार किया तथा उन्हीं महापुरुष के सक्रिय सहयोग से अ.भा.धर्म संघ के तृतीय महाधिवेशन पर भारत की राजधानी देहली में शतमुख कोटि होमात्मक महायज्ञ किया जो पाण्डवों के यज्ञ के पश्चात् इस युग में प्रथम यज्ञ था। यह महायज्ञ ३० जनवरी से ९ फरवरी सन् १९४४ ई. तक हुआ जिसमें समस्त भारत के मूर्धन्य विद्वानों ने भाग लिया। इस यज्ञ के यजमान तपोमूर्ति पं. जीवनदत्त जी महाराज नरवर तथा यज्ञाचार्य महोपाध्याय श्रीधर शास्त्री वारे नासिक थे। इस महायज्ञ में अनन्त श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी की कृपा से ५१ वें कुण्ड पर मुझे भी सौभाग्य मिला। धर्म सम्राट् श्री स्वामी जी महाराज को यज्ञ युग प्रवर्तक कहा जाने लगा। कानपुर, काशी, बम्बई, उदयपुर, मेरठ, हाथरस आदि अनेक स्थानों पर श्री चरणों की कृपा से यज्ञ हुये तथा अ.भा. धर्म संघ का प्रचार-प्रसार तीव्र गति से हुआ। १५ अगस्त सन् ४७ में जब भारत स्वतन्त्र हुआ तब अनेकों धर्म विरोधी बिल सरकार की ओर से लोक सभा में पारित होने आये, उस समय पूज्य महाराज ने हिन्दू समाज के सभी कर्णधारों एवं राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संघ संचालक श्री गुरु गोलवलकर जी को बुलाकर कहा कि 'हिन्दू धर्म की रक्षार्थ कोई राजनीतिक संस्था को जन्म देकर धर्म विरोधी बिलों का विरोध किया जाये।' उस समय श्री गुरु जी ने कहा कि हम तो राजनीति को चीमटे से भी नहीं छूवेंगे। तदनन्तर भारत हृदय सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

ने अखिल भारतीय रामराज्य परिषद नामक संस्था को जन्म दिया और सन् १९५० में अ.भा. रामराज्य परिषद का प्रथम अधिवेशन राजस्थान के जयपुर नगर में सम्पन्न हुआ।

जब भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू तथा मिस्टर जिन्ना भारत माँ की दायीं बायीं भुजा को काटकर हिन्दुस्तान–पाकिस्तान बना रहे थे, तब भारत माँ के वीर सपूत श्री स्वामी जी ने धर्म रक्षार्थ अखिल भारतीय धर्म संघ की ओर से सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया। लाखों वीरों ने दिल्ली में सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। चूँकि हांथरस में तो पूज्य श्री चरण ने धर्मसंघ की स्थापना सन् १९४२ में ही कर दी थी अतः सत्याग्रहियों को बुलाने के लिये मेरठ से धर्मसंघ के नेता आयुर्वेदाचार्य पं. श्याम सुन्दर जी वाजपेयी व हिन्दू नेता श्री गंगाधर जी तिवारी जब हाथरस पधारे तक यह शरीर धर्मवीरों के जत्थे के साथ दिल्ली चल पड़ा? देहली धर्म संघ भवन से धर्मवीरों का जत्था लेकर संसद के द्वार पर जयघोषों के साथ भारत अखण्ड हो, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित हो, शासन विधान शास्त्रीय हो आदि नारे लगाये जा रहे थे उसी समय भारी पुलिस फोर्स द्वारा गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये। तब मथुरा के पं. लक्ष्मणदत्त जी गोस्वामी एवं श्री कृष्णानन्द सरस्वती जी जेल में ही अमर शहीद हो गये। एक बार नहीं अनेकों बार यह शरीर जब–जब धर्मसंघ, रामराज्य परिषद, अखिल भारतीय गोरक्षा महाभियान समिति की ओर से सम्पूर्ण गोवधबन्दी आन्दोलन में दिल्ली, पटियाला आदि जेलों में पूज्य महाराज श्री के आदेशानुसार कर्तव्य पालन करता रहा है।

अखिल भारतीय रामराज्य परिषद के प्रचार हेतु ब्रह्मलीन वीतराग अनन्त श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ने समस्त भारत में पूज्य श्री चरण के साथ परिषद की शाखाएँ नगर–नगर ग्राम–ग्राम में जाकर स्थापित की।

समस्त राजनीति शास्त्र पारंगत श्री स्वामी करपात्री जी महाराज जब वृन्दावन कुम्भ के सुअवसर पर पधारे तब मैंने वृन्दावन में श्री चरण से रामराज्य परिषद की शाखा हाथरस में स्थापित करने को प्रार्थना की तो महाराज श्री ने दूसरे ही दिन सन् १९५१ में स्वयं हाथरस पधार कर रामराज्य परिषद की स्थापना की तदनन्तर तपोमूर्ति अनन्त श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज के आदेशानुसार सन् १९५२ के आम निर्वाचन में परिषद प्रत्याशी श्री पं. राजेन्द्र मोहन कटारा को चुनाव लड़ाया।

सन् १९५७ के आम निर्वाचन में पूज्यपाद श्री स्वामी जी ने विधान सभा के लिये स्वयं मुझे परिषद प्रत्याशी बनाकर खड़ा किया तथा मुझे साथ लेकर चुनाव क्षेत्र का दौरा किया।

श्री चरण की कृपा से सन् ५२ से सम्प्रति नगर पालिका हाथरस पर रामराज्य परिषद का अधिकार रहा। पालिका सदस्यों के अतिरिक्त पालिकाध्यक्ष पद पर श्री हुकमचन्द्र ओसवाल रहे। एक बार पुनः निर्वाचन में रामराज्य परिषद प्रत्याशी पं. राधा रमण ज्यो. शास्त्री प्रबल प्रतिद्वन्दी सेठ लखमीचन्द्र गुड़िया को प्रचण्ड मत से पराजित कर विजयी हुये।

ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने अनेक बार कहा कि रामराज्य परिषद का अधिक अधिकार हाथरस नगर पालिका पर दीखता रहा। गत निर्वाचन में भी परिषद समर्थित सज्जन विधान सभा चुनाव में विजयी होकर उतर प्रदेश विधान सभा की शोभा बढ़ा रहे हैं।

धर्म सम्राट् महाराज श्री के तत्वावधान में नगर हाथरस के बागला कालिज मैदान में अखिल भारतीय रामराज्य परिषद का अष्टम महाधिवेशन दिनांक १३ फरवरी से ५ मार्च १९५८ ई. तक तरुण तपस्वी श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी सरस्वती महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ, जो आज ज्योतिष्पीठ एवं द्वारिका शारदापीठ पर जगद्‌गुरु जी के रूप में आसीन हैं। उक्त महाधिवेशन में ब्रह्मलीन शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्ण बोधाश्रम जी महाराज, विदिशापीठाधीश्वर श्री स्वामी आत्मदेवाश्रम जी, पूज्य श्री स्वामी परमानन्द जी सरस्वती, महामहोपाध्याय पं. प्रतिवाद भयंकर जी, मन्त्री स्वामी नरोत्तमाश्रम जी महाराज, परम विदुषी राजकुमारी श्री प्रभावती जी राजे, ऋषि कन्या श्रीमती चित्रादेवी जी आदि के अतिरिक्त अनेक विद्वान महात्मा सन्त, महन्त, विदुषियाँ तथा भारत के प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधियों ने इस विशाल आयोजन में उपस्थित होकर हमारे गौरव को बढ़ाया। रामराज्य महाधिवेशन के साथ अष्टोत्तरशत् श्रीमद् भागवत सप्ताह महायज्ञ को काशी, वृन्दावन, मथुरा, देहली आदि व स्थानीय विद्वानों ने सम्पन्न कराया। अखिल भारतीय रामराज्य परिषद के महामन्त्री पद को पं. नन्दलाल जी शास्त्री एम.ए. एल.एल.बी. भूतपूर्व सांसद सम्प्रति अनन्त श्री स्वामी नन्दनन्दनानन्द जी सरस्वती जी (शास्त्री स्वामी जी) महाराज सुशोभित कर रहे थे। हमारी क्या सामर्थ्य थी यह तो पूज्य श्री चरण एवं तपोमूर्ति जगद्‌गुरु जी की महती कृपा एवं आशीर्वाद से ही सम्पन्न हुआ।

ब्रह्मलीन धर्म सम्राट् श्री स्वामी जी महाराज प्रायः प्रतिवर्ष ही हाथरस पधारने की कृपा करते थे। वह देहली से काशी या काशीसे देहली जाते-आते समय चौबे वाले महादेव एतिहासिक स्थल पर गाड़ी खड़ी कराकर मेरे समीप किसी ब्रह्मचारी के द्वारा सूचना पहंचा देते, मेरे उनके पास पहुंचने पर प्रसन्न मुद्रा में कहते थे कि 'मन्त्री जी सभा का प्रबन्ध कहाँ करना है?'

परमाराध्य गुरुदेव श्री स्वामी जी महाराज ने स्वयं मुझे श्री विद्या की दीक्षा से दीक्षित किया है। महाराज श्री की असीम अनुकम्पा का हम वर्णन कहाँ तक करें। वह हाथरस नगरी के विद्वानों, धार्मिक जनों को अपने अमृतोपदेश के द्वारा कथा सुधामृत पान कराकर कृतार्थ करते थे।

अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक परात्परपूर्ण पुरुषोत्तम प्रभु महाराज श्री के अनुयायी वर्ग को सद्बुद्धि प्रदान करें कि पूज्य श्री चरण के बताये हुये मार्ग का अनुसरण करें तथा उनके शेष संकल्प को पूरा करें।

***

श्री करपात्री जी की दिनचर्या

–श्री जगन्नाथ स्वामी एवं रामावतार कौशिक (दीक्षानाम लक्ष्मणानन्दनाथ)
शाहदरा, दिल्ली।

महाराज श्री रात के एक बजे जग जाते थे। शौच, दन्तधावन, स्नान आदि से निवृत्त होकर दो बजे साधना में बैठ जाते थे और ४ बजे तक प्रातः स्मरण, रश्मिमाला, महाषोडशी जप आदि करते थे। ठीक ४ बजे प्रातः भ्रमण पर चल पड़ते, रास्ते में वांछाकल्प–लता पाठ की ४ आवृत्ति करते थे। फिर चण्डीपाठ चालू कर देते और ६ बजे अपने निवास स्थल पर पहुंच जाते तथा शेष चण्डीपाठ को सम्पूर्ण करते। तब तक सेवारत ब्रह्मचारी महाराज जी की श्री विद्या पूजा को भली भाँति टेबल पर लगाकर तैयार कर देता। ७ बजे महाराज जी श्री विद्या की पूजा में बैठ जाते और साढ़े नौ बजे तक सम्पूर्ण श्रीविद्या सांगोंपांग कर लेते थे, खंगमाला, त्रिशतीं एवं ललितासहस्रनाम सहित। साढ़े नौ बजे के बाद योगासन और सूर्य नमस्कार करने लग जाते थे। साढ़े दस बजे तक इसे पूर्ण करके १२ बजे तक भाष्य लिखते थे अथवा विद्यार्थियों, विद्वानों को शास्त्र अध्ययन कराते थे। बारह एक बजे तक स्नान कर श्रीविद्यास की पंचोपचार पूजा करते थे। एक बजे दरवाजा बन्द करके साढ़े चार बजे तक भाष्य लिखते थे। ४।।–५ बजे तक पुनः आसन करते थे। पांच बजे भिक्षा करने बैठते और स्वाद का त्याग करके १५ मिनट में भिक्षा पूरी कर लेते जो (नमक, मिर्च, खटाई का त्याग कर उदर पूर्ति हेतु होती थी।) सवा पांच बजे से महाराज श्री पुस्तक पढ़ने बैठ जाते थे। यदि कोई मिलने आता और स्वयं कुछ पूछता तो उत्तर देते थे साढ़े सात बजे तक। बस यही दो घन्टे महाराज श्री के दर्शन हेतु भक्तों के लिए होते थे। दिन छिपने के बाद महाराज श्री शिव महिम्न स्तोत्र, शिव कवच, मानस स्तोत्र, उपमन्यु स्तोत्र एवं विष्णु सहस्रनाम का पाठ करते थे। बीच–बीच में लोगों के प्रश्नों का समाधान भी करते थे साढ़े सात बजे तक। साढ़े सात बजे स्नान करके आठ बजे से रुद्राभिषेक, पुरुष सूक्त, श्रीसूक्त (लक्ष्मी सूक्त सहित), अभिषेक गणपति, अथर्वशीर्ष अभिषेक करते और साढ़े नौ बजे बिस्तर पर लेट जाते। दस बजे तक गहरी निद्रा में सो जाते थे। तकिये पर सिर रखते ही कुछ मिनटों में गहरी नींद आ जाती थी।

यह थी महाराज श्री की निदचर्या रात के एक बजे से रात दस बजे तक पूरे २१ घन्टे तक महाराज लगातार साधना में लगे रहते थे। नवरात्रों में विशेष पूजा चलती थी। दुर्गा संपुट पाठ करते थे। विस्तृत श्रीविद्या पूजा करते थे लगातार १२ बजे मध्याह्न तक एक कन्या और सुवासिनी की पूजा करके उसे वस्त्र और दक्षिणा देते थे।

महाराज जी पूर्ण सिद्ध थे–आठों सिद्धियां उनके पास थी–महाराज जी महा त्रिपुर सुन्दरी स्वरूपा थे।

युग प्रवर्तक स्वामी करपात्री जी महाराज

–रामचन्द्र शर्मा, शास्त्री

एम.एम., साहित्यरत्न, साहित्याचार्य।

मुझे स्मरण है, मैं छठी कक्षा में पढ़ता था मेरे पूज्य बाबा तथा ब्रह्मलीन स्वामी श्री भगवानाश्रम जी महाराज सायंकाल तखत पर बैठकर भजन की प्रतियोगिता किया करते थे। हम कौतूहलवश देखा करते थे कि कौन देर तक बैठे। घण्टों ही यह क्रम चलता। हमारे कुआँ तथा चक पर उनकी कुटी बनवा दी थी। एक दिन मेरे पूज्य पिता जी तथा ताऊ जी बात कर रहे थे कि ब्राह्मण को सिवा दण्डी संन्यासी के किसी के चरण स्पर्श नहीं करने चाहिए, वे ही ब्राह्मणों के गुरु होते हैं तथा सबसे बड़े तपस्वी संन्यासी श्री करपात्री जी महाराज हैं। पात्र भी कोई नहीं रखते, बस हाथ ही उनका पात्र है। बस उनके दर्शन करने की इच्छा बालक हृदय में जम गयी। दिल्ली के प्रसिद्ध ऐतिहासिक शतमुख कोटि होमात्मक यज्ञ में उनका प्रथम दर्शन हुआ। तत्कालीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज तथा स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज तथा अन्य महात्माओं के दर्शन भी हुए।

धर्मसंघ की स्थापना होने के बाद प्राय: आना जाना भी हुआ। अभी धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज युवा ही थे कि उन्हें अनेक आन्दोलनों का संचालन करना पड़ गया। भारत की स्वतन्त्रता के साथ–साथ देश के टुकड़े करने की बात भी जोड़ी गयी। आज की पीढ़ी कहती है कि उसे समय कैसे लोग थे जिन्होंने भारतमाता के टुकड़े करवा दिये और स्वयं नेता बने रहे। सत्य यह है कि उस समय अनेक नेताओं ने खण्डित स्वतन्त्रता का विरोध किया, स्वातन्त्र्यवीर सावरकर डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री जय प्रकाश नारायण आदि सभी ने विरोध किया परन्तु सबका विरोध मौखिक ही रहा यह देश का दुर्भाग्य था। कुछ नेता लोग तो स्वतन्त्रता देने के अंग्रेजों के वचन को मात्र बहकावा ही जान रहे थे। उन्होंने १५ अगस्त सन् १९४७ को अनेक स्थानों में दूर पार्कों, बागों में सामूहिक कार्यक्रम रखे और भाषणों में कहा कि लंका विजय के पश्चात भालू बन्दरों ने सूपनखा को देखा और प्रसन्नता से चिल्ला पड़े कि सीता जी आ रही है, उन्हें पता ही नहीं था कि सीता जी कैसी है। ठीक इसी प्रकार स्वतन्त्रता प्राप्ति का बहकावा है। हां यह तरुण तपस्वी उस समय प्रबल आन्दोलन चला रहा था, यदि अन्य नेताओं का सक्रिय सहयोग इन महाराज श्री करपात्री जी को मिला होता तो शायद आज ये बुरे दिन न देखने पड़ते और सम्भवत: भारत के टुकड़े न हुए होते।

धर्म सम्राट स्वाकी श्री करपात्री जी महाराज शास्त्रीय–मर्यादाओं के प्रति अनन्यनिष्ठ थे। इस कारण वह सिद्धांत पर किसी प्रकार का समझौता नहीं करते थे। प्रत्येक विषय पर चाहे वह शास्त्रीय हो अथवा राजनैतिक, उनका चिंतन मौलिक था और विषय निरूपिणी

शैली विलक्षण। धर्म, राजनीति, दर्शन एवं भारतीयता का जितनी गहनता से उन्होंने अध्ययन किया है उस गहराई तक प्राय: कोई भी विचारक नहीं पहुंच पाया। जिस निष्ठा से तपस्यापूर्वक धर्म के सूक्ष्म सिद्धांतों का इन्होंने साक्षात्कार किया वह सर्वथा विलक्षण है। मंच पर घण्टा आध घण्टा प्रभावशाली भाषण कर विद्वान कहलाना और बात है परन्तु समस्त विश्व के विचारकों, मनीषियों को शास्त्रार्थ के लिये आमन्त्रित कर मञ्च पर तर्क द्वारा अपने वेद शास्त्रों के मत की स्थापना करना तथा विद्वानों को निरुत्तर कर देना सर्वथा अलग बात है। यह शक्ति केवल महाराज श्री करपात्री जी ही में थी। सिद्धांत के इतने कट्टर होते हुए भी व्यवहार में अत्यन्त सरल थे, बालक का सा स्वभाव।

संस्मरण - सर्व विदित है कि महाराज श्री हर समय शास्त्रचिंतन में अथवा लिखने मे व्यस्त रहते थे। मैं सरकारी काम से वाराणसी गया था, पूज्य जगद्‌गुरु जी महाराज ने आदेश कर दिया था कि धर्मसंघ में ही ठहरना। मैं नारद घाट पहुंचा तो ज्ञात हुआ कि महाराज जी किसी से मिलते नहीं आजकल, किसी व्रत के लिये तैयारी कर रहे हैं। वह शायद ४० दिन कल्प करने का उपक्रम था। स्थानीय सेवकों के साथ ही मैं पूज्य गङ्गाशङ्कर जी मिश्र के पास से उठकर ऊपर चला गया। श्री करपात्री जी महाराज विराजमान थे, सब मौन थे। कुछ देर बाद मुझसे सीधा प्रश्न किया कि दिल्ली से आ रहे हो, महाराज कहाँ है आजकल? मैंने उत्तर दिया कि महाराज श्री जगद्‌गुरु जी आजकल मेरठ के गाँवों में भ्रमण कर रहे हैं, शायद पुरा में हैं। इतने नियम के होते हुये भी मुझ अकिंचन से सीधा प्रश्न किया, यह देख कर सब मेरी ओर देख रहे थे। मेरे कार्य के विषय में भी पूछा कि कितने दिन निरीक्षण करना है और मेरे निवास आदि के लिये भी श्री नारायण ब्रह्मचारी से पूछा।

गोरक्षा के लिये सत्याग्रह में तिहाड़ जेल में थे। श्रीमद्भागवत की पीयूष वर्षिणी कथा जेल में भी होती थी। कथा बाँचते हुये ही उन पर लोहे की सरियों से आक्रमण कर दिया गया। भक्तों ने उनके आस-पास लेट कर बचाव किया परन्तु फिर भी भयंकर चोटें लगी। सिर तथा आँखों में भी गम्भीर चोट लगी। जेल से छूटने पर उन्हें उनके अनन्य भक्त श्री जुगल किशोर डङ्ग अपने निवास स्थान पर ले गये। उपचार हो रहा था, धीरे-धीरे स्वास्थ्य लाभ भी। मैं भिक्षा लेकर पहुंच गया। हाथ की चक्की के पिसे आटे में दूसरा आटा मिला कर ले गया था। महाराज जी को प्रणाम करके बैठना ही चाहता था कि थैला उन्हें दिखाई दे गया। अपने ब्रह्मचारी को आवाज दी जोर से बोले, अरे जल्दी चलो, ब्राह्मण की भिक्षा आयी है, संभालो। सब पदार्थ वहाँ सुलभ होते हुये सभी बड़े आदमियों की उपस्थिति में मेरी साधारण सामग्री को इतने आदर से स्वीकार करना, यह सर्वथा अप्रत्याशित बात थी। जो व्यक्ति जी जान से सेवा कर रहे हैं संकेत मात्र पर सर्वस्व निछावर करने को तत्पर है उनके सामने इस भिक्षा को यह सम्मान दिया। यह दरबार दीन को आदर।

मैं छोटे मुँह बड़ी बात नहीं कह सकता। इसी कारण इन युग पुरुष के विषय में अपनी ओर से कुछ नहीं कहना चाहता कि वे कृतभगवत्साक्षात्कार महापुरुष थे परन्तु किसी पुनीत आचरण के वयोवृद्ध विद्वद्वरिष्ठ तेजस्वी तपस्वी संन्यासी की कही बात को तो कह ही सकता हूं। श्री धर्मसंघविश्वविद्यालय चूरू के कूलपति पूज्यपाद अनन्त श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी महाराज ने एक घटना सुनायी। एक बार धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी के साथ वे जगदलपुर के पास कहीं जा रहे थे। समय की बचत के कारण वे यात्रा रात में ही किया करते थे। रास्ता घोर जंगल में था। आधी रात का समय था कि गाड़ी का टायर फट गया, अब क्या करें–'निशा घोर गम्भीर बन, पंथ न सुनहु सुजान।' भूखे प्यासे तो थे ही, घोर जङ्गल, निर्जन स्थान। महाराज श्री बोले, देखो जल की आवाज आ रही है, कहीं नदी होगी, जल ले आओ। आधा मील चलकर नदी मिल गयी जल ले आये। जल पिया। जङ्गल में पड़े-पड़े तीन दिन बीत गये, वहाँ कोई आया न गया। भगवान को नैवेद्य के नाम पर केवल काजू, बादाम के कुछ दाने मात्र थे उनके पास। फल, अन्न आदि कुछ भी तो नहीं। भगवान को नैवेद्य में चढ़ाये एक तोला काजू, बादाम के दानों को ही सब जने प्रसाद रूप में ले लेते। अब क्या करें साथ में ब्रह्मचारी, सेवक तथा ड्राइवर भी हैं, सब तो विविक्तवासी नहीं। ये तो तितुक्षु नहीं हैं, इनके लिये क्या करें? हाँ पूजा अवश्य उत्कृष्ट रूप में सम्पन्न हो रही थी। महाराज श्री बोले, एक काम करो। अन्नपूर्णा स्तोत्र का पाठ करो, फिर देखो क्या होता है? पाठ किया। बड़ा आश्चर्य हुआ कि जहाँ तीन दिन से कोई भी आया न गया वहाँ एक वृद्धा आयी। दुर्गम निर्जन वन में वह वृद्धा आकर बोली–पता चला तुम्हारी गाड़ी खराब हो गयी है, तो दाल है चावल हैं। खिचड़ी बना लो, खा लो। धन्य हो माँ अन्नपूर्णा। इसके बाद फोरेस्ट डिपार्टमेन्ट के अधिकारी आये कि स्वामी श्री करपात्री जी की गाड़ी खराब हो गयी है। उन्होंने रस्सी बंधवाकर गाड़ी खिंचवायी, धक्का लगवाया, गाड़ी चल पड़ी। कितना बड़ा चमत्कार है।

मैं तो भगवान की कृपा महारानी का आभारी हूं कि हमें महाराज श्री करपात्री जी तथा ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज के पावन चरणों में बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ अन्यथा ऐसे तपोपूत महान तपस्वी धर्मरक्षक, अद्भुत शास्त्रार्थ महारथी, देश-भक्त, गोभक्त, धर्मवेत्ता, युग पुरुष हजारों वर्ष बाद ही कभी इस धरा पर आते हैं। अब कलियुग में कब आते हैं, आते हैं या नहीं, कौन जाने। उनकी पावन स्मृति में शत-शत नमन।

***

सनातन संस्कृति के सजग प्रहरी
श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

–शास्त्रार्थ पंचानन प्रेमाचार्य शास्त्री एम. ए.

यतिचक्र चूड़ामणि धर्म सम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज उन लोकोत्तर युग पुरुषों की प्रथम पंक्ति में सन्निविष्ट हैं जिनका आविर्भाव एक ज्योतिपुंज के रूप में अनेक शताब्दियों के अनन्तर हुआ करता है। सनातन संस्कृति के मानदण्डों की सर्वांगीण सुरक्षा में सर्वात्मना समर्पित तथा सद्विचार एवं सद्व्यवहार के समन्वय सूत्रधार के रूप में स्वामी करपात्री जी महाराज को सर्वदा स्मरण किया जायेगा। उन्होंने अपनी अगाध और अटूट शास्त्रनिष्ठा का ऐसा जाज्वल्यमान स्वरूप प्रस्तुत किया था कि अपने जीवन काल में ही वेद विहित आचार–विचार परम्परा के प्रतीक रूप में प्रतिष्ठित हो गये थे। वैदिक मान्यताओं के प्रति कट्टर निष्ठा और व्यावहारिक उदारता का ऐसा मणि कांचन संयोग विरल ही देखने में आता है।

वेदों से लेकर हनुमान चालीसा तक समस्त आर्ष ग्रंथों को परम प्रमाण जानने की डिण्डिम घोषणा स्वामी जी भरी सभा में किया करते थे और उक्त आर्य साहित्य के विरुद्ध मुँह खोलने वाले अथवा लेखनी चलाने वाले महानुभावों का शास्त्र सम्मत एवं तर्क संगत प्रतिवाद करना उनके जीवन का सार सर्वस्व था। शास्त्र विरोधियों की मान्यताओं के अपने प्रमाण तुन्दिल तीखे तर्को से परखचे उड़ाते समय वे अतिशय कठोर हो जाते थे। परन्तु उनकी यह कठोरता केवल शास्त्रीय विवेचन तक ही सीमित थी। मानवीय स्तर पर तो वे मृणाल के समान कोमल एक वीतराग संन्यासी ही थे। विरोधियों के साथ भी अपनेपन से भरा मृदुल व्यवहार करना उनकी सहज विलक्षणता थी। जो उन्हें द्वन्द्व मुक्त महापुरुषों की श्रेणी में सम्मिलित कर देती थी। उनकी संरक्षकता में काशी से प्रकाशित होने वाला विचावर पत्र ''सिद्धान्त'' उनके इस स्वभाव का दर्पण था। ''सिद्धान्त'' में एक स्तम्भ हुआ करता था–वादे वादे जायते तत्वबोधः। इस स्तम्भ के अन्तर्गत शास्त्रज्ञ विरोधियों के मन्तव्यों को भी प्रकाशित किया जाता था और फिर उन मन्तव्यों का खण्डन किया जाता था। ऐसी प्रशंसनीय शास्त्र निष्ठा और ऐसी स्पृहणीय उदारता क्या सर्वत्र सुलभ हो सकती है?

लम्बी शृंखला–शास्त्रीय मान्यताओं को लेकर अपने जीवन काल में स्वामी जी को जिन लोगों से भिड़ना पड़ा है, उसकी शृंखला बहुत लम्बी है। राहुल सांकृत्यानन, भदन्त आनन्द कौशल्यायन, चतुरसेन शास्त्रीं, डा. अबेदकर, विनोबाभावे, डा. काणे, तथाकथित भगवान् रजनीश आदि प्रत्यक्ष शास्त्र विरोधियों के शताधिक नाम ऐसे हैं जिनकी मान्यताओं को खरी–खरी आलोचना स्वामी जी ने अपने ग्रन्थों में की है।

बेल्जियम के निवासी ईसाई प्रचारक फादर कामिल बुल्के ने ''राम कथा''

नामक एक पुस्तक लिखी जिस पर प्रयाग विश्वद्यिालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि से सम्मानित किया। उक्त पुस्तक में फादर बुल्के ने राम कथा की खूब सराहना की है और रामचरित की व्यापकता, आदर्श-मयता आदि का भी विस्तृत उल्लेख किया है। परन्तु पुस्तक के प्रारम्भ में अपनी सहज ईसाई प्रकृति के कारण डाक्टर बुल्के ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि रामचरित्र एक काल्पनिक कथानक मात्र है, इसका ऐतिहासिक सन्दर्भ कुछ भी नहीं है। इस स्थापना ने स्वामी जी को विक्षुब्ध कर डाला। उन्होंने अपने 'रामायण मीमांसा' नामक वृहत्काय ग्रंथ में बुल्के को आड़े हाथों लिया और सैंकड़ों पृष्ठों में रामचरित्र की ऐतिहासिकता सिद्ध की।

इसी प्रकार पुरातत्व के प्रख्यात विद्वान् डाक्टर हंसमुख जी, सांकलिया ने जब यह घोषणा की कि अयोध्या की खुदाई करने पर पुरातत्व सम्बन्धी ऐसे कोई प्रमाण नहीं मिले हैं जिनके आधार पर श्रीराम को ऐतिहासिक पुरुष कहा जा सके तो स्वामी करपात्री जी महाराज ने डाक्टर सांकलिया को प्रयाग कुम्भ के अवसर पर धर्म संघ शिविर में आमन्त्रित किया और उन्हें पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर ही रामचरित्र की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का आश्वासन दिया। किन्तु डाक्टर सांकलिया ने सामने आने का साहस नहीं दिखाया। तब उनके पक्ष को भी "रामायण मीमासां" में ध्वस्त किया गया।

इतना ही नहीं, जब भारतवर्ष के शिरोमणि मानस व्याख्याता पंडित राम किंकर उपाध्याय ने अपने "मानस मुक्तावली" नामक ग्रंथ की भूमिका में "यदि राम ऐतिहासिक पुरुष है......." इत्यादि वाक्य लिखकर "यदि" के द्वारा श्रीराम की ऐतिहासिकता के आगे प्रश्न चिन्ह लगा दिया तो स्वामी जी ने उन्हें भी क्षमा नहीं किया उनका तीव्र प्रतिवाद किया।

कामुक चेष्टाओं को समाधि दशा का माध्यम सिद्ध करने वाली आचार्य रजनीश की बहुचर्चित पुस्तक "संभोग से समाधि" का मुंह तोड़ उत्तर स्वामी जी ने दिया और अपने अकाट्य तर्कों की झड़ी लगाकर रजनीश की बोलती बन्द कर डाली, यह तथ्य सर्व विदित ही है।

पाश्चात्य विचारकों और उनकी जूठन चाटने में स्वयं की गौरवान्वित अनुभव करने वाले आधुनिक विचारकों के लिये स्वामी जी का बहुमूल्य ग्रंथ "मार्क्सवाद और रामराज्य" किसी वज्राघात से कम नहीं है। इस विपुलकाय ग्रंथ में कार्लमार्क्स को पश्चिमी दर्शन का प्रतिनिधि मानकर उसके विश्व विश्रुत "दासकैपिटल" ग्रंथ का तथा सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, हीगेल, कॉन्ट आदि अन्य प्रमुख पाश्चात्य दार्शनिकों की विचारधारा का ऐसा प्रौढ़ खण्डन प्रस्तुत किया है कि पाठक आश्चर्य विजड़ित हो जाता है। इसी ग्रंथ में चार्ल्स डार्विन के विकासवाद सिद्धान्त की जो निस्सारता प्रमाणित की है, वह आधुनिक बुद्धिवादियों की आँखें खोल देने के लिये पर्याप्त है।

दर्शन ग्रंथों की भाँति वेदों पर भी विदेशी विद्वानों और उनके अन्धानुयायी भारतीय पंडितों ने जी भर कर प्रलाप किया है। उन सभी की मान्यताओं को प्रमाण तर्को की कसौटी पर कस कर अपने विशालकाय ग्रंथ ''वेदार्थ पारिजात'' में स्वामी जी ने सर्वथा निर्मूल कर डाला हैं। इसी ग्रंथ में स्वामी जी ने प्रकरण-वशात् आर्य समाज प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती की वेद-विरुद्ध स्थापनाओं की भी पर्यालोचना की है।

अपनों से भी आमने सामने-''तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ'' इस भगवद् वाक्य पर स्वामी करपात्री जी की अटूट आस्था थी। यह वाक्य एक प्रकार से उनके जीवन का मूल मन्त्र ही था। आर्ष ग्रंथों को परम प्रमाण मानने और मनवाने में उनका इतना प्रबल आग्रह था कि शास्त्र प्रमाण न मानने वाले कुछ ऐसे विशिष्ट व्यक्तियों के साथ भी उनका वैचारिक सामन्जस्य नहीं हो पाया जिनकी राष्ट्रभक्ति और हिन्दुत्व निष्ठा पर रंचभर भी सन्देह नहीं किया जा सकता। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ-संचालक श्री गुरु गोलवलकर जी के साथ स्वामी करपात्री जी का मतभेद एकमात्र इसी तथ्य पर आधारित था कि वे संघ की रीति-नीति किसी आर्ष ग्रंथ के अनुसार निर्धारित क्यों नहीं करते? भारतीय जनसंघ तथा रामराज्य परिषद् के एकीकरण का प्रस्ताव लेकर जब पं. दीनदयाल उपाध्याय ने स्वामी जी से भेंट की तो उपाध्याय जी से भी स्वामी जी ने यही अनुरोध किया कि वे किसी भी प्राचीन ग्रंथ को अपने उद्देश्यों के आधार रूप में स्वीकार कर लें तथा वर्णाश्रमाचार-सम्मत समाज व्यवस्था को अपना लक्ष्य घोषित कर दें तो तुरन्त दोनों संघटन एक हो सकते हैं। परन्तु किसी कारणवश श्री उपाध्याय जी को स्वामी जी का उक्त अनुरोध स्वीकार न हो सका और परिणामतः वार्ता भंग हो गयी।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की केवल ध्वज को प्रमाण मानने की पद्धति स्वामी जी को पसन्द नहीं थी। परिणाम स्वरूप निर्द्वन्द्व होकर स्वामी जी ने ''विचार नवनीत'' नामक गुरु जी के ग्रंथ की कड़ी प्रत्यालोचना लिखी और सभी प्रमुख संघी नेताओं को भी खरी-खरी सुनाई।

महामहोपाध्याय पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी वैदिक विज्ञान के प्रौढ़ व्याख्याता थे तथा सनातन धर्म के दिग्गज शास्त्रार्थी के रूप में प्रतिष्ठित थे। धर्म संघ के मंचों पर आयोजित सर्ववेद शाखा सम्मेलनों में उन्हें शिरोमणि वेद वेत्ता के रूप में सदा आमन्त्रित किया जाता था और स्वामी जी उनके पक्ष को दत्तावधान होकर सुना करते थे। चतुर्वेदी जी ने ''वैदिक-विज्ञान और भारतीय संस्कृति'' नाम से एक अत्यन्त सुन्दर उपादेय ग्रंथ की रचना की है जिसे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना ने पुरस्कृत कर प्रकाशित किया है।

जीवन के उत्तरार्ध में श्री चतुर्वेदी जी काशीवास करने की अभिलाषा से दुर्गाकुण्ड पर अवस्थित धर्म संघ शिक्षामण्डल में ही निवास करते थे। मैं उनके

दर्शनार्थ धर्म संघ गया तो संयोगवश वहीं स्वामी करपात्री जी महाराज के दर्शनों का सौभाग्य भी प्राप्त हो गया। वहीं ज्ञात हुआ कि स्वामी जी आजकल महामहोपाध्याय जी के उक्त ग्रंथ का खण्डन लिख रहे हैं। मैंने अत्यन्त चकित होकर जब महाराज से निवेदन किया कि यह ग्रंथ तो सनातन धर्म के एक धुरन्धर विद्वान् ने लिखा है और पुरस्कृत भी है, इसके खण्डन का क्या उद्देश्य? इसके उत्तर में स्वामी जी ने हंसकर मुझसे प्रति-प्रश्न किया-क्या पुरस्कृत हो जाने से कोई पुस्तक अकाट्य भी हो जाती है?

वस्तुत: वेदों की पौरुषेयता और अपौरुषेयता को लेकर चतुर्वेदी जी के साथ स्वामी जी का मतभेद था। स्वामी जी वेदों को अपौरुषेय मानते थे और मन्त्रान्तर्गत शब्द, उनके अर्थ और क्रम तीनों को अनादि किंवा ईश्वरीय सिद्ध किया करते थे। इसके विपरीत चतुर्वेदी जी केवल अर्थ (ज्ञान) को ईश्वरीय मानते थे शब्द और क्रम को साक्षात्कर्ता ऋषियों द्वारा प्रणीत बताया करते थे। इसी सूक्ष्म विचार भेद के आधार पर खण्डनमन्डन का उक्त क्रम प्रारम्भ हुआ था।

धर्म संघ और सनातन धर्म-पूज्य पितृ चरण शास्त्रार्थ महारथी पं. माधवाचार्य शास्त्री जी के उल्लेख बिना स्वामी करपात्री जी महाराज की जीवन गाथा अपूर्ण ही रहती है, यह एक निर्विवाद तथ्य है क्योंकि ये दोनों ही महापुरष समान उद्देश्य की पूर्ति के लिये आजीवन धर्म विरोधियों से जूझते रहे। जन-जीवन में वेदोक्त-मर्यादाओं के प्रचार प्रसार तथा धर्मानुकूल आचार-विचार परम्परा को सुप्रतिष्ठित करने के जिस पुनीत उद्देश्य से धर्म संघ की स्थापना की गयी थी उसकी सर्वांगीण परिपूर्णता में शास्त्रार्थ महारथी पं. कालूराम शास्त्री, कविरत्न पं. अखिलानन्द शर्मा जी के साथ साथ श्री महारथी जी का अविस्मरणीय योगदान रहा है। इतना ही नहीं धर्म विरोधियों किंवा शास्त्र निन्दकों की कटूक्तियों को धैर्य पूर्वक सुनना और फिर मुस्कराते हुये चुटकियों में उन्हें चूर चूर कर डालने की विलक्षण शास्त्रार्थ कला का धर्म संघ के मंच पर सूत्रपात निस्सन्देह रूप में महारथी जी द्वारा ही सम्पन्न हुआ था। उस अद्भुत शास्त्रार्थ शैली की अवतारणा ने धर्म की प्रामाणिकता को अधिकाधिक व्यापक तथा उत्तरोत्तर तेजस्वी बनाया था।

दिल्ली महायज्ञ ने समस्त भारतवर्ष में स्वामी करपात्री जी महाराज के अप्रतिम वैदुष्य तथा वर्चस्वी धर्म नेतृत्व का तूर्यनाद किया था। अगणित सनातन धर्मियों के अन्तस्थल में स्वामी जी दिव्य आलोक बनकर इस महायज्ञ के बाद प्रतिष्ठित हुये थे। कौन नहीं जानता कि इस महायज्ञ के प्रमुख आधार स्तम्भों में श्री करपात्री जी अग्रगण्य थे। वेद शास्त्र विरोधियों की भरी सभा में ललकार उनकी कुतर्कपूर्णमान्यताओं के समूलोन्मूलन का महत्वपूर्ण कार्य उक्त महायज्ञ में श्री महारथी जी ने ही संभाला था। और तब से लेकर निरन्तर चालीस वर्षो तक, धर्म संघ के मंच से शंकाओं की लंका फूंकने का दुस्तर कार्य शास्त्रार्थ महारथी जी सम्पन्न करते रहे। इसीलिए सभास्थल

में जब भी खंडन मंडन का अवसर उपस्थित होता तो स्वामी करपात्री जी मुस्कुराकर घोषणा कर दिया करते थे कि यह विभाग 'हमारे शास्त्रार्थ महारथी जी' का है, वे ही इस प्रकरण को सम्भालेंगे।

स्वामी जी के मुख से निकले हुये "हमारे शास्त्रार्थ महारथी जी" इन शब्दों में उनके हृदय का अगाध स्नेह और दृढ़ विश्वास प्रतिबिम्बत रहा करता था। इस स्नेह और पारस्परिक विश्वास का ही परिणाम था कि स्वामी जी महारथी जी की बातों का अधिकाधिक समादर किया करते थे। इस सन्दर्भ में मेरी स्वयं की अनुभूत एक घटना है।

उडुपी के मध्व संप्रदायाचार्य श्री स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज के साथ स्वामी करपात्री जी का हरिद्वार में शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ में स्वामी ही ने बड़े संरम्भ के साथ शांकर अद्वैतमत का पक्ष लेते हुये माध्व मत का निराकरण किया। ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम के स्नातक मेरे कई सहाध्यायी विद्वान् उक्त शास्त्रार्थ में उपस्थित थे। उनका तथा अन्य प्रत्यक्षदर्शी महानुभावों का यह निष्कर्ष था कि इस शास्त्रार्थ समर में किसी भी पक्ष की जय अथवा पराजय का तो प्रश्न ही नहीं था। हाँ, स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज के अविच्छिन्न धारा प्रवाह की भाँति निःसृत होने वाले सानुप्रास संस्कृत संभाषण को सुनकर विद्वन्मण्डल अधिक रोमाञ्चित हो उठता था। यद्यपि दोनों ही धर्माचार्यों ने इस शास्त्रार्थ को सामान्य शास्त्रीय विचार के रूप में ग्रहण किया था। परन्तु स्वामी करपात्री जी महाराज के कतिपय अन्धभक्तों ने अतिरिक्त आवेश में आकर देश का विचार किये बिना उक्त शास्त्रार्थ का विवरण "माध्वमुख चपेटिका" जैसे घटिया शीर्षक से पुस्तक रूप में छाप डाला जिसे पढ़कर समूचा वैष्णव समुदाय उद्विग्न हो उठा। क्षोभ और लज्जा उत्पन्न करने वाला तथ्य यह था कि धर्म संघ के महाधिवेशनों में स्वामी विद्यामान्य तीर्थ महाराज माध्य संप्रदायाचार्य के रूप में सिंहासनासीन होकर सर्वदा विराजमान हुआ करते थे। ऐसे मान्य धर्माचार्य के साथ शास्त्रार्थ और कोढ़ में खाज की भाँति निम्न स्तरीय पुस्तक छापकर फिर उनकी छीछालेदार!! ये दोनों ही बातें धर्म संघ की गरिमा को गिराने वाली थी। विक्षुब्ध वैष्णव समुदाय में धर्म संघ के बहिष्कार के स्वर उभरने लगे थे।

इस गृहयुद्ध की विभीषिका से भरे अनीप्सित गरमागरम वातावरण में श्री शास्त्रार्थ महारथी जी दिल्ली धर्म संघ में स्वामी करपात्री जी से मिलने गये। मैं भी उनके साथ था। नमस्कारादि के अनन्तर श्री महारथी जी ने दो टूक अपना अभिमत प्रस्तुत किया। वे बोले–महाराजा! हमारी आपके प्रति श्रद्धा एक अद्वैतवादी संन्यासी के रूप में कदापि नहीं है। हम तो आपको सर्व सम्प्रदाय समन्वित सनातन धर्म के निर्विवाद नेता के रूप में मानते हैं। मध्य संप्रदायाचार्य के साथ आपके शास्त्रार्थ ने वैष्णव वर्ग को खिन्न कर डाला है। मैं स्वयं श्री वैष्णव मतानुयायी हूँ। यदि आप वैष्णव सिद्धान्त की वेदानुकूल नहीं मानते हैं तो मैं शास्त्रार्थ के लिए सन्नद्ध हूँ। पुनः दिल्ली में शास्त्रार्थ मंच लगवाइए।"

यह सुनकर एक हृदयहारी मुस्कान स्वामी जी के मुखारविन्द पर बिछ गयी। फिर एक महापुरुष की भाँति शान्त और स्थिर स्वर में बोले–"आचार्य जी, आपका आवेश में आना अनुचित नहीं है। किन्तु मैं सत्य कहता हूँ "माध्वमुख चपेटिका" पुस्तक के प्रकाशन में मेरी शतांश में भी सहमति नहीं है। आप निश्चिन्त रहिये। पहले की भाँति भविष्य में भी धर्म संघ समग्र सनातन धर्म के अभ्युत्थान में ही तत्पर रहेगा, किसी पक्ष विशेष का पोषक या शोषक नहीं।"

इतना ही नहीं, अपने अतिशय सौहार्द का परिचय देते हुये स्वामी जी ने सार्वजनिक सभा में भी पुस्तक प्रकाशकों को लताड़ा और इस प्रकार अपनी तथा धर्मसंघ की गरिमा को चार चांद लगाए।

उदारता की पराकाष्ठा–स्वामी जी विदेशयात्रा को प्रायश्चित्तानर्ह पाप मानते थे और मैं धर्म प्रचार के उद्देश्य से चार बार यूरोपीय तथा अमेरिकन देशों की यात्रा कर चुका था। पाँचवी बार जाने की तैयारी थी। विदेश यात्रा को शास्त्रीयता और अशास्त्रीयता को लेकर "सिद्धान्त" में और "लोकालोक" में लेख मालाओं का क्रम चल रहा था। उन्हीं दिनों मैं पूज्य पिताजी के साथ दिल्ली में निगमबोध घाट पर स्वामी जी के दर्शनार्थ गया। पिताजी मेरी ओर संकेत करके स्वामी जी से बोले– महाराज! यह धर्म प्रचार करने के लिये पाँचवी बार विदेश जा रहा है। इसे आशीर्वाद दीजिये।"

स्वामी जी महाराज ने मेरी ओर वरदमुद्रा बनाकर तुरन्त कहा–"आशीर्वाद तो इनके लिये सर्वदा है, परन्तु विदेशयात्रा के लिये आज्ञा या अनुमति कभी नहीं है।"

इस पर कुछ आवेश में आकर मैंने भी एक दुस्साहसपूर्ण बात कह डाली। मैंने पूछा–महाराज! आप रामराज्य परिषद् के संस्थापक हैं जो एक राजनीतिक पार्टी है। यदि कभी भविष्य में रामराज्य परिषद् की सरकार बन जाए तो उसमें विदेश मन्त्रालय होगा या नहीं? किसी व्यक्ति को विदेश मन्त्री बनाया जायेगा अथवा नहीं? और वह विदेश मन्त्री विदेश यात्रा पर भी जाया करेगा या नहीं?

स्वामी जी गम्भीरतापूर्वक बोले–"कदाचित् रामराज्य परिषद् सत्तारुढ़ हो जाए तो विदेशमन्त्री अवश्य होगा और वह विदेश यात्राएँ भी अवश्यमेव किया करेगा।"

तो फिर महाराज! मैंने कहा– आप तो विदेश यात्रा को शास्त्र विरुद्ध तथा प्रायश्चित से भी दूर न हो सकने वाला पाप मानते हैं। ऐसी दशा में विदेश मन्त्री किसे बनाया जाएगा?

स्वामी जी उन्मुक्त भाव से हंसकर बोले–"विदेश यात्रा करके शास्त्र विरुद्ध आचरण कर चुकने वाले आप जैसे पण्डितों को ही विदेश मन्त्री का पद सौंपा जाएगा।"

इस पर पूज्य पिताजी ने तीर चलाते हुये कहा–''महाराज! यह तो शास्त्र विरुद्ध आचरण करने वालों को पुरस्कृत करना ही हुआ।''

स्वामी जी तुरन्त बोले–पुरस्कृत क्यों नहीं किया जाए? विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता तो यथावत् है ही, परन्तु उसके साथ धर्म प्रचार का पुनीत उद्देश्य भी तो जुड़ा है। क्या वह पुरस्कार योग्य नहीं है?

इस उत्तर प्रत्युत्तर में स्वामी जी का निष्कलुष अन्तरंग झांक रहा है। उदारता और विशाल हृदयता का ऐसा समुज्वल उदाहरण अब भला कहाँ मिल पाएगा? शास्त्रीय प्रमाण और उनकी युगानुरूप उपादेय व्याख्याएँ करने का वह अपूर्व कौशल स्वामी जी के साथ तिरोहित हो गया, यह देखकर हृदय कचोट उठता है।

ब्रह्मलीन होने से कोई दो या अढाई मास पूर्व काशी में केदारघाट पर वेद–शास्त्रानुसन्धान परिषद् के भवन में मैंने स्वामी जी के अन्तिम दर्शन प्राप्त किये थे। तब उन्होंने नितान्त सन्तुष्ट मुद्रा में मुझे अपने शुभाशीर्वाद से आप्यायित करते हुये कहा था– ''आप अपने पितृ–परम्परा से प्राप्त धर्म प्रचार कार्य में तत्पर हैं इससे सन्तुष्ट और आश्वस्त हैं।''

सनातन संस्कृति के ऐसे जागरुक प्रहरी एवं अपने विलक्षण वैदुष्य से जनमानस को सुवासित कर देने वाले निरूपम महापुरुष का शुभाशीर्वाद प्राप्त कर मैं स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ। मेरे जैसे लाखों सनातन धर्मियों के हृदय में दिव्य आलोक पुञ्ज बनकर श्री करपात्री जी महाराज सर्वदा विराजमान रहेंगे और आने वाली पीढ़ियों को धर्माचरण की स्वर्णिम प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे, यह निर्विवाद है।

***

परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज एवं संस्मरण

-वेदाचार्य पं. अरुण कुमार शर्मा, एम.ए. (संस्कृत)
अध्यक्ष-अ.भा. धर्म संघ शाखा, खेजरोली, (जयपुर)

माह अप्रैल, १९८० ई.। धर्म संघ समाचार आकोला के द्वारा पन्तद्वीप (चमगादड़ टापू) हरिद्वार में अर्द्धकुम्भी के अवसर पर अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ के महाधिवेशन में परम पूज्य धर्म सम्राट यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के आगमन का संकेत प्राप्त हुआ तो हम जयपुर से पूज्य श्री कैलाश नाथ जी ब्रह्मचारी, जंगजीत महादेव मन्दिर नाहरगढ़ रोड जयपुर एवं वन बिहारी पारीक, मदन मोहन पारीक, बिहारी लाल अग्रवाल आदि हरिद्वार के लिये प्रस्थान किये।

हरिद्वार पीली कोठी जहाँ महाराज ठहरे हुये थे पहुंचकर उन दिव्य विभूति के दर्शन कर यह तुच्छ जीव कृतकृत्य हो गया, यह प्रथम अवसर था स्वामी जी के सम्यक दर्शन का, इससे पूर्व भी सन् १९७७ के जनवरी माह में महाकुम्भ प्रयाग में लक्षचण्डी महायज्ञ के अवसर पर दर्शन किये थे किन्तु उस समय महाराज जी के अमित प्रभाव एवं माहात्म्य से मैं अधिक परिचित नहीं था।

जिस समय हमने पीली कोठी हरिद्वार में पूज्य स्वामी चरण के दर्शन किये थे, उस समय उनको तीव्र ज्वर था किन्तु फिर भी वे सायंकालीन रुद्राभिषेक आदि नित्य कर्म में पूर्ण उत्साह से संलग्न थे। उस समय मैंने उनमें एक विचित्र ज्योतिपुञ्ज का दर्शन किया। स्वामी करपात्री जी महाराज मूर्तिमान धर्म थे। पूजा के उपरांत उन्होंने जयपुर होकर उज्जैन जाने का संकेत दिया।

उक्त घटना के लगभग ४-५ दिवस बाद पूज्य श्री स्वामी जी महाराज जयपुर में श्री रामेश्वर दास धामाणी के निवास पर ठहरे हुये थे। दूरभाष से जानकारी होने पर ब्रह्मचारी जी के साथ दर्शन करने गये तो पूज्य स्वामी जी सायंकालीन नित्यकर्म में संलग्न थे। पूजा समाप्ति के पश्चात ब्रह्मचारी जी से वार्तालाप हुआ। मेरे मन में कई प्रश्न करने की एवं तात्कालिक धार्मिक स्थिति पर बहुत बोलने की इच्छा थी किन्तु न मालूम क्या हुआ, जीभ हिली तक नहीं। तत्पश्चात् ब्रह्मचारी जी ने मेरा परिचय कराया कि ये खेजरोली कस्बे के धर्म संघ शाखा के अध्यक्ष एवं उत्साही कर्मठ ब्राह्मण नवयुवक हैं। तब स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की कृपा दृष्टि हुई। मैंने स्वामी जी से खेजरोली कस्बे में होने वाले नवकुंडात्मक श्रीराम महायज्ञ में पधारने के सम्बन्ध में निवेदन किया

तो उन्होंने कहा कि केदार घाट से पत्र व्यवहार करना, देख लेंगे तत्पश्चात् महाराज श्री ने उज्जैन कुम्भ के लिये प्रस्थान कर दिया।

बस, मेरे जीवन काल में मैंने पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के मात्र दो बार भली भाँति दर्शन किये। आज मेरे हृदय में ईश्वर से भी अधिक पूज्य स्वामी जी महाराज में श्रद्धा है।

सन् १९८०-८१ में श्रद्धेय स्वामी जी महाराज गम्भीर रूप से अस्वस्थ हुये तो भारत भर में जगह-जगह विद्वानों द्वारा वैदिक अनुष्ठानों की भरमार लग गयी मैंने श्री शतचण्डी एवं शतरुद्रिय आदि शास्त्रीय अनुष्ठानों के द्वारा भगवान भूतभावन विश्वनाथ एवं श्री दुर्गाम्बा से महाराज श्री के दीर्घायुष्य एवं नैरुज्यतार्थ प्रार्थना की। प्रार्थना सफल हुई, मुझे स्वप्न दिखाई दिया कि ''महाराज श्री ब्रह्मलीन हो गये, उनकी दिव्य पांच भौतिक देह पर पुष्पमालाएँ शोभायमान थी एवं महाराज श्री के निष्प्राण शरीर के श्रीमुख से वैदिक मन्त्रों का उच्चारण हो रहा था, लोग आश्चर्यचकित थे, कुछ व्यक्ति यह कह रहे थे कि पूज्य महाराज श्री बड़े भारी विद्वान महत्मा थे। अतः स्मृतिवशात उनके श्रीमुख से बिना किसी प्रयत्न के स्वतः मन्त्रोचरण हो रहा है, चारों ओर जल ही जल दिखायी दिया।'' इस स्वप्न के दिखायी देने पर आगामी दिवस को मैंने पूज्य कैलाश नाथ जी ब्रह्मचारी से विचार विमर्श किया तो उन्होंने कहा यह तो शुभ स्वप्न हैं, महाराज श्री शीघ्र आरोग्य लाभ प्राप्त करेंगे, हुआ भी यही। लगभग ५ दिन पश्चात् समाचार पत्रों में पूज्य स्वामी जी के स्वास्थ्य सुधार सम्बन्धी समाचार पढ़कर हृदय में हर्ष हुआ। इसके बाद महाराज श्री लगभग दस-ग्यारह माह तक स्वस्थ रहे।

लीला संवरण के पश्चात-पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने दिनांक २०-२-८५ को प्रातः ९/१७ पर लीला संवरण की, इस पुण्य भारत वर्ष की धरा पर बीज का वपन करके दिव्य धाम पधारे तो भारत भर में जगह-जगह निर्वाणोत्सव, श्रद्धांजलि सभाओं का आयोजन हुआ। मेरे मन में एक दृढ़ निश्चय था कि आध्यात्मिक गुरु का वरण करूं तो केवल पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का, क्योंकि विगत कई शताब्दियों में उनके जोड़ का कोई महापुरुष सुनायी नहीं पड़ा। इससे पूर्व मेरी गुरुबुद्धि भगवान सदाशिव में अडिग रही थी।

लीला संवरण के पश्चात परमपूज्य स्वामी जी महाराज ने मेरी प्रार्थना सुनी, मुझे रात्रि में अध्ययन के समय उनका चित्र दिखायी दिया तो भावावेश में लगभग दो घन्टे रोता रहा, रोते-रोते ही निद्रा-अवस्थित हो गया तो स्वप्न दिखायी दिया कि ''एक सुन्दर उद्यान है, उसका द्वार पश्चिम में है। उक्त उद्यान के उत्तर दिशा में एक बड़ा विशाल शिव मन्दिर है, शिव मन्दिर का द्वार दक्षिण दिशा में है। मैं जब उद्यान में प्रवेश करके शिवालय की तरफ गया तो देखा कि यहाँ तो कोई

भी नहीं है। मन्दिर में प्रवेश किया तो सामने शिवपंचायतन के दर्शन होते ही करबद्ध होकर स्तुति-प्रार्थना करने लगा। तत्पश्चात् जब मेरी दृष्टि शिव-प्रासाद के नैऋत्य कोण में गयी तो देखा कि पूज्यपाद स्वामी जी महाराज आसन पर प्रौढ़ भाव मुद्रा में विराजमान है। दाहिने हाथ में गोमुखी डाले जप कर रहे हैं, पूर्वाभिमुख विराज रहे हैं, तो मैंने साष्टांग दण्डवत प्रणाम की, तो महाराज श्री ने अपना वाम चरण कमल मेरे सिर पर आशीर्वादात्मक मुद्रा में रख दिया किंतु जप करते बोले कुछ भी नहीं। बस,

इस घटना ने कुछ समय बाद पूज्य स्वामी उड़िया बाबा जी महाराज के उपदेश सम्बन्धी एक पुस्तक में गुरु द्वारा स्वाप्निक दीक्षा का प्रकरण पढ़ा तो चित्त में सन्तोष हुआ कि अनन्त श्री विभूषित विश्ववन्द्य परम पूज्य धर्म सम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने मुझ जैसे तुच्छ किंकर को भी श्री चरणों में स्थान दिया। इत्यलम्-

***

एक अलौकिक शक्ति जो धर्मरक्षार्थ प्रकट हुई थी

–श्रीमती रत्ना देवी शर्मा

अध्यक्ष अ.भा. महिला धर्मसंघ, कानपुर

''धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे''

आनन्द कंद परमानन्द, भगवान श्री कृष्ण के उपरोक्त शब्दों एवं परम्परा को चरितार्थ करने हेतु, इस आदर्श के निमित्त एवं वर्तमान कलिकाल में धर्म स्थापनार्थाय धर्म सम्राट, अभिनव शंकराचार्य स्वरूप श्री श्री १००८ स्वामी हरिहरानन्द जी सरस्वती महाराज ''स्वामी करपात्री'' जी का प्राकट्य हुआ।

महाराज श्री की अलौकिक शक्ति, दिव्य संदेश प्रतिभा, मूर्धन्य विद्वत्ता एवं असीमित ज्ञान जिसने वेद शास्त्र एवं धर्म ग्रन्थों की सीमा को भी लांघा था उनको युग पुरुष की श्रेणी से भी ऊँचा उठा कर सदा के लिये अमर कर चुकी हैं।

मुझे आज भी वो दृश्य कौंध रहा है और साथ ही वे शब्द आज तक मेरे कानों में गुजिंत हैं जो उन्होंने कानपुर के गुरु नारायण खत्री कॉलेज के प्रांगण में ''रास पंचाध्यायी'' के पांचवे दिन अपने प्रवचनों में आनन्द कन्द, परमानन्द, वृजवल्लभ भगवान श्री कृष्ण चन्द की महारास लीला की व्याख्या करते हुये आत्म विभोर होकर, तन्मयता साध कर वक्ता–श्रोता के मध्य एकरसता उत्पन्न कर श्रोताओं की जो हजारों की संख्या में थे – श्वास साधें रसमय होकर महाराज श्री के मुखारविंद की ओर निहार कर ये सुन रहे थे–कहे थे ''यह लीला, कृष्ण व गोपियों के मिलन की लीला, नश्वर शरीर की न होकर, आत्माओं की हैं इस लोक में इसका वर्णन उचित नहीं, यह गोलोक की लीलायें है और वहीं के नियम व शिष्टाचार इस पर लागू होंगे। वर्तमान समाज के परिप्रेक्ष्य में इसे उचित न ठहराया जायेगा।''

इसके बाद महाराज श्री ने उस दिन का भाषण समाप्त किया और तत्पश्चात शिरोवेदना से ग्रस्त होकर काशी प्रस्थान कर गये (सम्भवतः) गोलोक में महारास को देखने के लिये। इसके बाद योग समाधि एवं अन्यान्य प्रक्रियाओं के गुजरते हुये अपने भौतिक शरीर को पंचभूत में मिलाकर अपने शिष्य, समर्थक एवं जय जय कार करने वालों को छोड़कर ब्रह्म में लीन हो गये।

जल समाधि से पूर्व की झांकी में सरकारी, गैरसरकारी, पुलिस प्रशासन, शिष्य मण्डली, बैंड बाजे–मोटर और काशी के नागरिकों के असीमित जन समूह ने महाराज के पार्थिव शरीर को केदार घाट पर माँ गङ्गा की गोद में अर्पित कर दिया।

महाराज श्री मेरे पूज्य गुरु, धर्म सम्राट एवं इस कलिकाल में सनातन धर्म के पुनरुथान कारक थे। इस ओजस्वी एवं तेजमय संत से मेरी पहली भेंट कानपुर में सन् १९५२ में हुयी थी। विशाल आयोजन, असीमित जन समुदाय के बीच महाराज का

भाषण पारम्परिक धर्म ग्रंथों का न होकर तत्कालीन राजनीति से सम्बन्धित व प्रेरित था। वह समय था जबकि भारत सरकार हिन्दू समुदाय पर नाना प्रकार की बंदिश एवं प्रतिबन्ध थोप रही थी जिसमें हिन्दू कोड बिल व गोवध आदि उल्लेखनीय हैं, और इस बात का दम भर रही थी वे धर्म निरपेक्ष हैं। अतः महाराज ने सरकार को चुनौती देते हुए आह्वान किया था ऐसे स्त्री पुरुषों का जो धर्म की वेदी पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार हों। महाराज का मत था कि राजनीति पर धर्म का अंकुश उसी प्रकार है जिस प्रकार मदमस्त हाथी की सही राह पर लाने के लिये महावत का अंकुश।

महाराज के उत्साहवर्धक व प्रोत्साहक भाषण का प्रभाव मुझ पर तुरन्त पड़ा और मैंने अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करनी चाहीं–तुरन्त समय मिला और आदेश हुआ कि अपनी जनता के सामने हमारी उपस्थिति में कहो। मेरे मुख से शब्द अवश्य निकल रहे थे परन्तु मैं निश्चित रूप से कह सकती हूं कि मेरे अन्तर में किसी अदृश्य शक्ति से बल प्राप्त कर शब्द स्वतः बाहर आ रहे थे जिसका प्रभाव विशाल जन समुदाय पर लगातार पड़ रहा था। अपने आशीर्वाद स्वरूप महाराज ने मेरे कन्धे पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी रख दी कि जिसके लिये शायद मैं योग्य नहीं थी। मुझे कानपुर में रामराज्य परिषद की महिला संगठन का मन्त्री पद दिया गया था। इसके बाद एक–एक करके लगातार आदेश आते रहे और मैं यन्त्र वत उनका पालन करती रही–कारण शायद यही था कि उनकी आदेश देने की भावभंगिमा व स्वरूप किसी को भी नतमस्तक करने में सक्षम था। १९५२ का उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव हो या १९५७ का, जिसे मैंने कानपुर से लड़ा अथवा १९६२ का लोकसभा का चुनाव जिसमें मुझे मुजफ्फरपुर और हाजीपुर से उम्मीदवार के रूप में खड़ा किया गया अथवा किसी भी अवसर पर महाराज श्री के आदेश मानने में अपने जीवन की सार्थकता नजर आती थी। महाराज के ऐसे आशीर्वाद थे, अपने सभी शिष्यों अनुयायियों पर कि न उनको अर्थ की चिंता थी न उनको घर की। न तो समय का अभाव था न सहयोगियों की कमी। सभी कार्य इच्छानुसार समय–समय पर होते रहे किसी को भी आदेश पालन करने में किसी कष्ट या मुसीबत का सामना नहीं करना पड़ा। यह थी वह शक्ति जिसमें चमत्कार कहूं तो अतिशयोक्ति न होगी।

और भी बहुत ऐसे क्षण हैं जिन्हें विलक्षण न कह कर चमत्कार ही कहा जायेगा।

१–कलकत्ते में आयोजित गोहत्या विरोध आन्दोलन। महाराज का आदेश हुआ कल तुम्हें कसाई खाने पर स्त्रियों का प्रदर्शन व धरना आयोजित करना है। बड़ी धर्म संकट की स्थिति जीवन में पहली बार कानपुर से कलकत्ते में आयी थी, साथ में कानपुर से २५ स्त्रियों का जत्था मात्र था और महाराज का आदेश था विशाल प्रदर्शन खैर २५ स्त्रियों की ५ टोलियां बनाकर उत्तर कलकत्ते की गली गली में सूचना प्रसारित की गयी और आश्चर्यचंकित रह गयी मैं यह देख कर कि नियत समय पर पहुँचकर

नियत स्थान पर प्रदर्शन हेतु आयी महिलाओं के लिये स्थान छोटा पड़ गया और जलूस को समय से पूर्व ही उठाना पड़ा। स्त्रियों का एक विशाल जनसमूह जिसमें धोबी, दुकानदार, मध्यवर्ग व मारवाड़ी सेठानियाँ हजारों की संख्या में शामिल थी, केसरिया झंडा ले ''धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो,··· ···हर हर महादेव।'' आकाश गुजिंत नारों के साथ-साथ गोहत्या बन्द हो का नारा लगाती हुयी अपार, असीमित स्त्री समूह ने टेंगरा बूचड़खाना के सामने प्रदर्शन किया। १५०० पुलिस, २०० घुड़सवार तैनात थे हमारे प्रदर्शन को रोकने के लिये लाठियाँ चलीं, घोड़े दौड़े, भगदड़ मची परन्तु महाराज श्री का आशीर्वाद चमत्कार के रूप में प्रगट हुआ किसी भी प्रदर्शनकारी महिला को कोई चोट-पाट या जेवर आदि का नुकसान नहीं हुआ। कलकत्ते के समाचार पत्रों की सुर्खियाँ आज भी इस घटना का प्रमाण हैं।

२-दूसरा चमत्कार देखा दिल्ली के गोरक्षा आंदोलन में जिसे विशाल एवं सम्पन्न प्रदर्शन के कारण तत्कालीन गृह मन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा को अपदस्थ किया गया था क्योंकि उसके नियन्त्रण में पुलिस एवं प्रशासन ने नागाओं से छेड़छाड़ की जिसके फलस्वरूप भीषण अग्निकांड, मारकाट, पुलिस लाठीचार्ज आदि हुआ। महिला प्रदर्शन दल सभी ओर से घिर गया था, महाराज आगे थे पुलिस के जवान लाठी चटकाते हुये आगे बढ़ रहे थे, परन्तु अचानक यह क्या हुआ? महाराज के पास पहुंचकर पुलिसदल भौचक्का रह गया अचम्भित व मौन, डी.एस.पी. ने सविनय निवेदन किया महाराज आप हट जाएं परन्तु महाराज आगे बढ़ते गये उनके पीछे-पीछे स्त्रियां चल रही थीं।-हमारे आगे बढ़ने पर पुलिस दल दो भागों में विभक्त हो गया-क्या पुलिस ने महाराज का, गीता में भगवान कृष्ण के समान विराट रूप देखा अथवा कुछ और-क्योंकि हम तो पीठ की ओर थे और यह पहेली आज भी अनबुझी है कि स्वामी जी के उस अलौकिक महामहिम वैभव व तेज पुंज से बर्बर पुलिस भी हतप्रभ हो गयी।

धर्म सेतु स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

–वैद्य पं. शंकरदेव शर्मा, आयुर्वेदाचार्य

'राम निवास' के. सी./१७०, कविनगर, गाजियाबाद।

शताब्दियों के पश्चात भारत को धर्म सम्राट पूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज जैसी विभूति प्राप्त हुयी थी। सनातन वैदिक धर्म के गूढ़ातिगढ़ तत्वों का जितना गहरा ज्ञान उन महापुरुष को था वह अन्यत्र विरल ही होगा। कारण धर्म के प्रति उनके जैसा समर्पित जीवन यापन करने वाला विश्व में दूसरा नहीं दीखता। बाल्यकाल से लेकर ब्रह्मरूप होने तक उनकी प्रत्येक चिंतनधारा, तपस्या कर्मानुष्ठान, योग साधना, धर्म यात्राएँ, आंदोलन, ग्रंथरचना, उपदेशामृत आदि सब के मूल में उनका कुछ भी अपना स्वार्थ नहीं था उनकी प्रत्येक गतिविधि, छोटी से छोटी हलचल भी सम्पूर्ण रूप से धर्म के लिये समर्पित थी, विश्व के कल्याण से ओत प्रोत थी। वे धर्म के सिद्धांतों के प्रति हिमालय की भांति अडिग थे। अन्य चिंतको की भांति सहूलियत निकालते हुये धार्मिक–शाश्वत मूल्यों के विषय में समझौता उन्हें कभी प्रिय नहीं रहा। धर्म शास्त्रों एवं वैदिक सिद्धांतों को वे अपरिवर्तनीय एवं सनातन–शाश्वत मानते थे। एक बार किसी मान नेता ने कहा था कि 'निःसन्देह हम सभी को हिन्दू धर्म से प्रेम हैं परन्तु इस धर्मरूपी हिमालय पर आरोहण करते समय हम में से कोई ऋषिकेश पहुंचता है, कोई बद्रीनाथ, कोई गंगोत्री में पहुंच कर विश्रांति प्राप्त कर लेता है तो कोई केदार नाथ तक पहुंचकर इति श्री समझ लेता है परन्तु वर्तमान जगत में वैदिक मर्यादाओं एवं धर्म के सर्वोच्च स्थान गौरी शंकर शिखर पर केवल एक ही व्यक्ति पहुंचा है जो पुकार–पुकार कर कह रहा है कि वैदिक सिद्धांतों एवं मर्यादा का सर्वोच्च स्थान यह है और वह है 'स्वामी श्री करपात्री जी महाराज।' इसमें कुछ अतिशयोक्ति नहीं है भिज्ञ जन भली–भाँति इस तथ्य से परिचित हैं। पूज्य स्वामी जी की उपस्थिति मात्र से ही धर्म की ध्वजा चहुं ओर फहराने लगती थी। लोगों को धार्मिक सदाचार सम्पन्न एवं चरित्रवान बनने की स्वतः प्रेरणा मिलती थी–देश के किसी भी कोने में धर्म विरोधी कार्य करने वालों के मन में भय एवं आशंका रहती थी कि उन्हें स्वामी करपात्री जी का सामना करना पड़ेगा। आज उनके न रहने से वेद, शास्त्र, धर्म, गो एवं भारतीय आध्यात्मिक मूल्यों को भारी धक्का लगा है। वे सम्पूर्ण राष्ट्र में एक छोर से दूसरे छोर तक व्याप्त धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता के सुदृढ़ धर्म सेतु थे। उनके जैसा निर्मल हृदय युक्त, परोपकारी, परमार्थ चिंतक, विश्वकल्याणकामी, उदारचेता, विचारक, दार्शनिक, सर्वस्व त्यागी, वेदांत तत्व वेत्ता, शास्त्रार्थ महारथीआज दूसरा नहीं दीखता।

महाराज श्री के सर्वप्रथम दर्शन सन १९४३ में उस समय हुए जब दिल्ली में यमुना पार की रेती में इन महात्मा द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति एवं विश्व कल्याण कामना के पावन संकल्प से एक 'शतमुखकोटिहोमात्मकमहायज्ञ' के आयोजन का संकल्प व्यक्त किया गया था। इनके अनन्य सहयोगी परम तपस्वी वीतराग महात्मा श्री कृष्णबोधाश्रम

जी महाराज एक झोंपड़ी में आसन लगाये बैठे थे और एक अन्य डेरे में धर्म सम्राट हाथ में माला लेकर यज्ञ का पावन संकल्प लिये तपस्यारत थे। चारों ओर यमुना जल और बीच में दूर-दूर तक फैला विस्तृत रेत टापू। आने वाले उपस्थित भक्त श्रद्धालुओं में प्रमुख थे श्री सेठ बेनी प्रसाद जयपुरिया जी एवं पं. किशन चन्द शर्मा आदि। इन महात्माओं के सिद्ध संकल्प से माघ शुक्ल बसंत पंचमी विक्रम संवत २००० के शुभ मुहूर्त में यह महान ऐतिहासिक यज्ञ आरम्भ हुआ जो २ फरवरी १९४४ से ९ फरवरी १९४४ तक सम्पन्न हुआ। स्वामी जी ने एक तम्बू में निःशुल्क आयुर्वेदिक औषधि वितरण कर रोगियों की चिकित्सा करने का कार्य मुझे सौंपा जहाँ नित्य सेवा करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। स्वामी जी अत्यन्त व्यस्त समय में से भी समय निकाल कर आयुर्वेदिक चिकित्सा कार्य निरीक्षण हेतु पधारकर कृतार्थ करते थे। जहाँ तक यज्ञ की विशालता का प्रश्न है उसका वर्णन अशक्य है- इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसा आयोजन 'न भूतो न भविष्यति' की उक्ति को प्रत्यक्ष चरितार्थ कर रहा था। पग-पग पर इस महापुरुष की त्याग, तपस्या, विद्वत्ता एवं योग साधना के प्रत्यक्ष दर्शन होते थे। आध्यात्मिक जगत को भली प्रकार यह तथ्य विदित है कि चिर परतन्त्र भारत को स्वतन्त्रता प्राप्ति में स्वामी जी द्वारा अनुष्ठित वैदिक यज्ञों के माध्यम से देवाराधना एवं दैव कृपा ही प्रमुख रही है।

✣ ✣ ✣

एक अन्य प्रसङ्ग स्मृति पटल पर उभर रहा है। स्वामी श्री करपात्री जी महाराज मेटकाफ रोड स्थिति श्री कृष्णबोध भवन के खुले प्रांगण में लकड़ी के तख्त पर बैठकर श्रीमद्भागवत का नित्य प्रातः ६ बजे प्रवचन करते थे। मैं भी पहुंचा तब तक कुछ विलम्ब हो चुका था। बैठने को स्थान नहीं मिल रहा था। पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज भी विराजमान थे। स्वामी करपात्री जी ने उस समय जब मैं पहुंचा था तब सभी श्रोताओं को उद्‌बोधित किया कि सुनो, ध्यान रक्खो श्रीमद्भागवत के इन श्लोकों को चलते-फिरते, उठते-बैठते, सोते इन्हें सदा गुनगुनाते रहा करो- इसमें परम शांति प्राप्त होगी। उनके इन कल्याणकारी सद्‌वचनों की छाप मेरे हृदय पर इस प्रकार अंकित हुई कि उसकी अलौकिकता का वर्णन नहीं हो सकता - एक विशिष्ट प्रकार की नैसर्गिक अनुभूति हुयी हृदय आह्लाद से भर गया - उस क्षण के सत्संग के सुख की स्मृतिमात्र से मन पुलकित हो जाता है, शरीर रोमांचित हो जाता है और हृदय भक्तिभावना से परिपूरित होकर सहसा मुख से तुलसी दास जी के यह शब्द मुखरित हो उठते हैं। -''तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला इक अंग। तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग।।'' उस अलौकिक सत्संग में स्वामी जी द्वारा बताये श्रीमद्भागवत के वे श्लोक निम्नलिखित हैं-

देहेऽस्थिमांस रुधिरेऽभिमतिं त्यजत्वम्।
जाया सुतादिषु सदा ममतां विमुञ्च।।
पश्यानिशं जगदिदं क्षणभङ्गनिष्ठम्।

वैराग्य राग रसिको भव भक्ति निष्ठः।।
धर्मंभजस्व सततं त्यज लोक धर्मान्।
सेवस्व साधु पुरुषान् जहि काम तृष्णाम्।।
अन्यस्य दोष गुण चिन्तन माशु मुक्त्वा।
सेवा कथा रस महो नितरां पिवत्वम्।।
एवं सुतोक्ति वशतोऽपि गृहं विहाय।
या तो वनं स्थिरमतिर्गत षष्ठि वर्षः।।
युक्तो हरेरनुदिनं परिचर्यया सौ।
श्री कृष्णमाप नियतं दशमस्य पाठात्।।

इति श्री पद्म पुराणे उत्तराखंडे श्रीमद्भागवते माहात्म्ये विप्रमोक्षो नाम चतुर्थोऽध्यायः- साक्षात देव तुल्य-स्वामी जी महाराज के श्रीमुख से उक्त श्लोकों को सुनते ही शरीर में विद्युत लहर की सी अनुभूति हुयी और उस क्षणिक सत्संग लाभ का जब-जब भी स्मरण आता है उन महापुरुष का साक्षात मूर्त्तस्वरूप सामने आ जाता है-उस क्षण के सुख का वर्णन नहीं हो सकता।

✣ ✣ ✣

महाराज एकादशी के दिन का निर्जल व्रत रखते थे। एक बार ज्येष्ठ मास की एकादशी के दिन आप दिल्ली में विराजते थे। महाराज को अकस्मात तीव्र ज्वर हो गया, मध्याह्न में १०४ डिग्री था। सब परिकर चिंतित था। स्वामी जी का शरीर तप रहा था। श्री जगद्गुरु जी भी स्वामी जी के सिरहाने आसीन हो गये। कथा प्रंसग चालू हो गया। दो महापुरुषों का अद्भुत, अलौकिक सत्संग सुलभ हुआ। महाराज श्री ने छात्र को भेजकर मुझे भी बुला लिया। मैं आकर अवाक् खड़ा रह गया। सोचा क्या करूं? गङ्गाजल ग्रहण तक का जहाँ नियम नहीं एकादशी को तो फिर चिकित्सा और औषधि का तो प्रश्न ही कहाँ था। सहसा महाराज की एक आपात दृष्टि मुझ पर पड़ी-उस अद्भुत दृष्टिपात होते ही बुद्धि ने तुरन्त निश्चय किया कि केले के पत्र ही महाराज के शरीर को शीतलता पहुंचा सकते हैं। तुरन्त केले के पत्ते नीचे बिछाये गये, सारे शरीर पर लपेटे गये। हलका-हलका चन्दन का अनुलेपन किया गया। केले के पत्ते तीव्र ताप के कारण झुलस-झुलस कर काले पड़ते जाते थे। उन्हें हटाकर नये-नये पुनः शरीर पर लपेटता रहा-इस प्रकार निरन्तर एक घन्टे तक पत्तों की व्यवस्था से उपचार होने पर कुछ शांति लाभ हुआ महाराज को। परन्तु उन महायोगी की शारीरिक स्थिति हिमालय की भाँति अडिग बनी रही-ताप और पिपासा से त्रस्त होते हुये भी महाराज निर्लेपभाव से बस जगद्गुरु जी से सत्संग लाभ करते रहे। उन्होंने गंगाजल तक की बूंद ग्रहण नहीं किया।

कहाँ तक वर्णन करें उन तपस्वी, मनस्वी, महामनीषी महात्मा की तितिक्षा, त्याग, तपस्या का उनके श्री चरणों में कोटिशः नमन।

***

धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज

–सम्पादकः–अजन्ता साप्ताहिक, हैदराबाद (आंध्रप्रदेश)

धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी ने हिन्दू जीवन दर्शन का प्रचार व प्रसार करने के लिए १९४० में विजयदशमी के महान् पर्व पर सभी धर्माचायों, सनातनधर्मी विद्वानों एवं नेताओं के सहयोग से ''धर्मसंघ'' की स्थापना की थी। स्वामी करपात्री जी ने उस समय धर्मसंघ की स्थापना के समय जो घोषणा की थी ''भारत की उन्नति आँखें बन्द करके आगे दौड़ने में नहीं है किन्तु आँखे खोलकर पीछे की ओर देखने में है। हमारा अतीत जितना भव्य था, अपने भविष्य को भी उतना ही दिव्य बनाने के लिये पीछे की ओर देखो, राम और कृष्ण के काल की ओर देखो उसी से धर्म विरोधी वातावरण में धर्म की जय सम्भव होगी।'' आज भी यह विचार भारत की राजनीति के लिये पूर्ण सार्थक है। धर्मसंघ के प्रचार के लिए स्वामी करपात्री जी महाराज ने सन्मार्ग का प्रकाशन देहली, काशी और कलकत्ता से कराया। सिद्धान्त और धर्मज्योति का प्रकाशन भी काशी से ही कराया। मेरठ से मासिक 'आदेश' व दैनिक रामराज्य का भी प्रकाशन आपके ही आशीर्वाद का मुख्य प्रताप था।

स्वामी जी के महत्वपूर्ण ग्रंथों में मार्क्सवाद और रामराज्य, भगवततत्व, संकीर्तन मीमांसा, रामायण–मीमांसा, संघर्ष और शान्ति, धर्म और राजनीति, वेद पुराण मीमांसा, और वेद भाष्य आदि प्रमुख हैं।

इनमें से कई पुस्तकें उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सम्मानित हो चुकी है। एक लाख का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। डाक्टर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि से विभूषित किया था।

स्वामी करपात्री जी ने कई अखिल भारतीय संस्थाओं की स्थापना की, जिनमें अखिल भारतीय धर्मसंघ, अखिल भारतीय रामराज्य परिषद, अखिल भारतीय गौरक्षा समिति, अखिल भारतीय महिला धर्म संघ और अखिल भारतीय धर्मवीर दल प्रमुख है।

अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध भी संघर्ष में करपात्री जी का महान् योगदान रहा है। २६ अप्रैल १९४७ को गोहत्या बन्दी के महत्वपूर्ण प्रश्न पर आपने देहली में प्रदर्शन किया। सरकार ने आपको बन्दी बनाकर लाहौर जेल भेज दिय। मथुरा का बूचड़खाने के सामने आपने ऐतिहासिक शान्तिमय प्रदर्शन किया। इस पर बन्दी बनाकर आगरा जेल भेज दिया गया। भारत विभाजन का आपने डटकर विरोध किया और आन्दोलन किये।

राजनीति में धर्म को सही प्रतिनिधित्व दिलाने के लिये १९५२ में अखिल भारतीय रामराज्य परिषद की स्थापना हुई। इसके द्वारा आपने कई प्रतिनिधियों को विधान सभा और संसद में भेजा। हिन्दू कोड बिल और गोहत्या जैसे प्रश्नों पर सरकार का सदैव तीव्र विरोध करते हुये इस संघर्ष से जूझते रहे। १९६६ का गोहत्या विरोधी

ऐतिहासिक आन्दोलन का नेतृत्व किया। इस आन्दोलन में कई महात्माओं का बलिदान हुआ। आज भी आप द्वारा संस्थापित संस्थाओं द्वारा यह आन्दोलन चलाया जा रहा है।

स्वामी करपात्री जी के ही आदेश पर शंकराचार्यों ने तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू से भेंट करके गोहत्या बन्दी की माँग की थी।

यह बात निर्विवाद रूप से सत्य है कि हमारे देश में धार्मिक जगत में स्वामी करपात्री जी महाराज की महान् भूमिका रही है। देश के चारों पीठों के शंकराचार्यों की नियुक्ति भी आपके परामर्श से होती रही।

त्रिकाल संध्या, नित्य नियम के उपरान्त भागवत की सप्ताह और संपुट के तीन पाठ दुर्गा सप्तशती के नियमित रूप से करते थे।

ऐसी महान् विभूति, अनन्त श्री विभूषित धर्म सम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज सात नवम्बर १९८२ को अपने आराध्य लोकनायक राघवेन्द्र का स्मरण करते हुये काशी में ब्रह्मलीन हो गये।

स्वामी करपात्री जी महाराज का कई बार हैदराबाद आगमन हुआ। उनके भव्य समारोहों में हाल खचाखच भर जाते थे। जनता उनका भाषण मंत्रमुग्ध होकर सुनती थी। स्वर्गीय लक्ष्मी नारायण शर्मा प्रधान मन्त्री सनातन धर्म सभा से भी स्नेह था। सनातन धर्म सभा और वाहेती भवन में भव्य धार्मिक समारोह महाराज श्री के सान्निध्य में होते थे।

एक बार धर्म सम्राट् करपात्री जी वाहेती भवनसे समारोह का समापन कर जा रहे थे। इतने में एक कठपुतली वाला आ गया और महाराज श्री के चरणों में गिर पड़ा। कहने लगा मैं आपको इन कठपुतलियों का प्रदर्शन दिखाने लाया हूँ। महाराज भी ठहर गये। इन कठपुतलियों के द्वारा कृष्ण की लीला का प्रदर्शन दर्शाया गया था। कृष्ण लीला समाप्त होते ही महाराज श्री ने श्री लूणकरण जी वहेती से उसकी सेवा करने को कहा।

श्रीराम जय राम जय जय राम के कीर्तन के समय महाराज श्री धर्म सम्राट् करपात्री जी अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक कौशल्या नन्दन श्रीराम जैसे खड़े होते थे।

***

करपात्री चालीसा

–श्रीयुत ऋषिराम 'कवि', अमेठी (उ. प्र.)

[अमेठी संसदीय निर्वाचन १९७१ में रामराज्य परिषद के प्रत्याशी श्री वासुदेव शास्त्री अतुल के समर्थन में आयोजित सभा में सभा मंच पर स्वामी जी के स्वागत में प्रस्तुत।]

स्वागत करपात्री महाराज, तहसील अमेठी धन्य आज।
स्वागत स्वागत भारत यात्री, भूलोक विभूषण करपात्री।।१।।
अतिशय संयम अतिशय प्रताप, आहार हाथ पर किये आप।
जिससे करपात्री हुआ नाम, रम रहे हृदय भगवान राम।।२।।
जब रामचन्द्र का शासन था, जब अवध राज सिंहासन था।
तब जन मानस सब सुखी रहा, आनन्द सर्वतोमुखी रहा।।३।।
कलि में फिर लाने को त्रेता, तत्पर है करपात्री नेता।
रज रामराज्य का रूप रहे, सह बरसा जाड़ा धूप रहे।।४।।
सन्ताप सभी कब गत होगा, जब रामराज्य भारत होगा।
मिट जायेंगे सब द्वन्द्व और, सुख पायेंगे ग्रामीण धीर।।५।।
भारत में अच्छे यज्ञ हुये, संतुष्ट शम्भु सर्वज्ञ हुये।
तब लाद फांद बस्ता बोरा, लन्दन की ओर चले गौरा।।६।।
करते न यज्ञ जो करपात्री, आती न घड़ी सुख की दात्री।
मचती न धर्म की धूम धाम, तो रह जाता भारत गुलाम।।७।।
ईश्वर की ऐसी हुयी दया, शासन विधान बन गया नया।
पंचायत बैठी ग्राम ग्राम, लगभग साढ़े ६ बजे शाम।।८।।
शोभित पंचायत मंच हुये, कुछ मूर्ख लोग भी पंच हुये।
कुछ जागे कुछ ऊँघने लगे, कुछ तम्बाकू सूंघन लगे।।९।।
कुछ लोग छींक छींकने लगे, कुछ पहुच नींद के पेट गये।
कुछ बैठ गये कुछ लेट गये, कुछ पहुच नींद के पेट गये।।१०।।
कवि कह झुकाकर शीश यही, अब करो कृपा जगदीश सही।
हम लोग योग साधन सीखें, तम्बाकू मत सूंघे घीसें।।११।।
पंचायत में लेटा न करें, अनुशासन को मेटा न करें।।
अनुकरण करें करपात्री का, आदर्श अमेटी यात्री का।।१२।।
सज्जनों को जय राम सीय, जय जय करपात्री भारतीय।
जय कर्मवीर जय धर्मवीर, संन्यास वेषभूषित शरीर।।१३।।
करपात्री जी दीर्घायु रहे, अनुकूल अन्न जलवायु रहे।
करपात्री जी आनन्द रहे, भारत में गोवध बन्द रहे।।१४।।

गोपाल चरायें गायों को, सुख देते गोप समुदायों को।
हम धेनु हीन क्यों हुआ करें, क्यों तेल वनस्पति छुआ करें।।१५।।
करपात्री हैं गो दुग्धाशी, पूजें शंकर जी को काशी।
बोलें मन्दिर में प्रेम साथ, जय जय गिरिजापति विश्वनाथ।।१६।।
स्वर गूंज रहा टोले टोले, जय विश्वनाथ जय बम भोले।
करके भारत में रामराज्य, भर दो जग में निष्काम राज्य।।१७।।
करपात्री हैं पण्डित भारी, योगी है गैरिक पटधारी।
करपात्री हैं जिसके प्रसाद, उस परम पिता को धन्यवाद।।१८।।
जय वासुदेव के परमभक्त, गीता उपदेशक अनासक्त।
जय विश्व धर्म के कर्णधार, जय लाख बार जय कोटि बार।।१९।।
बड़ गाँव बड़ा विख्यात ग्राम, जिसके वि राम गुलाम नाम।
अर्पित सादर 'ॠषिराज' गीत, स्वागत चालीसा नाम गीत।।२०।।

***

जयति धर्म सम्राट

–डॉ. नरसिंह पाण्डेय, 'पथिक'
विद्या वारिधि(पी.एच.डी.) व्याकरणाचार्य, काव्यतीर्थ, साहित्य रत्न, एम.ए., भरसर, बलिया

बौद्ध जैन पाखण्ड तिमिर से, वेद मार्ग अवछन्न हुआ जब।
भूले सभी ज्ञान–हीन हो, धर्म सनातन शिथिल हुआ जब।।
प्रण निज सुमिरि आदि शंकर ने, भारत में अवतार लिया तब।
तर्क वितर्क कुतर्क खण्डित कर, धर्म, ज्ञान विस्तार किया तब।।
किया सनातन धर्म प्रतिष्ठित, ज्ञानाद्वैत प्रकाश किया था।
वर्णाश्रम मर्यादा रख कर, तप जप नियम विधान किया था।।
हुए पराजित धर्म विरोधी, वेद द्रोह ने किया पलायन।
निगमागम उपनिषद ज्ञान से, सुखी हुए सब धर्म परायण।।
विंशति शति में धर्म ग्लानि से, धार्मिक जन को दुखी निहारि।
आदि देव अवतरित हुए, हरिहरानन्द का रूप धारि।।
किया प्रणयन धर्म ग्रन्थों का, वेद भाष्य का किया प्रकाश।
सभी विरोधी प्रत्युत्तर पा, भूले 'पथिक' विजय की आस।।
जयति धर्म सम्राट जयति जय, जयति यती सम्राट।
धर्माधर्म विवेक दान से, तू ही महा विराट।।
जयति धर्म सम्राट जयति जय, जयति यती सम्राट।।

***

परम पूज्य महाराज श्री के कतिपय संस्मरण

–डॉ. संकटा प्रसाद पाण्डेय, कानपुर

जनपद फतेहपुर के अन्तर्गत जाह्नवी तट पर स्थित है एक गांव असनी। परम्परा से चली आ ही मान्यता के अनुसार इस गांव को किसी समय अश्विनी कुमारों ने बसाया था। ब्राह्मण बहुल आबादी होने के कारण सदैव से ही वीतराग, तपस्वी, सन्त महात्माओं का इस गाँव में भिक्षाटन के लिये आना–जाना रहता था। श्री गंगा जी के उस पार सिद्ध देवी श्री संकटा जी का मन्दिर स्थित है। गाँव से चन्द दूरी पर पश्चिम की ओर एक कुटिया स्वामी श्री कृष्णाश्रम जी के नाम पर बनी हुई है जो जल में थल की तरह चलते थे। इसी कुटिया में परिव्राजक के रूप में यतिगण आकर कभी–कभी विश्राम कर लिया करते थे। हमारे पितृचरण स्वर्गीय पं. श्री बैजनाथ जी पाण्डेय अपनी आस्तिकता के लिये प्रसिद्ध थे। उनका नित्यप्रति का नियम था कि कुटिया में स्थायी निवास कर रहे परम तपस्वी स्वामी शंकराश्रम जी महाराज एवं पूज्य स्वामी अनंग बोधाश्रम जी महाराज का दर्शन अवश्य करते थे। किसी भी नवागत परिव्राजक, संन्यासी, महात्मा को भिक्षा कराने हेतु आग्रह पूर्वक घर में लाते थे।

घटना आज से ४४ वर्ष पूर्व की है। एक दिन हमारे पितृचरण ने आकर घर में बताया कि आज एक महात्मा जो गंगा तट पर ही विचरण करते हैं, कुटिया पधारे हुये हैं। बड़े ही अलौकिक आभायुक्त, अत्यन्त सरल, तत्त्ववेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ, शंकर स्वरूप लगते हैं। मैं बैठा सुन रहा था कि आखिर ऐसे किस महात्मा का यह शब्द चित्र हैं जिससे पितृचरण इतने प्रभावित हुए हैं। पिता जी ने ये भी बताया कि अभी भिक्षा करने यहाँ पधारेंगे। मन में बड़ी उत्कण्ठा जाग्रतहुई कि कब महात्मा जी के दर्शन हों। घर में हमारी स्वर्गीया माता जी गंगा स्नान कर तुरन्त भिक्षा निर्माण कार्य में लग गयी। मैं स्वयं केले के पत्ता, मिट्टी का कुल्हड़ा गंगा जल से धोकर तैयार कर आसन इत्यादि लगा कर आने की प्रतीक्षा में बैठ गया। निर्धारित समय पर महात्मा जी आ ही गये। यही थे धर्म सम्राट, धर्म प्राण, वेदरक्षक, गोरक्षक, सनातन धर्मरक्षक, शंकरावतार पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज। मेरी उम्र उस समय १६ वर्ष की थी।

पूज्य महाराज श्री को जब मैंने उस दिन प्रथम बार देखा तो मैं उनके तेजस्वी चेहरे को देखकर आत्म विभोर हो उठा। उनके मुख मण्डल पर आत्मिक उल्लास, हृदय की पवित्रता एवं अखण्ड सत्य की दिव्य चारुता प्रस्फुटित हो रही थी तपस्या की आँच में निखरा हुआ उनका शरीर बड़ा ही कमनीय एवं महनीय लगा। पूज्य महाराज श्री के पधारते ही मैंने साष्टांग प्रणाम किया। पूज्यवर ने मन्द मुस्कान के सथ पितृचरण की ओर संकेत करते हुए कहा कि यह बालक आप का है? बड़ा सात्विक लगता है। तदुपंरात पूज्य महाराज श्री ने भिक्षा ग्रहण कर उसी दिन सायं नाव द्वारा तीर्थराज प्रयाग के लिये प्रस्थान कर दिया। पूज्यवर की सेवा में उन दिनों श्री गदाधर ब्रह्मचारी (अब स्वर्गीय) रहा

करते थे। फिर तो जब कभी भी श्री चरण उधर से होकर गुजरते तो हमारे यहाँ कृपाकर भिक्षा अवश्य ग्रहण करते। यह उनकी हम लोगों के ऊपर अहैतु की कृपा ही थी।

सरकारी सेवा में आ जाने के कारण एक दिन मुझे असनी छोड़कर कानपुर में ही अब स्थायी निवास बनाना पड़ा। धर्म प्रचार कार्य में अति व्यस्त रहने के कारण उसे और तीव्र गति प्रदान करने के लिये पूज्य महाराज श्री ने जब से कार द्वारा यात्रा आरम्भ की उस समय से भी काशी से वृन्दावन, दिल्ली, हरिद्वार की ओर आते-जाते समय हमारे यहाँ प्राय: अवश्य पधारते रहते थे। इधर ८० वर्षों से तो पूज्य महाराज म.प्र., राजस्थान, पंजाब, दिल्ली की यात्राओं में कानपुर से गुजरते समय कृपाकर कम से कम एक रात्रि का विश्राम इस दास के यहाँ अवश्य करते एवं इस प्रवास के समय हमारी धर्मपत्नी के हाथ की बनाई भिक्षा ग्रहण करते थे।

पूज्य महाराज श्री में धी, श्री, धृति, कीर्ति आदि समस्त दैवी गुण एक साथ दिखाई देते हैं उन महामनीषी के बारे में कोई क्या लिख सकता है? सागर सीपी से नहीं उलीचा जा सकता। मेरे ज्ञान और कार्य दोनों के पूज्य महाराज श्री ही प्रखर रहे एवं पितृ परम्परा से आराध्य देव रहे हैं। आज उन तीर्थ पाद का पुण्य स्मरण करते हुये हृदय पुलकित हो उठता है। वे त्याग तपश्चर्या की साक्षात मूर्ति थे और वे सच्चे अर्थो में महात्मा। उनकी मेधा और संस्कृत वाङ्मय का अगाध जीवन्त ज्ञान ऐसा था जिसका उदाहरण आज मुझे नहीं दिखाई पड़ता है। मैं तो शास्त्र और साधना के दुर्लभ संयोग को ही स्वामी करपात्री जी के नाम से जानता हूँ। पूज्य महाराज श्री ने मानव जीवन के जो आध्यात्मिक सत्य का मूल्यांकन किया वही वास्तव में विश्व शांति का महान प्रेरणा स्रोत होगा। पूज्य महाराज श्री का कहना था कि सनातन धर्मी हिन्दुओं के लिये शास्त्र प्रमाण है। शास्त्रानुसार चलना ही कल्याण का मार्ग है और धर्म है।

पूज्य महाराज श्री के सम्पर्क में जो आता वह यही कहा करता था कि महाराज श्री उसी से सर्वाधिक स्नेह रखते हैं। 'अस सुभाउ कहु सुनहुं न देखउ'। दिल्ली, कानपुर, काशी आदि स्थानों का यज्ञ जिसने देखा होगा वही जानता है कि कैसा था वह यज्ञ समारोह। सम्भवत: इस तरह का यज्ञ पूर्व में युधिष्ठिर और समुद्रगुप्त ने सम्पन्न कराया था। फिर तो यज्ञों का प्रचलन चल पड़ा। पूज्य महाराज श्री की मेरे ऊपर असीम कृपा रही है। कानपुर वाले यज्ञ में श्री चरणों ने मुझे पूछताछ कार्यालय में सूचनाकर्ता के रूप में नियुक्त किया और कहा कि 'अयोग्य: पुरुषोनास्ति योजकस्तत्र दुर्लभ:'। तुम से अच्छा यह कार्य और कोई दूसरा सम्पादित नहीं कर सकता। पूज्य श्री चरण कुशल योजक थे। उसी समय की घटना है श्री चरण नाव पर सवार होकर गंगा जी को पार कर रहे थे। कि अचानक हाथ से 'श्री दण्ड' छूट कर श्री गंगा जी में गिर पड़ा। पूज्यवर को इतनी ग्लानि हुयी कि जब तक दूसरा दण्ड निर्मित होकर नहीं आया तब तक उन्होंने अन्न, जल तक नहीं ग्रहण किया। उस समय नाव पर वर्तमान में पुरी

शंकराचार्य जी महाराज (तक श्री पं. चन्द्र शेखर शास्त्री दवे) भी सवार थे। कानपुर के पूज्य स्वामी अद्वैतानन्द जी ने लाकर 'श्री दण्ड' दिया था।

पूज्य महाराज श्री के महिमा का एक उदाहरण दूँगा। यह कि सन् १९७७ की बात है हमारी कन्या सुश्री कुमारी रमा जिसको श्री चरण बहुत स्नेह, दुलार रखते थे को २९ दिन तक पेशाब नहीं हुआ इस अवधि में अपने उपचार के साथ-साथ भारत के प्रसिद्ध यूरोलाजी के सभी डाक्टरों को प्रायः दिखाया और शरीर के अवयवों का डॉक्टरी परीक्षण करवाया, एक्स-रे कराया लेकिन सब कुछ ठीक और सामान्य निकला। डॉक्टर लोग और मैं स्वयं हैरान थे कि आखिर जब पेशाब नहीं होता तो शरीर में कोई न कोई विकृति आनी चाहिये। पानी का भी पीना तो स्वस्थ व्यक्ति की तरह चल रहा था। कहीं से कोई दोष दिखाई नहीं पड़ता था। दो विदेशी डॉक्टरों को भी दिखाया तो उन लोगों ने कहा कि इस लड़की पर शोध कार्य होना चाहिये। आज तक मैंने इस तरह का केस देखा ही नहीं। हम बड़े धर्म संकट में थे। एक दिन पूज्य महाराज श्री के चरणों में निवेदन किया कि रमा को इन दिनों ऐसा हो गया है। पूज्यवर ने कहा कि वह तो सदैव प्रसन्न मुद्रा में दिखाई देती है। उसे क्या हो गया है? चिंता मत करो ठीक हो जायेगा। और श्री चरणों ने मुझे रमा सहित १९७७ के शारदीय नवरात्रों में काशी आने की आज्ञा प्रदान की। तदनुसार आज्ञा शिरोधार्य करके यथा समय काशी पहुंच गया। श्री चरणों में नवरात्रों में ही काशी के पंडितों से एक अनुष्ठान करवाया और रमा को बुलाकर उसके पीठ पर तीन थपकियाँ लगायी। तदुपरांत पूज्यवर ने कहा जाओ तुम ठीक हो जाओगी। वस्तुतः थोड़ी ही देर में उसने पेशाब का अनुभव किया और पेशाब हुआ। मैं पूज्यवर के कर-स्पर्श का चमत्कार देखकर आश्चर्यचकित रह गया। फिर आज तक कन्या को उस तरह की समस्या ही नहीं उत्पन्न हुई। ऐसे थे हमारे पूज्यपाद महाराज श्री। सिद्धियाँ तो उनकी गृहदासियाँ थीं। फिर भी कभी भी उन्होंने इन सभी चीजों का प्रदर्शन नहीं किया। हमारी ही तरह हजारों भक्तों ने उनकी कृपा का अनुभव किया होगा। 'हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।'

७ फरवरी १९८२ को प्रातः १० बजे काशी से फोन आया कि पूज्य महाराज श्री ब्रह्मभूत हो गये। सुनकर सहसा विश्वास नहीं हुआ श्री चरण वस्तुतः हम लोगों को छोड़कर चले गये हैं। मध्याह्न में ही ट्रेन द्वारा चलकर रात्रि ८ बजे काशी पहुंच गया। श्री चरणों को देखा कि पाँच भौतिक शरीर का त्याग कर समाधिस्थ हो बैठे हुए हैं। मुखमण्डल पर ऐसी आभा थी कि वर्णन ही नहीं किया जा सकता। आज भूतभावन बाबा विश्वनाथ काशी को सूनी करके चले गये थे, सनातन वैदिक धर्म का प्रखर सूर्य। अस्ताचल गामी हो गया था। श्री चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित कर प्रार्थना किया कि हे मेरे आशुतोष। हम लोगों में वह शक्ति पैदा करें जिससे स्वधर्म का पालन करते हुए सनातन धर्म की सेवा में यत्किंचित काम आ सका तो अपने को धन्य समझूंगा। यही तो आप की आज्ञा थी।

धर्म सम्राट पूज्य श्री करपात्री जी

–गणेश स्वरूप वानप्रस्थी

लुकरका, बांदा

इस धर्म प्राण देश भारतवर्ष में विदेशियों की दासता के प्रभाव से हमारे पुरातन सनातन धर्म का शनैःशनै ह्रास हो रहा था। वेदादि धर्म शास्त्रों पर से लोगों की आस्था डिग रही थी। पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता भारतीय तत्वों पर हावी हो रही थी। समाज में वर्णाश्रम धर्म के सिद्धांतों, मान्यताओं, परम्पराओं एवं नियमों के प्रति शैथिल्य आ रहा था। ऐसे समय में पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का आविर्भाव हुआ। उन्होंने पारतन्त्र्यकाल में ही स्वराज्य प्राप्ति की चतुःसूत्री को बड़े सुन्दर प्रकार से जनता के समक्ष रखते हुये विवेचन किया कि धर्मात्मा बनो, बुद्धिमान बनो, बलवान बनो एवं संगठित होकर सुखपूर्वक जीवन यापन करो। स्वामी जी ने आस्तिकवाद को ही विश्वशांति का मूलमन्त्र बताते हुये धर्म संघ, रामराज्य परिषद, धर्मवीर दल, धर्मसंघ शिक्षामंडल आदि अनेक आदर्श संस्थाओं की स्थापना की। आपके त्याग एवं तपस्यापूर्ण जीवन एवं धर्मोपदेशों से प्रभावित होकर असंख्य लोगों का जीवन धर्माचरण में प्रवृत्त हो गया। 'ब्राह्मण की शूद्रवृत्ति, श्वानवृत्ति (नौकरी), सेवावृत्ति सर्वथा निषेध है'–महाराज श्री के इन उपदेशों का पूर्ण प्रभाव हमारे जीवन पर भी पड़ा और ब्राह्मणोचित संस्कारों के कारण स्कूली शिक्षा के अनन्तर उधर प्रवृत्ति नहीं हुयी। १९४९ से ही रामराज्य परिषद के प्रति अपना जीवन समर्पित कर दिया। और धर्म सम्राट पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के उपदेशानुसार हमने भी जीवन को इन पांच कार्यों के लिये समर्पित कर दिया है–गोरक्षा, धर्मरक्षा, रामराज्य स्थापना, समाज का संगठन एवं सुधार तथा आयुर्वेद की रक्षा। जैसा कुछ भी बन पड़ता है अपनी शक्ति भर सत्यनिष्ठापूर्वक (१) श्री अम्बिका धर्मसंघ संस्कृत विश्वविद्यालय (२) राष्ट्रीय विवाह समिति (१) राष्ट्रीय गोरक्षा समिति तथा (४) राष्ट्रीय रामराज्य सेवा सेना आदि से सम्बन्धित गतिविधियों के माध्ययम से महाराज श्री के आदेशों का पालन करते हुये धार्मिक जनता जनार्दन की सेवा में प्रवृत्त हूं। मेरे जैसे न जाने कितने अकिंचन लोगों का जीवन धर्मसम्राट ने धर्म पथ की ओर अग्रसर कर कृतार्थ कर दिया। वे धन्य हैं जिन लोगों पर धर्म सम्राट को कृपा दृष्टि रही है।

स्वामी जी का यही उपदेश था कि –'हिन्दुओं को सावधान होकर संगठित हो जाना चाहिये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जगें और अपने कर्तव्य पालीन में सन्नद्ध हो जायें। अग्रज ब्राह्मणों के अन्त्यज भाई हैं। वे भी अपने अधिकारानुसार संगठित हों। इसी प्रकार सभी भारतीय धर्मात्मा, बुद्धिमान, बलवान एवं संगठित हो जाएं तब ही हमें पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति होगी।

***

वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्

-लेखक:-श्याम नारायण शास्त्री रामायणी-सा. रत्न, वाराणसी

अपने भारतवर्ष में सन्त, विद्वान्, योगी, महोपदेशक, सुधारक एवं राष्ट्र हितार्थ अपने जीवन की समस्त सेवाओं को समर्पित करने वाले महापुरुषों की कमी कभी भी नहीं रही। किन्तु उक्त विशेषताएं विभिन्न प्रकार से अनेक महापुरुषों में भिन्न-भिन्न रूप से पायी गयी। एक साथ ही उक्त समस्त विशेषताओं का समन्वित एवं संवलित रूप किन्हीं किन्हीं महापुरुषों में देखा गया। इसके ज्वलन्त उदाहरण कई शताब्दियों में परम श्रद्धेय ब्रह्मलीन अनन्त गुण-गण निलय धर्म सम्राट् अनन्त श्री विभूषित पूज्यपाद गुरुदेव श्री स्वामी करपात्री जी महाराज यतिचक्र चूड़ामणि अप्रतिम विद्वान्, सन्त, योगी, महोपदेशक, राष्ट्र हितार्थ सर्वस्वार्पण करने वाले भगवान् की विशिष्ट ही विभूति थे। उनके लिये वास्तव में-

जो कछु कहिय थोर सब तासु।

वस्तुत: वे जीवन्मुक्त थे। जीवन लीला संवरण काल के ६ मास पूर्ण जब मैं वेद शास्त्रानुसन्धान केन्द्र केदार घाट वाराणसी उनके श्री चरणों में दर्शनार्थ गया तो महाराज श्री ने कहा अब तो संवरण काल आ गया। मैं समझ नहीं पाया। पूछा क्या बात है? कहा कि यही है। कह दिया ठीक है। और तुलसी की हजारिया माला लेकर जप करने लगे।

सन् ८१ सितम्बर से लेकर दिसम्बर पूरा एवं सन् ८२ जनवरी १३ तक संयोगवश हमारा कार्यक्रम कलकत्ता से ही बैंकाक, सिंगापुर, क्वालालमपुर, ई.पो., पीनांग, बाली, सुमात्रा, बोर्नियों, एवं जकार्ता का बना। इन स्थानोंपर थोड़ा थोड़ा समय देकर मानस एवं भागवत प्रवचन करके पुन: सिंगापुर आकर फीजी जाने की तैयारी कर रहा था कि एक अर्जेन्ट तार मिला काशी से कि परमश्रद्धेय श्री स्वामी जी महाराज अस्वस्थ हैं तुरन्त घर काशी वापस आवें। निदान आगे की यात्रा निरस्त करके सिंगापुर से बैंकाक, कलकत्ता होते हुए काशी आया। आते ही २ घण्टा घर रहकर स्नानादि से निवृत्त होकर श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में उपस्थित हुआ। देखते ही स्वामी श्री महाराज जी ने कुछ अस्वस्थता एवं अन्य मनस्क मुद्रा में कुशल संक्षेपत: पूछकर कहा कि बिना हमसे पूछे ही क्यों विदेश यात्रा में गये? जैसे-तैसे डरते-डरते यथा-शक्य उचित समाधान हमने किया किन्तु सन्तुष्ट वे न हो सके और फिर ये कहा कि अच्छा इस समय प्रयागराज में स्नान पर्व है वहाँ जाकर जितना भी द्रव्य लाये हो उसका पंचमांश दान पुण्य स्नान यथाशक्य शतचण्डी या सहस्त्रचंडी पाठ यज्ञ में व्यय करो और ब्राह्मणों द्वारा पाठ कराने के साथ ही साथ स्वयं भी पाठ करना। पंचमांश दान पुण्य अवश्य करो। क्योंकि शास्त्र का वचन है कि -

धर्माय यशसेऽर्थाय कामाय स्वजनाय च।
पंचधा विभजन् वित्तमिहामुत्र च मोदते।।

धर्म, यश, अर्थ प्राप्ति के स्रोत के लिये, अपनी कामना एवं परिवार के लिये ५ प्रकार से द्रव्य का विभाजन उभय लोक में कल्याणकारी होता है और प्रयागराज में स्नानादि सभी कार्यक्रम पूर्ण करके एकादशी को ही काशी आ जाना। आदेश स्वीकार करके २२ जनवरी माघ कृष्ण त्रयोदशी शुक्रवार को सायं प्रयाग पहुंच गया। वहाँ पर ९ ब्राह्मणों के द्वारा ११ दिन में शतचंडी अनुष्ठानपूर्ण कराके बुद्धवार ३ फरवरी सन् ८२ माघ शु. १० को सायं काशी आया। गुरुवार एकादशी को जब परम श्रद्धेय अनन्त श्री विभूषित स्वामी जी महाराज के श्री चरणों में जाकर प्रणाम किया मेरा मुंडित केश देखकर परम प्रसन्न हुये। कहा सब आनन्द से हो गया। मैंने कहा जी हाँ भगवान्! सब ठीक ढंग से हो गया। अब क्या आज्ञा है?

महाराज श्री ने कहा विनय पत्रिका के २-४ पद सुनाओ। सुनाने पर प्रसन्न होकर कहा अब यहाँ पर भी काशी में स्नान दान यथाशक्य करो और कल सायंकाल ६ बजे विनय के पद एवं कुछ कथा सुनाने आओ। द्वादशी शुक्रवार ५ फरवरी को सायं ठीक ६ बजे पहुंचने पर महाराज श्री ने प्रसन्न मुद्रा में ४ पद जो संकेत किये सौभाग्य से वे हमें स्मरण थे और हमने सुनाया। फिर आदेश हुआ श्री भरत चरित्र थोड़ा सुनाओ। हमें संकोच तो बहुत हुआ किन्तु आज्ञापालन पूर्वक ४० मिनट सुनाया भी। निदान चरणों में प्रणाम करके जब चलने लगा तो फिर महाराज श्री ने कहा कल इसी समय पुनः विनय के पद एवं कथा सुनाना। ६ फरवरी ८२ माघ शु. १३ शनिवार को पुनः जब चरणों में उपस्थित हुआ तो प्रथम विनय के ३ पद एवं सूरदास जी का एक पद श्रवण किया। और कहा कि अब कथा सुनाओ। हमने कहा कौन से प्रसंग पर सुनायें तो फिर मुस्कराकर बोले अब दशरथ मरण सुनाओ।

बड़ा ही संकोच हुआ। अन्त में मैंने कहा भगवन्! दशरथ मरण की कथा तो कभी नहीं सुनाता।

उत्तर मिला। क्यों? ये रामायण में नहीं है क्या?

मैंने कहा है तो किन्तु प्रसंग नहीं सुनाते।

फिर स्वामी श्री महाराज ने कहा-ये तो परम मंगलमय प्रसंग है। क्यों आनाकानी करते हो? सुनाओ।

फिर मैंने कहा-भगवन्! प्रायः लंकादहन, दशरथ मरणादि नहीं सुनाते। अनिष्टा शंका के कारण।

स्वामी जी ने कहा-नहीं नहीं परम मंगलमय प्रसंग ये है यही सुनाओ। अन्त में विवश होकर सुनाना प्रारम्भ किया इतनी देर की चर्चा में हमें भी थोड़ा सोचने का अवसर मिला। विश्व विश्रुत विभूति को एवं साथ ही साथ अनन्त विद्यावरिधि को हम क्या सुनायेंगे? ध्यान आया। किन्तु उस दिन विचित्र चमत्कार ये देखने को मिला कि हमने कथा भी-

वन्दौं अवध भुआल, सत्य प्रेम जेहि राम पद।
बिछुरत दीन दयाल, प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ।।

यही सोरठा प्रारम्भ किया श्रोता वक्ता दोनों को ही कथा में परमानन्द मिला। दोनों ओर अश्रुपात एवं पुलकावलि ही क्या?

ममगुनगावत पुलक शरीरा। गद्‌गद् गिरा नयन वह नीरा।।

इस चौपाई को सुनाते तो थे किन्तु क्रियात्मक रूप से उसी दिन ही ये लगी। इस प्रसंग पर मेरी कोई तैयारी नहीं थी। किन्तु श्री गुरुदेव भगवान् को ये सुनना था इस कारण उन्होंने ही शक्ति दी। कथा सुनाने की। मध्य में ३ बार बहुत ही करुणार्द्र होकर इस चौपाई को प्रेमार्द्र भाव से पुलकगात एवं घर्घरित कण्ठ से जोर-जोर से कहा-

हा रघुनन्दन प्रान पिरोते। तुम बिनु जियत बहुत दिन बीते।।

और ये कथा भी ५० मिनट तक हुयी। कथा तो और कहते किन्तु नाक, आँख, कण्ठ सभी भर चुके थे। कथा बन्द की। महराज श्री ने भी परम प्रसन्न होकर वहीं रक्खी हुयी एक टोकरी का पूरा प्रसाद दिया। कहा सबको ही बांट देना। अब जाओ। हमने कहा भगवन् अभी ८-१० दिन तक तो काशी रहना ही है। कल कब आऊं श्री चरणों में?

उत्तर मिला कल मत आना। आवश्यकता नहीं है। हां एक बात है तुम कई बार कह चुके हो कि स्मरण शक्ति शिथिल हो रही है तो कल हो माघ शुक्ल चतुर्दशी रवि पुष्य योग है। इस मुहूर्त में ब्राह्मी सेवन एवं सरस्वती मन्त्र साधना का उत्तम योग कई वर्षों के बाद आ रहा है-

माघ शुक्ल चतुर्दश्यां पुष्यार्के रविवासरे।

शास्त्र का वचन है इस ब्राह्मी का सेवन कर लेना ही चाहिए। ब्राह्ममुहूर्त में ही इसका सेवन एवं सरस्वती मन्त्र जप भी कर लेना परमावश्यक है, घर जाकर सब साधन ठीक करके का.हि.वि.वि. में भैषज्योद्याान में ब्राह्मी होगी, सब व्यवस्था कर लो और अब जाओ मूड़ खराब मत करो-

हा! रघुनन्दन प्रान पिरीते। तुम बिनु जियत बहुत दिन बीते।।

फिर इस चौपाई का जप करने लगे। हाथ से इशारा किया जाओ चलते चलते फिर मैंने घृष्टता की। पूछा भगवन्! कल कब आऊं फिर?

उत्तर मिला-कह दिया न। कल मत आना। आवश्यकता नहीं?

निदान प्रसाद लेकर घर आए। अपने बगल में रहने वाले पं.दीनानाथ जी पाण्डेय को ब्राह्मी वाली सारी विधि बताई उनके दो पुत्रों एवं अपने चि. राम नारायण को साथ लेकर हमने एवं पाण्डेय जी ने उसका प्रयोग किया। कहीं पर कोई त्रुटि रह गयी होगी। लाभ तो हमें नहीं मिला। रात्रि भर जागरण किया ३ बजे ब्रह्ममुहूर्त में हम लोग अस्सी पर जाकर गंगा जी में प्रयोग भी किए। घर आये पाठ पूजन कर रहे थे कि

९ बजे के लगभग चि. राम नारायण ने हमें कहा–प्रातः ९ बजे माघ शुक्ल १४ रविवार पुष्य नक्षत्र ७ फरवरी ८२ को अत्युत्तम मुहूर्त में महाराज श्री अपने श्री रामकृपेश्वर मन्दिर में भगवान् के सन्निधान एवं गंगा जी का दर्शन करते हुये शिव शिव शिव जप ३ बार करे हुये, शिव में लीन हुये। 'संवरण काल आ गया की स्मृति एवं कल मत आना। आवश्यकता नहीं।'

क्या पता था कि ये संकेच इसी दिशा में है। आज भी वह स्वर ज्यों का त्यों कल मत आना। आवश्यकता नहीं। हृदय में गूंज रहा है। क्या कहें?

लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातु मर्हति।

अब कहाँ मिलेगी यह करुणा, कृपा, उदारता, समस्त शंका समाधान की परम्परा एवं एक साथ योग, भक्ति, ज्ञान, कर्म काण्ड का समन्वित रूप। 'मन की मन ही मांहि रही' क्या कहें–

मनसि वचसि काये पुण्य पीयूष पूर्णा–स्त्रिभुवनमुपकार श्रेणिभिः पूरयन्तः।

पर गुण परिमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं, निज हृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।।

विवश होकर कहना ही पड़ता है कि – **अब न आंखितर आवत कोऊ।**

आज हमारा सनातन धर्म जगत् उस महाविभूति के लीला संवरण काल का स्मरण करके वस्तुतः अपने को न जाने क्या क्या खोया हुआ समझता है कोई पारावार नहीं–

ऐ अजल तुझसे बहुत ये सख्त नादानी हुई।
फूल तोड़ा वो कि गुलशन भर में वीरानी हुई।।

मुझे तो सबसे बड़ा दुःख इसी बात का है कि –

यह सब भी इन आंखिन आगे। तऊ न तजा तनु जीव अभागे।।

बेचारी लेखनी की सामर्थ्य सीमित भाव अपरिमित। बस

***

टिप्पणी– (लेखक के विचार स्वयं के है। सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।)

धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज

–नारायण स्वरूप ब्रह्मचारी, अन्तेवासी
द्वारका–शारदा पीठ, पश्चिमान्नाय, द्वारका

परतन्त्र भारत में सनातन वैदिक धर्म के ह्रास की पराकाष्ठा थी। 'धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान' की भयावह परिस्थिति में यह पुरातन सनातन हिन्दू जाति बुरी तरह ग्रस्त थी। 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्'–की अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये बालक हर नारायण के रूप में एक विभूति १९०७ ई. में अवतरित हुयी। अलौकिक प्रतिभा के बल पर सम्पूर्ण विद्याओं को आत्मसात करके २४ वर्ष की युवावस्था में ही दण्डग्रहण करके 'अभिनव शंकराचार्य' के रूप में प्रतिष्ठित होकर पदाति धर्म यात्राएं की। अधार्मिक बिलों का सक्रिय घोर विरोध किया। अनेक ऐतिहासिक महायज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये। सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके वैदिक विद्वानों को संगठित करके उन्हें निर्भय होकर स्वधर्म पालन में निरत रहने की प्रेरणा दी। अनेक सर्व वेद शाखा सम्मेलनों का आयोजन कर बौद्धिक धरातल पर सनातन वैदिक सिद्धान्तों की सर्वश्रेष्ठता सिद्ध करके अवैदिक नास्तिक मतों की बाढ़ को रोकने का भीष्म प्रयास किया। धर्म भीरु चिरकाल से दबाये गये सनातनी समाज को आलस्य एवं उपेक्षा का भाव त्याग कर संघर्षशील बनने की प्रेरणा देकर इन महापुरुष ने चिरप्रसुप्त हिन्दू जाति में नव चेतना का संचार किया। वेद हमारी संस्कृति सभ्यता के मूलाधार हैं, वेद अकृत्रिम है, अपौरुषेय हैं, अपरिवर्तनीय है–अतः परमप्रमाण हैं–इसका डिमडिम घोष कर वेद विरोधियों को परास्त किया। अनेकों शास्त्रार्थों में वैदिक विजय पताका फहराकर धर्म का डंका बजाया। कठिन से कठिन व्रतों का स्वयं पालन कर इस भौतिक देह को दिव्य–देव तुल्य पवित्र बनाकर समस्त इन्द्रियों को जीतकर यतिचक्रचूड़ामणि के पद पर प्रतिष्ठित होकर धर्मानुष्ठान आदि के मानदण्ड स्थापित किये। कोटि–कोटि जनता में आस्तिकता के भावों को सुदृढ़ कर उन्हें धर्मपरायण जीवन व्यतीत करने के लिये प्रेरित किया। अनेक संस्कृत महाविद्यालयों की स्थापना कर कर्मकाण्ड उपासना काण्ड एवं ज्ञान काण्ड के सैंकड़ों विद्वान देश को दिये जो आज वैदिक विधि विधान पूर्वक स्वधर्मानुष्ठान में निरत हैं। दीनहीन उपेक्षित ब्राह्मण समाज में विद्या–बुद्धि के बल पर पुनः आत्मभिभान पूर्वक जीवन जीने का स्वाभिमान उत्पन्न किया। गोहत्या बन्दी के लिये जीवन पर्यन्त कठोर संघर्ष कर जेल यातनाएँ सहन कीं। मठ–मन्दिर–पीठ इत्यादि के संगठन जो कि शिथिल पड़ गये थे उन्हें पुनः संगठित किया। अनेक सुप्त पीठों का उद्धार किया। आद्य शंकराचार्य जी द्वारा धर्म रक्षण के लिये स्थापित विभिन्न मठों एवं पीठों पर आचार्यों को अभिषिक्त कराया जिससे स्वतन्त्र भारत में भी सनातन वैदिक धर्म का प्रकाश विश्व को मिलता रहे। धर्म के प्रचार प्रसार हेतु विपुल साहित्य की रचना की। चारों

दिशाओं में स्थापित धर्म पीठों के जगद्गुरु शंकराचार्यों को धर्म संघ के माध्यम से एक धर्म मंच पर एकत्र करने का महान् ऐतिहासिक धर्म कार्य सम्पन्न किया। आज देश में धर्म विरोधी विपरीत उत्पन्न वातावरण हैं, ऐसे समय में भारी मात्रा में अधार्मिक साहित्य की रचना हो रही है, विभिन्न प्रकार से लोग उद्मवेश में धर्म के नाम पर अधर्म का प्रचार प्रसार कर रहे हैं–'तुलसी के शब्दों में जिमि पाखण्ड विषाद से लुप्त भये सद्ग्रंथ'–ऐसी विषम परिस्थिति में उन छद्मवेशधारी तथाकथित धर्मसेवियों को खुले मन्त्रों से शास्त्रार्थों की ललकार देकर अस्त किया तो पवित्र लेखनी के माध्यम से उनका सैद्धान्तिक खण्डन कर उन्हें मौन होने पर विवश कर दिया। सारांश। यह दिव्य विभूति, अवतारपुरुष धर्म के सर्वोच्च सिद्धान्तों पर आरुढ़ धर्म सम्राट्, अपने क्रिया कलापों से धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान की निवृत्ति करके और भविष्य में इस पर आचरण करते रहने की प्रेरणा देकर, राष्ट्र को धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो, गोवध बन्द हो, भारत अखण्ड हो, मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित रहे, धर्म में हस्तक्षेप न हो विधान शास्त्रीय हो–हर हर महादेव के पवित्र नारे देकर फरवरी १९८२ में ब्रह्म रूप हो गये। उनसे प्रार्थना है कि वह हमें सदा धर्म कार्यों में सलंग्न रहने की प्रेरणा देते रहे।

***

ज्ञानावतार पूज्य गुरुदेव

–ब्रह्मचारी राम चैतन्य 'विरक्त', वाराणसी

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्नानं सृजाम्यहम्।।

(श्रीमद्भावगत गीता)

यदा यदैव कालेनधर्मग्लानिर्भविष्यति। धर्म संस्थापयिष्यामिह्यवतारैस्तदा तदा।।

(भागवत–महात्म्य)

यदा यदेह धर्मस्यक्षयो वृद्धिश्चपाप्मनः। तदा तु भगवानीश आत्मनं सृज्यते हरिः।।

(भागवत)

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति जैमिने। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजत्यसौ।।

(श्रीमद्भावगत गीता)

उपर्युक्त तथ्य अवतारवाद के प्रबल पोषक हैं। इसके अतिरिक्त केनोपनिषद् वर्णित यक्षोपाख्यान भी अपना विशिष्ट महत्व रखता है। अतः अवतारवाद के खण्डक बन्धुओं की बात आपाततः रमणीय ही प्रतीत होती हैं। इसके साथ–साथ शास्त्रों में भगवान के ज्ञानावतार का भी वर्णन आता है, यथा–सतयुग में भगवान दक्षिणामूर्ति, त्रेता में भगवान दत्तात्रेय, द्वापर में भगवान वेदव्यास एवं कलियुग में भगवान

आद्यशंकराचार्य ज्ञानावतार थे। 'आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है।' यह उक्ति समय-समय पर चरितार्थ होती रही है। कुछ समय पूर्व ऐसा समय आया कि एक सज्जन ने वेद के अर्थ का अनर्थ करके सनातन मर्यादाओं को मटियामेट कर दिया, उसे अपने अनुरूप अनुयायी भी मिल गये और वे सब एक सम्प्रदाय के रूप में परिवर्तित हो गये। समय की पुकार थी कि किसी ऐसी अलौकिक शक्ति का प्राकट्य हो जो वेद के वास्तविक अर्थ का प्रतिपादन करके सनातन मर्यादाओं की स्थापना करे और अनर्गल प्रलापको को मुंह तोड़ उत्तर दे। ऐसे समय में वैशारद्यऽनवद्य, सत्वैकतान, परमर्षिवर, सुमेधा, निर्व्याज भक्ति रस सार, श्रीमद्भागवतामिध पीयूष पारावार, निखिल शास्त्र मर्मज्ञ, विरुद्ध धर्माश्रय, धर्म स्वरूप, प्रणतार्तिहर, दृढ़ प्रतिज्ञ, शास्त्रार्थकला दक्ष, ज्ञान-भक्ति-कर्मस्वरूप, पर्यटनशील, विश्ववन्द्य, संस्कृत एवं संस्कृति के उन्नायक, अशेषविद्यामहार्णव, द्वादशदर्शन पारादार पारीण, जगद्गुरुणांगुरु, सर्वतन्त्र, सरस्वती के वरद्पुत्र, निगमागम शास्त्र पारदृश्वा, यतिचक्र चूड़ामणि, अनन्त श्री पण्डित महामहिम महिम, परमहंस परिव्राजकाचार्य, प्रातः स्मरणीय, परम पूज्य पाद, परम श्रद्धेय गुरुवर्य धर्म सम्राट स्वामी करपात्री जी (हरिहरानन्द सरस्वती जी) का प्राकट्य हुआ। आप वाणी और लेखनी दोनों के ही धनी थे। दोनों में ही धर्म के रहस्यों के उद्घाटन करने का अलौकिक क्षमता थी। वे हृदयवर्जिका विमला वाणी के जैसे प्रेरक मनीषी थे। वैसे ही ललित ललाम लेखनी के धनी। वैदिक शास्त्र मर्म के उन्मीलन में समर्थ वाग्मी थे। वैसे ही ललित ललाम लेखनी के धनी। जिनके विषय में कहा गया है, "वाग्मो भवति वा न वा।" वे मात्र नीरस वेदांती नहीं हीं थे, प्रत्युत वे सौन्दर्य सार-सर्वस्व रसामृत मूर्ति निकुंज बिहारी की परम पावन निकुंज लीला के भक्ति-रसालुप्त सहृदय उपासक थे, जिनकी अमृतवषिणी कमनीय वाणी से भक्ति रस के मधुमय कण बिखरे पड़ते थे।

उनके श्री विग्रह के आविर्भाव, अध्ययन, तपस्या एवं विभिन्न कार्यकलापों का वर्णन, उनके द्वारा विश्व कल्याण हेतु अनेकानेक शास्त्रीय अनुष्ठानों का वर्णन, फाल्गुन शुक्ला ३, संवत १९९१ में संन्यास दीक्षा ग्रहण का वर्णन, हिन्दू कोड, भारत विभाजन एवं गोहत्या विरोधी प्रबल आंदोलन का वर्णन, उनके जीवन चरित्र में वर्णित होगा। पुनः-पुनः वर्णन में यद्यपि हृदय की पवित्रता के साथ-साथ संकल्प में दृढ़ता भी आती है परन्तु पिष्टपेषणं दोषवशात मनोभावों के उस अंश को वहाँ देने का लोभ संवरण करना पड़ रहा है।

मुझे विधाध्ययन हेतु तीन वर्ष तक नरवर सांगवेद विद्यालय में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ के प्रमुख व्यक्तियों ने बताया कि स्वामी जी स्वाध्याय काल में भी घोरतप करते थे। माघ के महिने में रात-रात भर गंगा जी के किनारे बैठ कर तप करते, ठण्ड के कारण शरीर अकड़ जाता था, जब भोर में स्नानार्थी गंगाजी पर जाते थे तब स्वामी जी को यथावत उठकर लाते, इनके चारों ओर अग्नि प्रज्वलित की जाती,

तब कहीं चेतना आती थी शरीर में। इसी प्रकार ग्रीष्म में तप्त बालू पर बैठकर तप करते थे। तदन्तर उत्तराखण्ड में हिमालय की हिमाच्छादित तलहटियों में बैठ कर घोर तपस्यारत रहकर आत्म ज्ञान प्राप्त किया। श्री करपात्री नाम से प्रतिष्ठित होकर अनेकानेक महान वैदिक यज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये। धर्म यात्राएं, भाषण, लेखन आदि के साथ संतुलित नियमित एवं मर्यादित जीवनचर्या स्वामी जी की अद्वितीय थी। भिक्षा भी सायं ५ बजे सूक्ष्म सी लेते थे कभी-कभी तो केवल बिल्व पत्र एवं दूर्वादल का प्रयोग करते थे। छः बजे से विद्वानों, विद्यार्थियों को पाठ पढ़ाते थे। मुझे भी पाठ-श्रवण का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आप श्री के पढ़ाने की शैली अत्यन्त सुन्दर एवं विलक्षण थी, गम्भीरतम विषय को भी सरलतम बनाकर समझाना, पढ़ाना स्वामी जी की विशेषता थी। ब्रह्मस्वरूप होने के ४-५ दिन पूर्व तक आप हम सब को अपने अलौकिक पांडित्य प्रसाद से लाभान्वित कराते रहे।

एक बार पाठ के समय पुरी पीठाधीश्वर शङ्कराचार्य जी विराजमान थे। इन पंक्तियों के लेखक ने 'सतु दीर्घकाल-नैरन्तर्य सत्कारासेवितो दृढ़ भूमिः'-इस सूत्र को उठाया, फिर क्या था, महाराज जी ने योग, न्यास, वेदांत एवं मीमांसा के जटिल सूत्रों को उठाया विवेचन किया। जिनको सुनकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि रुग्णावस्था में भी इतनी स्मृति। माघ मेले में जाने से पूर्व जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। हास्य-मिश्रित वार्तालाप होता रहा। तत्पश्चात् महाराज जी ने कहा-''हमने अपने सब विचार 'वेदार्थ-पारिजात' में लिपि बद्ध कर दिये हैं, उसके आधार पर श्री दयानन्द जी के समय में होते तो यह सम्प्रदाय ही नहीं चलता।''-यह सत्य भी है। महाराज जी ने दिल्ली, हरिद्वार आदि स्थानों पर शास्त्रार्थ में विपक्षियों को परास्त भी किया और शास्त्रार्थ निरूपण द्वारा अपनी विद्वत्ता प्रगट थी।

उनके शिव-स्वरूप होने पर विश्व की अपूरणीय क्षति हुई और सनातन धर्म का तो सूर्य ही अस्त हो गया। जैसा कि उन्हीं के सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मचारी एवं शास्त्र-विषयक मन्त्रणादाता श्रीमार्कण्डयेय ब्रह्मचारी जी ने उनके शिव स्वरूप होने पर कहा था, ''अस्तङ्गतो गीष्पतिः।'' महाराज श्री काशी की भक्तिमार्गीय, भागवती, अद्वैती संन्यासिों की परम्परा के मुकुटमणि के रूप में विराजमान थे। उनके युगलाचरणारविन्दों में परार्ध-परार्ध साष्टांग दण्डवत् और श्लोक-सुमन भेंट निवेदन करते हुये क्षमायाचना करता हूँ-

यत्कीर्त्तिस्तिलकायते त्रिभुवने तापत्रयोन्मूलनी,
यद्वाक्यामृत जीवनीः जनयते स्वान्ते संतां कौतुकम्।
यत्पादाब्जरजः प्रसाद कणतः कैवल्यमापद्यते,
सोऽयं कोऽपि महेश्वरो विजयते श्रीपाणिपात्रो गुरुः।

शिव ! शिव !! शिव !!!

कथाश्रोता-कृष्ण सर्प

–जगदीश प्रसाद दैवज्ञ, मंत्र शास्त्री
सभाभति–रामदल संस्कृत महाविद्यालय, दरीबा, दिल्ली
सभापति–इन्द्रप्रस्थीय गौड़ ब्राह्मण सभा, दिल्ली

साधूनां दर्शनं पुण्यम्–संसार में साधुजनों तथा महापुरुषों के दर्शन मात्र से जीवों का कल्याण तथा अनन्त पुण्यों की प्राप्ति होती हैं ऐसा पुराणों का कथन है। यतिचक्र चूड़ामणि अनन्त श्री विभूषित १००८ स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के श्री चरणों में बैठकर असंख्य नास्तिक एवं आस्था–विहीन मनुष्य ईश्वर परायण तथा धार्मिक निष्ठावान् होते देखे गये हैं। आज की पाश्चात्य परम्परा एवं विचारों में प्रवाहित होने वाले अनेक सम्प्रदाय एवं समाज से महाराज श्री ने भारीय आर्ष सिद्धान्तों के आधार पर वैज्ञानिक रीति से भारत भूमि को सर्वोपरि बताया। सौभाग्य से मुझे श्री चरणों का सान्निध्य प्राप्त करने का अनेक बार अवसर मिला। एक समय की घटना है कि महाराज श्री अपनी तपोभूमि कोयलघाटी में नित्य कार्य क्रमानुसार कथावार्ता के उपदेश से जनमानस को कृतार्थ कर रहे थे कि उन्हीं दिनों एक कृष्ण सर्प उनके आसन के निकट एक वृक्ष के ऊपर बैठकर प्रतिदिन कथा श्रवण किया करता था। संयोग से किसी श्रोता की दृष्टि उस पर सहसा पड़ी तो महाराज जी ने संकेत किया कि यह सर्प नित्य दत्तचित्त होकर कथा का पूर्ण लाभ प्राप्त करता रहा है जबकि आप लोग इतनी एकाग्रता से अपने–अपने आसनों पर स्थिर नहीं है। आश्चर्य था कि महाराज जी दूसरे की मनःस्थिति को अपने तपोबल से स्वयं ही जान जाते थे। वे एक उदारचेता, सनातन संस्कृति के परिपोषक थे। अनेक धर्मावलम्बियों से अपने धर्म को आर्ष वैज्ञानिक प्रणाली पर सर्वाधिक महत्वूपर्ण सिद्ध करना आपके वैदुष्य एवं प्रखर मेधा का परिचायक रहा है। इसके अतिरिक्त, इस भारत धरित्री पर आप शीर्षस्थ (मूर्धन्य) सनातन संस्कृति संरक्षक, वेद एवं शास्त्रों के मर्मज्ञ तथा भगवती त्रिपुर सुन्दरी के परमोपासक थे। आप समयानुसार मानव समाज की अनेक विध धर्म संकटों से रक्षा करते रहे। गोरक्षा आन्दोलन के प्रवर्तक तथा गोरक्षार्थ अनेक भीषण यातनाओं को सहते रहे। ऐसी त्याग, तपोमूर्ति संसार में बहुत कम दृष्टिगत होती है। श्री स्वामी जी अनेक व्यावहारिक नीतियों में निष्णात थे, यह इनकी विलक्षण प्रतिभा का लक्षण था। ऐसे अद्भुत सन्तों की संगति मानव समाज में बहुत कम उपलब्ध हो जाती है।

***

पूज्य श्री चरणों की लोक-लीला

किन्हें-किन्हें लिखें, किन्हें-किन्हें छोड़ें

–आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी, दण्डीवाड़ा, कानपुर

मेरे परम आराध्य, लोकोत्तर चरित्र, विश्ववन्द्य, प्रात:स्मरणीय पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज आत्मज्ञान के उद्भट व्याख्याता सन्यासी, महासिद्ध मन्त्र द्रष्टा वैदिक ऋषि थे। वे भारतीय ज्ञान क्षेत्र के अलौकिक महापुरुष थे। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मधुसूदन सरस्वती श्री गौरवमयी परम्परा की अपूर्व कड़ी थे। और हम कह सकते हैं कि अपनी तेजस्विता तथा दिव्य ज्ञान के फलस्वरूप ही उन्होंने बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में जबकि नास्तिकों का बोल बाला था और यहाँ तक कि सरकार की धर्म विरोधी नीतियों के कारण सनातन हिन्दू धर्म संकट में था, स्वामी जी ने सनातन धर्म को ह्रास से बचा लिया अपरोक्षानुभूति की जागरित प्रेरणा ही उनके जीवन का अन्यतम वैशिष्ट्य था वे देह धारण करके भी विदेह थे, मानव होकर भी अमानव थे, लोकवासी होते हुये भी लोकोत्तर थे। उनके जीवन वाणी और प्रचार के भीतर सनातन वैदिक धर्म के संरक्षण तथा सम्प्रसारण की असीम शक्ति निहित थी। आज वेदान्त धर्म की केवल दार्शनिकता ही नहीं बल्कि अनुष्ठान की ओर से जो कुछ श्रेष्ठ, सबल तथा गौरव का विषय है, उस सभी को इन पूज्य श्री चरणों के अवदान रूप से स्वीकार करते हुये हम गर्व का अनुभव करते हैं आधिकारिक पुरुष भगवदिच्छानुसार समाधिभूमि से उतरकर जितने दिन जीव-लोक में रहते हैं, उतने दिन उनकी एक ही कामना रहती है-जीव जगत का कल्याण साधन। वे यदि केवल समाधिस्थ होकर रह जायें तो इससे तो लोक शिक्षा होगी नहीं। इसलिये वे सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि लेकर जगत में रहते हैं। ज्ञान के बाद जो भक्ति है वही भक्ति की व्यंजना होती है। पूज्य श्री चरणों के जीवन में हम देखते हैं कि वे दैवी इच्छा से व्यावहारिक क्षेत्र में भक्ति और भक्त के भाव का आश्रय लेकर विचरण कर रहे थे। भक्ति को विलासभूमि बनाकर वे अपना चित्त 'एकमेवा-द्वितीयम्' ब्रह्म में ही समाहित करते थे। भक्ति शास्त्र पर उनकी अनेक रचनायें हैं। उनकी रचनाओं का आकलन मैं अल्प बुद्धि नहीं कर सकता। श्री मद्भागवत आदि पर प्रवचन करते हुये वे स्वयं रसमय एवं रस तरल हो उठते थे। उनके जीवन में पुन: हम देखते हैं कि हमारे देवी देवताओं के आवास स्थल तीर्थ भूमियों की महिमा को पुन: प्रतिष्ठित करने के लिये उन्होंने स्वयं तीर्थ स्वरूप होते हुये भी तीर्थ पर्यटन किया। उन्होंने धीर शान्त पदक्षेप से समग्र भारत, काश्मीर, नेपाल और अखण्ड भारत में यात्रा करके सनातन धर्म में जान फूंक दी। पूजा आदि का प्रचलन कर विरुद्ध मतावलम्बियों के साथ शास्त्रार्थ तथा शास्त्र व्याख्या आदि के द्वारा सनातन वैदिक धर्म की शीतल छाया में आश्रय प्रदान तथा कुमार्गियों का सन्मार्ग में परिचालन आदि किया है।

यह मेरे जन्मान्तरीय प्रबल पुण्यों का ही सर्वोत्कृष्ट फल माना जायेगा कि उनकी सेवा का सुअवसर तथा उनके सदुपदेशामृत वचनों का श्रवण एवं शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ। 'राम सदा सेवक रुचि राखी' यह उन्हीं श्री चरणों की ही कृपा थी कि मुझे स्वीकार लिया। यूं तो १९७२ में ही पूज्य श्री चरणों से दीक्षा प्राप्त कर यत्र-तत्र तीर्थाटन करता रहा। उन्हीं दिनों वर्तमान में द्वारिका के जगद्‌गुरु शंकराचार्य पूज्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने पूज्य श्री चरणों से कहा कि आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी यदि बिहार प्रान्त में विधर्मियों द्वारा बलात् धर्म परिवर्तन को रोकने हेतु और स्वधर्मानयन का कार्य वनवासियों के बीच करें तो अच्छा रहेगा। पूज्यवर की आज्ञा मिल गई और मैंने वहाँ जाकर इस दिशा में कुछ कार्य किया। उल्लेखनीय है कि द्वारिका के जगद्‌गुरु जी छोटा नागपुर डिवीजन (बिहार) में वनवासियों के कल्याण में रत हैं। सन् १९७४ में पूज्यर ने काशी आने के लिये आदेश दिया और मैं मार्च महीने तक पहुंच गया। इसी बीच 'सन्मार्ग' दैनिक (काशी) के नीति निर्धारण का कार्य मेरे ऊपर सौंपा गया और अध्ययन स्वाध्याय भी चलता रहा। प्रात: सायं श्री चरणों की सेवा का भी सुअवसर प्राप्त होता ही रहता था। केदार घाट स्थित महारानी विजयानगरम ने जिस अपनी कोठी को श्री चरणों में अर्पित किया था उसी में जून १९७९ को गंगा दशहरा के दिन श्री चरणों ने 'श्रीराम कृपेश्वर मन्दिर' की स्थापना की। दूसरे दिन पूज्यवर ने वहाँ की देख-रेख के लिये मेरे ऊपर सारा भार सौंप दिया। वस्तुत: यह श्री चरणों का मेरे प्रति अनुपम सुधामय वात्सल्य स्नेह ही था। फिर तब तो पूज्यवर की आज्ञा पाकर उनके साथ यात्रायें भी होने लगी। ३ वर्ष तक अनवरत २४ घण्टे सेवा करने तथा साथ में रहने का स्वर्णिम अवसर इस दास को मिला। पूज्यवर के ब्रह्मीभूत होने के पूर्व तक काशी के बाहर की यात्रायें होती रही।

पूज्य महाराज श्री तपस्वी अधिक थे या ज्ञानी अधिक थे इसका निर्णय सहसा नहीं किया जा सकता। तपस्या, विद्या, सनातनी विषमताओं के उचित समाधान, युग दृष्टि, प्राचीन की रक्षा नवीन का पोषण अनेक शताब्दियों के बाद श्री चरणों में ही एकत्रित दिखाई दिये थे। पूज्यवर के अन्तर में जो अपार क्षमा, दया, विज्ञता, परोपकार-प्रवृत्ति, दृढ़ता, स्थैर्य और सर्वोपरि पर-कल्याण चिकीर्षा का विशेष विकास हुआ था, उसके संस्पर्श से कोई भी वंचित नहीं हुआ। उनकी दृष्टि में कोई भी अयोग्य नहीं था। उन्होंने शान्ति को शीतल स्नेह छाया देकर सबको आश्वस्त किया। श्री चरण का तेज ही ऐसा था कि अपने आध्यात्मिक जीवन तथा शक्ति के बल से सभी के अन्तर में सत्य लाभ की आकांक्षा जगा देते थे।

उन श्री चरणों की लीला अनन्त है। समझ में नहीं आता कि हम किन्हें-किन्हें लिखे और किन्हें-किन्हें छोड़ें। पूज्यवर की धर्माचरण शीलता जनकल्याणकारी दृढ़ सिद्धान्तों की स्पष्ट वादिता तो लोक प्रसिद्ध ही है। उनकी दैनिक जीवन चर्या सभी

के लिये अनुकरणीय थी। धर्म ब्रह्म की ओर उन्मुख हों और प्रेरणा मिले अतएव उनकी दैनिक चर्या एवं कुछ रोचक संस्मरण नीचे दे रहा हूं–

रात्रि एक बजे शैय्या त्याग, शौचादिक से निवृत्त होना। पूज्यवर को बबूल की दातुन प्रिय थी मंजन के रूप में गाय के गोबर को राख बनाकर उसका उपयोग करते थे। गोबर राख में कपूर, लवङ्ग आदि मिलाने का मैं आग्रह करता तो कहते कि मुझे सांकर्य इष्ट नहीं। लोगों ने देखा ही होगा कि श्री चरणों के दन्त मोती के समान श्वेत और अनार के दाने के समान पंक्तिबद्ध थे।

२ बजे तक स्नानादिक से निवृत्त होकर मंत्रोच्चारण के साथ श्री गंगाजल का आचमन् भस्म धारण तदुपरान्त अपने ब्राह्मीभाव में स्थित हो जाते थे।

ब्रह्ममुहूर्त में ४ बजे प्रातः भ्रमण के लिये निकलना और ६ बजे तक भ्रमण करके अपने आवास पर लौट आना इस अवधि में चंडी पाठ सहित अनेकों स्तोत्रों का पाठ सम्पन्न कर लेते थे। यदि कोई स्तोत्र शेष रह गया है तो आने पर आसन पर विराजमान हो सम्पन्न करते थे। तदुपरान्त पुनः स्नानकर अपनी प्रातः कालीन पूजा में संलग्न हो जाते थे जिसमें 'श्री विद्या' की उपासना सविधि करते थे।

प्रातः ८।। बजे सूर्याघ्र्य देकर सूर्य नमस्कार किया करते थे। पुनः योगासन करने का क्रम चलता था जिसमें विभिन्न आसन होते थे। श्री चरणों का शरीर मक्खन की भाँति कोमल और हड्डियाँ प्लास्टिक की भाँति लचीली थी।

९।। बजे से लेखन कार्य आरंभ होता था। जिनका साहित्य आज सनातन जगत की अमूल्य धरोहर है।

१२ बजे मध्याह्न पूजन के पूर्व स्नान होता था। इस बात का पूरा ध्यान रखते थे कि श्री ठाकुर जी को भोग कैसा लगा है? भोग में श्री ठाकुर जी के लिये एक ही तरह का फल अथवा पदार्थ उनकी इष्ट नहीं था। भिन्न-भिन्न प्रकार के भोग पदार्थ होने ही चाहिये। पूजनोपरान्त उपस्थित भक्त समूह में भोग प्रसाद वितरित कर स्वयं 'श्री तुलसी दल' ग्रहण करते थे। तदुपरान्त कहते 'अच्छा अब पधारो।'

१२।। बजे तक दरवाजा बन्द हो जाता और पुनः आरंभ हो जाता वही लेखन कार्य। जिसको ग्रन्थ रूप में पाकर सनातन जगत उन श्री चरणें का चिर ऋणी रहेगा।

लेखन कार्य ३ बजे अपराह्न तक समाप्त कर स्नान करते थे। और फिर आरंभ होता था उनका योगाभ्यास और यौगिक क्रिया। पाठकगण ध्यान दें कि अभी तक उन्होंने एक बूंद जलतक नहीं ग्रहण किया है।

सायं सूर्यास्त के पूर्व श्री चरणों का अपना भिक्षा ग्रहण करने का विधान था। स्वाद तो उन्होंने जाना ही नहीं। नमक और मीठा का स्पर्श ही कभी न किया। भिक्षा में हरा शाक, हाथ चक्की का पिसा हुआ आटा, छिलके सहित मूंग की दाल, गो दुग्ध मात्र इतनी ही खाद्य वस्तुएं उनके भिक्षा में काम आती थी। अन्न तो ब्राह्मण

का ही होना चाहिये वह भी उसके जड़ में खाद के रूप में गोबर का प्रयोग हुआ हो। कुछ दिन तक केले का डंठल और कच्चा नारियल में दूर्वा पिसवा कर ग्रहण किया। चातुर्मास्य में मात्र फल और गो दुग्ध का सेवन करते रहते। प्रत्येक एकादशी एवं श्री रामनवमी, श्री कृष्ण जन्माष्टमी, श्री शिवरात्री महाव्रत निर्जल ही सम्पन्न करते थे। शीत ऋतु में तो उन्होंने कभी जल ही नहीं ग्रहण किया। एक दिन मैंने पूज्य श्री चरणों में निवेदन किया आप बिना जल लिये कैसे रह जाते हैं तो श्री चरणों ने कहा कि जल की जगह आजकल मेरा दुग्ध से ही कार्य चल जाता है। पूज्यवर को भिक्षा करने में मात्र ५ से ६ मिनट लगते थे। हाँ श्री ठाकुर जी को भोग लगाने में उनको २५ मिनट अवश्य लगते थे।

भिक्षोपरान्त ६ बजे के लगभग आये हुए दर्शनार्थियों के लिये दरवाजा खोल दिया जाता और फिर वहीं दोपहर की तरह लोगों की समस्यायों होती जिनका समाधान श्री चरण बड़े ही उत्साह के साथ करते। इस समय श्री तुलसी जी के माले पर जप भी चलता रहता। पूज्यवर प्रायः वीरासन अथवा सिद्धासन से बैठते थे।

अब रात्रि ७।। बजे पार्थिवार्चन की सम्पूर्ण तैयारी हो पूजन लग जाता। पूजन के पूर्व स्नानदिक से निवृत्त हो शिव स्वरूप श्री चरण रुद्राभिषक करने शृंग ले आसन पर विराजमान होते। गले में रुद्राक्ष की माला, तुलसी माला भस्म धारण किये हुये उनके मुखमण्डल की कमनीय कान्ति देखते ही बनती थी। उस समय उस कर्पूर गौर सदाशिव ज्योतिमय शरीर से एक ऐसी आभा उद्भासित होती रहती कि लोग दर्शन कर परम शान्ति का अनुभव करते।

रुद्राभिषेक प्रायः १० बजे तक समाप्त हो जाता। अब बारी आती पूज्यवर की देश विदेश में हो रहे राजनैतिक गतिविधियों के प्रति जानकारी की। कहते 'आत्म चैतन्य अखबारों में प्रकाशित हुए समाचार सुनाओ।' आज्ञा पाकर 'सन्मार्ग' समाचार पत्र एवं अन्य दैनिक पत्रों का समाचार सुनाता। आज की ओछी राजनीति के न होने के कारण ही है। कहते थे कि आज देश की दुर्दशा धर्म नियन्त्रित राजनीति के न होने के कारण ही है। धर्म के बिना राजनीति विधवा तथा नीति के बिना धर्म विधुर है। पूज्यवर राजनीति के लिये जितना कम समय देते थे उतने में कोई राजनीतिज्ञ नहीं हो सकता किन्तु वे राजनीतिज्ञों में भी शिर मौर थे। 'मार्क्सवाद और राम राज्य' ग्रन्थ को जिसने पढ़ा होगा उसको ज्ञात होगा कि भारतीय राजनीतिज्ञ के अपूर्व कड़ी थे। पूज्य महाराज श्री कौटल्य के बाद सबसे बड़े राजनीतिक दार्शनिक के रूप में हमारे सामने दिखलाई पड़ते हैं। रात्रि ग्यारह बजे पूज्य श्री चरणों का आदेश होता कि अब तुम लोग जाओ विश्राम करो। स्वयं भी विश्राम करने लगते। श्री चरणों की नींद ऐसी होती कि किसी के पदचाप को सुनकर तुरन्त जाग जाते। सच्चे अर्थों में वे गुडाकेश थे।

यहाँ एक घटना का उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा कि यात्राओं में लेखन कार्य में कुछ न्यूनता भले ही आ जाय किन्तु दैनिक देवोपासना, स्वाध्याय, योग साधना आदि क्रम नियमित रहता था। श्री चरणों ने जीवन पर्यन्त श्री गंगा जी की मृत्तिका और गाय के गोबर की शरीर में लेप कर स्नान किया वह भी प्रत्येक पूर्णिमा के दिन जब क्षौर होता था। बाजारु साबुन का तो स्पर्श तक नहीं किया। यात्राओं में भी पूज्य श्री चरणों की दैनिक चर्या किसी स्थान पर निवास करने ही जैसी चलती है इसको देखने के लिये सन् १९७३ में भारतीय उच्च शोध संस्थान, शिमला के डाक्टर वैद्यनाथ सरस्वती ने पूज्यवर को बताये बिना एक शोध परियोजना के अन्तर्गत उनके विचार एवं व्यवहार का अध्ययन किया था। उन्होंने काशी से रायपुर (म. प्र.) तक पूरे रास्ते में श्री चरणों के कार के पीछे अपनी कार इतनी नजदीक रखी कि यात्रा में भी उनके पूजा पाठ आदि कर्मों की जानकारी होती चले। पूरे मार्ग में उन्होंने श्री चरणों का जैसा धर्माचरण देखा स्तब्ध रह गये कि यात्रा में भी इन श्री चरणों का वही त्रिकाल स्नान, त्रिकाल देवोपासना, योगाभ्यास कार में बैठे-बैठे स्वाध्याय चल रहा है। इसका पूरा विस्तृत विवरण उन्होंने उसी वर्ष साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित कराया था।

सन् १९८१ के अप्रैल में कानपुर में पूज्य श्री चरणों के नवरात्र व्रत का कार्य-क्रम स्वीकार कर लिया था। वैसे उन्हीं दिनों हजारी बाग में भी पूज्यवर के प्रवचन का कार्य-क्रम रखा जाने वाला था किन्तु कानपुर में नवरात्र व्रत सम्पन्न करने के कार्य-क्रम को मैंने यहाँ के रामलीला कमेटी (परेड) वालों को इसलिये स्वीकृति प्रदान कर दी कि श्री चरण का अपने नियमानुसार श्री रामनवमी के दिन अयोध्या पहुँचना न छूट पाये। अष्टमी को हजारी बाग (बिहार) से चलकर श्री रामनवी के दिन अयोध्या पहुँचना बड़ा कठिन था। मार्ग में त्रिकाल पूजन और अन्य दैनिक चर्या पूज्यवर की जो ठहरी। इधर कानपुर के समीप ही खजुहा के भक्त गण २ वर्षो से पूज्यवर के प्रवचन को सुनने के लिये समय चाह ही रहे थे। अतएवं इन सभी दृष्टियों से कानपुर अधिक उपयुक्त समझा गया। नवरात्र व्रत आरंभ हो गया। परेड (कानपुर) स्थित रामलीला कमेटी के भवन में कमेटी वालों ने ठहरने की व्यवस्था की थी। कानपुर के जी.एन.के. कालेज में प्रति दिन रात्रि ६ से ८ तक भक्त लोग श्री मद्भागवत कथा का रस पान करने लगे। पंचमी के दिन सायं जी.एन.के. कॉलेज में प्रवचन के पूर्व कानपुर के ही ट्रान्सपोर्ट नगर में श्री चरणों का प्रवचन रखा गया था। उस दिन श्री चरणों से मैंने निवेदन किया कि त्रिकाल पूजन दिन में ही समाप्त कर ले ताकि जी.एन.के. कालेज से लौटने पर पुनः प्रतिदिन की भाँति पूजन पर न बैठना पड़े। आज आपको श्रम अधिक होगा। ऐसा ही हुआ श्री चरणों ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली और बड़ी पूजा रुद्राभिषेक मध्याह्न में ही कर लिया और लघु पूजन सायं ५ बजे तक करके भिक्षा ग्रहण करनी थी।अपराह्न ४।। बजे से

पूज्यवर ने पूजन आरंभ कर दिया। दरवाजा तो भीड़ से बचने के लिये बन्द ही रहता था। यह क्या ५।। बज गये अभी तक श्री चरणों ने शंख ध्वनि नहीं किया, (पूजनोपरान्त शंख ध्वनि करते थे) दरवाजा खोलकर देखा तो मसनद के सहारे लेटे हुए श्री चरण श्री ठाकुर जी के पधराने का काष्ठ वाला वह वृत्ताकार पात्र कपड़े से पोंछ रहे हैं। उन्होंने मुझे देखते ही रुँधे गले से कहा 'आओ, आओ पुराना वायु का हमला हो गया है। मेरे सिर और गर्दन में पीड़ा है तुरन्त काशी ले चलो। मेरे सभी कार्य-क्रम रद्द करने की घोषणा कर दो।' तत्काल मैंने ड्राइवर से सारा सामान लादने के लिये कहा और श्री चरणों के अनन्य भक्त कानपुर के प्रतिष्ठित नागरिक डा. संकटा प्रसाद पाण्डेय और वैद्य श्री कृष्ण सुन्दर वाजपेई को फोन पर सूचित किया। फिर तब तो समिति के पदाधिकारी भी आ गये और यह समाचार विद्युत की तरह पूरे शहर में फैल गया। ये दोनों महापुरुष १० मिनट के अन्दर पहुंच गये। इधर पूज्यवर को अब १ मिनट कानपुर में रुकना असह्य हो रहा था। कार तक श्री चरण स्वयं चल कर आये और विराजमान हो गये। उनका आदेश मुझे पिछली सीट पर बैठने को हुआ तुरन्त अपनी गोद में लेकर पूज्यवर को वीरासन के साथ बैठ गया। श्री चरणों की आज्ञा हुई कि रास्ते भर हरे राम हरे राम कहते चलो। रास्ते भर यही मंत्र का जप उच्च स्वर से करते रात्रि १ बजे काशी आ गया।

प्रातः ५ बजे के लगभग श्री चरणों ने अचानक अपने नेत्रों को बन्द कर लिया। और प्रायः २१ दिन तक वे समाधि के अति उच्च स्तर में अधिरुढ़ होकर 'अहं ब्रह्मास्मि' ज्ञान में स्थित रहकर निर्विकल्प, निराकार, विभु और बन्धन मुक्ति रहित चिदानन्द मय शिव स्वरूपता का अनुभव करने लगे। पूज्य श्री चरणों के अस्वस्थता का समाचार विद्युत की तरह पूरे देश-विदेश में फैल गया और ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य, पुरी के शंकराचार्य सहित भक्त लोगों के आने का क्रम जारी हो गया। पूज्यवर के सन्यासी ब्रह्मचारी शिष्य भी पहुँचने लगे। चिकित्सा वैद्यराज पं. श्री बृज मोहन जी दीक्षित एवं उनके सुपुत्र डॉ. श्री शशिकान्त दीक्षित जी करने में लग गये। औषध एवं पथ्य मैं ही दे रहा था। प्रायः २१ दिन बाद पूज्यवर ने भक्तों के ऊपर कृपा कर अपने नेत्रों को खोला और कहा कि हमें भगवान की चर्चा सुनाओं उसी से हम ठीक होंगे। बिना कथा के हमे सब कुछ सार हीन लगता है। धीरे-धीरे श्री चरणों ने लोक व्यवहार का त्याग करना आरंभ कर दिया और पूर्ण रूपेण अन्तर्मुख होते गये। व्यवहार और प्रपंच की बात आने पर लोगों से कहते कीर्तन करो, रामायण सुनाओ, विष्णु सहस्त्रनाम सुनाओ, चंडीपाठ सुनाओ, राम रक्षा स्तोत्र सुनाओ, गीता सुनाओ, श्री मद्भागवत सुनाओ आदि-आदि। पूज्यवर अयोध्या के श्री लक्ष्मण किलाधीश जी का भजन बड़े आत्म विभोर भाव से सुनते थे। श्री प्रकाश जी मिश्र से प्रायः रात्रि में भगवान की कथा अवश्य सुनते थे।

वृन्दावन धाम के स्वामी निश्चलानन्द जी और चिन्मयानन्द जी, स्वामी कृष्णानन्द जी आदि पूज्यवर के यति और ब्रह्मचारी शिष्य प्रतिदिन कथा सुनाया करते थे। हम भी 'श्री राम चरित मानस' 'देव्यापराध क्षमा स्तोत्रम' प्राय: मध्याह्न और रात्रि में सुनाते रहते। जितने भी निकट के लोग आते सभी से भगवन्नाम कीर्तन करने को कहते। इस बीच कथा सुनते-सुनते रोने भी लगते थे। श्री चरण जब स्वस्थ भी थे तो भी कथा सुनते-सुनते या भगवद्भक्ति परक भजन सुनते रो पड़ते थे। कानपुर के ही जी.एन.के. कालेज की घटना है। आज से ४-५ वर्ष पूर्व पंचशती समारोह का आयोजन किया गया था। पूज्य श्री चरणों का भी प्रवचन रात्रि में होता था। भारत के मूर्धन्य साहित्यकार पधारे हुये थे। एक दिन रात्रि में आकाशवाणी के एक कलाकार से सूरदास जी का वह भजन सुनाया ''निशि दिन बरसत नैन हमारे'' ''मधुबन तुम कत रहत हरे'' को सुनकर पूज्यवर के नेत्रों से खूब अश्रुपात हुआ। पूज्य श्री चरणों को देखकर तब तो सारा उपस्थित जन समूह ही अश्रुपात करने लगा जो प्रत्यक्ष दर्शी है उनको ज्ञात ही होगा। पूज्यवर का अगाध विद्वता के साथ-साथ भक्त का रूप देदीप्यान था।

श्री चरणों के हृदय में करुणा की अजस्त्र धारा प्रवाहित होती रहती थी। वे दया के महा समुद्र थे। पूज्यवर में सभी गुण होड़ बाँधकर एक साथ दिखाई देते हैं। मई या जून १९८१ के किसी दिन की घटना है। हरिद्वार से वीतराग पूज्य स्वामी भूमानन्द तीर्थ जी पधारे महाराज श्री के पास बैठकर कुछ वार्ता कर रहे थे। मैं भी इधर-उधर की व्यवस्था देखने में व्यस्त था। उन दिनों मैं विषम परिस्थितियों से घिरा हुआ था। पूज्य श्री चरण अन्तर्यामी थे ही, उन्होंने सहसा बुलाकर मुझसे कहा ''चिन्तामत करो। हमारी प्रसन्नता ही तुमको इष्ट है न! तो मैं तुमसे अतीव प्रसन्न हूं और सदैव प्रसन्न रहूँगा।'' श्री चरणों की वाणी सुनते ही मेरे नेत्रों से अश्रुपात होने लगे। आखिर मेरे आशुतोष प्रसन्न हो ही गये। अब मेरे लिये प्राप्तव्य ही क्या शेष रहा? सब कुछ पा गया। पूज्य स्वामी भूमानन्द जी महाराज ने मुस्कराते हुये कहा कि आज तो तुम बाजी मार ले गये। पूज्य श्री चरणों की प्रसन्नता और उनका शुभाशीर्वाद ही तो आज मेरे जीवन का पाथेय हैं।

***

अद्भुत देवता

निखिल श्रुति स्मृति पुराणोपनिषदामे कत्र प्रगाढ़ स्वाध्याय पूर्वकम् व्यापक सनातन धर्म मर्यादा पालनायाध्यात्मिकाधिराजनैतिकाधिसामाजिक तर्क वितर्क दुस्तर्क संयुक्त सनातन धर्म पताका दिग्‌दिगन्तरेषु प्रसारितायै मनोवाक्काय कर्मभिर्सैद्धान्तिकानेक ग्रन्थोल्लेखैश्च समीचीन प्रशस्त समाधान पूर्वकम् कृतदृढ़ संकल्पाः धर्म मूल गोद्विजधेनु सुरसताम् कल्याणाय, श्रुति स्मृति प्रतिपादित समानज्ञान कर्मोपासना युक्त शैव वैष्णव शाक्ताद्यभेद समन्वित साङ्गोपाङ्ग वयन्वय युक्त स्वजीवने सम्यक्तात्वेन पालन पुरस्सरोपदेशकाः, परम दुस्साध्य ज्योतिष्मती सफलीकृत कल्पेनानुप्राणितमायुर्वेदाय धृतवताः, तथा चः–

परदार परद्रव्य परद्रोह पराङ् मुखः।
गंगा व्रूते कदागत्यमामयं पावयिष्यति।।

प्रत्यक्ष प्रमाण रूपमस्य श्लोकस्य, सनातन धर्म धुरीणाः परमवीतरागाः पूर्णज्ञान पर तपोधनाः अनन्त श्री विभूषिताः स्वनामधन्याः पूज्यपादाः श्री गुरुदेव स्वामिकरपात्रिचरणाः विजयते तराम्। यतोतिः–

वदनं प्रसाद सदनं, सदयं हृदयं, सुधा मुचो वाचः।
करणं परोपकरणं येषाम्, केषामू न ते वन्द्याः।।

श्रीमताङ्किकरः
श्यामनारायण

षट्पद गुञ्जनम्

–दैवज्ञ जगदीश प्रसाद शर्मणः।

कण्ठे यस्य नमः शिवाय ललिताधिष्ठान मन्त्रामृतम्।
श्री कामेश्वर पादपद्म युगलं श्रीमत्सहस्राम्बुजे।।
माद्यन्ती विसतान्तवी च दहराकाशे प्रकाशेन्दिरा।
तं शान्तं करपात्र स्वामिवपुषं भक्त्या नमस्कुर्महे।।१।।

जिनके कण्ठ में 'ॐ नमः शिवाय' यह ललिताधिष्ठित मन्त्रामृत निरन्तर आवर्तित होता है, प्रफुल्ल सहस्रदल कमल पर श्री कामेश्वर जी के युगल चरण कमल विराजमान है तथा हृदयस्थली के दहर–आकाश में विसतन्तु के समान सूक्ष्म प्रकाश लक्ष्मी विहार करती है उन शान्त चित्त शिवकल्प, महाराज श्री करपात्र स्वामी जी को हम लोग भक्ति पूर्वक प्रणाम करते हैं।

प्रज्ञानं रमयन् मुदा शुकगवी सौन्दर्य मुन्मीलयन्।
दाक्षिण्यं कलयन्नघं विकलयन् शुभ्रं यशो वर्धयन्।।
भक्तान् संस्नपयन् वचोजलभरैः श्रीकृष्ण गोपाङ्गना।
माधुर्यातिशयाधरीकृत सुभैः श्रीमान् गुरू राजते।।२।।

ज्ञान को आनन्दित करने वाले श्री शुकदेव जी महाराज की वाणी श्रीमद् भागवत के गूढ़ार्थ–सौन्दर्य के प्रकाशक, कोमल–हृदय कलुष दूर करने वाले, श्रीकृष्ण गोपाङ्गनाओं की रासलीला के मधुर–अमृत से भक्तों को आप्यायित करने वाले श्रीसम्पन्न गुरुवर श्री महाराज करपात्री जी सर्वोत्कृष्ट हैं।

सानन्दं वचनाचलाञ्चलगलद्वेदान्तमन्दाकिनी–
वीचिव्रात निपातितान्धतमसप्रोच्छन्न शङ्कातटः।।
निर्ग्रन्थोऽपि यजन् मयूख सरणिं! सौमीं सदा शाम्भवीम्।
हस्तौ पात्रमिवोद्वहन् विजयतां वेदार्थ कल्पद्रुमः।।३।।

आनन्दपूर्वक, वचन पर्वत से निकलने वाली वेदान्त गङ्गा के तरङ्ग समूह से अनेक उद्दाम शंका तटों को ध्वस्त करने वालने निर्ग्रन्थ होते हुये भी साम्ब–शाम्भवी प्रकाश रश्मियों की अराधना करने वाले वेद के अर्थ के कल्प वृक्ष श्री महाराज करपात्री जी की जय हो।

संसिक्ता वेद वर्षैरमृत मधुझरैः सांकुरा वाह्यणैर्या।
वेदाङ्गैः पत्रसङ्गा हृत कलुष कथैः पुष्पिता षट् पथैश्च।।
आनन्दोद्यन्मरन्दा सुरभित भुवना सेविता साधुभृङ्गै–
जीयात्सा कारपात्री सुमति कमलिनी पद्म वर्षं सहस्रम्।।४।।

वेद–मन्त्रों की वर्षा से सींची गयी शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रंथों से अंकुरिता,

शिक्षाकल्प आदि वेद के ६ अंगों से पल्लविता, न्याय सांख्यादि षड्दर्शनों से पुष्पिता, आनन्दरूपी मकरन्द की संवाहिका, समस्त भुवन को सुगन्धित करने वाली श्री महाराज करपात्री जी की सुमति कमलिनी पद्म संख्या वर्षो तक विकसित रहे।

स्फीताः समस्त निगमागम सार गीता,
निष्यन्द नन्दित मनः करपात्र वाचः।
ज्ञानामिला उपनिषद् गरिमाभिरामाः,
धन्याः स्वकर्ण पुलिनेष्ववतंसयन्ति।।५।।

समस्त निगम–आगम के सार तत्व के ज्ञान से पूर्ण उपनिषदों की गरिमा से अभिराम श्री महाराज करपात्री जी की वाणी से अपने कर्ण पुलिनों को सुशोभित करने वाले धन्य हैं।

सौजन्यश्रीपताकं सुकृत परिचलच्चामरं सामदण्डम्।
सत्कीर्तिच्छत्रविम्वं सदसि शुचिहृदामात्मचैतन्यमन्त्रम्।।
विध्वस्तारातिवर्ग हरिरसरसनानीकिनी शक्ति सारम्।
भूमानन्त स्वराज्यं निगम विहरणं धर्मसम्राजमीडे।।६।।

जिनके सौजन्य की पताका फहराती है सदाचार ही जिनके चामर हैं शान्ति ही जिनका दण्ड है, सुयश ही जिनका छत्रबिम्ब है, आत्म–बोध ही जिनका मन्त्र है, श्री हरि कथा रसास्वादन ही जिनकी सेवा है, कामादि अरिवर्ग के विध्वंसक, निगम–उपवन में विहार करने वाले, भूमा के अनन्त–स्वराज के स्वामी धर्म सम्राट श्री करपात्री जी की हम लोग स्तुति करते हैं।

***

'दुनिया में जितने बिन्दु हैं वे सब भगवान के ही अंश है। 'सियाराममय सब जग जानी।' इस भावना के विना काम नहीं चलेगा। इसका अर्थ यही है कि तुम दूसरों से न्याय का व्यवहार करो। धर्मसंघ इसी पर जोर देता है। लोकमान्य तिलक जी भी कहते हैं कि 'शास्त्र को न मानो तो भी अहिंसा को मानना पड़ेगा। सारांश! हम किसी को भी न सतावें और दूसरा हमें न सतावे। यह अन्तर्राष्ट्रीय नियम बनना चाहिए कि एक दूसरे को न सतावें।'

करपात्राष्टकम्

–डॉ. शशिधर शर्मा, महामहोपाध्यायः, महाकवि, राष्ट्रपति पुरस्कृत
सप्त विषयाचार्यः वाचस्पतिः, एम.ए. (संस्कृत हिन्दी)
डी.लिट्, पञ्जाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़

(१)

केचिद् भजन्ति विवुधा हरिमीशितारञ्चाऽन्ये हरं भवनिदाघहरं श्रयन्ति।
धर्माऽऽर्तिखिन्नमनसां समुपासनीयं प्रत्यक्षितं हरिहराऽद्वयमद्वयन्नः।।

कुछ बुद्धिमान् जन भगवान् हरि (विष्णु) का भजन करते हैं और कुछ दूसरे संसार तापहारी हर (शंकर) की सेवा करते हैं। (किन्तु) धर्म की ग्लानि से खिन्न मन वाले हम लोगों की उपासना का पात्र तो हरि और हर का वह अनुपम अद्वैत है, जिसे हमने अपनी आंखों से देखा है।

(२)

सद्राजनीतिनिपुणः किमु विष्णुगुप्तो–वाचस्पतिर्निखिलशास्त्र विचक्षणो वा।
आहो शुको नु भगवद्गुणगान धन्यो यस्मिन्नतीव समशायि यतिः स वन्द्यः।।

"क्या यह उदात्त–लोककल्याणकारिणी–राजनीति में प्रवीण विष्णुगुप्त–आचार्य चाणक्य हैं, या समस्त शास्त्रों में दक्ष देवगुरु बृहस्पति (किम्वा सर्वतन्त्रस्वतन्त्र वाचस्पति मिश्र) हैं या फिर श्री प्रभु का गुणगान करने से धन्य हुये शुकदेव ही हैं?" जिनके सम्बन्ध में लोग इस प्रकार से (विविध) सन्देह किया करते थे–वे स्वामी–करपात्री जी वन्दना के पात्र हैं।

(३)

यस्याऽवसन्नवरसा रसने सरस्वत्याभान्ति लेखतनवोऽतनुकीर्ति लेखाः।
चेतस्यभूत्सरसिजोदरसौकुमार्य स्मार्यो न कस्य स वशी शयभाजनाऽर्यः।।

जिनकी जिह्वा पर नव–रसमयी सरस्वती निवास करती थीं, लेखों के रूप में जिनकी महान् दशोराशिकी लेखाएं आज भी शोभा पर हैं, (और) जिनके हृदय में कमल के मध्य भाग सरीखी मृदु–लता थी, वे स्वामी करपात्री जी किसके स्मरणीय नहीं हैं?

(४)

वन्द्यः स योऽकृत कृती सुकृतार्थ संस्थाः रामायणे श्रुतिव चाऽत वाक्प्रवाहान्।
नैष्कर्म्य मूर्ध्व मधिताऽधिधरं तथाऽपि कर्मेतराऽकृततरं व्यधिताऽप्रयाणम्।।

वन्दनीय हैं वे स्वामी करपात्री जी महाराज जिन मनीषी ने अनेकानेक धर्म संस्थाओं की स्थापना की, जिन्होंने रामायण पर एवं वेदों पर सारस्वत धाराएं प्रवाहित

कीं, जिन्होंने भू मण्डल पर नैष्कर्म्य अर्थात् ज्ञानमार्ग की सर्वोच्च सिद्धान्त रूप में प्रतिष्ठापना की, किन्तु जो प्रयाण काल तक दूसरों द्वारा सुतरां न किये गये कर्म का सम्पादन करते रहे।

(५)

यः सत्कवि र्गुरुगुरुः बुध मङ्गलात्मा तीव्रप्रतापतपनश्च सतां च सोमः।
धर्मद्विषां शनि रथोन्मदिनाञ्च राहुः केतुः श्रुतेर्जयति दण्डिवरः स कोऽपि।।

जो अनवद्य विद्यावान् (शुक्र) थे, जो गुरुओं के भी गुरु (वृहस्पति) थे, जो मनीषियों के कल्याणरूप (तथा बुध, मङ्गलमय) थे, प्रचण्ड प्रताप में जो सूर्य थे और सज्जनों के लिए चन्द्रमा थे, धर्म द्वेषियों के लिये जो शनि थे, अहङ्कारियों के लिये राहु और वेद की पताका (केतु) थे, वे विलक्षण यतिराज स्वामी करपात्री जयशील हैं।

(६)

कारागमैः शिरसि दण्ड निपातघातैरप्येजनं न जनितं किल यस्य जातु।
दीपः सनातनसृते रपि गीष्पतेश्च वार्येतरोहृदि विभाति स नः सदाऽर्यः।।

जेल यात्राओं से, यहां तक कि सिर पर लाठी पड़ने से लगी चोटों से भी जो अपने मार्ग से विचलित नहीं हुये, जो सनातन धर्म मार्ग के दीपक थे, और जिनकी जीतना देवगुरु बृहस्पति के लिये भी कठिन था वे स्वामी (करपात्री) जी महाराज हमारे हृदय में सदा विराजमान हैं।

(७)

तिष्ठेत् प्रणष्टकुहकः सुपथे नरौघः पारेऽम्बुधेर्जनगिरा प्रसरं प्रयातु।
गावश्चरन्तु परितोऽस्तभया घटोघ्न्यः स्वप्नस्तवेति यतिराट्! फलिता कदानु।।

"लोग छल-पाप छोड़कर सन्मार्ग पर आरुढ़ रहें, हिन्दी का प्रसार समुद्र पार विदेशों में भी हो, घड़ों के सदृश थनों वाली गाएं (हत्याओं के) भय से मुक्त होकर चारों ओर विचरण करें"- यतिराज आपका यह सपना कब फलीभूत होगा?

(८)

स दण्डिवर्योऽतियतीन्द्रचर्यः श्रौताऽध्वनो भूतल एकधुर्यः।
श्रेयोभृतां शश्वदपीह चाऽर्यः धार्योहृदब्जे करपात्र आर्यः।।

जो दण्डिसन्यासियों में शिरोमणि थे, बड़े-बड़े यतिराज भी जिनकी जीवनचर्या की तुलना नहीं कर सकते, जो सकलभूमण्डल पर श्रुति मार्ग के एकमात्र रक्षक थे और जो यहाँ कल्याण प्राप्त सुजनों के स्वामी थे-वे श्लाघ्य करपात्री जी महाराज हमारे हृदय (सिंहासन) में धारणीय हैं।

***

भावाञ्जलिः!

टिप्पणीः–[श्रीमत्करपात्र स्वामि महाभगानां प्रथमं ब्रह्मचारिरूपेण एवं छात्ररूपेण अनुभ्रमतां शिष्य कोटि प्रविष्टानां मार्कण्डेय स्वरूपाणां ब्रह्मचारिवराणां विद्वद्वराणां तपस्विनां श्री मार्कण्डेय ब्रह्मचारिणां वाराणसीवासिनामियं भावाञ्जलिः उपह्रियते प्रथमे पृष्ठे;

कथङ्कारं स यतिवरः लौकिकाभिजन इव सगुणोपासने प्रवृत्तः? कथं च सः विष्णु रुद्रगणेशादि पूजन पूर्वकं श्रीमद्राजराजेश्वरी पूजनादौ प्रवृत्तः–इत्युत्तर यति द्वितीये पृष्ठे–

श्रीमत्करपात्र महाभागानामिष्ट देवता का? इति प्रश्नं समादधन् ''सदा प्रसन्न राम'' एव तस्येष्टदेवता इत्युत्तर यति तृतीय पृष्ठे–

सोहि रघुनन्दन–प्रसन्नतां यान गताभिषेकत–
स्तथ न मम्ले वनवास दुःखतः।।

सम्पादकः]

वाराणसीतः ब्रह्मचारिणो मार्कण्डेयस्य(नारवरस्य)

प्रसारवत्योऽखिलदर्शनेषु श्रुतौ स्मृति तत्त्वनयेऽद्वितीयाः।
वाचंयमा नास्तिकवृन्दभूम्नाममोघवेगः प्रतिभा विशीर्णाः।।१।।

उत्साहसम्पत्तिमताममीषां यद्वैदिकानां बलमेकमासीत्।
पदे पदे स्फूर्जदुदग्ररूपं तद् व्योममार्गं निखिलं विलीनम्।।२।।

धृतिः समग्रा नियमः समृद्धः काष्ठापरासत्य सहिष्णुतायाः।
सन्यासधर्मः किल देहधारी सर्वोगुणः सन्तमसे निमग्नः।।३।।

श्रीमद्गुरुणाभवनीश्वराणां विद्यातपोयोग समाधि भाजाम्।
विनश्वरं केवलमेकमेव गौरं लघीयश्च शरीरमासीत्।।४।।

तद् व्यतीतेषु च विक्रमार्कान्माघे सहस्त्रद्वयवत्सरेषु।
त्रिंशत्सु चाष्टासु समासु शुक्ले चतुर्दशी पुष्यरवो प्रभाते।।५।।

भावाभिधाने शिशिरर्त्तुके चसंवत्सरे नित्यविधि विधाय।
भागीरथी सङ्गतमप्यजर्य, गतं विपश्चिद् धृदयैः सहैव।।६।।

चतुः षष्ट्युत्तरैकोनविंशती शतके गते।
नभः शुक्ल द्वितीपायां फल्गुन्यां रविवासरे।।७।।

सुपुण्ये भटनी ग्रामे प्रतापगढ़ मण्डले।
द्विजवर्याद्रामनिधेर्यते तेजः समवातरत्।।८।।

यावज्जीवं प्रकुर्वाणो वेदवैदिक मङ्गलम्।
शान्तमासीद् भृशं शुद्धं पञ्चसप्ते च वत्सरे।।९।।

***

कथं सगुणोपासना?

श्रीमद्गुरूणां यदुपासनायां प्रवृत्तिरेषा च कुतः प्रसूता।
एवं जनानां बहुधा विपृच्छा जागर्ति तत्रापि कियद् ब्रवीमि।।१।।

पदाति यात्रावसरे कदाचित् सन्ध्यायतां वैभगवत्पदाब्जम्।
मनस्यभूदङ्कुर एव लोके बाह्यापि पूजा परिचालनीया।।२।।

सङ्कल्पनानन्तरमेव शालग्रामस्य काचित्-प्रतिमातिलघ्वी।
समर्पिता विप्रवरेण केन श्रद्धातिरेकाच्चिदलङ्कृतेन।।३।।

जले सम्पूज्य च वस्त्रखण्डे संवेष्ट्य संबद्ध्य च दण्ड मध्ये।
मुदाभ्रमन्तो गुरवः प्रसन्ना ह्यकार्षुरप्रां किल पादयात्राम्।।४।।

जले समस्ताहि वसन्ति लोका सर्वस्य भूतस्य च जीवनं तत्।
जलेन पूजा च समस्त पूजा संन्यासिनामुत्तरितं तदानीम्।।५।।

ततः परं यज्ञ युगे प्रवृत्ते वाराणसी यज्ञ समाप्ति काले।
नौकां समारुहय पुनः प्रवृत्ता यात्रा गुरुणामपि पश्चिमायाम्।।६।।

समादिशन् मां त्रिपुराररहस्य संमाणाया च सामगानाम्।
प्रष्ठान् त्रिपाठि प्रवरांश्च दुर्गादत्ताभिधान् स्फाटिकयन्त्र सिद्ध्यै।।७।।

निर्माप्य तच्छिल्पिवरप्रसादात्सम्प्राप्य सम्प्रेषित चक्रराजम्।
गङ्गातटे कर्णपुरे गताश्च सुदर्शनाच्छीगुरवोऽलभन्त।।८।।

ततःप्रभृत्येव च यन्त्र पूजा लिङ्गानि चैकादश सम्मितानि।
बहूनि पात्राणि च राजतानि कार्तस्वरापादित सौष्ठवानि।।९।।

हैरण्य पात्राणि च पद्ममेकं समागतं द्वादशविल्वपत्रैः।
स्थाल्यः पुनस्तानि कटोरकाणि सिहासनं श्रीजगदम्बिकायाः।।१०।।

गुल्वर्कयोगात् महितानि तानि सर्वाणि चामीकर निर्मितानि।
अत्रान्तरे गान्धिमहोदयानां महात्मनामाशु मृतिंवभूव।।११।।

उद्दिश्य तत् शासनयन्त्रकृद्भिरस्पृष्ट दोषा अपि मानवौघाः।
बलेन कारागृहमध्यमेव निपातितास्तुत विलोक्य सर्वम्।।१२।।

उत्थानमार्गे सहसा विचार्य संयोजिता धार्मिक राजनीतिः।
प्राप्त वयस्कैः स्वमताधिकारे निर्वाचने व्यापृतका अभूयुः।।१३।।

लीलां समावृत्य च लौकिकींस्वा श्रीविश्वनाथे सकलं समर्प्य।
शिष्येषु सर्व विनिवेश्यभारं स्वधामदिव्यं चरमंयवापुः।।१४।।

***

का-इष्टदेवता ?

केनचित् श्रेष्ठिवर्येण पृष्टाः श्री गुरवः पुरा।
भगवद्दर्शने स्वीये किञ्चित्सम्प्रतिपाद्यताम्।।१।।

ऊचिरे तद्ब्रवीम्यद्य जिज्ञासूनां महार्थकृत्।
अखण्डं सच्चिदानन्दं वृत्तौ मम सदा स्थितम्।।२।।

श्री राघवेन्द्रे महाभागे भक्तिर्मम सदाभवत्।
राजराजेश्वरी विद्या वृतिरूपतया स्थिता।।३।।

श्री कृष्णबोधयढिनो जगद्गुरु पदे स्थिताः।
यदा तदानीमाहुर्मां वचः किञ्चिदुपह्वरे।।४।।

एतेषां विषये गुह्यं तदपि श्रूयतां दुवे।
स्वान्ते निर्वेदमासाद्य गता यात्रां पदातयः।।५।।

विद्यालयं परित्यज्य परिवार परामुखाः।
श्रीमद्हरिहरक्षेत्र कृष्णास्य किल दर्शनम्।।६।।

तदा जातं मया श्रुत्वा मानसे किलित दृढम्।
श्रीमद्गुरुणां विषये भगवद्दर्शनावधि।।७।।

कथङ्कारं नु पृच्छेयं नोद्भूत्साहसं मम।
किन्तु प्रसङ्गे कर्स्मिश्चित् गुरुपादैः स्वयं मुखात्।।८।।

भणितं लक्षणं किञ्चित् ब्रह्मदर्शन गोचरम्।
हृदये यस्य भगवान् सगुणो निर्गुणोऽपि वा।।९।।

सकृद्विभात उदयात् तस्य चेतसि भासते।
ग्रन्थग्रन्थिः सुदुर्मेद्यो जटिलोऽपि मनीषिभिः।।१०।।

हस्तामलकवन्नात्र मनागपि विचारणा।
एतादृशानां केशाञ्चिदतीतानां महात्मनाम्।।११।।

साधूनां सद्गृहस्थानां विदुषां पथमुपेयुषाम्
तथा च वर्त्तमानानां चक्षुः पथमुपेयुषाम्।।१२।।

नामधेयानि सँल्लिख्य स्व मन्तव्यमपि क्वचित्।
गङ्गा शङ्कर मिश्रयस्य सविधे स्थापितं ननु।।१३।।

ततः केनाप्यहृतं न्यासरत्नं तदुत्तमम्।
न जाने किमभूत्तस्य भगवानेववेत्ति तत्।।१४।।

***

श्री करपात्र दर्शनाञ्जलिः

(१)

भवतु सदा विजयो धर्माणाम्, भवतु विनाशश्चाधर्माणाम्
भवतु सुसद्भावः सर्वेषाम्, अयमुद्घोषः प्रभवति लोके श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(२)

भवतु हि कल्याणं विश्वानाम्, प्रभवतु विजयो गो मातॄणाम्
भवतु निरोधो धेनु वधानाम्, अयमुद्घोषः गर्जति देशे श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(३)

भवतु अ खण्डं भारत देशम्, भवतु विधानं शास्त्रादेशम्
भवतु रामराज्यस्यावेशम्, एष विचारः प्रभवति लोके श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(४)

भवतु धर्म सापेक्षा नीतिः जन वर्गेषु सदा सत्प्रीतिः
वर्णाश्रम परिपालन रीतिः वर्गद्वेषविरुद्धः पक्षः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(५)

न सन्तु केषाञ्चित्केऽपि शोषकाः सर्वे हि सर्वेषा सन्तु पोषकाः
सर्वे हि सर्वेषांचापि पूरकाः समन्वयः सर्वजनहिताय श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(६)

धर्म विरहितं पूंजीवादम्, तथैव साम्यञ्च समाजवादम्,
प्रभावितं सर्व भूतवादम्, स्वत्वविनाश कारकं कथनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(७)

भवतु लोकतन्त्रं सुपवित्रम् धर्म नियन्त्रित शासनतन्त्रम्
सर्व सुलभ निर्वाचन तन्त्रम्, दर्शनमिदं राज्य तन्त्रस्थ श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(८)

पूंजीवाद शासने शक्तिः पूंजीपतौ भवतु धन शक्तिः
अन्य जनानां मा दुर्गतिः नीतिशास्त्र पण्डित व्याख्यानम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(९)

समाज वादे संधीकरणम्, सर्वार्थानां राष्ट्रीयकरणम्
सर्व जनानां धनापयहरणम्, राजशास्त्र कवि कोविद कथनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१०)

राम राज्य वादे प्रभुशक्तिः भवति जनानां हस्ते शक्तिः
सर्वजनेषु भवत्यनु शक्तिः रामराज्य नय सुखकर कथनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(११)

पूंजीपतिभिर्प्रचलित वादम् सर्व जडं साम्य समाजवादम्
विनाशकारं निज स्वत्ववादम् राम राज्य परिषन्नय नेयम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१२)

सर्वस्वे संहते च वित्ते, जनता नृत्यति शासन हस्ते
मूढा भवतिविशोचति चित्ते, रामराज्य परिषन्नय नेयम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१३)

श्री राम जयराम सदैव गेयम्, धनस्य संतुलनं संविधेयम्
वित्तञ्च दीनाय सदा प्रदेयम्, अर्थासंतुलनं पापकृत् कथनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१४)

श्री राम नामामृतमेव पेयम्, श्री राम राज्याय मतं प्रदेयम्
हितं हि विश्वस्य सदैव ध्येयम्, अध्यात्मवादाश्रित राजधर्मः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१५)

मार्क्सस्य वादो न यथार्थवादः विकास वादोऽप्यथार्थवादः
युक्तो तथा नैव समाजवादः रामस्यराज्यो हियथार्थवादः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१६)

उत्तर वंग विहार प्रदेशे, महाराष्ट्र सौराष्ट्र स्वदेशे
केन्द्र शासिते दिल्ली देशे, धेनु सुरक्षाहितसत्याग्रहः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१७)

दिल्ली कारागृह संगमनम, गो भक्तानां लगुडैर्हननम्
धर्महीन शासन संकलनम, लोह शलाका घातित नयनन् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१८)

अखण्डतायाः भवतु सुरक्षा, हिन्दु कोड हिन्दी गो रक्षा
कृता सदा आन्दोलन दीक्षा, सुस्मर देश समर्पित देहम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(१९)

प्रभवति वेदानामुपहासम् निर्मित तथ्यहीनमितिहासम्
जाति राष्ट्र संस्कृति परिहासम् सत्साहित्यानां निर्माणम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

(२०)

धर्म विहीना प्रभवति नीतिः प्रसरति मार्क्सवाद जड रीतिः
नश्यति जनवर्गे सत्प्रीतिः रामराज्य दर्शन संकलनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

***

श्रीमद् यतिराज पुण्यस्मृति

अद्यैकस्य महात्मनो यतिवरस्यानन्दवार्धेरियं,
नंदन्ती महिमस्मृतौस्तुति कृते वाग्देवतोज्जृम्भते।
तन्वन्ती रसवर्षणेन परमाश्चर्य प्रमोदाञ्चनम्,
श्रीमच्चित्र चरित्र चर्चितगुणोद्गार प्रसङ्गेणया।।१।।
सुष्ठु श्रीमदनन्तपावनगुणैः स्वं पावयन्त्येवसा,
पूर्णत्वं न जगामयास्यति न च प्रेमार्द्रबोधाम्बुधेः।
जित्वासर्वमनात्मदुष्टि विततं, दुर्वादिवाक्सङ्गरम्,
तल्पेसत्परमात्म वैभवमये पारेगिरास्येयुषः।।२।।
कल्पोऽपिक्षणतामुपेष्यदमृतोद्गार श्रवानन्दिनाम,
रम्यार्थप्रसरप्रवीण सु वचः सौरभ्यसम्पज्जुषः।
पारं ब्रह्मगिरामपि प्रथयतो यस्य प्रबोधामृतैः,
त्रस्तानां भवतात् स बो यति वरस्त्राता कलेदुर्ग्रहात्।।३।।
स्वामी व्योम जलं विहङ्गम इवापेक्षेत विद्वज्जनः,
मिथ्यार्थ प्रथितेः पराङ्मुख इतः श्रुत्यर्थमर्धादृतम्।
पाशात् कुज्ञकृतात् कदर्थ कठिनात् क्लृप्तोऽमुनामुक्तये,
दद्यात् तत् परमार्थ बोधि सुफलंवे दार्थ कल्पद्रुमः।।४।।
मध्ये संसदितर्क कर्कश कटु क्लिष्टापिदुर्वादिनाम्,
होतव्ये हुत भोजने पततियद् धारायथा सर्पिषः।
दात्री सैव महामुदंमृजुधियां स्फीतारसैर्वैष्णवै-
रर्घ्याकाऽपि सरस्वती हरिहरानन्दाभिधापातु वः।।५।।
लीढायेनतु वैष्णवी रससुधा सुस्थैजमानैलेमहिता,
लावण्यामृत सागरे भगवतोऽनेषांधियो हारिताः।
मृत्योनिर्भयतां गतेनविजिता देहादि पर्यन्तगात्,
तप्तस्याच्छरूचोहुताशगहने हेम्नः स्वसत्यग्रहैः।।६।।
मन्ये मह्यमृताशमह्यमहसामागारमेकं महत्,
होमाग्नि सुहुतं सदन्न सुरसैः सद्धूम लेखाकरम्।
वत्तेयः शुचिताडनैरमरतां मिथ्यामदोन्मादिनाम्,
धिक् तस्यापवदन्ति कोपकलनां येऽनर्घ्य शीलस्यतान्।।७।।
पुष्णन्ति श्रियमद्भुतां सुवदनाम्भोजोद्गतान्यक्षरा-
व्यस्य श्रीयतिराज एव नपरस्ये हांशियानिक्रमात्।
स्मृत्याऽप्तानि जनस्य कर्ण विवरं प्रत्यर्थिनोऽप्येकदा,

तिर्यग्भावजुषोऽपि मानस पदे शुश्रूषुतां तन्वताम्।।८।।
लक्ष्मीर्लक्षणमातनोति सुभगं सायद्गिराऽऽकारिता,
हस्तेहस्तभृताऽस्यपाद कमल द्वन्द्वदनताऽऽनीयते।
रक्षायै प्रयतेत धर्म सुहृदां दुर्हृज्जनोन्मादहृत्,
यः कुर्वीततयैव मोक्षणमितस्तस्मै परस्मै नमः।।९।।
शिल्पी चित्रसदर्थ शब्द भवनं निर्मातिसत्येनयः,
वाहेन्द्रः खगराजमप्यतिगती गत्याधियस्तीव्रया।
यत्यारामसदेकचित्सुखरसा स्वादैक भोगीश्वरः,
स्युस्तस्यैवहताः कुमन्त्रकरिणः शार्दूलविक्रीडितैः।।१०।।

श्रुतधन जन बल मानादुन्मत्तानां दृगन्धताधूत्यै
प्रहिता कापि सवित्रापरमपवित्राशलाकिकालोके।।११।।
कि वा हरिहरनाम्नो परमानन्दासरस्वती विरला
विचरित वो यति रूपासा भ्रमकूपादुदञ्चयत्वार्याम्।।१२।।
अतीन्द्रिय ज्ञाननिधानसुश्रुति - प्रमाणितात्मानुभवप्रमोदभूः।
सुरम्य शब्दार्थ चमत्कृतीश्वरो-यतीश्वरः कस्य न नन्दते हृदि।।१३।
मुनीन्द्र संसद्यति माय योगिनः सदेकगाभान्तिगिरोऽस्तभिद्भ्रमाः।
तरङ्गवीच्यादि विशेष विभ्रमा-जलैक सत्या जलधेरि वच्छटाः।।१४।।
यज्ञैरयाजिषत देवगणाः सुविप्र-द्वारेणभिद्भ्रमगिरः कुविदामपास्ताः।
धर्मस्त्वनायिमहतीं पदवीम धर्म-प्रख्यापकाः सुदमिताः कुटिलाभुवैव।।१५।।
येनेश्वरेण सुविदां यतितल्लजेन-सद्ब्रह्मणि स्थिरतया न विपद्यशोचि।
कारागृहाणि हसतैव सुमण्डितानि, क्लेशातिशायन पदान्यपितं नमाम।।१६।।
वृन्दावने भगवतो मधुसूदनस्य, लीला उदार गुण गौरवतो ऽतिमृष्टाः।
गीता हरन्ति खलु वैष्णव मानसानि, यस्याननाम्बुजत एव रहस्य रक्ताः।।१७।।
यः श्रीहरेः प्रिय कथाः प्रगृणन् सुश्रृण्वन्, भावातिरेक गलदश्रुसुधारयार्द्रः।
आर्द्रीकरोति जनमानस देह यष्टीस्त वैष्णवाग्र गणितं यति राजमीडे।।१८।।
यस्यस्मृतिर्भवतिमन्दिरमिन्दुमोले-विश्वेश्वरस्य नव निर्मितमेव काश्याम्।
भावेकृतादपि जनङ्गम सम्प्रवेशाद्, यद्भाव वर्जित हठादति दूरदूरम्।।१९।।
तस्योत्तमस्य करपात्र यतीश्वरस्य, उत्कृष्टनाम गुणकीर्ति भृतोऽगुणस्य।
पुण्यस्मृतो निहित मर्हतु भाव पत्रम्, पूजां वसन्ततिलकेन यदेति कर्तुम्।।२०।।
सजयति वरवीरः सत्यधर्माह्ववेषु, वहतिनिशित धारा यो विपक्षायुधानाम्।
नगणयतिपुनस्ता लोककल्याण हेतौः, तमुपनयति मे वाङ्मालिनी भावमालाम्।।२१।।

जयन्ति भगवज्जनप्रभुदपारवारां निधि-प्रवर्धन महोत्सव प्रवणपूर्ण चन्द्रांशवः।
शुकागम भिधानभृत्परमहंस सत्संहिता-निगूढ परमार्थदा यति महागुरोः सूक्तयः।।२२।।
अशेषापन्नाश प्रवण भगवद्भक्ति भरितः परं दुस्तर्कोध प्रमथनपटुदुर्मत गिराम्।
महावीरो धीरोऽखिल कुबुध वाग्युद्ध विजयी, महायोगी भोगीश्वर विष हर श्रीविजयते।।२३।।
प्रदाता धैर्याणां सततमवधाता श्रुतिमते, विधाता युक्तीनां निज हृदि निधाता जनहितम।
सुवाग् दुःखात् त्रात्री परम सुखदात्री यदुदिता, अनावृत्तेर्यात्री जयति करपात्री सयतिराट्।।२४।।

अनन्तश्री भूषाङ्कित विरुदमालाति महती,
प्रवीणा देवर्षे र्हरि यशसि वीणैव महती।
यतीन्द्राणां मूर्तिः सुफल तरुवाटी शिखरिणी,
यशः शेषाऽतीयात् कनकगिरि कोटीः शिखरिणी।।२५।।
जयति हरिहरानन्दोगङ्गायमुना सितासितौषाढ्यः।
नूनं स तीर्थराजः, प्रथते प्रकटा सरस्वती यत्र।।२६।।
इतीयं यतिराजस्य पुण्यस्मरणरूपिणी।
अर्हणा वाङ्मयी जीयाद् भव्याय शरदांशतम्।।२७।।
गोविप्रप्रसुर भूत्यर्थ,
विन्दन्ते यदुपागमम्
उद्यात् स भगवान् नित्यं
वासुदेवो मति शिवाम्।।२८।।

रचयिता-गोविन्द वासुदवे ब्रह्मचारी, बिहारघाट, गङ्गातट,
नरवर, जिला-बुलन्दशहर, (उ.प्र.)

***

करपात्री वन्दनम्

लेखक–वेदाचार्य पं. अरुणकुमार शर्मा एम.ए. संस्कृत, आयुर्वेद रत्न
अध्यक्ष श्री राम धर्म संघ परिषद् खेजरोली [जयपुर]

धर्मः क्षात्रो भृशमनुसृतो येन रामावतारे,
गोरक्ष्याद्यस्तदनु च विशां गोपकृष्णावतारे।
ब्राह्मं धर्मं स हि दृढ़तपस्तीव्रमास्थातु कामः
आविर्भूतःस्वयमिव हरिः शांभवंब्रह्मरुपम्।।१।।
योगारूढ़ प्रणवधनुरारोपितान्तः शराग्रः
चित्सामर्थ्य स्थगित–निज–निश्वासबन्ध प्रकम्पः।
विध्यन्नात्मन्यसकृदभितो ह्यात्मनापि प्रसन्नः
स्वेच्छामात्र–प्रहतषडरिः कोप्यसौ धर्मवीरः।।२।।
केचिद् विष्णोर्भुधनविदिताः केऽपि शम्भोस्तथान्ये
सूर्याग्नीन्द्र प्रभृति–मरुतां सन्ति चांशावताराः।
कृष्णः साक्षान्नरतनुधरं निर्गुण ब्रह्ममात्रं
त्वं सर्वेषां गुरुगुणमयः कोऽपि पूर्णावतारः।।३।।
ज्ञानाम्मोधि–प्रकटित–महातत्व–मुक्ताफलाशी
भक्ति–श्रद्धा–कमल विलसन्मानसान्तर्विहारी।
सारग्राही गगनसदृश – ब्रह्मसञ्चारशाली
गंगातीरे व्यहरदनिशं कोऽप्पसौ राजहंसः।।४।।
नानापन्था भ्रमीभूते लोकेऽपि येन दीपितं
दिव्यमाध्यात्मिक तेजो करपात्री स्मरामि तम्।।५।।
नास्तिकोऽपि महाभक्तो महासिद्धश्च पामरः।
भवेद् यत्स्पर्शलेशंन करपात्रं नमामि तम्।।६।।
नरोऽपि याति देवत्वं मर्त्यलोकोऽपि नाकतां
यस्य सङ्कल्पमात्रेण करपात्रं नमामि तम्।।७।।
वायसोऽपि भवेद् हंसो हीनोऽप्युजयतां गतः।
यदाशीर्वाद मात्रेण करपात्रं नमामि तम्।।८।।
नरोऽपि याति देवत्वं मर्त्यलोकोऽपि नाकतां
यस्य सङ्कल्पमात्रेण करपात्रं नमामि तम्।।७।।

***

करपात्र-गाथा

–वैद्य ताराचन्द्र गोयल शास्त्री, ब्रह्मपुरी, मेरठ।

हरेर्यतेश्चरित्राणि स्वभूतस्य महात्मनः। करपात्राभिधानस्य विश्ववन्द्यस्य वर्ण्यये।।
गिरा तुच्छा मतिर्म्लाना चरित्रं परमोज्वलम्। सहासं साहसं कुर्वे, क्षमा याचे मनस्विनः।।
मनो र्देशे महाभागे भारते सुरवंदिते। आर्य जाते र्महद्ह्रासं धर्म कर्म मनस्विनः।।१।।
राष्ट्रं गौराङ्ग सन्तप्तं म्लेक्षैश्चापि निपीडितम्। निरीक्ष्य शंकरो भूयो देहं धर्तुं मनो दधे।।२।।
भटनी नामके ग्रामे, प्रतापगढ़ मण्डले। दृष्ट्वा ''रामनिधेः'' पुण्यं, विशुद्ध धर्म धारिणः।।३।।
वेद रस ग्रहेन्दुख्ये वत्सरे श्रावणे शुभे। द्वितीयायां सिते पक्षे रविवारे परो रविः।।४।।
पुत्रत्वेन गतो लोके, हरनारायणः शिशुः। यज्ञ धर्म तपः शक्त्या देश कष्ट विनाशकृत्।।५।।
जन्मार्जितैः सुसंस्कारै, र्बुद्धिमन्तं विलक्षणम्। संस्कृतं पाठयामास पिता तं बालकोत्तमम्।।६।।
शीघ्रमेव विरक्तो भूद्ज्ञान विज्ञान सम्पदा। विचिन्वन्सगुरुश्रेष्ठं विश्वेश्वराश्रमं ययौ।।७।।
ततो मेधाविनाधीतं वेदादिषड्दर्शनम्। इतिहास पुराणेभ्यस्तद्ज्ञानं विमलीकृतम्।।८।।
श्रीमद्भागवते रम्येऽनंन्यं तस्य मनोरतम्। तत्कथा गुणगानेन, ख्यातो हरिहरः स्वयम्।।९।।
अतुष्टोऽथ तपश्चर्या घोरामास्थितमानसः हूयाययावुत्तराखण्डं सिद्ध पीठं हिमालयम्।।१०।।
वर्षत्रयं तपस्तप्त्वा, श्रुश्रावान्तर् ध्वनि सुधी। कुरुष्व लोककल्याणं वेद मार्गं प्रदर्शय।।११।।
ततः स परमो हंसो द्विज पंचगृहान्नतः। करपात्रो गृहन् भिक्षां करपात्रीति संज्ञितः।।१२।।
विचरन्खाण्डवारण्ये वृकप्रस्थस्थिताश्रमे। कालिन्दीकूलके रम्ये, कृष्णबोधाश्रमं श्रितः।।१३।।
वेदान्तवाद गूढेनर्च्छिन्न द्वैत पटाञ्चलौ। ब्रह्मानन्द रसाम्भोधावेकात्मतां गतावुभौ।।१४।।
कृष्णबोध परामर्शाद्यति धर्म मुपासितुम्। ज्योतिष्पीठाधिपाद् दण्डं ब्रह्मानंदाद्दधे सुधी।।१५।।
पद्भ्यां धर्म प्रचारार्थं विचचार पुरं पुरम्। धर्मोपदेशघोषेण बोधयन्भारतीप्रजाः।।१६।।
सर्व शास्त्रार्थ तत्वज्ञैः पण्डितैर्मण्डिताऽजिता। ज्ञान प्रकाश ना त्काशी विश्वेश्वर प्रिया पुरी।।१७।।
तत्रस्थास्तस्यवैदुष्यं, वैराग्यं च तपः श्रियम्। विलोक्य शंकराचार्य मेनिरेऽभिनवं मुदा।।१८।।
दशम्यां विजयाख्यायां कृष्णबोधाङ्घ्रि सन्निधौ। अकरोद् धर्म संघस्य स्थापनां स महाद्युतिः।।१९।।
धर्मस्य जयो नाशोह्य धर्मस्य प्राणिषु सद्भावना। विश्वस्य च कल्याणं भूयाद् हर हर महादेव।।२०।।
इत्येष भारते घोषो, ग्रामे ग्रामे श्रुतो जनैः। श्रद्धा विनम्र भक्तौघैः करपात्र पदाम्बुजे।।२१।।
एकोनद्विसहस्राब्दे विश्वयुद्धेह्युपस्थिते। आर्तं भारतमालोक्य कर्तु मिज्यां मनोद्धे।।२२।।
इन्द्रप्रस्थे राजधान्यामभूत्पूर्वमखोत्तमम्। युयोज विश्व शान्त्यर्थं, गौराङ्गे प्रभु शासके।।२३।।
कृष्णबोधं समाहूय प्रत्यक्षा मन्न पूर्णिकाम्। तेने वितान संतानं याञ्चा मुक्त धनादिभिः।।२४।।
पंडितानां सहस्रं तु यज्ञ कुण्ड शतो परि। वेद ध्वनिप्रघोषेण स्वाहोच्चारमदृश्यत्।।२५।।
कुम्भदृश्यनमत्राभूत् कोटिकोटि जनाकुलम्। यमुना सेतुबन्धैश्चं ह्यापणै र्विविधैर्युतम्।।२६।।
समाचार प्रचारेण श्रुत्वा द्भुतं क्रतूत्तमम्। विभिन्न राष्ट्रीया लोका औत्सुक्यात्समाययुः।।२७।।
विविधा यज्ञ संशोभाश्चित्रिताश्चकितानैः। वेदध्वनि भवानन्दाफुल्लानम्रशिरोधरैः।।२८।।

यज्ञ संपत्प्रभावाद्वै विश्वशांतिरुपागता। स्वातन्त्र्यं भारते वर्षे प्रदृष्टं केन नो मुदा।।२९।।
एवं भूत गुण ग्रामः करपात्री धियाग्रणीः। राष्ट्रद्वैधी कृदुद्योगं गौराङ्गानाम लक्ष्यत्।।३०।।
लार्डमाउण्ट वान्जाले प्रविष्टं राष्ट्र नायकम्। नेहरुं बोधयाञ्चक्रे, राष्ट्रं च दृढया गिरा।।३१।।
निषिद्धोगोवधो भूयाद् भारतं चाप्य खण्डितम्। जन सद्भावना भूयाद् न क्वचित्कलहांकुरः।।३२।।
कारागारोग्रसंक्लेशैः पीडिता राष्ट्र नायकाः। शुश्रुवुर्नो गिरं लोभात्यागमूर्तेस्तपस्विनः।।३३।।
द्विधाभूद् भारती भूमिर्हृदयं हिन्दुतुर्कयोः। धर्म प्राणैः स धर्मात्मा कारागारे निपातितः।।३४।।
कारागार गृहं सद्यः पुण्यपाद पदार्पणात्। कृष्ण मन्दिरमेवासीत्तारस्वरप्रकीर्तनात्।।३५।।
यति वाक्यावमानेन जिन्नादि पद वंदनात्। यवनार्याति संघर्षाच्छोणिता भूदियं तु भूः।।३६।।
दृष्ट्वा द्वेषाग्नि संदीप्तं हिन्दुस्थान मथाकुलम्। पुरे पुरे क्रतुंचक्रे विश्वेश्वर प्रसादनम्।।३७।।
धाराप्रवाह यज्ञाद्यैस्त्रेता दृश्यमदृश्यत्। हरेरर्चा गुणोद्गानाद्द्वापरच्छविरुद्गता।।३८।।
ब्रह्मानन्दे गुरौ लीने ज्योतिष्पीठे च शून्य के। गुरोः प्राप्ताधिकारोपि नागृहील्लोककर्म कृत्।।३९।।
कृष्णं बोधं स्वहृदयं तपो ज्योतिषु भास्करम्। तत्पदं समलंकर्तुं मेने युक्तं महात्मसु।।४०।।
मयराष्ट्रे स्थितं बुध्वा जादूगिरि शुभाश्रमे। शिष्यौ प्रस्थापयामास नेतुं काशीं शिवोपमम्।।४१।।
करपात्रस्य वृत्तान्तं श्रुत्वाह्वानं च सत्वरम्। प्रतस्थे ट्रेन मार्गेण शिष्याभ्यां स कृपाणर्वः।।४२।।
पुनः पुनश्च पृष्टौ ता, वूचुतुः सादरं रहः। आकर्ण्य मध्यमार्गात् स, सरहस्यं गत स्ततः।।४३।।
नैच्छद् बाह्य पदं किञ्चिद् ममत्वा हन्त्व वर्जितः। कथं स शंकराचार्यो भवितुं कामयेत्कृती।।४४।।
शिष्यौ समागतौ वीक्ष्य विना बोधेन कल्मषौ। बुबुधेहृद् गतं वृत्तं हरिवर्यः कृतागसौ।।४५।।
युक्ति बुद्धि सामचारै र्बुद्धवा वोध पदास्पदम्। स्वयं कारेण सम्प्राप्तः कृष्णार्थं क्रतु मण्डपम्।।४६।।
तत आनीय काशीं स, विद्वन्महात्म मण्डले। ज्योतिष्पीठपदे कृष्णं विधानैरभिषक्तवान्।।४७।।
दृष्ट्वा कृष्ण मुखाम्भोजं सत्सृक् चन्दन चर्चितम्। अभिजातं विनेदुस्ते जयघोषेण शंकरम्।।४८।।
ज्योतिषि शंकराचार्य कृष्णबोधं विधाय सः। कृतकृत्यं स्वयं मन्ये, करपात्रः स कर्मठः।।४९।।
राजनीति बिना धर्मोऽपूर्णो नारीं विना नरः। विचिंत्य रामराज्याख्यां संस्थामस्थापयद्यतिः।।५०।।
नहरोराग्रहं दृष्ट्वा हिन्दुकोडविलादिषु। धर्मरक्षा विधानार्थं जुहाव प्रजा ऋषिः।।५१।।
द्विसहस्त्राधिके क्रान्ते स त्रिविशतिकेऽब्दके। धेनु रक्षा समुद्दिश्य ह्यान्दोलं कृतवान्पुनः।।५२।।
सिक्ख जैनास्तथा बौद्धा ये च हिन्दुपदाभिधाः। देशभक्ताश्च यवना आन्दोलं समचालयन्।।५३।।
इतिहासेह्यभूतपूर्वं हिन्दु संघ प्रदर्शनम्। लोक संसत्पुरोवर्तीन्द्रप्रस्थे विर्नियोजितम्।।५४।।
ग्रामाद् ग्रामान्नरोनार्यो भिन्न जाति समुद्भवाः। नदा नद्यो यथाम्भोधौ तथान्दोले समागताः।।५५।।
इन्द्र प्रस्थे जनौद्यो नो स आसील्लवणाम्बुधिः। दूरदार्शनिकैर्यन्त्रै नादृश्यत कुतः क्वचित्।।५६।।
कांग्रेसोच्चपदासीना मंत्रि मुख्याः पदाधिपाः। विलीक्यापुर्भयं तीव्रं कूट नीति समास्थिता।।५७।।
साम दामादि भेदेन, दण्डयोगेन ते पुनः संघ विघट्टयामासु र्गोरक्षापरिषन्मिषात्।।५८।।
नित्यं धर्म समारुढो धर्म सम्राड्जनेरितः। कल्याण कर्मसक्तोऽसौ नैष्कर्म्यं परमं गतः।।५९।।
वेद वेदान्तशाखानामन्ताराष्ट्रिय मेलनम्। कृतवान्स विदां भक्तः शास्त्र सम्पद्हेतवे।।६०।।
कृष्ण बोधं पुरोधाय साक्षात्सारस्वतं सुतम्। एकोहिजयते लोकं, शास्त्रार्थ समराङ्गणे।।६१।।

शास्त्रोर्येषु पांडित्यं तस्य कि वर्ण याम्यहम्। शास्त्रयुक्तिप्रमाणास्त्र विपक्षिपक्ष खण्डनम्।।६२।।
प्रमाणान्वेषणे नासीद् ग्रन्थामुपयोगिता। कृष्ण कंठात्स्वयं ग्रन्थः प्रमाणमुद्जहारह।।६३।।
लोकोत्तर तपस्तेजो मूर्तिमद् हरि कृष्णकौ। चन्द्र सूर्या विवा भातौ धर्म तत्व प्रकाशकौ।।६४।।
नास्तिकधी विशुद्धयर्थं देशकालोपयोगिनम्। ससर्ज स्वच्छ साहित्यं विद्वद्गणमुदावहम्।।६५।।
रामायण मीमांसा, विचार पीयूष भक्ति सुधादयः। ग्रंथा ग्रंथि भेदकाः पठनात्सविचारं नराणाम्।।६६।।

धीस्वास्थ्यकरोग्रंथो रामराज्य मार्क्सवाद विवेचकः।
वेदार्थपारिजातः पंडित कण्ठ मण्डनंश्रिया।।६७।।
अन्येऽपिवहवो ग्रन्थाः पत्रिका दैनिकाः शुभाः।
संचारिताः प्रचारार्थं हिन्दु धर्मस्य धीमता।।६८।।
धर्म भीरुः सुनिभीको ह्युद्दण्डोनृषु दण्डयुक्।
अपदस्थः पदासीनो धर्म सम्राट् सद्बुद्धिदः।।६९।।
बद्धो वन्दी गृहे मुक्तः कृष्णाभो विमलद्युतिः।
शिखा सूत्रादि रहितः शिखा सूत्रैक जीवनः।।७०।।
सर्वजातिपरो योगी ब्रह्मण्यो दीन वत्सलः।
विरक्तो रक्त वासोऽङ्गो दण्डी दण्डतः परः।।७१।।
ज्ञान ध्वस्तद्वयाध्यासो हरि हरांघ्रि वन्दकः।
समः सर्वेषु भूतेषु म्लेक्ष वंश निकृन्तनः।।७२।।
दासो भूसुर धेनूनां शास्ता दुष्पथगामिनाम्।
लोक संग्रहकर्ताऽसा, वेकान्त कृत केतनः।।७३।।
लोक कर्मणि संसक्तो लोक कर्मव्यमोहकः।
गुणैर्युक्तो गुणातीतः सन्मानगो विमानयः।।७४।।
पुरुषः परमो हंसो रसजिद् रसिको रसः।
सर्व संकल्प सन्यासी सत्संकल्पपरायणः।।७५।।
वृद्धो बालः सदायोगी वियोगी ब्रह्मवद् बुधः।
विरोधिसर्व धर्माणामधिष्ठानं भृतोऽद्वयः।।७६।।
यति वर्यस्य वंद्यस्य, विश्वशान्ति प्रकाशिनः।
यशोगाथां समुद्ग्रथ्य पद्यपद्मस्त्रगर्प्यते।।७७।।
ईदृशेश्वर रूपाणां कारुण्याब्धिहृदां विदाम्।
यशो गंगावगाहार्थं सरस्वती स्वयमेति वै।।७८।।
भूयो भूयोऽभिवन्देहं हंसाम्भोज पदद्वयम्।
यच्छ्रवः श्रुतिमात्रेण ह्यघोहारि रसात्मदम्।।७९।।
भजते हरि हरानन्दं विश्व कल्याणैक विग्रहम्।
योगीशवृन्द वन्द्यं करपात्राभिधं सुनिष्ठया।।८०।।

करपात्र-स्वामि महाभागाः

स्वर्गीय–पं. दिवाकर शास्त्री, मण्डी धनौरा, मुरादाबाद।

श्रीरामचन्द्रं नत्वा वै पृच्छ्यन्ते प्रणता मया
करोति लोके धर्मस्य प्रचारः कोऽधुना वद
रतः कोऽत्र सुरक्षार्थं गवां ह्यद्य निरन्तरम्
पाति मन्दिर मर्यादां कश्चैकः बलवान् भुवि,
त्रीन् लोकान् हि जेतुं कः समर्थः यशसा सदा
जीवयत्यद्य को यज्ञान् कश्च वर्णाश्रमास्तथा
स्वादं सौख्यं च केनात्र त्यक्तं धर्म प्रवृद्धये
भीयते बुद्धि वैशद्यमुत्तरं स्पष्टमेव हि।

***

करपात्र पदाम्भोज-भ्रमरः

श्री रघुनाथ शर्मा सेमरी–छाता–बलिया (उ.प्र.)

करपात्र पदाम्भोज मकरन्द मदालसः।
रघुनाथो गुणान् वक्तुं तेषां कांश्चित्समुद्यतः।।१।।
विश्वं ये ब्रह्म बुद्धया वदन्तो गोसेवां ये देशवृत्तिं वदन्तः।
ये नर्मदा देशघेषं गिरन्तो वृत्तिं सदा राम राज्येदिशन्तः।।२।।
सदाऽमयं ब्रह्म बुद्धया स्मरन्तः सदा ऽभयं रामराज्ये वदन्तः।
सदाधर्म शाश्वतं वेदयन्तो गताः सत्यं तं यतीन्द्रं नतोऽहम्।।३।।
यस्याचारो न्यासिनां दिष्टवर्त्मा यद्व्यवहारो धर्मसेतोस्तु लिङ्गम्।
त्यागस्तपोऽध्ययनं ब्रह्मापणां यद्यागोवित्तः सततं तं नतोऽस्मि।।४।।
यमैः सदा नियमैश्चोपपन्नं विकल्पके निर्विकल्पे निषण्णम्।
भू देवानां शरणं वीतरागं शेषं मुनिं संस्मराम्यप्रमत्तः।।५।।

***

तपः प्रतीकः करपात्री

–पं. रघुनाथ चतुर्वेदी राजराजेश्वरी संस्कृत संस्थान–२, दशमुखी गणेश, मथुरा

धर्मयात्रा कृतास्त्वेभि स्तदाऽऽ सेतुहिमालयम्।
भ्रान्त्वा–भ्रान्त्वा च धर्मस्य स्वरूपं तैः प्रबोधितम्।।४३।।
गता यत्र च विद्वद्‌भिस्तत्रत्यैः साधुभिस्तथा।
ज्ञातं स्वरूपं ह्येतेषां कृत शास्त्र विचारतः।।४४।।
प्राक्तनैः स्वीय संस्कारैः स्तथा ऽपूर्वतपस्यया।
शास्त्राभ्यासेन सततं दुर्धर्षत्वमवाप्नुवन्।।४५।।
यत्र यान्ति समाजोऽपि तत्रस्थ विदुषां सदा।
वचनामृत पानाय सतृष्ण इव लक्ष्यते।।४६।।
रस रूपा कथास्तेषां श्रीमद्‌भागवते कृताः।
शृण्वन्तः सततं विज्ञाः सामान्याश्चापि मानवाः।
तृप्तिं न यान्ति पानेन कस्तृप्तः सुधया भवेत्।।४७।।
तदा ते वेद शास्त्राणां विद्वांसोऽप्रतिमा मताः।
विद्वत्सु स्वीय देशस्य तत्पाण्डित्यं महाद्‌भुतम्।।५१।।
ते पूर्वोत्तरयोरासन् विद्वांसः श्रेष्ठतां गताः।
मीमांसयोर्न सन्देहो देशस्यास्य बुधेषुहि।।५२।।
श्रेष्ठं यथाऽऽसीद् वैदुष्यं श्री करपात्रि स्वामिः।
तादृशन्न तथा ऽन्यत्र लोकेऽस्मिन् दृष्टि मागतम्।।५९।।
विद्यारण्यादिभिः साम्यं तथा श्री मधुसूदनैः।
सरस्वतीभिर्विद्वत्वे महत्वेन युतो ऽभवत्।।६०।।
परम्परायामेताषांमासनं श्री करपात्रिणः।
महत्वपूर्णा विद्वांसो लोकेऽस्मिन्नात्र संशयः।।६१।।
वेदा दर्शन शास्त्राणि राजनीतेविशुद्धता।
भिन्न भाषास्वरूपन्तु दृश्यतेस्मच स्वामिनि।।
अपरिग्रह त्यागस्य प्रवृद्धतपसस्तथा।
प्रतीको मूर्तिमानासीत्! करपात्रीति यः स्मृतः।।
संस्कृतेः भारतीयायाः सभ्यतायाश्च धर्मणः।
रक्षायां वेद शास्त्राणां यैः स्वं सर्वस्वमर्पितम्।।
लोकेऽस्मिन्नग्र पङ्क्तयां ये तद् रक्षायां प्रवर्द्धने।
गण्यन्ते प्रथमा स्तेषु स्वामिनो नात्र संशयः।।

महान् ग्रंथकार स्वामी करपात्री जी महाराज

–श्री भीष्मदत्त शर्मा, एम.ए.एम.एड., पी.एच.डी. मेरठ।

विश्ववंद्य परमपूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्रीविभूषित श्री स्वामी करपात्री जी महाराज वर्तमान युग के महान् विचारक, उत्कृष्ट तत्ववेत्ता विलक्षण दार्शनिक, ओजस्वी वक्ता, उद्भट विद्वान, अद्भुत लेखक, वेद–शास्त्रों के मर्मज्ञ, कर्म ज्ञान–भक्ति के साक्षात् स्वरूप तथा त्याग–वैराग्य के दैवीप्यमान् सूर्य थे। जिस प्रकार आद्य जगद्गुरु भगवान् शंकराचार्य के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि वह वेद में ब्रह्मा के समान, वेदांगों के गार्ग के समान तथा उनके तात्पर्य के निर्णय करने में वृहस्पति के समान, वेद–निहित कर्म के वर्णन करने में जैमिनि के समान और वेद वचन के द्वारा प्रकट किये गये ज्ञान के विषय में महर्षि व्यास के समान थे, उसी प्रकार आधुनिक विद्वानों की दृष्टि में पूज्य स्वामी जी महाराज के चमत्कारी व्यक्तित्व के चैतन्य का भक्तिभाव, आद्य शंकराचार्य का ज्ञान, समर्थ स्वामी रामदास का राष्ट्र प्रेम तथा वृहस्पति कामन्दक का उदात्त राजनैतिक उद्बोधन कूट–कूटकर भरा हुआ था। उन जैसा चतुर्मुखी प्रतिभा सम्पन्न तथा जनमानस पर अमिट छाप छोड़ने वाला महान् व्यक्तित्व आचार्य शंकर के पश्चात् इतिहास में मिलना दुर्लभ है। वह धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म के महान् उपासक थे। वेदादि शास्त्रों के प्रामाण्य स्थापना तथा मान्यता के लिये उन्होंने देश के कोने–कोने में जो प्रवचन किये और जो साहित्य सर्जन किया वह मानव जाति की अमूल्य निधि है। महान् ग्रंथकार के रूप में उनकी प्रसिद्धि युग युगों तक लोगों को धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म का यथार्थ दर्शन कराती रहेगी। ५० से ऊपर लिखे हुये उनके अनमोल ग्रंथों में धर्म, संस्कृति, अध्यात्म, आस्तिक भाव तथा शास्त्रों के प्रामाण्य का प्रतिपादन बड़े अनूठे ढंग से हुआ है। 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'रामायण मीमांसा', 'विचार पीयूष', 'भक्ति सुधा' तथा 'वेदार्थ पारिजात' पूज्य धर्मसम्राट् के ऐसे पाँच प्रतिनिधि महाग्रन्थ हैं जिनमें राजनीति, इतिहास, समाज दर्शन तथा वेदशास्त्रानुमोदित विचारधारा की मार्मिक विवेचना हुई है।

वेदार्थ पारिजात

परमपूज्य अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य पुरी पीठाधीश्वर श्री स्वामी निरंजनदेव तीर्थ जी महाराज तथा देश के अन्यान्य मूर्धन्य विद्वानों ने जिस महाग्रंथ को वर्तमान शताब्दी का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ बताया है उस 'वेदार्थ पारिजात' के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। विश्ववंद्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री विभूषित ब्रह्मस्वरूप श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की यह अनुपम रचना हिन्दू धर्म का विश्वकोष है। आजकल पत्र–पत्रिकाओं, विद्वानों तथा यत्र–तत्र–सर्वत्र 'वेदार्थ पारिजात' चर्चा का विषय बना हुआ है। वेद को हमारे यहाँ अखिल धर्म का मूल माना जाता है। हमारे समस्त विद्वानों, आचार–विचारों तथा मान्यताओं का आधार वेदमूलक होने से लोगों में वैदिक ग्रन्थों के प्रति अपार श्रद्धा होना स्वाभाविक है। इसी जन

विश्वास का अनुचित लाभ उठाकर बहुत से लोगों ने वेदों के नाम पर अनेक प्रकार के भ्रमों द्वारा धार्मिक क्षेत्र मे भारी अव्यवस्था फैला रखी है। अपने यहाँ वेदों के अर्थ का विचार करने की विशिष्ट पद्धति का वर्णन मीमांसा तथा वेदांत आदि ग्रंथों में मिलता है किन्तु उनको न जानकर मनमाने ढंग से वेदभाष्य करने का आज फैशन बन गया है। देश में चारों ओर भाष्यों की बाढ़ आ गयी है। आये दिन समाचार पत्रों में वेदभाष्यों के नये-नये विज्ञापन पढ़कर सामान्य व्यक्ति यह निर्णय नहीं कर पा रहा है कि उसे कौन सा भाष्य पढ़ना चाहिये। वेद-भाष्यों के नाम पर चली इस दुकानदारी से ऊबी हुई जनता किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी है। वेदों के पूर्ण मर्मज्ञ विद्वान् आचार्य वेंकटमाधव, सायण महीधर तथा उब्बट आदि की उपेक्षा और वेद के अंगों, उपांगों तथा स्मृतियों आदि का यथावत् बोध न होने से आधुनिक तथाकथित वेदभाष्यकार जनता का कितना अहित एवं शोषण कर रहे हैं-इसका पता 'वेदार्थपारिजात' के अध्ययन से चलता है।

वेद शास्त्र विरोधी मतों का खंडन किये बिना स्वामी करपात्री जी की लौह लेखनी कभी चैन से नहीं बैठती थी। इस महान् ग्रंथ की रचना के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुये ग्रंथकार की यही लोकोपकार की भावना इन शब्दों में प्रकट हो रही है- "जिनके पिता, पितामह प्रभृति पूर्व पुरुष सदा वैदिक धर्म के अनुयायी रहे हैं, जिनके मन में सदा से वैदिक सद्विचारों का अनुशीलन चलता रहा है, ऐसे सज्जन व्यक्ति वेदशास्त्र के साथ द्वेष भाव रखने वाले व्यक्तियों के द्वारा भाष्य विरुद्ध अर्थ को सुनकर दु:खी हो जाते हैं। उनके इस क्लेश को दूर करने के लिये हमने यह श्रम किया।"

"येषां पितृपितामहादिपुरुषा आसन् सदा वैदिका। ये स्वान्ते परिशीलयन्ति सततंवेदान् सदर्थान्वितान्।।
वेदद्विड्भिरुदीरितानभिनवानर्थानुदीक्ष्य स्वयं। ये क्लिश्यन्ति महत्तदर्थमखिला ह्यस्माकमेष श्रमः।।३२।।

(वेदार्थ पारिजात पृ. ३)

कितना उदार भाव था इस महापुरुष में। इसी जनपीड़ा से द्रवीभूत इस सन्त ने अपना समस्त जीवन वेदशास्त्रों के उद्धार के लिये समर्पित कर ऐसा विलक्षण साहित्य मानव जाति को दिया है जो युग-युगों तक धर्म, अध्यात्म तथा संस्कृति की ज्योति को प्रज्वलित रखेगा। इतना महान् कार्य करने पर भी कुछेक नासमझ व्यक्तियों तथा पत्र-पत्रिकाओं का पूज्य स्वामी जी के बारे में अनर्गल प्रलाप करना देश का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। वस्तुत: यह तो इस युग के लोगों का सौभाग्य ही था कि उन्हे आचार्य शंकर भगवत्पाद के उपरान्त पूज्य करपात्री जी महाराज के रूप में दिव्य विभूति का दर्शन, संभाषण, उद्बोधन तथा लेखन आदि की उपलब्धि हुयी।

रॉथ, मैक्डोनल तथा मैक्समूलर आदि पाश्चात्य विचारकों एवं तदनुगामी भारतीय (जैसे आर्यसमाजी स्वा. दयानन्द आदि) विद्वानों के भाष्यों को देखने से वेदों की एक वाक्यता पर सन्देह होने लगता है। संस्कृत का अधिक प्रचार न होने से लोगों में आचार्य सायण आदि के प्रामाणिक एवं यथार्थ भाष्यों को पढ़ने की प्रवृत्ति का लोप

होता हुआ दिखाई पड़ रहा है। मनमाने ढंग से लिखे गये इन नवीन भाष्यों में किसी सनातन आध्यात्मिक विचारधारा के दर्शन न होने से तत्वजिज्ञासु को निराश होना पड़ता है। इन नवीन भाष्यकारों ने वेदों को भानुमती का पिटारा बना दिया हैं। जिसके मन में जो आया लिख मारा। इन्द्र, वरुण, अग्नि, यम, सविता तथा ब्रह्म आदि एक ही प्रकार के शब्दों का कहीं कुछ अर्थ कर दिया और कहीं कुछ इस प्रकार के ऊटपटांग भाष्यों के आधार पर आज 'सरिता' जैसी पत्रिकाएं वेदशास्त्रों के सम्बन्ध में अनर्गल प्रचार कर रही हैं। इन घटिया किस्म के भाष्यों को पढ़कर लोगों में अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ, दुर्भावनाएं तथा नास्तिकता बढ़ती जा रही है। ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् भाग को वेद न मानना तथा केवल चार पोथियों के वेद होने के सिद्धांत को प्रचारित कर इन भाष्यकारों ने धार्मिक जनों में बड़ी भारी अव्यवस्था, अश्रद्धा एवं अनास्था को जन्म दिया है। महर्षि पतंजलि के अनुसार वेदों की ११३१ शाखाएं हैं। किन्तु आर्यसमाजी भाष्यकारों ने इनमें से केवल चार शाखाओं को वेद मानकर शेष ११२७ शाखाओं को वेदत्व से बहिष्कृत कर रखा है जिससे वैदिक धर्म के यथार्थ सिद्धांतों का ही सफाया हो गया है। इस प्रकार के पूर्वाग्रहों, दुराग्रहों एवं मिथ्याग्रहों से ग्रस्त तथाकथित् भाष्यकारों द्वारा वेदों के वास्तविक स्वरूप को तिरोहित हुआ जानकर श्री स्वामी जी महाराज ने हिन्दू धर्म की रक्षार्थ यह महान प्रयास किया है। अपनी समस्त साधना, तपश्चर्या, ज्ञान, वैराग्य भक्ति एवं विद्वत्ता आदि को इस ग्रंथ-रत्न में उड़ेलकर धर्मसम्राट् अभिनव शंकर ने अन्धकार में भटकी धर्मपिपासु मानव जाति का अविस्मरणीय उपकार किया है। ब्रह्मलीन होने से पूर्व स्वामी जी ने 'वेदार्थ-पारिजात' के बारे में कहा था-' 'हमें जो कुछ कहना था, लिखना था, सब 'वेदार्थ-पारिजत' में लिपिबद्ध कर दिया है, उसी के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है।''

श्री राधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान, कलकत्ता से प्रकाशित तथा धर्मसंघ शिक्षा मंडल, दुर्गा कुण्ड, वाराणसी से प्राप्य हिन्दू धर्म का यह महान ग्रंथ 'वेदार्थ-पारिजात' अभी दो खण्डों में प्रकाशित हुआ है। इन दोनों भागों में पूज्य स्वामी जी ने वेदभाष्य की भूमिका प्रस्तुत की है। आज देशी-विदेशी, नास्तिक-आस्तिक, आधुनिक-प्राचीन तथा सुधारवादी-परम्परावादी दार्शनिकों, विद्वानों एवं आचार्यों ने जितना कुछ वेदों के सम्बन्ध में लिखा है उसकी युक्तियुक्त तथा शास्त्र सम्मत समालोचना कर श्री स्वामी जी ने इस विशालकाय ग्रंथ में वेद के प्रामाणिक स्वरूप तथा सिद्धांतों की स्थापना की है। इसीलिए इस बेजोड़ ग्रंथ को पढ़कर निष्पक्ष विद्वानों को अनुभव हुआ कि आज तक वेदभाष्य के नाम पर सैंट ही बिकता रहा, असली इतर तो अब मिला है। श्री करपात्री जी महाराज के प्रतिपादन की विशेषता है कि उसमें कहीं भी पूर्वाग्रह तथा बलात् स्वमतपोषक अर्थ निकालने की प्रवृत्ति के दर्शन नहीं होते हैं। शब्द और अर्थ के स्वरूप तथा सम्बन्ध पर बड़ा व्यापक शास्त्रार्थ स्वामी जी की लेखनीं का चमत्कार

है– धर्मकीर्ति जैसे बौद्ध दार्शनिक के वेद विरोधी मत का जैसा प्रभावशाली खंडन इस ग्रंथ में हुआ है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अनेक दार्शनिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक विवादों का शास्त्र–सम्मत समाधान इस अनुपम ग्रंथ में किया गया है। वेदों का तात्पर्य ब्राह्मण भाग, (जिसमें उपनिषद्, आरण्यक आदि सम्मिलित हैं) शिक्षा–कल्प–व्याकरण, निरुक्त–छंद, ज्योतिष इन छः अंगों, न्याय–वैशेषिक सांख्य–योग, मीमांसा–वेदांत इन छः दर्शनों एवं पुराणेतिहास आदि समस्त धर्म–शास्त्रों के द्वारा ही जाना जा सकता है। अतः विभिन्न श्रुतियों (वेद–मंत्रों), स्मृतियों (धर्म शास्त्रों) तथा दार्शनिक विचारों में समन्वय एवं एक वाक्यता वेदमन्त्रों का अर्थ करने की प्राचीन एवं शास्त्र समस्त(सायण आदि आचार्यों द्वारा अनुमोदित) पद्धति का आश्रय लेकर पूज्य स्वामी जी द्वारा किये गये भाष्य को देखने से पता चलता है कि इन तथाकथित नवीन भाष्यकारों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिये अर्थ का कितना अनर्थ किया है? यही कारण है ऐसे अपरिपक्व वेदभाष्यकारों ने अपनी दुकानदारी बंद होते देख पूज्य स्वामी जी के सम्बन्ध में अनर्गल प्रलाप से अपनी जीविका बचाने का असफल प्रयास किया।

वेद के वास्तविक स्वरूप और प्रामाण्य, मंत्र भाग की भाँति ब्राह्मण–आरण्यक–उपनिषद् आदि का वेद होना, मूर्ति पूजा की शास्त्र सम्मतता, अवतारवाद की वैदिकता श्राद्ध–तर्पण की कर्तव्यता, गोरक्षा की अनिवार्यता, मन्त्रों की यज्ञपरकता, ब्रह्म विद्या की महत्ता, वेदों के पठन–पाठन की पद्धति, अद्भुत लेखनी का चमत्कार पाठक को चमत्कृत किये बिना नहीं रहता है।

स्वामी दयानन्द की ऋगवेदादि भाष्य भूमिका में प्रकट मत का खण्डन करते हुये श्री स्वामी जी ने वेदार्थ पारिजात भाग १ के पृष्ठ ४१६ पर लिखा है–

"धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि के बिना परमानन्द की प्राप्ति ही नहीं होगी, यह कहना भी पुरुषार्थ के तत्व को न समझ पाने के कारण है। क्योंकि इस परिस्थिति में इस विकल्प का कोई उत्तर न बन सकेगा कि परमानन्द मोक्षस्वरूप पुरुषार्थ से भिन्न है अथवा अभिन्न? पहला विकल्प नहीं बन सकता, अर्थात भिन्न सिद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि मोक्ष से भिन्न कोई परमानन्द लोक में प्रसिद्ध नहीं है। दूसरा विकल्प भी इसलिए नहीं बन सकता अर्थात् ज्ञान को परमानन्द से अभिन्न भी नहीं कह सकते है कि वह स्वयं अपना ही कारण नहीं हो सकता। क्या धर्म, अर्थ और काम भी परमानन्द के जनक हैं अथवा इनसे युक्त मोक्ष ही परमानन्द का जनक होगा? पहले पक्ष में त्रिवर्ग से भी परमानन्द की अधिगति हो जाने पर मोक्ष का क्या प्रयोजन रह जायेगा? द्वितीय पक्ष भी इसीलिए नहीं बनेगा कि ऐसा मानने पर संन्यास की उपपत्ति नहीं बन सकेगी। वास्तव में सातिशय सुख काम, निरतिशय सुख मोक्ष कहलाता है। धर्म और अर्थ इनके साधन है। परमेश्वर आप्त काम होते वेद सम्प्रदाय की प्रवृत्ति को ही परमेश्वर से वेद का अधिकारियों को देता हैं। कल्प के प्रारम्भ में

वेद सम्प्रदाय की प्रवृत्ति को ही परमेश्वर से वेद का प्रादुर्भाव माना जाता है। नित्य वेद की इससे शब्द राशि है। सृष्टि व प्रलय को न मानने वाले पूर्व मीमांसक के मत से ये वेद स्वरूपतः नित्य हैं और उत्तर मीमांसक (वेदान्ती) के मत से सृष्टि से लेकर प्रलयपर्यन्त स्थिर रहने के कारण वेद प्रवाह रूप से नित्य हैं।

पृष्ठ ७९४ पर कहा है–

वेद के सर्व ज्ञानमय होने पर भी उसी से कम्प्यूटर, राकेट आदि के निर्माण की विद्या यथार्थ नहीं हो जायेगी। धर्म ज्ञान और ब्रह्मज्ञान ये ही साक्षात् अथवा परम्परा से सभी ज्ञानी के मूल में हैं। वेद इनके प्रकाशक हैं, अतः सूत्र रूप से वेद को सभी विषयो का प्रकाशक माना ही जा सकता हैं। श्री शंकराचार्य ने 'अनेक विद्याओं के उपवृंहक होने से प्रदीप के समान सभी वस्तुओं के प्रकाशक होने से वह सर्वज्ञ कल्प है' इस उक्ति के अनुसार अंग और उपांग सहित वेद को सभी विषयों का प्रकाशक माना है। उनकी दृष्टि से सर्वज्ञ के सभी ज्ञानों से संलग्न शब्दों की अनन्तता के कारण स्वभावतः सभी अर्थों की प्रकाशकता बन सकेगी। 'वेद अनन्त हैं' इस श्रुति से भी यही अर्थ सिद्ध होता है। मानव बुद्धि गम्य ११३१ शाखा वाले मन्त्र ब्राह्मणात्मक वेद में मानव के लिये अपेक्षित सभी विषयों की प्रकाशकता हो ही सकती है।

इससे स्पष्ट है कितने गहन अध्ययन व मनन के उपरान्त महाराज श्री ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है।

रामायण मीमांसा–एक समग्र दर्शन

ब्रह्मस्वरूप धर्मसम्राट्ट अनन्त श्री विभूषित परम पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की लोह लेखनी से जिन अनमोल ग्रंथों का प्रणयन हुआ उनमें 'रामायण मीमांसा' का महत्वपूर्ण स्थान है। यह ग्रंथरत्न ११०० पृष्ठों से अधिक का होता हुआ भी पाठकों के लिये आद्योपान्त रोचक एवं सुबोध बना रहता है। सं. २०३४ में श्री दुर्गाकुण्ड, वाराणसी से प्रकाशित इस ग्रंथ के बारे में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। पूज्य स्वामी जी महाराज की वैसे तो समस्त कृतियाँ अद्भुत एवं बेजोड़ है किन्तु इस ग्रन्थ में उनकी जिस प्रतिभा के दर्शन होते हैं, उसका अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

हिन्दी साहित्य के विद्वान् स्व. डॉ. कामिल बुलके के शोधग्रंथ 'रामकथा' का जब पूज्य धर्मसम्राट् ने अवलोकन किया तो उसमें हिन्दू धर्म के यथार्थ स्वरूप को ध्वस्त करने का ही प्रयास दृष्टिगोचर हुआ। उस समय कितनी मर्मान्तक वेदना हुई होगी उस मनीषी को? इसका पता तो उन्हीं को लगेगा जो 'रामायण मीमांसा' धैर्यपूर्वक आद्योपान्त अध्ययन करेंगे। भगवान् श्रीराम के सम्बन्ध में किसी अहिन्दू लेखक का ग्रंथ निर्माण करना तो अवश्य प्रशंसनीय है किन्तु लाखों वर्षों से करोड़ों भारतीयों के आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के परम्परागत एवं यथार्थ स्वरूप को विकृत करके प्रस्तुत करने का किसी को अधिकार नहीं है। रामायण एवं

श्रीराम के सम्बन्ध में श्री बुल्के की मनमानी कल्पनाएं पढ़कर किस शास्त्र-विश्वासी हिन्दू को वेदना नहीं होगी?' डॉ. बुल्के के इसी ग्रंथ 'रामकथा' को पढ़कर भारतीय जनमानस के परम पारखी तथा वेदशास्त्रों के मर्मज्ञ विद्वान् एवं हिन्दू जाति के परम हितैषी पूज्य स्वामी जी की आत्मा उसी प्रकार करुणा क्रन्दन कर उठी जिस प्रकार आदि कवि महर्षि वाल्मीकि व्याध द्वारा मारे गये क्रौंच पक्षी को देखकर भाव विह्वल हो उठे थे। इसी अवसर पर महर्षि के शोकाकुल अन्तस्तल से निःसृत अमर वाणी 'रामायण' जन-जन का हृदयहार बनी हुई है। इसी प्रकार धर्मसम्राट् की व्यथा की परिणति हुयी 'रामायण मीमांसा' में।

भगवान् राघवेन्द्र श्रीराम तथा भगवती जगदम्बा माँ सीता महारानी के परम पावन एवं लोकप्रिय चरित्र को अपने सिद्धांतों के सांचे में ढ़ालने के चक्कर में जैन एवं बौद्ध कवियों तथा लेखकों ने किस प्रकार कलुषित किया है? इसका जीता-जागता उदाहरण है जैन मुनि तुलसी की 'अग्नि परीक्षा'। बौद्ध रामायणों में भगवान् श्रीराम और भगवती सीता को भाई-बहन बताकर हिन्दू मर्यादा के विरुद्ध उनका विवाह होना लिखा है। जैन रामायणों में भी इसी प्रकार की अनैतिक कल्पनाएं, जैसे श्रीराम और सीता जी की जैन दीक्षा तथा लक्ष्मण जी का नरक गमन आदि, भरी पड़ी है। स्व. बुल्के का शोध प्रबन्ध भी पूर्वाग्रह से मुक्त नहीं है। उन्होंने स्थान-स्थान पर यह दिखाने का प्रयास किया है कि भगवान् श्रीराम विष्णु भगवान् के अवतार नहीं हैं। वाल्मीकि रामायण के बाल-कांड, उत्तरकांड तथा शेष काण्डों के अनेक स्थल बाद में जोड़े गये हैं। रामायण का मूल रूप प्रचलित रामायण से भिन्न था और वर्तमान रामायण धीरे-धीरे वर्तमान रूप से विकसित हुयी है। इस प्रकार उनके अनुसार रामायण अनेक प्रकार के प्रक्षेपों, बाद के मिलाये हुये श्लोकों एवं अनेक नवीन कल्पनाओं का पुलिंदा होने से कोई ऐसा विश्वसनीय एवं सत्य इतिहास नहीं है जिस पर हिन्दू जाति गर्व कर सके।

रावण के दस सिर होना, हनुमान का समुद्र लांघना एवं सूर्य को निगलना, कुम्भकर्ण का छः माह तक सोना, इन्द्रादि देवताओं का प्रकट होकर वरदान देना और सीता जी की अग्नि-परीक्षा आदि बुल्के की दृष्टि से काल्पनिक है। इसी प्रकार की अनर्गल कल्पनाओं का आश्रय लेकर आजकल निःसारता की धर्मसम्राट् ने बखूबी दिखाया है। इन्हीं ग्रन्थों का दुष्परिणाम है कि आज लोगों पर प्राचीन ग्रंथों में प्रक्षेप ढूंढ़ने का भूत सवार हो गया है। एक आर्यसमाजी का सम्पूर्ण वाल्मीकि रामायाण को ६००० श्लोकों तक सीमित करना इसी दुष्प्रवृत्ति का परिणाम है। हम सभी जानते हैं कि रामायण के अन्तः साक्ष्य के आधार पर २४००० श्लोकों का होना सिद्ध होने पर भी अपने अनुकूल श्लोकों को स्वीकार कर लेना तथा शेष को प्रक्षिप्त बता देना आज की रिसर्च का नमूना है। रामायण आर्ष ग्रंथ न होकर

कल्पनाओं, झूठी घटनाओं एवं मिथ्या गप्पों का बंडल है। यह बड़ा भयंकर षडयंत्र हैं जो आज इस प्रकार के अवांछनीय साहित्य के रूप में चला हुआ है। पूज्य स्वामी जी ने महती कृपा करके इस षडयन्त्र का भंडाफोड़ करने के लिये अपने इस अद्‌भुत ग्रंथ में उपर्युक्त प्रकार के भ्रांत एवं तर्कहीन विचारों को युक्तियुक्त तथा शास्त्र सम्मत ढंग से निराकृत किया है। यह विशालकाय ग्रंथ 'रामायण मीमांसा' उन सभी शोधकर्ताओं, धार्मिक जनों एवं जिज्ञासुओं के लिये पठनीय है, जो रामायण के रहस्य को सांगोपांग जानना चाहते हैं। ग्रंथ में उद्‌घृत लभगग ६८४ सन्दर्भ ग्रंथों की सूची अनुक्रमणिका में ग्रंथ के अन्त में परिशिष्ट रूप से दी गयी है जिसमें न केवल अनेक भारतीय भाषाओं के ग्रंथों की नामावलि है अपितु विश्व को अनेक विदेशी राम ग्रंथों का भी उल्लेख किया गया है जिससे ग्रंथ की उपादेयता वृद्धि के साथ-साथ स्वामी जी की विलक्षण प्रतिभा एवं अध्यवसाय की भी झलक पाठक को मिलती है। एक बार भी शांतचित्त होकर धैर्यपूर्वक मनन करने से रामायण एवं श्रीराम से सम्बद्ध सभी प्रश्नों का यथार्थ रूप में समाधान हो जाता है।

***

विचार-पीयूष-यथा नाम तथा गुण

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी से १९७५ में प्रकाशित 'विचार-पीयूष' परमपूज्य ब्रह्मस्वरूप धर्मसम्राट् अनन्त श्री विभूषित श्री स्वामी करपात्री जी का ऐसा अनमोल ग्रंथ है जिसका अनुशीलन करने पर पाठक को अमृतानन्द की उपलब्धि होती है। इस महाग्रंथ में ६५० से अधिक पृष्ठों में पूज्य स्वामी जी ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय वैदिक दृष्टिकोण का बड़े प्रभावशाली ढंग से उपस्थापन किया है। स्वामी जी की लेखनी की यह विशेषता रही है कि वेदशास्त्र सम्मत विचारधारा का ही प्रतिपादन उसके द्वारा होता रहा है। वेदशास्त्रानुमोदित हिन्दू-समाज-दर्शन की जैसी युक्तियुक्त मीमांसा उनके ग्रंथों में मिलती है वैसी अन्यत्र मिलनी सम्भव नहीं है। स्वामी जी के इस ग्रंथ में विचारों का पीयूष संगृहीत होकर यथा नाम तथा गुण की कहावत को चरितार्थ कर रहा है। आज के हिन्दू समाज में धर्म की अवमानना से उसकी मरणासन्न अवस्था को देखकर महान् मनीषी स्वामी जी की यह लेखन-साधना इस समाज के लिये संजीवनी सिद्ध हो सकती है। हिन्दू के लिये आज के चुनौती भरे वातावरण में उसके हित की घोषणा करने वाले नेताओं, लेखकों, भाषणदाताओं तथा विचारकों की बाढ़ आयी है किन्तु वेदशास्त्रानुमोदित धर्म मार्ग को छोड़कर हिन्दुत्व का कौन-सा आधार है? इसा महान् प्रश्न की उपेक्षा सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रही है। वर्तमान शताब्दी का यह सौभाग्य ही रहा कि उसे परमपूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज जैसा धर्मविचारक मिला जिसने गत ४०-५० वर्षों में निरन्तर लिखकर हिन्दू समाज को उसका यथार्थ

स्वरूप दिखाया। 'विचार-पीयूष' ऐसा दर्पण है जिससे हम अपनी दुर्बलताओं को भी देख सकते हैं और उनका शास्त्र सम्मत समाधान भी प्राप्त कर सकते हैं।

वैदिक दृष्टिकोण के सर्वथा विरोधी लोगों द्वारा सनातन धर्म के सिद्धान्तों की निन्दा करना या उसका विकृत रूप में उपस्थापन करना उतना घातक नहीं होता है, क्योंकि जन-साधारण उनके धर्म विरोधी दृष्टिकोण से परिचित होता है, किन्तु जो धर्म का मुखौटा लगाकर पाश्चात्य प्रभाव से या अपने स्वार्थ विशेष से धर्म का भ्रामक रूप प्रस्तुत करते हैं, उनमें विशुद्ध वैदिक दृष्टिकोण की महती क्षति होने की सम्भावना रहती है। इस पुस्तक में पूज्य स्वामी जी ने न केवल जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय दृष्टिकोण का प्रतिपादन शास्त्र सम्मत ढंग से किया है, वरन् जो विचारधारा ज्ञात-अज्ञात रूप में पाश्चात्य दृष्टिकोण एवं दर्शन से प्रभावित होकर आज के हिन्दू-नेताओं के मन-मस्तिष्क को आक्रान्त किये हुये हैं, उसका युक्तियुक्त ढंग से निराकरण भी इस ग्रंथ में उन्होंने किया है। भविष्य में ऐसी अधकचरी विचारधारा को ही सामान्यजन धर्म का यथार्थ स्वरूप मानकर मूल विशुद्ध वैदिक सिद्धान्त से भ्रष्ट हो सकते है। प्रायः वैदिक धर्मानुयायी विद्वान् इसके विरोध में कुछ नहीं लिखते हैं। वस्तुतः सनातन धर्म के विशुद्ध दृष्टिकोण को जनता के सम्मुख प्रस्तुत करने एवं विरोधी विचारों के प्रमाणयुक्त खंडन की महती आवश्यकता थी। इसी की पूर्ति के लिये पूज्य स्वामी जी का समस्त प्रयास रहा है। सचमुच सनातन धर्म के क्षेत्र में वैसा विचारक, लेखक, दार्शनिक वक्ता एवं विद्वान् गत अनेक शताब्दियों में नहीं हुआ है। इसी दृष्टि से उनका यह महान् ग्रन्थ मननीय एवं पठनीय है।

'विचार-पीयूष' तीन भागों में विभक्त महाग्रन्थ है। प्रथम भाग में उनके द्वारा किये गये भारतीय राजनीति के विवेचन को पढ़कर अपने देश की प्राचीन राजनीति का बोध होता है। स्वामी जी ने 'वेदों से स्मृतियों तक', 'महाभारत की दृष्टि में', 'नीतिकारों की कसौटी पर', 'कवियों की काव्य कला में', 'तत्त्वज्ञान और वर्णाश्रम धर्म', और 'शास्त्रोक्त धर्म एवं भगवन्नाम' इन छः प्रकरणों में शुद्ध भारतीय राजनीति वर्णाश्रम की उपयोगिता धर्म की परिभाषा व लक्षण तथा भगवन्नाम की महत्ता का इतना सुन्दर वर्णन किया है कि इसको पढ़े हुये वर्तमान राजनीति के दोष पाठक के स्मृति पटल पर सजग हो उठते हैं। यह भाग उन लोगों के लिये अत्यन्त उपादेय है जो प्राचीन भारत में किसी निश्चित राजनीतिशास्त्र व धर्म के होने से इन्कार करते हैं।

द्वितीय भाग तो इस ग्रंथ का हृदय ही है। पूज्य स्वामी जी की बहुमुखी प्रतिभा एवं लेखन-शक्ति की उत्कृष्टता का अनुभव यहाँ पदे-पदे होता है। 'क्या वेद-शास्त्र का प्रामाण्य मानना अपकर्ष?' इस प्रकरण में उन सभी शंकाओं, आक्षेपों तथा आरोपों का उन्मूलन किया गया है जिन्हें आजकल के नेता आड़ बनाकर भोली-भाली जनता को ठगते हैं। वेदशास्त्र, पुराण, रामायण, महाभारत तथा मन्वादि स्मृतियों में अपनी

स्वार्थ सिद्धि के योग्य अंशों को प्रमाण रूप से उद्धृत करना और शेष को प्रक्षिप्त कह देना या अस्वीकार देना आज का फैशन बन गया है। प्रसिद्ध हिन्दू नेता एवं आर.एस.एस. के प्रमुख श्रद्धेय मा. स. गोलवलकर जी के ग्रंथ 'विचार-नवनीत' के ये शब्द वेदशास्त्रों के प्रामाण्य का कितना उपहास करते हैं-"हमारी सांस्कृतिक परम्परा का दूसरा विशिष्ट पहलू यह है कि हमने किसी भी ग्रन्थ को अपने धर्म और संस्कृति की एकमेव सर्वोच्च सत्ता नहीं माना।" पूज्य स्वामी जी तथा समस्त वैदिक सनातनी विद्वानों की मान्यता सर्वथा इसके विपरीत है और हमारे धर्म एवं संस्कृति में वेदशास्त्र की ही परमसत्ता स्वीकार की गई है। इसीलिये इस प्रकार के शास्त्र विरोधी मतों का खंडन कर वेद शास्त्रों के परम प्रामाण्य की स्थापना द्वारा पूज्य स्वामी जी ने आद्य जगद्गुरु भगवान शंकराचार्य की भाँति महान कार्य किया है। शास्त्र में विश्वास न रखने वाले पर तो 'इतः भ्रष्टः ततः भ्रष्ट' की उक्ति चरितार्थ होती है। पूज्य धर्म सम्राट की लौह लेखनी से यह सारा विवेचन पढ़ने पर आज की खोखली, निस्सार एवं निराधार विचारधारा का भंडाफोड़ हो जाता है। श्री गोलवलकर जी की पुस्तकों विचार दर्शन तथा हमारी राष्ट्रीयता में व्यक्त विचारों पर गहन गम्भीर विवेचना की है। 'राष्ट्रीयता की कसौटी', 'संस्कृति का अर्थ और वर्ण व्यवस्था', 'जाति और हिन्दुत्व : शास्त्रीय दृष्टि में', 'तीन राष्ट्रीय स्वतन्त्रताएं', 'वैयक्तिक सम्पत्ति और आर्थिक सन्तुलन', 'धर्मसापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य', 'मार्क्सवाद और स्वेतलाना', 'भारत में जनतन्त्र' और 'कौटिल्य और अध्यात्मक' ये सभी ऐसे विषय है जिन पर आज लोग मनमाने ढंग से चर्चा कर दूसरों का समय नष्ट करते रहते हैं, परन्तु पूज्य श्री ने उपर्युक्त सभी विषयों पर शास्त्र सम्मत ढंग से विचार प्रस्तुत कर अन्धकार में भटके हुये बुद्धिजीवियों को सही राह दिखायी है। एक बार पढ़ने से सारा अज्ञान-अन्धकार नष्ट हो जाता है और आधुनिक वादों के स्थापन पर शास्त्र प्रामाण्यवाद की उपादेयता का अनुभव होने लगता है।

वर्तमान युग में सुधारवाद का इतना बोलबाला है कि सनातन धर्म की परम्पराओं, मान्यताओं एवं सिद्धान्तों को सबसे अधिक आलोचना का विषय बनना पड़ता है। तथाकथित हिन्दू नेता भी सबसे अधिक वर्णाश्रम धर्म आदि की निन्दा करते हुये गौरव का अनुभव करते हैं। अतः ग्रंथ के तृतीय भाग में 'सुधारक हिन्दू और शास्त्रीय सनातन धर्म' के अन्तर्गत प्रसिद्ध हिन्दू नेता वि. दा. सावरकर के 'भारतीय इतिहास के छः स्वर्णिम पृष्ठ' ग्रंथ की तथ्यपूर्ण समीक्षा की गयी है। पूज्य स्वामी जी को कभी किसी में राग द्वेष नहीं रहा है। विपक्षी के सर्वथा युक्ति युक्त एवं शास्त्र सम्मत मत का उन्होंने सदा आदर किया है। किन्तु पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होकर, नास्तिकता के पचड़े में पड़कर या शास्त्र विरुद्ध हिन्दुत्व की आड़ लेकर यदि किसी भी नेता ने कुछ कहने अथवा लिखने का साहस किया तो उसका मुंह तोड़ उत्तर देने में पूज्य स्वामी जी कभी पीछे नहीं रहे। वस्तुतः स्वामी जी के इस प्रयास से

सावरकर जी के उपर्युक्त ग्रंथ के शास्त्रीय सिद्धान्त का दृढ़ता के साथ प्रतिपादन एवं मंडन करने में पूज्य स्वामी जी जैसा विद्वान आज दूसरा दृष्टिगोचर नहीं होता है। उनके इस प्रयास के लिये हिन्दू जाति सदा उनकी ऋणी रहेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'विचार पीयूष' पूज्य स्वामी जी का ऐसा अनमोल ग्रंथ है जिसमें विशुद्ध भारतीय वैदिक विद्या-समुद्र में अद्भुत रत्नों का संग्रह हुआ है। उन्होंने अपने तप, त्याग, वैराग्य, ज्ञान एवं भक्ति से मंथित पीयूषकणों को चुन-चुनकर इस ग्रंथरत्न में संजोया है। आज के इस भयंकर झंझावत में उत्पीड़ित मानव समाज में जिस किसी को इसके पान करने का सौभाग्य प्राप्त होगा वह उत्पीड़न से मुक्त होकर शाश्वत शान्ति का उपभोग करेगा। इस असीम अनुग्रह के लिये विचारक जगत अनन्त श्री स्वामी जी का आभारी रहेगा। वस्तुतः यह महाग्रंथ हिन्दू समाज-दर्शन के जिज्ञासुओं के लिये ईश्वरीय वरदान होने से संग्रहणीय एवं पठनीय है।

***

भक्ति सुधा

भक्त सन्तों की अपने देश में महान् परम्परा रही है। काशी में श्रीधर स्वामी, मधु सूदन सरस्वती और नारायण तीर्थ आदि में इस परम्परा के मुकुट मणि के रूप में भक्ति सम्बन्धी अनेक महान् ग्रन्थों का प्रणयन किया। स्वामी करपात्री जी महाराज काशी की इसी भक्ति-मार्गी संन्यासी परम्परा के अलंकार है। उन्होंने संस्कृत में 'भक्ति रसार्णव' ग्रन्थ की रचना कर भक्ति रस के स्वरूप का विवेचन गम्भीर शास्त्रीय पद्धति से किया है। आज तक भक्ति को स्वतन्त्र रस न मानकर भाव ही माना जाता रहा किन्तु अद्वैत वेदान्त के मूर्धन्य विद्वान् होते हुये पूज्य स्वामी जी का भक्ति को स्वतन्त्र रस की मान्यता से सुशोभित कराना उनके महान् भक्ति हृदय का परिचायक है। भक्ति के समस्त अंगों-उपांगों, क्षेत्रों तथा विधाओं की मीमांसा उनके इस ग्रंथ में मिलती है। पूज्य स्वामी जी का प्रस्तुत ग्रंथ 'भक्ति सुधा' इसी 'भक्ति रसार्णव' का अनुपूरक ग्रन्थ है। 'भक्ति रसार्णव' भक्ति का सिद्धान्त दर्शन प्रस्तुत करता है, तो 'भक्ति सुधा' भक्ति के व्यवहार-दर्शन की विवेचना करती है। वस्तुतः भक्ति के क्षेत्र में महाराज श्री की अन्यतम स्थिति का इस ग्रंथ में पदे-पदे परिचय मिलता है।

वेद-उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता, पुराण, तन्त्र तथा मन्वादि धर्मशास्त्रों में भक्ति का बड़े समारोह पूर्वक प्रतिपादन हुआ है। ज्ञान, कर्म और भक्ति को त्रिवेणी से भारतीय साहित्य की पावनता की श्री वृद्धि में सन्तों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 'भक्ति-सुधा' में स्वामी जी का यही प्रयास दृष्टि गोचर होता है। गणेश, शिव, पार्वती (दुर्गा), विष्णु तथा सूर्य इन पाँच देवताओं की पूजा का विधान सनातन धर्म के ग्रंथों में मिलता है। भगवान् शंकराचार्य ने पंचमत की स्थापना कर सगुण-साकार उपासना के अन्तर्गत उपर्युक्त पंचदेव उपासना का प्रचार किया था। निर्गुण निराकार उपासना के

लिये पर-ब्रह्मपरमेश्वर का स्वरूप उन्होंने हमारे सामने रखा। महाराज श्री ने इन समस्त वैदिक उपासनाओं का शास्त्र सम्मत ढंग से इतना सुन्दर वर्णन किया है कि उनके प्रतिपादन में भक्ति भाव स्वयं मुखरित होकर सम्बन्धित देवताओं की उपासना में संलग्न दिखाई पड़ता है। 'श्री शिव तत्त्व' (४२ पृष्ठ), 'श्री विष्णु तत्व' (७४ पृष्ठ), 'श्री भगवती तत्व' (८६ पृष्ठ), 'गणपति तत्व' (१९२ पृष्ठ) तथा गायत्री तत्व (८६ पृष्ठ) में वर्णित भक्ति भाव अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। 'माँ के चरणों में' (१५९ पृष्ठ) में वर्णित उनका आत्म-निवेदन भक्ति की पराकाष्ठा का परिचायक है। 'नामरूप की उपयोगिता' (३ पृष्ठ), 'इष्ट देव की उपासना' (८ पृष्ठ), 'मानसी आराधना' (१९ पृष्ठ), 'पंचगुणोपासना में सरलता' (२३ पृष्ठ), 'गजेन्द्र-मुक्ति' (१४९ पृष्ठ), 'शिवलिङ्गोपासना-रहस्य' (१४ पृष्ठ) तथा 'बुद्धावतार का प्रयोजन' (१४५ पृष्ठ), ऐसे गूढ़ दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विषय हैं जिनको बोधगम्य बनाना पूज्य स्वामी जी सदृश महापुरुषों के लिये ही सहज कार्य है। उन्होंने 'निराकार से साकार' (२०८ पृष्ठ), अवतार मीमांसा (२०१ पृष्ठ) और भगवदवतार का प्रयोजन (२२३ पृष्ठ) तथा 'भारत ही में अवतार क्यों?' (२२८ पृष्ठ) जैसे विषयों के विवेचन में इनके सम्बन्ध में उठने वाली समस्त शंकाओं का युक्ति-युक्त समाधान किया है। 'ज्ञान और भक्ति', 'भक्ति रसामृतास्वादन' (२६३), 'अव्यभिचार भक्तियांग' (२८२ पृष्ठ), 'भगवत् प्राप्ति' 'सबसे सगे भगवान्' (२८८), 'भगवच्छरणागति से ही गति' (२९५ पृष्ठ) और 'भगवान् का अवलम्बन अनिवार्य' (२९८ पृष्ठ) में स्वामी जी की लेखनी का चमत्कार देखते ही बनता है और बड़े से बड़े तार्किक को भी उनके सम्मुख श्रद्धावनत होना पड़ता है।

'प्रेम तत्त्व' (३०० पृष्ठ), 'भगवान और प्रेम', 'भगवत्कथामृत' (३१२ पृष्ठ) और 'प्रभुकृपा' (३१७ पृष्ठ) में भक्ति तत्त्व की मार्मिक मीमांसा की गयी है। 'श्री रामजन्म रहस्य' (३३० पृष्ठ), 'श्री कृष्ण जन्म' (३४० पृष्ठ), भगवान का मंगलमय स्वरूप (३४५ पृष्ठ) और श्रीकृष्ण बाल क्रीड़ा (३७९ पृष्ठ) के विवेचनों को पढ़कर पाठक का मन आह्लादित हो उठता है। ग्रंथ का अन्तिम भाग तो हृदय का सारसर्वस्व है। पूज्य स्वामी जी भक्ति की साक्षात् मूर्ति थे। उनके 'वेणुरव' (४१३ पृष्ठ), 'वेणुगीत' (५२९ पृष्ठ), 'चीर हरण' (५६१ पृष्ठ), 'ब्रज भूमि' (६१७ पृष्ठ), 'श्रीराललीला रहस्य' (६३३ पृष्ठ) और 'श्री राम पंचाध्यायी' (८९१ पृष्ठ), ये लेख इतने सरस एवं भक्ति समन्वित बन पड़े हैं कि इनको पढ़ते-पढ़ते भावुक हृदय भक्ति रस में डूब जाता है। यहाँ यह कहना अनुचित नहीं होगा कि पूज्य स्वामी जी ने श्रीमद्भागवत वर्णित रासलीला के महत्व को पुनः प्रतिष्ठित कर सनातन धर्म का बड़ा उपकार किया है, अन्यथा, महाराज श्री के इस क्षेत्र में पदार्पण से पहले पं. महदनमोहन मालवीय जैसे सनातनी विद्वान भी श्री मद्भागवत महापुराण से रासलीला के प्रकरण को बहिष्कृत

करने के पक्षधर बन गये थे। पूज्य स्वामी जी ने शास्त्रार्थ में ही ऐसे लोगों को निरुत्तर कर 'श्री रासपंचाध्यायी' को भागवत के पंच प्राण के रूप में प्रतिष्ठित किया। महाराज श्री भागवत के अद्‌भुत व्याख्याता एवं भगवती राधारानी के परम उपासकों में थे। इन हृदयहारी प्रसंगों पर उनका विवेचन कितना सजीव एवं सरस बन पड़ा है? यह तो भक्ति सुधा में अवगाहन करने से ही पता चलेगा। 'वेदान्त रससार' और 'सर्वसिद्धान्त समन्वय' (६२५ पृष्ठ), इन दो प्रसंगों में पूज्य श्री का वेदान्त और भक्ति से सम्बन्धित दृष्टिकोण दर्शनीय है। भक्ति और वेदान्त की एकता का प्रतिपादन वस्तुतः उन्हीं के महान् व्यक्तित्वका कृपाफल है। यह भाव आद्य श्री शंकराचार्य जी के साहित्य में भी परिलक्षित होता है।

संकल्प बल के सम्बन्ध में दो उद्धरण पाठकों के ज्ञानवर्धन हेतु उद्‌धृत हैं।

"जिस समय बुरे विचार आने लगें, उस समय अन्यमनस्क होने का प्रयत्न करें। भगवत् ध्यान से, मन्त्र जप से, श्रवण से, सत्संग से बुरे विचारों की धारा तोड़ देनी चाहिये। भले ही उपन्यास, नाटकों, समाचार पत्रों को पढ़ना पड़े, परन्तु बुरे विचारों की धारा अवश्य तोड़नी चाहिये। इसी तरह अच्छे कर्मो के लिए पहले अच्छे विचारों को लाना चाहिये। इसीलिए अच्छे शास्त्रों का अभ्यास, अच्छे पुरुषों का संग करने और पवित्र वातावरण में रहने से अच्छे विचार बनते हैं, बुरे विचार और बुरे कर्म दूर होतेहैं।" पृष्ठ ३३ पर कहा है–तात्पर्य यह है कि प्राणी के पास संकल्प नाम की एक ऐसी चीज है कि उसे कामधेनु, चिन्तामणि या कल्पतरु कुछ भी कह सकते हैं। बुरे कर्मों को छोड़कर, अच्छे कर्मो, आराधनाओं, तपस्याओं में लगे रहने पर संकल्प या विचार की शक्ति मजबूत हो जाती है। पौर्वापर्य्यानुसंधान शून्य दृढ़ संकल्प में प्राणी सब कुछ प्राप्त कर सकता है। जैसे वायु के योग से जल ही तरंग बन जाता है, उसी तरह मन की शक्ति के योग से अखण्ड बोध–स्वरूप परमात्मा ही विचार या संकल्प बन जाता है।

स आत्मा सर्वगो राम नित्योदितवपुर्महान्।
स मनाङ्‌मयी शक्ति धत्ते तन्मन उच्यते।।

ज्ञान और भक्ति के प्रकरण से पृष्ठ २३६ पर कहा है–

इन दोनों पक्षों पर विचार करने से पहले यह समझ लेना चाहिये कि भक्ति पद का प्रयोग कहाँ होता है। वैदिकों की दृष्टि में कर्म, उपासना और ज्ञान यह तीन साधन प्राणियों के कल्याण के मूल है। कर्म से मल की निवृत्ति, उपासना से विक्षेप की निवृत्ति और ज्ञान से आवरण की निवृत्ति होती है। मल विक्षेप आवरण इन तीन उपद्रवों से उपद्रुत होकर अन्तरात्मा अनन्त अनर्थो का भावी होता है।

इन तीनों साधनों से तीनों उपद्रवों के निवृत्त हो जाने पर अन्तरात्मा की शुद्ध प्रत्यक् चैतन्याभिन्न परब्रह्मस्वरूप से अवस्थिति होती है। इस पक्ष से देहेन्द्रिय, मन,

बुद्धि, चित्त और अहंकार की, संध्या, तर्पण, वैश्वदेव, अग्निहोत्र, दर्श पौणमास, चातुर्मास्यादि श्रौत–स्मार्त कर्म लक्षण चेष्टाएँ ही कर्म है। सगुण, साकार, सच्चिदानन्दधन परब्रह्माकाराकारित स्निग्ध अन्तःकरण वृत्ति परम्परा ही उपासना या भक्ति है। साथ ही सगुण, निराकार परब्रह्माकाराकारित अन्तःकरण वृत्ति परम्परा एवं निर्गुण, निराकार ब्रह्माकार वृत्ति को भी उपासना या भक्ति कहा जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि निर्गुण, निराकार, ब्रह्माकार वृत्ति को ज्ञान कहते हैं और सगुण ब्रह्माकार स्नेहालिनका वृत्ति को भक्ति कहते हैं।

वस्तुतः ब्रह्माकार वृत्ति परम्परा को कर्म और ज्ञान दोनों ही कहा जा सकता है, परन्तु सारांश यही है कि प्रमाण एवं वस्तु के परतन्त्र वृत्ति ज्ञान है और पुरुषतन्त्र मानसी वृत्ति कर्म है। वही श्रद्धा–स्नेह सहकृता उपासना या भक्ति है। ज्ञान में प्राणी परतन्त्र होता है, घ्राण से गन्ध का सन्निकर्ष होने पर इच्छा न होते हुये भी गन्ध ज्ञान होता है। अतः ज्ञान में पुरुष की स्वतन्त्रता नहीं है परन्तु ध्यान या उपासना में प्राणी स्वतन्त्र होता है।''

इन उदाहरणों से आप जान गये होंगे कि गूढ़ विषयों का निरूपण कितने सरल शब्दों में किया है। आगे चलकर एक स्थान पर महाराज श्री ने लिखा है कि 'भक्ति माँ के ही ज्ञान और वैराग्य पुत्र है।' जिसका प्रयोजन मैं समझता हूँ कि भक्त के मन में ज्ञान और वैराग्यपूर्ण रूप से उदित रहते हैं।

मार्क्सवाद और रामराज्य

स्वामी करपात्री जी केवल धर्मशास्त्रों का ज्ञान रखने वाले संन्यासी ही नहीं थे बल्कि राजनीति का ज्ञान भी उनका अतुलनीय था। समस्त भारतीय एवं पाश्चात्य राजदर्शन उन्हें हस्तामलकवत् सिद्ध थे। संवत् २०१४ में प्रथमवार गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'मार्क्सवाद और रामराज्य' पूज्य महाराज श्री का राजनीति पर लिखा हुआ अनूठा महाग्रंथ है। आधुनिक युग में मार्क्सवाद का इतना बोलबाला है कि राजनीति में इस विचारधारा का विरोध करना लोहे के चने चबाना है। आज समाजवाद (साम्यवाद) धर्म निरपेक्षतावाद तथा प्राचीन आदर्शो का नकारना प्रगति का सूचक बन गया है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय का भारतीय सिद्धान्त भुलाकर आज के राजनेता पाश्चात्य सिद्धान्तों का अन्धानुकरण करने पर लगे हुये हैं। भारतीय राजदर्शन की निरन्तर अवहेलना देखकर पूज्य स्वामी जी ने यह महाग्रंथ लिखा। इसमें समस्त भारतीय तथा पाश्चात्य राजदर्शनों की युक्तियुक्त तुलना की गयी है। युग पुरुष गाँधी जी 'रामराज्य' के प्रशसंक थे। वह स्वराज्य मिल जाने पर देश की राजनीति को आदर्शवाद पर आधारित करना चाहते थे किन्तु उनकी रामराज्य की कल्पना कभी स्पष्ट नहीं हो पायी। पूज्य स्वामी जी ने इस महाग्रंथ में मार्क्सवाद तथा समस्त पाश्चात्य राजदर्शन का खंडन कर उसके विकल्प में वेद शास्त्रों पर आधारित 'रामराज्य' की

स्थापना बड़े युक्तियुक्त ढंग से की है। उनके अनुसार समस्त भारतीय राजनीति का समावेश एक 'रामराज्य' शब्द में हो जाता है। और यह धर्मसापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य का सूचक है। धार्मिक, आध्यात्मिक सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा दार्शनिक आदि सभी दृष्टिकोणों से 'रामराज्य' की धारणा को इस महाग्रंथ में स्पष्ट किया गया है। १४ सितम्बर, १९५८ के नवभारत टाइम्स दिल्ली, बम्बई की इस ग्रंथ रत्न के सम्बन्ध में टिप्पणी यहाँ उल्लेखनीय है–"भौतिकवाद की प्रचंड आँधी ने समस्त संसार की चिन्तन धारा को झकझोर दिया है। आज संसार की लगभग आधी आबादी मार्क्सवाद से प्रेरणा लेकर अपने–अपने ढंग पर आर्थिक उन्नयन के लिये प्रयत्नशील है। भारत भी इस हवा से अछूता नहीं है। पर यहाँ की दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं को लांघकर कोई भी वाद इस देश में पनप नहीं सकता। ऐसा क्यों नहीं होगा और क्यों नहीं होना चाहिये, इसी वस्तु को स्पष्ट करने के लिये स्वामी श्री करपात्री जी की यह रचना है। प्रस्तुत ग्रंथ में न केवल भाव बल्कि समस्त पश्चिमी राजनीति शास्त्रज्ञों का गम्भीर विश्लेषण द्वारा खंडन किया है। वस्तुतः यह एक अनुपम ग्रंथ है।" इस ग्रंथ के प्रकाशन के पच्चीस वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी इसके विरोध में किसी कम्युनिष्ट लेखक का कुछ न लिख पाना इस ग्रंथ के महत्व को और भी बढ़ा देता है।

मार्क्स के कथनानुसार किसी वस्तु का विनिमय मूल्य का आधार उसमें लगने वाला श्रम है। अतः श्रम की सर्वोपरि महत्ता है। बल्कि "श्रमजीवी ही जो कच्चे माल से वस्तुएँ तैयार करते तथा कच्चा माल उत्पन्न करके वस्तु–निर्माण के स्थान पर पहुँचाते हैं, मूल्य के एकमात्र उत्पादक है।" इस तर्क का महाराज श्री ने किस प्रकार मूलोच्छेदन किया है–श्रम को बराबरी के अनुसार दाम को बराबरी की बात सर्वथा असंगत एवं अव्यावहारिक है। सीसम व चन्दन के सिंहासन बनाने में श्रम समान ही होगा पर दोनों के मूल्य में पर्याप्त अन्तर होता है। लोहे की थाली एवं सोने की थाली में श्रम के विपरीत मूल्य मिलने का व्यवहार आज भी प्रचलित है। पहाड़ से निकले हुये अपरिष्कृत हीरे में कुछ भी श्रम नहीं लगा, किन्तु लाखों गज कपड़े के बनाने में अपेक्षित महान् श्रम भी उसके बराबर का नहीं ठहरता। अतः कहना पड़ेगा कि उपयोग तथा माँग के अनुसार ही वस्तु का मूल्य होता है। यह बात श्रम एवं श्रम निर्मित पदार्थ दोनों ही के सम्बन्ध में समान रूप से लागू होती है। जल वायु अत्यन्त उपयोगी होते हुये भी जहाँ पर्याप्त मात्रा में सुलभ होते हैं वहाँ उनका कोई दाम नहीं है पर जहाँ कमी होने के कारण उनकी माँग होती है वहाँ उनका भी दाम बढ़ जाता है। यदि हीरा भी पानी या बालू के तुल्य पर्याप्त होता और उसकी माँग न होती तो इतने मूल्य का वह न होता। अथवा यदि वह शौकीन धनिकों की मानसिक आवश्यकता का पूरक न होता तो उसकी कीमत नगण्य ही होती।'

(पृष्ठ ३२०–गीता प्रेस संस्करण सं२०२४)

यह ठीक है श्रम बिना कच्चा माल तथा मशीनें व्यर्थ हैं, पर श्रम भी प्राकृतिक साधनों (कच्चे माल) के अभाव में निरर्थक ही है। अतएव श्रम को केवल सहकारी कारण माना जा सकता है। ....प्राकृतिक साधन तो श्रमानपेक्ष भी कुछ मूल्य रखते हैं, पर अन्य साधनों के अभाव में श्रम की कोई कीमत नहीं है।'' (वही पृष्ठ ३२२)

लेनिन के शब्दों में ''गन्दी नाली के जल से प्यास बुझाना ठीक नहीं, किन्तु जैसे स्वास्थ्यकर तृप्तिकर बल से ही प्यास बुझाना उचित है वैसे ही तृप्ति कर, स्वास्थ्यवर्द्धक स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में कोई भी हानि नहीं है।'' इस उच्छृखंल मत का खण्डन कितने सुन्दर ढंग से किया है-

धर्म बुद्धि से शिष्य जैसे स्वेच्छापूर्वक गुरु का अनुसरण (दास्य) करने में लज्जित नहीं होता, पुत्र जैसे माता पिता का दास्य करने में नहीं हिचकता, वैसे ही स्त्री भी अपने पति एवं सास-ससुर का दास्य या सेवन एवं अनुसरण करने में लज्जित नहीं होती।.......औद्योगिक समृद्धि के युग में भी सन्नारियों के शील स्वभाव में कोई अन्तर नहीं पड़ा।........पुरुष की अपेक्षा नारी-जाति श्रद्धालु है। वह अपने पति से भिन्न पुरुष को भ्राता, पिता, पुत्र की दृष्टि से देखना उचित समझती है, धर्महीन मनमाने यौन सम्बन्ध को वह पाप ही समझती है।

वेदों की नीति में तो मुख्य विशेषता ही यह थी कि देश में कोई स्वैरी पुरुष नहीं होता था, फिर स्वैरिणी स्त्री का तो होना सम्भव ही कैसे था। 'न स्वैरी स्वैरिणी कुतः' (छान्दो. ५/११/५) स्त्री सर्वदा ही लज्जाशील होती है, वह कभी भी अभियोक्त्री नहीं होती। वेश्या भी अभियुक्ता होने में ही सुख का अनुभव करती है।

इसी प्रकार मार्क्सवाद की अन्यान्य मान्यताओं को अपने तर्क व प्रमाणों से ध्वान्त किया है। दर्शन एवं राजनीति के अध्येताओं के लिये यह ग्रन्थ रत्न बड़ा उपादेय है।

वेद का स्वरूप और प्रामाण्य (दो भाग)

-प्रकाशक श्री धर्मसंघ शिक्षा-मंडल दुर्गाकुण्ड, वाराणसी। पृ.सं.७१४, मू.७५०

परम पूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री स्वामी करपात्री महाराज का इस ग्रन्थ के रूप में कृपाप्रसाद वैदिक सिद्धान्तों के लिये वरदान रूप है। दीर्घकाल से वेदों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के भ्रामक विचारों को फैलाने का षड्यन्त्र चला हुआ देखकर पूज्य श्री चरणों ने इस ग्रंथ रत्न में वेद सम्बन्धी आज तक की तथा भविष्य में उठने वाली शंकाओं का समस्त वैदिक वाङ्मय, युक्तियों तथा अपनी सर्वतन्त्र स्वतन्त्र प्रतिभा के द्वारा जितना सुन्दर एवं सारगर्भित समाधान किया है वैसा अन्य किसी विद्वान् द्वारा सम्भव नहीं है। वस्तुतः वेद भारतीयों के लिये ऐसा अपौरुषेय निर्देश है जिसका पालन करके हम अपनी जीवन यात्रा को सदा से सफल करते रहे हैं। वेद ही हमारे सारे धार्मिक कृत्यों का मूल है।

एक लम्बे समय से वेद पर विभिन्न व्याख्याओं द्वारा पक्ष-विपक्ष पूर्वक

विचार होता चला आ रहा है। यास्क तथा उससे भी पूर्व के वेद-व्याख्याकारों का उल्लेख हमें निरुक्त में मिलता है। वेंकट माधव, स्कन्द-स्वामी, आचार्य सायण, उव्वट तथा महीधर आदि भाष्यकारों की कृपा से वेद की परम्परागत तथा शास्त्र सम्मत व्याख्या का प्राप्त होना हमारे लिये सौभाग्य की बात है। ये भाष्यकार ही वेदार्थ को समझने में हमारे लिये अन्धे की लकड़ी के समान है। पश्चिमी भौतिकवादी सभ्यता के चहुँ ओर प्रसार होने से पूर्व इन्हीं भाष्यकारों की व्याख्याओं को मान्यता प्राप्त थी किन्तु विगत १००-१५० वर्षों से पश्चिमी तथा तदनुयायी भारतीय विद्वानों ने जो विभिन्न प्रकार की व्याख्याएं की है उनमें आर्यसमाजी व्याख्या तथा भाषा वैज्ञानिक दृष्टि वाली पाश्चात्य व्याख्या की आजकल अधिक चर्चा होने से श्रौतस्मार्त मान्यता पर आधारित सायणमार्गी आस्तिक व्याख्या से जनसामान्य का ध्यान हटने की आशंका से प्रेरित होकर पूज्य श्री चरणों ने इस महान् ग्रंथ की रचना की है। प्रस्तुत ग्रंथ में वेद के स्वरूप तथा उसके प्रामाण्य पर विचार करते हुये सभी मतों की निष्पक्ष एवं युक्तियुक्त मीमांसा की गई है।

ग्रंथ के प्रथम भाग में वेदों की अपौरुषयेता, उनका स्वतः प्रामाण्य, समस्त वेद का प्रामाण्य विध्यर्थ भावना विचार और अर्थवादों का प्रामाण्य इन पाँच प्रकरणों से सम्बन्धित सभी पूर्व पक्षों का समाधान करते हुये मीमांसा शास्त्र के सिद्धान्तों का बड़े विस्तार से विवेचन किया गया है। द्वितीय भाग में मंत्र-प्रामाण्य विचार, वेद की शाखाओं का शास्त्रीय विवेक, ब्राह्मण भाग का वेदत्व-विचार और ब्राह्मण भाग के वेदत्व पर विशिष्ट विचार इन चार प्रकरणों में अनेक वेद सम्बन्धी मतों की समीक्षा करते हुये स्वामी दयानन्द के ब्राह्मण भाग को वेद न मानने के दृष्टिकोण का युक्तियुक्त खंडन किया गया है। वेदार्थ विचार के जिज्ञासुजनों के लिये वस्तुतः यह ग्रंथ कल्पतरु है। इसमें उन्हें वेद, वेदांत, मन्वादि धर्मशास्त्र, षड्दर्शन तथा महाभारत-रामायण आदि इतिहास-पुराण पर आधारित सिद्धान्तों का एक साथ संकलन मिल जायेगा। पूज्य महाराज श्री के अन्तिम कृपाप्रसाद 'वेदार्थ-पारिजात' के ज्ञानसागर में जो पूर्णरूप से अवगाहन करना चाहते हैं उनके लिये तो यह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। अतः यह ग्रंथ सभी के लिए पठनीय है।

संघर्ष और शान्ति

-सम्पादक एवं प्रकाशक श्री सन्त शरण वेदान्ती धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।

पृ.सं. २५५, मू.५००

परम पूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा लिखित विद्वत्तापूर्ण लेख तथा उनके द्वारा लिखे हुये सारगर्भित व्याख्यानों से सनातनधर्मी भली भाँति परिचित है। इस पुस्तक में उनके द्वारा लिखे हुये विभिन्न विषयों पर सत्ताईस लेखों का संग्रह बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। उनके अनेक ग्रंथ ऐसे हैं जिन्हें जनसामान्य

के लिये समझना कठिन है किन्तु यह ऐसा ग्रंथ है जिसमें विषय, भाव तथा भाषा की योजना पूज्य स्वामी जी ने जनसामान्य को दृष्टि में रखकर की हुई जान पड़ती है। हिन्दी ग्रंथों में ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, कर्म तथा अन्य शास्त्रीय सिद्धान्तों का इतना सुस्पष्ट विवेचन मिलना अन्यत्र दुर्लभ है।

जन कल्याण को दृष्टि में रखते हुये वेद शास्त्रों के गहन तत्वों का प्रतिपादन कर उन्हें सभी के लिये सुग्राह्य बनाने की स्वामी जी की विशेषता का इस पुस्तक में पदे-पदे दर्शन होता है। विभिन्न विषयों पर लिखे गये इन सत्ताईस लेखों में पढ़ते समय पाठक को यह चुनाव करना कठिन हो जाता है कि वह कौन से लेख को पढ़ें और किस लेख को छोड़े। अतः लोक कल्याण की भावना से लिखी हुयी यह पुस्तक सभी के लिये उपयोगी सिद्ध होगी ऐसा हमारा विश्वास है।

पूँजीवाद समाजवाद और रामराज्य

-प्रकाशक श्री सन्तशरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड, वाराणसी। पृ.सं.२६७, मू.५००

भौतिक, पूँजीवाद और समाजवाद के वास्तविक स्वरूप के समझे बिना ही आवश्यक इन वादों के सम्बन्ध में भाँति-भाँति की चर्चा जहाँ-तहाँ सुनने को मिलती है। श्री रजनीश जैसे तथाकथित विचारक भी इन वादों पर पुस्तकें लिखकर जनता को भ्रमित कर रहे हैं। ऐसे विचारक स्वयं भी गुमराह होते हैं और दूसरों को भी गुमराह करते हैं। अतः ऐसे विचारकों की युक्तियों का खंडन राष्ट्रहित की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण समझकर परम पूज्य धर्मसम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने न केवल राष्ट्र का बल्कि सम्पूर्ण वैचारिक जगत् का महान् उपकार किया है। स्वामी जी का यह प्रयास ही 'पूँजीवाद, समाजवाद और रामराज्य' पुस्तक के रूप में उनकी राजनैतिक प्रतिभा को उजागर कर रहा है। इस पुस्तक के देखने से पता चलता है कि पूज्य स्वामी जी केवल सन्यासी या धर्म विचारक ही नहीं वरन् उच्चकोटि के राजनैतिक विद्वान् भी थे।

श्री रजनीश ने अपनी 'समाजवाद से सावधान' पुस्तक में समाजवाद को भौतिक पूँजीवाद का विकसित रूप मानकर एक कपोल कल्पित कहानी से पुस्तक का आरम्भ करते हुये समाजवाद की एक कोरी कल्पनामात्र सिद्ध करने का प्रयास किया है। उनकी पुस्तक का उद्देश्य पूँजीवाद का समर्थन करना प्रतीत होता है। वह भौतिक समाजवाद की अपेक्षा भौतिक, पूँजीवाद को श्रेष्ठ मानते हैं। स्वामी जी ने सिद्ध किया है कि लोकतंत्र का सच्चा विकास न तो भौतिक, पूँजीवाद में और न भौतिक समाजवाद में ही सम्भव है। इसके लिये तो अध्यात्मवाद पर आधारित धर्मनियन्त्रित पक्षपात विहीन रामराज्य ही उपयुक्त है। धर्म विरोधी आधुनिक वादों से मानव समाज को मुक्ति प्रदान करने और धर्म सापेक्ष राजदर्शन को समझने के लिये यह पुस्तक सभी के लिये पठनीय है।

''विदेश यात्रा'' : शास्त्रीय पक्ष

–प्रकाशक श्री सन्तशरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड वाराणसी। पृ.सं.११७ मू.२००

यद्यपि वर्तमान युग में आर्थिक दृष्टिकोण की प्रधानता के कारण विदेश यात्रा को गौरव, आर्थिक लाभ तथा प्रतिष्ठा का केन्द्रीय बिन्दु समझा जाता है। आज के युग में विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता तथा धर्म–विरुद्धता बताकर उसका निषेध करने वाला बिरला ही हो सकता है। वस्तुतः हमारी सम्पूर्ण आचार परम्परा का एकमेव आधार अनादि अपौरुषेय वेद तथा तदनुकूल व्यवस्था देने वाले शास्त्र ही हैं। उन्हीं शास्त्रों का आश्रय लेकर लिखी गयी इस पुस्तक में महाराज श्री ने शास्त्रीय तथ्य से अवगत कराते हुये विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता एवं धर्म विरुद्धता पर बड़े सुन्दर ढंग से प्रकाश डाला है।

यद्यपि आजकल अनेक सनातनी विद्वान साधु एवं आचार्य श्री विदेश यात्रा का न केवल समर्थन ही कर रहे है वरन् धर्म प्रचार की आड़ लेकर स्वयं विदेशों में घूम रहे हैं तथापि भले ही उनका विदेशी जाना या विदेश यात्रा का समर्थन करना विश्व हित की भावना से ही हो तथापि इसका मूल कारण उनकी वासना ही मानी जायेगी और उनकी वासना के आधार पर न शास्त्रीय व्यवस्था को बदला जा सकता है और न ऐसी अशास्त्रीय व्यवस्थाओं से विश्व का वास्तविक हित ही हो सकता है। इस दृष्टि से पूज्य स्वामी जी ने परम अनुग्रह कर इस पुस्तक में विदेश यात्रा के सम्बन्ध में निष्पक्ष रूप से जो शास्त्रीय पक्ष प्रस्तुत किया है वह उनकी अनन्य शास्त्रीय निष्ठा का तो प्रतीक है ही साथ ही उससे यह भी संकेत मिलता है कि वेद शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुसार आचरण में शैथिल्य या अन्यथा भाव अपनाना भारी विडम्बना ही है। जो लोग यह जानने को उत्सुक है कि वेद शास्त्रों में विदेश यात्रा का क्यों निषेध किया गया है? उन्हें इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। पचास शीर्षको में लिखा हुआ यह एक विस्तृत लेख धर्मसम्राट् की लौह लेखनी के चमत्कार का परिचायक है।

श्रीविद्या वरिस्या

–प्रकाशक अखिल भारतीय धर्मसंघ वाराणसी। पृ.२६४, मू. ८००

परम पूज्य धर्मसम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज श्री विद्या उपासना के महान् अधिकारी विद्वान् एवं साधक थे। उनकी इस परम विद्या में अबाध गति थी। उनका ''दीक्षानाम श्री षोडशनन्दनाथ'' था। उनके द्वारा संस्कृत में लिखे गये 'श्रीविद्यास रत्नाकर' ग्रंथ को उपासकों में अत्यन्त लोक प्रियता मिली और वह शीर्घ ही समाप्त हो गया। उपासकों की बार–बार माँग से द्रवीभूत होकर महाराज श्री ने यह श्रीविद्या पर दूसरा ग्रन्थ संस्कृत में लिखकर आध्यात्मिक जगत् पर जो उपकार किया है उसके

लिये समस्त श्री विद्या उपासक उनके ऋणी रहेंगे। बारह प्रकरणों में समस्त पूजा का विधान का शास्त्र समस्त निरूपण किया गया है। परिशिष्ट में अनेक आवश्यक विषयों के निरूपण से उपासकों के लिये ग्रन्थ की उपयोगिता बढ़ गयी है।

इस पुस्तक में श्री क्रमोपासकों के लिये प्रातः काल से लेकर रात्रि पर्यन्त किये जाने वाले तथा अन्य अपेक्षित नैमित्तिक आदि जो कृत्य हो सकते हैं उन सबका संग्रह इस एक ही पुस्तक में उपासकों को मिल सकता है। सांगोपांग पूजा होम आदि का विधान तथा उपासकों के लिये जो भी आवश्यक है उस सबका श्री चरणों ने इस पुस्तक में बड़ा सुन्दर निरूपण किया है। जन्म-जन्मांतर के पुण्यों के उदय होने पर ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है और उनकी कृपा से ही शिष्य को सिद्धि लाभ होता है। वस्तुतः स्वामी जी महाराज श्रीविद्या के ऐसे ही महान् साधक थे जिन्होंने परम गोपनीय इस विद्या को भी लोक कल्याण की भावना से प्रभावित होकर प्रकाशित करने में संकोच नहीं किया। सभी श्रीविद्या उपासकों के लिये महाराज श्री का यह कृपा प्रसाद सेवनीय है।

धर्मकृत्योपयोगि-तिष्यादिनिर्णयः कुम्भपर्व-निर्णयश्च

-प्रकाशक सन्त शरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।

यह लघुकाय संस्कृत में लिखी हुयी पुस्तक इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि धर्म कृत्यों के लिये उपयोगी तिथि आदि का निर्णय में सूर्य सिद्धान्त के गणित पर आधारित पंचांगों को मान्य माना जाये अथवा दृग्गणित पद्धति वाले पंचांगों को मान्य जाये-इस विवाद पर स्वामी जी के शास्त्र-सम्मत विचारों का इस पुस्तक में संकलन हुआ है। बड़े लम्बे समय से ऐसे विवादों को लेकर अधिकारी विद्वान्, आचार्य तथा महात्मा तत्तत् विषयों पर अपनी लेखनी चलाते रहे है। पूज्य स्वामी जी की यह पुस्तक भी उसी विचार विमर्श की परम्परा में आती है। समय-समय पर होने वाले कुम्भ महापर्व, अधिक और क्षय मास एवं अन्यान्य महत्वपूर्ण पर्वों के निर्णय के लिये शास्त्र समस्त विचार सामग्री इस पुस्तक में बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत की गई है। शंकराचार्यों, वैष्णवाचार्यों तथा अन्य धर्माचार्यो द्वारा प्रशंसित इस पुस्तक में अनेक शास्त्रीय समस्याओं का समाधान बड़े प्रभावी ढंग से किया गया है। पुस्तकों के अन्त में महाकुम्भ पर्व के निर्णय के सम्बन्ध में हिन्दी में किया हुआ विवेचन उन सभी के लिये उपयोगी है जो इन पर्वों के शास्त्रीय महत्व के परिचित है। कुल मिलाकर यह पुस्तक सभी धर्म विश्वासी लोगों के लिये संग्रहणीय है।

क्या संभोग से समाधि?

-प्रकाशक-सन्त शरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड वाराणसी, पृ.सं.१०५, मू.२.००

यह पुस्तक पूज्य धर्म सम्राट श्री स्वामी करपात्री महाराज के विचारों का संकलन है। प्रसिद्ध सनातन धर्मी मासिक पत्र 'कल्याण' के सम्पादक श्री राधेश्याम

खेमका जी ने महाराज श्री के विचारों को प्रस्तुत विषय पर संकलित कर जनता जनार्दन की बड़ी सेवा की है क्योंकि आज के युग में पत्र-पत्रिकाओं, सिनेमाऔर रजनीश जैसे विचारकों की कृपा से समाज में सेक्स का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। आचार्य रजनीश द्वारा लिखित 'सम्भोग से समाधि की ओर' पुस्तक पढ़कर प्रत्येक को यह अनुभव होना स्वाभाविक है कि हमारे शास्त्रों, ऋषि-मुनियों तथा विचारकों ने सेक्स को या तो ठीक निरूपण नहीं किया जिसके फलस्वरूप समाज में अनेक बुराईयों का जन्म हुआ। कितना भयंकर विषय वमन किया इस विचारक ने सेक्स को खुली छूट देने से समाज नष्ट भ्रष्ट ही होगा। भारतवर्ष की इस मान्यता को नकारने वाले रजनीश के विचारों का युक्ति-युक्त खंडन इस पुस्तक में हुआ।

रामायण महाभारत काल मीमासा

-प्रकाशक-सन्त शरण वेदान्ती धर्मसंघ प्रकाशन दुर्गाकुण्ड वाराणसी, पृं.सं.५३, मू. २५

यह स्वल्प कलेवर पुस्तक परम पूज्य धर्म सम्राट श्री स्वामी करपात्री महाराज के उत्कृष्ट ऐतिहासिक ज्ञान का परिचय देती है। इस पुस्तक को लिखने का उनका एकमात्र यही उद्देश्य है कि रामायण तथा महाभारत के रचनाकाल एवं ऐतिहासिकता के संबंध में जो अनेक प्रकार के मतमतान्तर आज के विचार जगत् में प्रचलित हैं उनकी पूर्ण मीमांसा करके युक्ति-युक्त आधार पर इन दोनों महान् ग्रन्थों की ऐतिहासिकता और रनचाकाल का ठीक-ठीक निरूपण किया जा सके। पुस्तक के प्रारंभ में ही महाभारत की ऐतिहासिकता और उसके एक लाख श्लोक होने के सम्बन्ध में भारतीय साहित्य में सैकड़ों प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि महाभारत एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। इसमें वर्णित युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम आदि काल्पनिक न होकर ऐतिहासिक हैं। ये मन में उठने वाली दैवी-आसुरी प्रवृत्तियों के प्रतीकमात्र नहीं है। ऐसे ठोस अकाट्य प्रमाणों का संग्रह इस पुस्तक में हुआ है जिन्हें पढ़कर फिर कभी इस प्रकार का भ्रम नहीं होता है।

चातुवर्ण्य-संस्कृति-विमर्श

(प्रथमो भागः)-प्रकाशक-गोवर्धन मठ, पुरी उड़ीसा, पृं.सं. ३२४, मूल्य ६.००

वर्णाश्रम व्यवस्था हिन्दू धर्म की आत्मा है। इस पृथ्वी पर लोक कल्याणकारी अनेक व्यवस्थाएँ है किन्तु उनमें कोई ऐसी स्थायी व्यवस्था नहीं है जैसी वर्ण व्यवस्था है। समस्त वैदिक सिद्धान्तों का सार यही वर्णव्यवस्था है। लोक कल्याण के लिए परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने समस्त वेदशास्त्रों का मंथन करके अमृतरूप इस ग्रंथ का संस्कृत में निर्माण किया। वस्तुतः इस युग में बढ़ते हुए धर्म विरोध का उन्मूलन करने के लिए यह विशाल ग्रन्थ लिखा गया है।

यह ग्रन्थ दो भागों में प्रकाशित हुआ है। प्रथम भाग में जन्म से वर्णवाद,

वर्णयवाद, एकवाद, आजीविकावर्णवाद, वर्णसंबंधी विचार और वेदाध्ययनाधिकार आदि के संबंध में विस्तार से विचार किया गया है। विश्वामित्र, वाल्मीकि, कक्षीवान्, सत्यकाम तथा ऐलूषक आदि के ब्राह्मणत्व सामयिक विषयों पर भी बड़े विस्तार के साथ युक्ति-युक्त विचार के साथ वर्णव्यवस्था सम्बन्धी बहुत सी शंकाओं का समाधान इस पुस्तक में किया गया है। स्वामी जी ने शास्त्रीय गुत्थियों को इस प्रकार से सुलझाया है कि पाठक को सहज ही शास्त्र का तात्पर्य अवधारित होने लगता है। पुस्तक की संस्कृत भी सरल सुबोध तथा समधुर होने से विषय को समझने में सहायक होती है।

यहाँ दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि अथक प्रयास करने पर भी इस महान् ग्रन्थ का हमें द्वितीय भाग प्राप्त नहीं हुआ है प्रथम भाग के सम्पादकीय में प्रकाशित विषय सूची को देखने में पता चलता है कि वस्तुतः यह ग्रन्थ वर्ण व्यवस्था का विश्वकोश है। जातिभेद के संबंध में विदेशियों के विचार, जाति का परिष्कार, वेद का प्रामाण्य, गोत्र प्रवर-विमर्श और पुराण का प्रामाण्य आदि गम्भीर विषयों का विवेचन द्वितीय भाग में हुआ है। इन सब विषयों को देखने पर यही कहना पड़ता है कि यह महान् ग्रन्थ वेदशास्त्र प्रतिपादित वर्णव्यवस्था के समर्थकों के लिये तो वरदान है ही किन्तु विरोधियों के लिये भी इस दृष्टि से उपयोगी है कि उन्हें अपने विचारों को ठीक प्रकार से सरकार के सम्मुख अन्य सभी राजनैतिक दलों की दयनीय स्थिति होने से आज सच्चे मार्ग दर्शन का संकट देश के सामने आ गया है। अराजकता की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गयी है और उसका भविष्य अन्धकारमय होने से कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए विचारशील लोगों के लिए यह जरूरी हो गया है कि वे सरकार की वर्तमान समाजवादी नीतियों पर गम्भीरपूर्वक विचार करें। इस लेख में सारी परिस्थितियों का पूज्य स्वामी जी ने बड़ा सामयिक एवं युक्तियुक्त विवेचन करके रामराज्य शासन प्रणाली द्वारा ही देश की वास्तविक प्रगति होने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। सभी विचारशील व्यक्तियों के लिये यह लेख वस्तुतः मननीय है।

अहमर्थ और परमार्थसार

प्रकाशक ठा. राधामोहन सिंह स्वर्गाश्रम धाम, तिलकराम का [हाता]
पो. बड़का राजपुर, ज़ आरा पृ. सं. २७०, मू.६.००

परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज ने अनमोल ग्रंथ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' में चार्वाक मत प्रायः मार्क्स के नास्तिक दर्शन के खण्डन करने के लिये आत्मा के स्वरूप पर विचार किया गया है। वेद, पुराणेतिहास, तन्त्र, आगमादि का प्रामाण्य मानने वाले सभी आस्तिक कार्यकारण संघात से भिन्न आत्मा मानते हैं। अनेक सामान्य ज्ञानी तथा भगवत् भक्त आचार्यों ने ज्ञाता अहमर्थ को ही आत्मा माना है और इसी सिद्धान्त के अनुसार अगणित महापुरुष कल्याण के भागी हुये हैं किन्तु फिर भी

कुछ लोगों ने उक्त पुस्तक में प्रतिपादित अहमर्थ के अनात्मत्व पर शंकायें उठायी हैं। इसी कारण आत्मस्वरूप पर पृथक् रूप से विचार करने के लिये इस ग्रन्थ का स्वामी जी ने प्रणयन कर धार्मिक जगत् का बड़ा उपकार किया है। इस ग्रन्थ में वेदान्त सम्बन्धी गूढ़ विषयों का इतनी सरल भाषा में और इतने सरल ढंग से प्रतिपादन किया गया है कि इसे पढ़कर हर व्यक्ति कल्याण मार्ग पर अग्रसर हो सकता है।

सम्पूर्ण पुस्तक दो खण्डों में लिखी गयी है। प्रथम खण्ड में वर्णित चौबीस विषयों में आत्मा के स्वरूप का विवेचन बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। उनमें संविद् या आत्मा, आत्मा का स्वप्रकाशत्व, अहमर्थ एवं आत्मा, अहमर्थनाश आत्म नाश नहीं, अहमर्थ एवं भूमा विद्या, ज्ञान का स्वप्रकाशत्व तथा शुद्धात्म साक्षात्कार और भक्ति आदि विषयों के प्रतिपादन को पढ़ने से प्रत्येक को आत्मा के वास्तविक स्वरूप का बोध हो सकता है। वस्तुतः आत्मा स्वप्रकाश, अखण्ड, नित्य, सर्वाधिष्ठान, सर्वव्यापक, सर्वद्वैतविवर्जित, सर्वश्रुति, स्मृति, पुराण, आगम प्रसिद्ध चैतन्य, वाणी, मन से अत्यन्त विदूर 'अहं' पद का लक्ष्य है। यह ग्रन्थ इन रत्नों का रत्नाकर है। इसके द्वारा परमार्थ तत्व का श्रवण, मनन और निदिध्यासन पथ प्रशस्त किया है। इसको अपनाकर मुमुक्षु साधक 'अहं' पद लक्ष्य तत्व को उपलब्ध कर कैवल्य पद में अवस्थित होकर कृतकृत्य हो सकता है।

पुस्तक के द्वितीय खण्ड में साक्षात् शेष भगवान् महर्षि पतञ्जलि के लोक प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ 'परमार्थ सार' की शास्त्र सम्मत व्याख्या की गयी है। पचासी आर्या छन्दों में निबद्ध इस महान् ग्रन्थ 'परमार्थ सार' की व्याख्या भौतिकता की ओर तेजी से अग्रसर होने वाले विश्व के तत्त्व जिज्ञासुओ के लिए कल्याण पथ का मार्ग दर्शन करने वाली है। देश की सार्वभौम उन्नति केवल भौतिक विकास से नहीं हो सकती है, साथ-साथ अध्यात्म की ओर भी लोगों की रुचि बढ़ायी जाये, तभी वास्तविक लोक कल्याण एवं मंगल हो सकता है। इसलिये महाराज श्री की यह अनुपम कृति सभी कल्याणकामियों के लिए संग्रहणीय है।

वेदस्वरूप विमर्श

प्रकाशिका-भक्ति-सुधा साहित्य परिषद् कलकत्ता। पृ.सं.४४७, मू. ७.००

वेद समस्त जगत् का कारण है। वेद से ही स्थावर्-जंगमात्मक विश्व का प्रादुर्भाव हुआ है। अतः तप के प्रभाव के बिना उस सर्वकारण वेद के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करने में कोई भी समर्थ नहीं है। पुराण, इतिहास, दर्शन आदि उपांगों तथा शिक्षा आदि छः अंगों की सहायता से वेद के तात्पर्य को समन्वित करके आचार्य वेंकट माधव, सायण, उव्वट तथा महीधर आदि प्राचीन भाष्यकारों ने अपने भाष्य ग्रन्थों में बड़े समारोहपूर्वक प्रतिपादित किया है और गौ-सेवा सौ वर्ष पहले इन्हीं

भाष्यों के अनुसार लोग धर्म कार्यों में प्रवृत्त रहते थे किन्तु पाश्चात्यों का अन्धानुकरण करने वाले नास्तिक तथा अर्ध नास्तिक भारतीय विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध में ऐसे अनर्गल तथा शास्त्र विरुद्ध मतों का प्रवर्तन किया जिनसे आस्तिक जनता दिग्भ्रमित होकर कर्तव्यविमूढ़ बन गयी। स्वामी दयानन्द तथा उनके अनुयायी आर्यसमाजी विद्वानों के भाष्यग्रन्थों से धर्म के क्षेत्र में ऐसी अराजकता फैली कि आज हिन्दू धर्म का कोई ग्रन्थ, सिद्धान्त और मान्यता सर्वमान्य नहीं रह गये हैं। हिन्दू धर्म की इस दुरवस्था को देखकर परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया। संस्कृत में लिखे इस ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर दयानन्द तथा तदनुयायियों के भाष्यों की युक्तियुक्त समालोचना करके आचार्य सायण-महीधर आदि प्राचीन भाष्यकारों के भाष्यों की प्रामाणिकता का बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादन किया है।

यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में वेद के स्वरूप का शास्त्र सम्मत विवेचन हुआ है। द्वितीय भाग में उसके प्रामाण्य पर विचार करते हुये वेद का स्वतः प्रमाण सिद्ध किया गया है। वेदों के लिये अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। धर्म तथा ब्रह्म के विचार में उसके सर्वोच्च प्रामाण्य का विवेचन जिज्ञासुओं के लिये वरदान रूप है। तृतीय भाग में वेद को अनादि, अपौरुषेय तथा नित्य सिद्ध किया गया है। वस्तुतः वेद का निर्माण किसी भी काल में किसी भी व्यक्ति के द्वारा नहीं हुआ है। वह शाश्वत होने से ईश्वर की भी रचना नहीं है। ईश्वर केवल वैदिक सम्प्रदाय का प्रवर्तन करते है। चतुर्थ भाग में दयानन्द के इस मत का बड़ा युक्तियुक्त एवं शास्त्रसम्मत ढंग से खण्डन किया गया है कि ब्राह्मण भाग वेद नहीं है, केवल मंत्रभाग ही वेद है। समस्त प्राचीन आचार्यों, ग्रन्थों तथा सिद्धान्तों को उद्धृत करते हुये पूज्य स्वामी जी ने इस पुस्तक में बड़े समारोह के साथ यह सिद्ध किया है कि ब्राह्मण भाग भी वेद है। मंत्र और ब्राह्मण इन दोनों की संज्ञा वेद है। वेद के कारण एक भाग को वेद मानना और दूसरे भाग को वेद न मानना वस्तुतः दुराग्रह का ही दुष्परिणाम है। इस प्रकार के अनेक शास्त्र सम्मत सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाला यह ग्रन्थ उन सभी लोगों के लिये संग्रहणीय है जो वेद के वास्तविक स्वरूप तथा सिद्धान्तों को जानने के इच्छुक है। वेद के अनुसन्धानकर्त्ताओं के लिए तो यह ग्रन्थ एक प्रभावशाली मार्गदर्शक के रूप में सहायक सिद्ध हो सकता है। वस्तुतः वैदिक ज्ञान का एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ है जिसका अनुवाद होने पर संस्कृत न जानने वालों को भी वेद का यथार्थ ज्ञान हो सकता है।

<u>भक्ति-रसार्णव</u>

प्रकाशिका-भक्ति-सुधा-साहितरू परिषद्, १४५ काटन स्ट्रीट कलकत्ता पृ.सं.२४९,
मूल्य ५.००

परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का यह संस्कृत का

ग्रंथ भगवान् की निरतिशय भक्ति का रस–समुद्र है। इसमें भक्ति संबंधी सिद्धांतों का जितना शास्त्र सम्मत तथा युक्तियुक्त विवेचन हुआ है उतना अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं हुआ है। जीवन में भक्ति का अत्यन्त महत्व है। इसके बिना व्यक्ति का ज्ञान–कर्म सफल नहीं होता है। समस्त ग्रन्थ में ग्यारह प्रकरणों में भक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ है। पहले प्रकरण में भजनीय तत्व के रूप में परब्रह्म परमात्मा का प्रतिपादन करके दूसरे प्रकरण में उसे शास्त्र द्वारा जानने योग्य बताया गया है। ब्रह्म तत्व के स्वरूप के संबंध में विभिन्न दार्शनिक मतों की मीमांसा करते हुए तीसरे प्रकरण में भगवान् श्रीकृष्ण की परम–ब्रह्मता को वैदिक प्रमाणों के आधार पर स्पष्ट किया गया है। चतुर्थ प्रकरण में ऋग्वेद के अपाला सूक्त के वास्तविक तात्पर्य और भगवान् श्रीकृष्ण की प्रधानता को विशेष रूप से स्पष्ट किया है।

पाँचवे प्रकरण में भगवान् कृष्ण और भगवती राधा की वेदशास्त्र प्रतिपाद्यता पर बड़े विस्तार से प्रकाश डाला है। इस विवेचन को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान् कृष्ण और राधा का वर्णन केवल पुराणों में ही नहीं हुआ है वरन् दोनों का इतिहास वेद सिद्ध होने से परम प्रमाण है। भगवान् विष्णु का महत्व बाद में हुआ है पहले इन्द्र का ही महत्व था। इस मान्यता का खण्डन करते हुए छटे प्रकरण में महाराज श्री ने ऋग्वेद के वृषाकपिसूक्त की शास्त्र सम्मत व्याख्या करके भगवान् विष्णु की पूज्यता का अनादित्य बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादन किया है। सातवें प्रकरण में ऋगवेद के पुरुष सूक्त और देवी सूक्त के परम तात्पर्य को स्पष्ट किया गया है। इन दोनों सूक्तों के समस्त मंत्रों की व्याख्या करते हुए समस्त शास्त्रों का तात्पर्य परमानन्द रूप भगवती–अधिष्ठित परब्रह्म में बताकर सीता–राम तथा राधाकृष्ण की उपासना की सर्वश्रेष्ठता प्रतिपादित की गयी है।

आठवें प्रकरण में ग्रन्थ के सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषय 'रस स्वरूप' विमर्श तथा भक्तिरस का बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादन हुआ है। इसमें काव्य शास्त्रों में प्रतिपादित रस सिद्धांत का सांगोपांग विवेचन करते हुए भक्ति रस को दसवां रस सिद्ध किया है। इससे पूर्व भक्तिरस को स्वतन्त्र रस न मानकर शृंगार रस का भाव माना जाता था किन्तुआश्चर्य है अद्वैत वेदांत के आचार्य होते हुए पूज्य स्वामीजी ने भक्ति रस की दसवें रस के रूप में स्थापना करके साहित्यिक जगत् एवं भक्ति के क्षेत्र में नयी क्रांति का सूत्रपात किया। जो कार्य भक्ति के बड़े–बड़े आचार्यों ने नहीं किया उसे अद्वैत वेदांत के आचार्य द्वारा किया जाना सचमुच में बहुत बड़ा आश्चर्य है। इस महान्कार्य के लिए स्वामीजी भक्ति जगत् में सदा स्मरण किये जायेंगे। यही कारण है उत्तर प्रदेश सरकार ने पांच हजार रुपये के पुरस्कार से इस महान् ग्रन्थ को पुरस्कृत किया।

नवें प्रकरण में भगवद्धाम के स्वरूप और उसकी प्राप्ति के संबंध में मीमांसा की गयी है। दसवें प्रकरण में निराकरण ब्रह्म की शरणागति का प्रतिपादन हुआ है।

अन्तिम ग्यारहवें प्रकरण में भक्ति को मुक्ति से सौगुना अधिक श्रेष्ठ सिद्ध किया गया है। वस्तुतः यह ग्रन्थ स्वामी जी की अमर कीर्ति का परिचायक है। केवल यही ग्रन्थ उन्हें युग–युगों तक अमर रखने के लिये पर्याप्त है। यदि इस ग्रन्थ–रत्न का अनुवाद प्रकाशित हो जाये तो इस ग्रन्थ के प्रचार–प्रसार से सामान्य व्यक्ति भी लाभान्वित हो सकते हैं। भक्त जनों का तो यह सर्वस्व ही है। जिज्ञासुओं तथा शोधकर्ताओं के लिए यह वरदान रूप होने से संग्रहणीय है।

वेद प्रामाण्य मीमांसा

प्रकाशक–धर्मसंघ शिक्षा मंडलम् दुर्गाकुण्ड, वाराणसी पृ.सं. ७८, मू. १.००

वेद के स्वरूप तथा प्रामाण्य का विवेचन करने वाला यह संस्कृत का लेख परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का परम वैदुष्य तथा शास्त्रीय ज्ञान के चरमोत्कर्ष को प्रकट करता है। वेद की अनादिता, अपौरुषेयता तथा नित्यता को भारतीय दर्शन में एक स्वर से स्वीकार किया गया है किन्तु नास्तिक, अर्ध नास्तिक, जैन, बौद्ध तथा आधुनिक पाश्चात्य एवं तदनुयायी आर्यसमाजी विचारकों ने अनेक प्रकार के कुतर्कों, शास्त्र विरूद्ध सिद्धांतों तथा अनर्गल युक्तियों द्वारा वेद के प्रामाण्य को सन्देहास्पद बनाकर आस्तिक जनता को भ्रमितकर दिया था। इसलिये वेंकटमाधव, सायण, महीधर तथा उव्वा आदि महान् भाष्यकारों के होते हुए भी वेद के संबंध में अनर्गलन मतों का प्रचार दिन प्रतिदिन बढ़ता चला गया। वैदिक सिद्धांतों की की इस दुरवस्था से उद्विग्न होकर पूज्य धर्म सम्राट् वेदोद्धारक के रूप में जनता के सम्मुख आए और उन्होंने अनेक वैदिक ग्रन्थों का प्रणयन किया। प्रस्तुत लेख उनके उसी महान् प्रयास का फल है। इस लेख में स्वामी जी ने वेदों के सनातन स्वरूप को स्पष्ट करते हुए प्राचीन तथा अर्वाचीन विरोधियों की सभी कुशंकाओं, आक्षेपों तथा आपत्तियों का इतने प्रभावशाली ढंग से समाधान किया है कि इसका आद्योपान्त पढ़ लेने पर वेद संबंधी समस्त सिद्धांत स्पष्ट हो जाते है और फिर मनुष्य किसी प्रकार जाल में नहीं फंसता है। इसका लेख का सभी को तभी लाभ हो सकता है जब इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो जाये। तत्त्व जिज्ञासुओं के लिये यह मननीय लेख शोधकर्ताओं का मार्गदर्शक होने से वैदिक ज्ञान का अपूर्व कोश है।

रामराज्य

प्रकाशक–सनातन धर्म प्रकाशन, मेरठ पृ.सं. ५०, मू. ५० पैसा

रामराज्य भारतीय शासन पद्धति का वह आदर्श रूप है जिसका वेद, रामायण, महाभारत तथा पुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों से लेकर आधुनिक साहित्य में बड़े आदर के साथ वर्णन हुआ है। राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद भारत को आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की परम आवश्यकता है किन्तु खेद है कि इस महान् आवश्यकता पर हमारे

बहुत कम राष्ट्रीय नेताओं ने समुचित ध्यान दिया है। अतः देश का वास्तविक निर्माण एक दिवा स्वप्न बन कर रह गया है। वर्तमान युग में हजारों वर्षों पश्चात् परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ऐसे महान् राष्ट्रीय आचार्य हुए जिन्होंने देश की आध्यात्मिक उन्नति के लिए अथक उद्योग किए। उन्हीं महापुरुष की कृति 'रामराज्य' में समाज की आध्यात्मिक स्वतंत्रता और उन्नति की प्राप्ति के लिये जो चिंतन हुआ है उसकी सहायता से राष्ट्र का सर्वाङ्गीण विकास करने में हम समर्थ हो सकते हैं। यह रामराज्य क्या है? पूर्णतम पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के अभाव में रामराज्य के क्या अर्थ है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए पूज्य स्वामी जी ने हमारी उस प्राचीन शासन प्रणाली का प्रतिपादन किया है, जिसे रामायण में 'रामराज्य' महाभारत में 'धर्मराज्य' और पुराणों में 'सुराज्य' के नाम से पुकारा गया है। धर्म नियंत्रित पक्षपात शून्य शासन ही हमारा आदर्श है। अपने देश में आज जितना भी भ्रष्टाचार, अत्याचार तथा दुराचार फैला है उसका एकमात्र कारण धर्म निरपेक्ष शासन है। राजनीति से धर्म का क्या संबंध है? राष्ट्रोन्नति में धर्म का क्या स्थान है? विश्व शांति धर्मराज्य से ही कैसे सम्भव हो सकती है? तथा हमारा शासन विधान कैसा होना चाहिये? इन्हीं सब प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में दिया गया है। जो व्यक्ति धर्म को राजनीति से सर्वथा पृथक् रखने में ही देश का कल्याण समझते हैं उन्हें इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। वस्तुतः सभी विचारशीलों के लिये यह संग्रहणीय है।

वाजसनेयी माध्यन्दिनी शुक्ल यजुर्वेद संहिता भाष्य

प्रकाशक–श्री राधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थानम् वृन्दावनम्, पृ.सं.२९६, मू. ६५.००

विश्वविख्यात 'वेदार्थपारिजात' नामक भाष्य भूमिका के पश्चात् परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने इस ग्रंथ का प्रणयन किया। इस ग्रंथ की चिरकाल से प्रतीक्षा थी। स्वामीजी से पूर्व आधुनिक युग में अनेक भाष्यकारों ने सनातन धर्मानुकूल भाष्यों की रचना तो की किन्तु स्वामी दयानन्द आदि शास्त्र विरूद्ध भाष्यकारों के अर्नगल मतों तथा प्रकरण विरूद्ध व्याख्याओं का उन्होंने खंडन किया जिससे आर्यसमाजी भाष्यकारों की गत सौ वर्षों में बाढ़ सी आती चली गयी और वेद पर एकाधिकार के मिथ्या अभियान से ग्रस्त होकर वे वेद के नाम पर मनचाहा छापकर आस्तिक जनता को ठगते रहे। ऐसी स्थिति में चारों संहिताओं का सनातनी भाष्य दुर्लभ होने से आर्य समाजी भाष्य सनातन धर्म के लिये चुनौती बनते चले गये।

आजकल अधिकतम जनता वेदों के हिन्दी अनुवाद पढ़ना अधिक पसंद करती है। आचार्य स्कन्द स्वामी, वेंकट माधव, उव्वट, सायण तथा महीधर आदि प्राचीन वेद–भाष्यकारों ने ब्राह्मण ग्रन्थ, सूत्र ग्रन्थ तथा परम्परा आदि के आधार पर अत्यन्त श्रेष्ठ भाष्यों का निर्माण कर वेदों के वास्तविक अर्थों का विशद रूप में विवेचन

किया है। इन आचार्यों के भाष्य केवल संस्कृत में लिखे होने से सामान्य जनता उनसे अपरिचित रही इसलिये लम्बे समय से ऐसे वेदभाष्यों की आवश्यकता थी जिनमें आर्य-समाजी तथा पाश्चात्य भाष्यकारों के शास्त्र विरोधी मतों का निराकरण करते हुए शास्त्र सम्मत सिद्धांतों का प्रतिपादन भी किया गया हो। तथा साथ में हिन्दी अनुवाद भी दिया गया हो। इस कार्य को पूरा किया धर्मसम्राट् के वेदभाष्य ने।

इस महान् ग्रन्थ में वाजसनेयी-माध्यन्दिनी शुक्ल यजुर्वेद के प्रथम अध्याय की प्रत्येक कंडिका की शास्त्र सम्मत ढंग से प्रकरणानुसार व्याख्या संस्कृत में की गयी है और साथ में उसका हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। मंत्रों के विनियोग तथा देवता के सम्बन्ध में किये गये विवेचन में अनेक शास्त्रीय सिद्धांतों पर भी प्रकाश डाला गया है। स्वामी दयानन्द के भाष्य को भी तुलना की दृष्टि से साथ-साथ दिया गया है और उसकी युक्तियुक्त मीमांसा करते हुए आचार्य उव्वट, सायण तथा महीधर आदि भाष्यकारों पर उनके द्वारा किये गये अनर्गल आक्षेपों का शास्त्र सम्मत ढंग से निराकरण किया गया है। साथ में आध्यात्मिक अर्थ भी दिये गये है। भाष्य का अवलोकतन करते-करते पाठक अनुभव करने लगता है कि पाश्चात्य तथा तदनुयायी स्वामी दयानन्द आदि भारतीय भाष्यकारों ने वेदमंत्रों के साथ बलात्कार करके अर्थ का अनर्थ ही किया है। वेदमंत्रों के शब्दों तथा प्रकरणों को किस प्रकार से तोड़मरोड़ कर उनके मनमाने अर्थ किये गये हैं-यह सब कुछ इस ग्रन्थ में बड़ी सुन्दरता से प्रस्तुत किया गया है। अत: समस्त वैदिक विद्वानों तथा वेदों के यथार्थ सिद्धांतों के जिज्ञासुओं के लिये तो यह ग्रन्थ वरदान रूप है किन्तु भाष्यों के तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से भी यह महान् ग्रन्थ सभी आस्तिक जनों तथा विचारकों के लिये संग्रहणीय है।

अब हम परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की उन पुस्तकों की चर्चा कर रहे हैं जो आज या तो अप्राप्य है, या प्रकाशन वन्द है किन्तु ये सभी पुस्तकें समय-समय पर प्रकाशित होती रही है और अनेक व्यक्तियों के पास आज भी इन पुस्तकों में से कई एक पुस्तकें अवश्य होगी। बहुतेरा प्रयास करने पर भी इन पुस्तकों का पूरा विवरण न मिलने के कारण हम नीचे इन पुस्तकों का उल्लेखमात्र कर रहे हैं जिससे महाराज श्री के साहित्य से अवगत होने में पाठकों को सहायता मिल सके :-

राहुल जी की भ्रान्ति

मू. १.५०

परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के अनमोल ग्रन्थ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' के उत्तर में हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री राहुल सांकृत्यान ने जो पुस्तक लिखी थीं उसके निराकरण में लिखी हुई स्वामी जी की यह पुस्तक आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व परम पूज्य ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य

ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ने मुझे पढ़ने को दी थी। समय बहुत अधिक होने से अधिक स्मरण तो नहीं हो पा रहा है किन्तु इतना अवश्य स्मरण आ रहा है कि श्री राहुल जी के प्रत्येक आक्षेप का युक्तियुक्त उत्तर इस पुस्तक में दिया गया है।

जाति, राष्ट्र और संस्कृति

मू. १.५०

इस पुस्तक को भी बहुत पहले देखा था। इसमें जाति, राष्ट्र और संस्कृति की शास्त्र सम्मत परिभाषा तथा इस सम्बन्ध में युक्तियुक्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू धर्म

मू. ५.००

प्रस्तुत पुस्तक में देश के प्रसिद्ध हिन्दू संगठन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का हिन्दू धर्म के प्रति क्या दृष्टिकोण है? यह कहाँ तक शास्त्र सम्मत और कहाँ तक शास्त्र विरुद्ध है? इत्यादि की विवेचना स्वामी जी की लोह लेखनी से इस रूप में हुयी है कि पाठक को शीघ्र ही यथार्थ का पता लग जाता है।

रामराज्य परिषद् और अन्य दल

हम सभी जानते हैं कि पूज्य स्वामी जी महाराज केवल उच्चकोटि के धर्माचार्य ही नहीं वरन् अपने युग के महान् राजनैतिक विचारक भी थे। वह धर्म सापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य की धर्म निरपेक्ष राज्य के स्थान पर देश के लिये कल्याणकारी मानते थे। इसके लिये उन्होंने धर्म सापेक्ष राजनीति का प्रचार करने वाली रामराज्य परिषद् नाम की संस्था को स्थापित किया था। प्रस्तुत पुस्तक में उसी रामराज्य परिषद् के धर्म सापेक्ष सिद्धान्त की कांग्रेस, जनसंघ और कम्यूनस्टि आदि अन्य राजनीतिक दलों के धर्म निरपेक्ष सिद्धान्त से तुलना करते हुये रामराज्य परिषद् के महत्व को स्वामी जी ने बड़े ओजस्वी शब्दों में प्रतिपादित किया है।

ये राजनीतिक दल

मू. ०.५०

चुनाव के दिनों में ट्रेक्ट रूप में प्रकाशित यह पुस्तक तत्कालीन समस्त राजनीतिक दलो के सिद्धान्तों पर तुलनात्मक दृष्टि से पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखी हुयी है। इसके पढ़ने से समस्त राजनीतिक दलों का वास्तविक चित्र पाठक के मस्तिष्क में बन जाता है।

आधुनिक राजनीति और रामराज्य परिषद्

मू. ०.५०

आधुनिक धर्म निरपेक्ष राजनीति के कारण देश में फैले भ्रष्टाचार, अनाचार, अत्याचार का निवारण करते हुये रामराज्य परिषद् किस प्रकार धर्म सापेक्ष राजनीति द्वारा देश का कल्याण कर सकती है? इत्यादि जन जिज्ञासाओं के उत्तर में लिखी हुयी यह पुस्तक चुनाव के समय ट्रैक्ट रूप में छपवाकर वितरित करायी गयी थी।

राजनीति में भी ईमानदारी

मू. ०.३०

हमारे धर्म शास्त्रों के अनुसार राजनीति भी धर्म का अंग होने से नैतिक मूल्यों पर प्रतिष्ठित होकर ही जनकल्याण का साधन बन सकती है, अन्यथा धर्म विरुद्ध होने से नैतिकता एवं ईमानदारी की अवहेलना कर राजनीति आधुनित युग की भाँति जनशोषण का हेतु बन जाती है। इन्हीं सब विचारों को पूज्य स्वामी जी ने इस पुस्तिका में बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है।

व्यक्तिगत या सामूहिक

मू. ५०

इस पुस्तिका में इस विवाद पर विचार किया गया है कि समाज के लिये व्यक्तिगत सम्पत्ति का होना हितकर है या सामूहिक सम्पत्ति का होना। युक्तयुक्त ढंग से विचार पूर्वक किये हुये विवेचन से अनेक भ्रान्तियों का निराकरण होता है।

समन्वय साम्राज्य संरक्षण

इस पुस्तक के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना हमारे लिये संभव नहीं है क्योंकि इस पुस्तक का कभी हमें दर्शन नहीं हुआ। आज भी इसकी एक प्रति पूज्य स्वामी श्री अखंडानन्द जी महाराज के वृन्दावन स्थित पुस्तकालय में उपलब्ध है।

रास और प्रयोजन

पूज्य स्वामी जी की भगवान् श्री कृष्ण की रासलीला और उसके प्रयोजन पर लिखी हुयी पुस्तक भक्ति साहित्य की अमूल्य निधि है।

महात्रिपुर सुन्दरी वरिवस्या

माँ भगवती पराम्बा त्रिपुर सुन्दरी की साधना पर लिखा हुआ यह ग्रंथ भक्तजनों के लिये वरदान रूप है।

गीता का हुकमनामा

परम पूज्य धर्मसम्राट् के अनन्य सेवक तथा काशी के प्रसिद्ध विद्वान् पं. मार्कण्डेय ब्रह्मचारी जी के अनुसार महाराज श्री ने गीता के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने के लिये यह ग्रंथ लिखा था जो प्रकाशित तो हुआ जनता में वितरित नहीं हो सका।

साक्षात्-विश्वनाथ श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

–गणेश शंकर शुक्ल मन्त्री, धर्मसंघ कानपुर।

महाराज श्री की सदैव कानपुर नगर पर महान् अनुकम्पा रही है। कानपुर के भक्तों को श्रीमुख से रास पंचाध्यायी श्रवण करने की चिर अभिलाषा थी जिसके लिये वे २०–२५ वर्षो से सतत् प्रयत्नशील थे परन्तु संयोग न हो पाया। रामलीला कमेटी (परेड) कानपुर ने महाराज श्री का उक्त कार्यक्रम नवरात्र वर्ष १९८१ में सम्पन्न कराने की इच्छा व्यक्त की, परन्तु समिति महाराज श्री से समय लेने में सफल न हो सकी। पुनः शिवकुमार त्रिवेदी जी ने प्रयास किया परन्तु असफल रहे। मुझसे कहा तो मैंने स्वामी जी के तत्कालीन सचिव श्री आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी से मिलकर उक्त निवेदन किया। उन्होंने बतलाया कि नवरात्र का कार्यक्रम तो हजारीबाग (बिहार) को दिया जा चुका है, परन्तु हमनें करबद्ध होकर स्वयं महाराज श्री की सेवा में उपस्थित होकर पूजनोपरान्त विनती की तो महाराज ने भी उक्त बिहार कार्यक्रम की स्वीकृति की बात कही, परन्तु उन्हीं महापुरुष ने दयार्द्र होकर कहा 'अच्छा ब्रह्मचारी को बुलाओ'–हम बुला लाये तो महाराज ने ब्रह्मचारी जी से कहा कि 'देखो शुक्ल जी नवरात्र का समय मांगते हैं, हजारीबाग वालों को लिख दो कि उनके लिये फिर कभी आगे तिथियाँ निश्चित कर दी जायेगी–ब्रह्मचारी जी के द्वारा बिहार कार्यक्रम की पूरी तैय्यारियाँ हो जाने की बात कहने पर भी महाराज जी ने कहा कि उन्हें लिख दो कि 'फिर आगे जब भी वे चाहेंगे तब ही उन्हें कार्यक्रम के लिये समय दे दिया जायेगा इस बार नवरात्रि का कार्यक्रम तो कानपुर को ही दे दो।' हमारी मन–वाणी–शरीर सब कुछ गद्गद् था रोमांचित था महाराज की अनुकम्पा के कारण।

दिनांक ५ अप्रैल से १३ अप्रैल ८१ तक कानपुर (परेड) मैदान में कार्यक्रम रखा गया। महाराज के पूछने पर बताया गया कि नवरात्र में प्रवचन हेतु 'रासपंचाध्यायी' विषय रखा गया है– तो धर्मसम्राट् बोले–अरे इतने में तो उसकी भूमिका भी नहीं हो सकेगी इसके लिये तो कम से कम २ मास का समय चाहिये। चलो ठीक है। फिर रास पंचाध्यायी पर महाराज के प्रवचन आरम्भ हुये। महाराज तो साक्षात् विश्वनाथ के अवतार थे। प्रथम अवतार आद्य श्री शंकराचार्य के रूप में हुआ था और पुनः अब स्वामी श्री करपात्री स्वरूप में अवतरित होकर पथ से विचलित सनातन धर्म को पुनः दिशा दी, मार्ग दर्शन किया। धर्म, वेद, भक्ति, ज्ञान, गौ, ब्राह्मण आदि के उद्धार एवं सरंक्षण का भीष्म प्रयास किया। महाराज जी के उक्त अवसर के प्रवचन पुस्तकाकार में धर्म संघ प्रकाशन मेरठ द्वारा 'पिबत भागवतं रसमालयम्' के नाम से प्रकाशित भी हो चुके हैं। इसे भी हम अपने एवं कानपुर के सौभाग्य एवं दुर्भाग्य का संयोग ही समझते हैं कि कानपुर ही महाराज जी की प्रवचनमाला का सुमेरु बना। कारण यहीं दिनांक ९ अप्रैल ८१ को वे रोगाक्रान्त हुए

तदुपरान्त वह श्रुतिसारपुनीता वाणी प्रत्यक्ष रूप में भक्तों को सुनने को न मिल सकी-उक्त चार प्रवचन ही स्वामी जी महाराज द्वारा काशी से बाहर सार्वजनिक रूप से किये गये अन्तिम प्रवचन थे जिन्हें पढ़कर भक्त भावुकों को आज भी भाव समाधि लग जाती है और उन अभिनव शंकर का यह भक्त रूप नेत्रों के समक्ष प्रगट हो जाता है। भगवान आशुतोष से प्रार्थना है कि वह हमें उन ब्रह्मलीन महाराज के द्वारा बताये गये शास्त्रीय सिद्धान्तों का जीवन भर परिपालन करने की शक्ति प्रदान करे।

उनके श्री चरणों में श्रद्धाञ्जलि समर्पित है। धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो। प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो। हर-हर महादेव जयघोष महाराज श्री के द्वारा बताये गये विश्व कल्याणकारी मार्ग के संकल्प सूत्र है जो युगों युगों तक जनमानस को सर्वे भवन्तु सुखिनः की भावना से ओत प्रोत करते रहेंगे।

***

चिरस्मरणीय महात्मा

मैंने अपने सन्यासी जीवन में तथा ७० वर्ष की आयु में जो अनुभव किया है उसके आधार पर कह सकता हूँ कि इस कलिकाल में सनातन धर्म की रक्षा यदि किसी महापुरुष ने की है तो भारत हृदय सम्राट स्वामी करपात्री जी का नाम ही चिरस्मरणीय रहने योग्य है वह महात्मा मोक्षगामी थे किन्तु हिन्दू संस्कृति के उत्थान हेतु उन्होंने जेल यातनाएँ सहीं, कष्ट उठाये, भूख व नींद का भी परित्याग करके वह हिन्दू हितों की रक्षार्थ जीवन भर जुटे रहे। इस युग में दूसरा ऐसा महात्मा पैदा होना कठिन है-ब्रह्मरूप महाराज श्री के प्रति सच्चे मन से मेरी 'ओम हरि' रूपी वन्दना अर्पित है, स्वीकार हो।

-१०८ श्री स्वामी हरिहराश्रम जी महाराज
-श्री कृष्णबोध दण्डी आश्रम,
पुरानी गढ़ चुंगी, मेरठ।

***

शुभ संकल्पों के धनी

–पं. कालीचरण पौराणिक, प्रधान अन्नक्षेत्र, श्री कृष्णबोध दण्डी–आश्रम, शङ्कराचार्यपथ, मेरठ।

कहा गया है कि 'जिसका चित्त इस अपार चिदानन्द सिन्धु परब्रह्म में लीन हो गया उसका कुल पवित्र हो गया, उसकी माता कृतार्थ हो गयी और यह वसुन्धरा (धरती) उससे पुण्यवती हो गयी'–

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपार संवित्सुखसागरेऽस्मिल्लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः।।

गत शताब्दियों के इतिहास पर दृष्टि डालने पर भी स्वामी करपात्री जी महाराज के समान बहुमुखी अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न ब्रह्मनिष्ठ लोककल्याण निरत महापुरुष दृष्टिगत नहीं होता। जिनका क्षण क्षण वेद, धर्म, गौ एवं लोककल्याण में व्यतीत हुआ हो। जिनकी इस धरती पर उपस्थिति मात्र से राष्ट्र का मंगल होता था। जिनके पवित्र निर्मल निष्कलंक अन्तःकरण में सदा शुभ संकल्पों का उदय होता रहता था। भारतीय संस्कृति–सभ्यता एवं धर्म की मर्यादा युक्त मापदण्डों के संरक्षकों में निरत आज कोई विरले ही नजर आते हैं, क्योंकि सर्वोच्च सत्ता के पदों पर विराजमान लोगों से लेकर बहुजन समाज के व्यक्तियों तक सभी प्रायः पश्चिमी विचारधाराओं के पौषक ही दिखायी देते हैं। 'फूट डालो,–कुर्सी सम्भालो' के अंग्रेज प्रदत्त मन्त्र पर सभी जननायक मुग्ध हो गये है। इतिहास साक्षी है कि देश में बीसवीं शताब्दी में केवल एक ही ऐसी महान विभूति हो चुकी है, जिसने भारत को अखण्ड बनाये रखने पर बल दिया था। कारण यही प्रतीत होता है कि महत्वाकांक्षाओं के अधीन चिरकाल से संघर्षरत वृद्धनेतृगण शासन सत्ता सम्भालने के प्रलोभन में फंसते चले जा रहे थे। परन्तु ऐसे भीषण समय में भी एक निस्पृह, निर्लेप, दूरदर्शी, त्यागी, तपस्वी, मनस्वी, राष्ट्रभक्त महात्मा समझ चुका था कि नेतागण शासन को यथोचित ढंग से सम्भाल नहीं सकेंगे। खण्डित भारत की समस्याएँ कभी भी इस राष्ट्र को सुख चैन नसीब नहीं होने देंगी। इस वीतराग संन्यासी ने 'भारत अखण्ड रहे' की मांग करते हुये स्वतन्त्र भारत में भी प्रथम जेल यात्रा की।'''' नवस्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद जब दुनिया भर के पाश्चात्य संविधानों का उच्छिष्ट सार संग्रह करके भारत का संविधान बनाया राष्ट्र नायकों ने तब तो इस भारतीय राजनीति शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान् महान राजनीतिज्ञ महात्मा ने इसका कड़ा विरोध किया और माँग की कि भारतीय नीति–अर्थ शास्त्रों पर आधारित हो–परन्तु शासकों के कान पर जूं न रेंगी और फिर इस सन्त को राजनीति में भी उतरना पड़ा। परन्तु अब जो भी कुछ संघर्ष था, माँग थी वह अपनों से थी, उन भारतीय राष्ट्र नेताओं से थी जिन्हें पाल–पोसकर सत्ता के सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित किया था, अतः नवस्वतन्त्र राष्ट्र में आधुनिकवाद एवं पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता की

अपनों द्वारा ही लायी गयी उस तीव्र झंझावात में इस महात्मा की आवाज मद्धिम सी पड़ गयी। परन्तु इतने से ही स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा व्यक्त विचारों की सार्थकता कम नहीं आंकी जा सकती–अभी से परिणाम सामने आने लगे हैं।

स्वामी जी तो आध्यात्मिक जगत के प्रतिनिधि थे। युद्धोत्तर कालीन हिटलरी आतंक से जनता त्रस्त थी। स्वामी जी ने आध्यात्मिक धरातल पर महाशक्ति जगदम्बा माँ भगवती की आराधना हेतु दिल्ली, कानपुर, काशी, कलकत्ता, बम्बई, लखनऊ, उदयपुर, अमृतसर आदि अनेकों स्थानों पर विशाल वैदिक महायज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये–परिणाम–भारत को स्वतन्त्रता मिली, हिटलर ने आत्महत्या कर ली। आध्यात्मवाद को लेकर स्वामी जी ने इस धर्मप्रधान देश में एक नवीन वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात किया। उन्होंने भोगवाद के स्थान पर त्याग तपस्या को अपनाने पर बल देकर समाज को नयी दिशा देने का भीष्म प्रयास किया। चिरप्रसुप्त भारतीय समाज में वैदिक पुरातन सनातन शाश्वत धर्म तत्वों के प्रति आस्था की पुनर्स्थापना करने के लिये अनेक ग्रंथ लिखे, पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन किया, अभारतीय तत्वों को शास्त्रार्थ की चुनौतियाँ दी, सर्वसाधारण को राजनीति में भाग लेकर संघर्ष करने के लिये प्रेरित किया–तो इनके क्रिया कलापों का देश में बोल बाला होने लगा और भगवान आद्य शंकराचार्य की भाँति जन जन ने इन्हें 'धर्मसम्राट्' एवं 'अभिनव शंकर' कहकर समादृत किया। फल यह निकला कि भारतीय शासकों द्वारा हिन्दुओं पर थोपा जाने वाला अभारतीय 'हिन्दुकोड' पं. नेहरु के लाख प्रयास करने पर भी–यथावत् स्वीकृत न हो सका। इसके लिये स्वामी जी ने सिर हथेली पर रखकर सत्याग्रह किये, जेल यात्राएँ की, अनशन किये–परन्तु आधुनिक भोगवाद की प्रबल आँधी को अपनों द्वारा ही हवा देने के कारण अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी और उसके कुपरिणाम आज राष्ट्र को भुगतने पड़ रहे हैं। स्वामी जी ने अपनी दूरदर्शिता से कोड के कुपरिणामों का निरूपण 'हिन्दूकोड प्रमाण की कसौटी पर'–नामक ग्रंथ में बड़े मौलिक ढंग से किया है–निष्पक्ष विचारक अध्ययन पर अपना स्पष्ट मत राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत करें।

युगदृष्टा होने के कारण स्वामी जी ने स्पष्ट घोषणा की कि जब तक भारत भूमि पर गोमाता रक्त गिरता रहेगा, अतिवृष्टि, युद्ध, अनावृष्टि, आपसी कलह, रक्त–पात आदि रोके नहीं जा सकेंगे। अतः सुख शान्ति की स्थापना हेतु स्वतन्त्र भारत में 'गो हत्या' का पातक बन्द होना चाहिये। इसके प्रश्न पर उन्होंने प्रबल आन्दोलन किये, यातनाएँ सहन की–परिणामतः राष्ट्र मन्दिर के अधिकांश प्रांगण में आज वैसी गो हत्या नहीं होती जैसी पारतन्त्र्य काल में होती थी–परन्तु देश का दुर्भाग्य है कि आज भारत की राष्ट्रीय सरकार चमड़ा, रक्त, हड्डी, माँस आदि के निर्यात द्वारा लाखों डालर विदेशी मुद्रा कमाने के लोभ में पड़कर नित्य प्रति बान्द्रा और टेगंरा जैसे अनेकों यन्त्रीकृत सरकारी बूचड़खानों में लाखों की हत्या करवाकर इस राष्ट्र के बच्चों के मुख

से दुग्ध की धारा छीन रही है। स्वामी जी यावज्जीवन इसके लिये संघर्षशील रहे और अन्त में कह गये कि यह संघर्ष उनके शिष्यों, प्रशिष्यों आदि द्वारा पीढ़ियों तक चलता ही रहना चाहिये जब तक सम्पूर्ण राष्ट्र में गोवध बन्द न हो जाये।

जब भी जहाँ भी हिन्दू हितों पर आघात हुआ स्वामी जी ने सबसे पहले वहाँ पहुँच कर कार्य किया-चाहे नोआखाली हो? चाहे मामला पंजाब में हिन्दी रक्षा का हो। वेदों के ज्ञान को विचारकों के सम्मुख यथार्थ रूप से रखने हेतु वेद भाष्य लिखे, सर्व वैदिक शाखा सम्मेलनों का आयोजन कराया। कहाँ तक गिनायें वर्तमान शताब्दी के महापुरुषों का जब भी कभी निष्पक्ष इतिहासकारों द्वारा मूल्यांकन किया जायेगा तब स्वामी श्री करपात्री जी मणिमाला के सुमेरु के रूप में गिने जायेंगे। उन्हीं की छत्रछाया में मेरे जैसे छोटे सिपाही को भी दल बदल की दुनिया से कोसो दूर रहकर सनातन धर्म की निस्वार्थ सेवा में निरत रहने का उन्होंने अवसर दिया-उन्हीं से प्रेरणा लेकर सब कुछ जनहित में समर्पित करते हुये, एकान्त सेवन पूर्वक साधु सेवा में समय व्यतीत करते हुये उनके बताये मार्ग पर चलने का संकल्प है। उन ब्रह्मरूप महापुरुष से प्रार्थना है कि वे हमें सदा सन्मार्ग पर आरूढ़ रहने की शक्ति सामर्थ्य प्रदान करें-उन्होंने न जाने मेरे जैसे कितने लोगों की जीवन धारा को अध्यात्मक पथ की ओर मोड़कर उसे धन्य बना दिया। उनके श्री चरणों में कोटि कोटि नमन।

***

अभिनव शंकर

-हरिसिंह 'शादमां' व्यवस्थापक सरस्वती प्रेस, मेरठ-२

उस महान से महानतम महापुरुष रूप में अवतरित जगत कल्याण हेतु इस कार्यकाल में साक्षात् धर्मावतार के रूप में धर्म की ज्योति पूरे देश में ही नहीं विश्व के कोने-कोने में प्रज्ज्वलित कर आस्तिक को ही नहीं नास्तिक तक को अवगत कराया दिया कि धर्म क्या है? अधर्म क्या है? उसी शंकर स्वरूप कल्याणकारी आत्मा श्री स्वामी करपात्री जी को हम अपनी श्रद्धा के सुमन अर्पित कर अपने आप को धन्य मानते हैं वही अभिनव शंकर हैं।

जिनहि कृपा कर देहु जनाई, जानहि तुमहि तुम्हीं हो जाई।

वाली युक्ति को चरितार्थ कर वास्तव में विश्वनाथ भगवान शिव की अपार अनुकम्पा से श्री स्वामी करपात्री जी ने भगवान के इस विराट स्वरूप जगत को तत्वत: जान लिया था। जब श्री स्वामी करपात्री जी को विराट स्वरूप का साक्षात हो गया तो शेष रह ही क्या गया वह भी विराट स्वरूप में विलीन हो गये, समा गये ओर स्वयं भी विराट स्वरूप होकर शंकर रूप में प्रगट होकर आशुतोष औढरवानी की लीला का अभिनय इस

युक्तियुक्त ढंग से किया कि विश्व कृतार्थ हो गया। धन्य है हम और आप जिन्हें आज भी प्रात: स्मरणीय श्री चरणों का मानसिक तारतम्य जुड़ जाने पर आत्मा को अपूर्व शान्ति का सुख होता है और जीवन को सफल बनाने का सुफल मिल जाता है।

युग युगान्तर में ही मानव को ऐसा सुअवसर प्राप्त होता है कि जब करुणा वरुणालय भगवान धर्म रक्षार्थ किसी महापुरुष के रूप में अवतरित होकर ज्ञान, भक्ति, वैराग्य का प्रचार प्रसार कराकर जीव को मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कराते हैं। इसी सन्दर्भ में आधुनिक युग का मानव अधर्म की भीषण अग्नि से तप्त पथ-भ्रष्ट हो गया है और भूल गया है कि इस मानुषतन का क्या प्रयोजन है? तभी भगवान ने लोक कल्याणार्थ महापुरुषों के रूप में प्रगट होकर मानव मुक्ति के लिये अपना वचन चरितार्थ किया। हमें श्री स्वामी करपात्री जी और श्री स्वामी कृष्णबोध आश्रम जी के रूप में भगवान के दर्शन हुए। भ्रमवश कुछ लोग कहते हैं कि हम को आज तक भगवान के दर्शन नहीं हुए उनसे हमारा निवेदन है विश्वास और निष्ठा के साथ भक्ति भावना से साधु महात्माओं को अन्तर आत्मा में रमण करके देखें तो भगवान के दर्शनों का लाभ सुलभ हो जाता है। यह द्वय मूर्ति प्रतीत होते हुए भी वास्तव में एक ही थे राम और शिव की भाँति एक मर्यादा पुरुषोत्तम राम और एक भोले बाबा शिव। राम शंकरमय थे और शंकर राममय थे।

धर्म सम्राट परम वीतराग यतिचक्र चूड़ामणि श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने वैसे तो हिमाचल से लेकर कन्याकुमारी तक भ्रमण कर कठोरत्तम तप, व्रत का पालन करते हुए सन्यास धर्म निर्वाह करते हुए असंख्य गृहस्थियों को सन्मार्ग पर लगाकर उद्धार किया। उनकी महती कृपा एक निर्धन ग्रामीण बालक से लेकर धनाढ्य वृद्ध तक पर सम थी। उनकी कृपा कटाक्ष से जहाँ धनाढय स्व. श्री राधाकृष्ण धानुका साधु वृत्ति से जीवन भर रह कर जीवन मुक्त हो गये वहाँ एक अकिञ्चन ब्राह्मण बालक संस्कृत का प्रकाण्ड पण्डित होकर सन्यास की दीक्षा लेकर वीतराग हो मुक्ति के शिखर पर पहुँच कर मुक्त हो गया।

वैसे तो स्वामी करपात्री जी जीवन पर्यन्त जीव उपकार में तत्पर रहे। परन्तु अन्त में ''वेदार्थ पारिजात'' ग्रन्थ की रचना कर विश्व का जो उपकार किया वह चिरस्मरणीय रहेगा। इस ग्रन्थ के विषय में कुछ लिखना मेरे सामर्थ्य के बाहर की बात है लेकिन इस पाण्डित्य पूर्ण ग्रन्थ में क्षीर से नीर को पृथक कर यह सिद्ध कर दिया है कि हमारे पूर्वजों और समकालीन महात्माओं, विद्वानों, पण्डितों ने वेदों के अर्थ समझने परखने में कहाँ क्या जाने अनजाने भूल की है, यह उपकार की चिरस्थायी धरोहर जन-जन के मानस को झकझोरती रहेगी। ऐसी आशा अवश्य करता हूँ। उन श्री चरणों में में मेरा साष्टांग नमन है।

***

करपात्री जी की प्रेरणा से श्री विश्वनाथ शिवालय में रुद्राभिषेक

–जय प्रकाश गुप्ता एम.ए., एल.एल.बी., साहित्य रत्न

मन्त्री श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिर समिति छता अनन्त राम मेरठ शहर।

ब्रह्मलीन धर्म सम्राट्, श्रीमत्परमहंस परिब्राजकाचार्य, परम वीतराग, यतिचक्र, चूड़ामणि, अनन्त श्री विभूषित, दण्डी सन्यासी, श्री हरिहरानन्द सरस्वती स्वामी करपात्री जी महाराज वर्तमान युग के महान सन्त, वेदादिशास्त्र प्रामाण्यनिष्ठ परम विद्वान एवं उच्चकोटि के विचारक थे। वे त्याग, तपस्या, आत्म बलिदान, सरलता एवं सौम्यता की साक्षात प्रतिमूर्ति थे। इसके साथ ही वे एक कर्मयोगी, निर्भीक सन्यासी तथा सनातन धर्म मर्यादाओं के संरक्षक व प्रमुख स्तम्भ थे। सनातन धर्म पर होने वाले प्रहारों का उन्होंने सदैव ही कड़ा प्रतिरोध किया।

महाराज श्री सनातन धर्म व संस्कृति के अनन्य उपासक तथा वेदादि शास्त्रों के मर्मज्ञ होने के कारण सनातन धर्म सिद्धान्तों के पथ–प्रदर्शक एवं शास्त्रीय अनुष्ठानों के प्रेरक भी थे। उनके द्वारा प्रेरित अनुष्ठान अत्यन्त प्रभावशाली थे। महाराज श्री के दर्शन करने तथा उनके द्वारा दिये गये धर्मोपदेश श्रवण करने का अनेक बार मुझे सौभाग्य मिला। फरवरी १९७७ में जब महाराज श्री मेरठ स्थित श्री कृष्णबोध दण्डी आश्रम में पधारे तब मैं उनके दर्शनार्थ वहाँ पर पहुँचा। महाराज श्री उस समय विश्राम कक्ष में लकड़ी की चौकी पर विराजमान थे।

चौकी के निकट ही बिछी हुई चटाई पर सर्व श्री पं. कालीचरण पौराणिक, रघुवीर नारायण मिश्र, मुरारी लाल शर्मा एवं श्याम सुन्दर वाजपेयी जी वैद्य आदि महानुभाव बैठे हुए थे। महाराज श्री के चरणों में दण्डवत प्रणाम करने के पश्चात मैं भी वहीं पर बैठ गया। महाराज श्री व उपस्थित महानुभावों के मध्य एक महत्वपूर्ण विषय पर वार्तालाप चल रहा था। वार्तालाप समाप्त होने पर महाराज श्री का ध्यान मेरी ओर आकर्षित हुआ। शीघ्र ही महाराज श्री व मेरे बीच वार्तालाप का विषय मेरठ नगर के मध्यवर्ती भाग गुजरी बाजार के निकट मौ. छत्ता अनन्त राम में स्थित पुरातन व ऐतिहासिक शिवालय श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिन बन गया।

वार्तालाप के बीच उक्त शिवालय के पुनरुत्थान कार्यों में आने वाली कठिनाइयों से महाराज श्री को जब मैंने अवगत कराया तो उन्होंने मुझसे प्रश्न किया–"क्या तुम इस शिवालय में रुद्राभिषेक भी करते हो?" मेरे द्वारा नकारात्मक उत्तर दिये जाने पर महाराज श्री बोले–"प्रत्येक महाशिवरात्रि को इस शिवालय में रुद्राभिषेक कराया करो। इससे भगवान शिव प्रसन्न होंगे और वे अवश्य ही शिवालय के पुनरुत्थान कार्य में तुम्हारी मदद करेंगे।" इसके पश्चात् महाराज श्री ने मुझे रुद्राभिषेक का महत्त्व

बताया। उनके मतानुसार रुद्राभिषेक से मनोकामनाएँ पूर्ण होने के साथ-साथ सार्वजनिक कल्याण भी होता है तथा राष्ट्रीय एकता को बल मिलता है।

महाराज श्री से प्रेरणा मिलने के पश्चात आगामी महाशिवरात्रि के अवसर पर मैंने इस शिवालय में प्रथम बार रुद्राभिषेक कराया। तब से प्रत्येक महाशिवरात्रि को महाराज श्री के निर्देशानुसार इस शिवालय में निरन्तर रुद्राभिषेक होता चला आ रहा है। रुद्राभिषेक कार्यक्रम में शिवभक्तों की भारी संख्या उपस्थित होती है। नगर के अनेक प्रतिष्ठित नागरिक एवं उच्चाधिकारी भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित होते हैं। यह रुद्राभिषेक का ही चमत्कार है कि जिस शिवालय में भक्तगण भयवश प्रवेश करने में संकोच करते थे, वहाँ अनेक श्रद्धालु शिवभक्तों ने सपरिवार उपासना करने हेतु जाना प्रारम्भ कर दिया है।

मेरठ एक अत्यन्त प्राचीन वैदिक-पौराणिक जनस्थान रहा है। महर्षि विश्वामित्र, महर्षि जमदग्नि, भगवान परशुराम आदि महात्माओं के पावन आश्रम इसी क्षेत्र का गौरव बढ़ाते थे। गंगा यमुना के इस त्रैलोक्य पावन क्षेत्र को विदेशी आक्रान्ताओं ने खूब रौंदा है, विध्वंस किया है, निरन्तर हजार वर्षो तक यह पवित्र यज्ञभूमि, धर्मभूमि पददलित होती रही है जिसके परिणाम स्वरूप पुरातन आश्रम, मठ-मन्दिर आदि पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थल अपने मूल रूप में इस क्षेत्र में अनुपलब्ध हैं। इतिहास की इसी कड़ी में मराठा राज्यकाल में, श्री विल्वेश्वर महादेव, औधड़नाथ महादेव, श्री विश्वनाथ महादेव, श्री चण्डी देवी, श्री मनसा देवी आदि के मन्दिर निर्मित हुए। सोलहवीं शताब्दी में स्वयंभू विश्वनाथ का मन्दिर भी इन्हीं सिद्ध स्थानों में से एक था। सन् १८५७ के स्वाधीनता संग्राम की चिन्गारी इन्हीं केन्द्रों से प्रज्जवलित होकर सम्पूर्ण राष्ट्र में विकीर्ण हुयी है। स्वयं पेशवा नाना साहब धुन्धु पन्त आदिने क्रान्ति का सूत्रपात किया था। इसी स्थान को अनेकों बार विधर्मियों ने नष्ट भ्रष्ट करना चाहा परन्तु धर्मप्राण इस राष्ट्र की आध्यात्मिक धरती से हर बार दूब के नाल के समान स्वतः यह स्थान विश्वनाथ-प्रस्फुटित होता रहा, अंकुरित होता रहा। और वर्तमान समय में श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिर समिति, मेरठ नामक पंजीकृत संस्था इस ऐतिहासिक मन्दिर की प्रबन्ध व्यवस्था में निरत है। इस मन्दिर में समय-समय पर देश के बड़े-बड़े आचार्य, सन्त, महात्मा गण पधार चुके हैं। सन् १९७४ में द्वारका-शारदा पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती जी महाराज इस पुरातन शिवालय में पधारकर आशीर्वाद प्रदान कर चुके हैं।

शिवालय की प्रबन्ध-समिति शिवालय का पुनरुत्थान करके इसकी पुरातन गरिमा को पुनः स्थापित करने के लिये प्रयत्नशील है। समिति के निश्चयानुसार श्री करपात्री जी महाराज की प्रेरणा से प्रारम्भ किया गया रुद्राभिषेक कार्यक्रम इस शिवालय के प्रांगण में महाशिवरात्रि पर्व के अवसरों पर भविष्य में होता रहेगा। इस प्रकार श्री महाराज इस शिवालय के प्रांगण में होने वाले रुद्राभिषेक के साथ सदैव अविस्मरणीय रहेंगे।

***

ब्रह्मनिर्वाण एवं श्रद्धांजलियां

"स्वामी श्री करपात्री जी में अनन्त गुण हैं–उनका अवदातयश है, उत्तमहोन्चल कुलाभिजन हैं, जो गोरखपुर मण्डल में सरयूतट पर 'ओझोली' नाम से प्रसिद्ध हैं। उनमें बड़े विद्वान हो गये हैं, जिन लोगों का सम्बन्ध वहाँ के सभी ऊँचे कुल के प्रसिद्ध लोगों में हैं। ओझा लोगों की प्रतिष्ठा को हमारे देश में आदर के साथ स्मरण किया जाता है। वहीं से कुछ सम्बन्ध विशेष से, प्रतापगढ़ में कुछ लोग आ बसे हैं। यहीं पर थे श्री स्वामी करपात्री जी, जो विद्या, तप, व्रत, वाग्मिता, प्रभाव, प्रतिभादि अनन्त गुणों से विभूषित हैं, इनके बल पर आज का सनातनधर्मी जगत निरातंक सो रहा है। कोई भी विपक्षी इस धर्म पर आक्षेप करके, बिना समाधान राशि से सन्तुष्ट भये, नहीं जा सका है। स्वामी जी ने घोषणा कर दी थी कि 'समाज को बुलाकर पं. जवाहर लाल अपनी बातों को समझावे और हम भी समझावें, जनता जिसे स्वीकार करे, उसे सभी लोगों का मत माना जाये।'–इस पर दिल्ली में वृहत सभा हुयी जिसमें पं. अनन्तशयनम् आयंगार, डा. पट्टाभिसीतारमैया, श्रीमन्नारायण कांग्रेस की ओर से पधारे थे। उन्हें व्याख्यान का पूरा समय दिया गया था। –स्वामी जी ने अपने तर्कों एवं दृष्टान्तों से सभी को निरुत्तर कर दिया था। इसी प्रकार कानुपर की सभा में एक विदेशी विद्वान अंग्रेज आया था। बड़ा शोर हुआ। भारी भीड़ एकत्र हो गई। उसने स्वामी जी से अनेक प्रश्न किये। स्वामी जी ने क्षणमात्र में उत्तर देकर उसका समाधान कर दिया–वह बड़ा संतुष्ट हुआ और प्रसन्न होकर स्वामी जी के चरणों में सिर रखकर चला गया। हिन्दू जाति का सिर कितना ऊँचा हुआ था उस दिन। उन्होंने कार्लमार्क्स के समाजवाद का खण्डन किया है, वेद का अपौरुषेयत्व विशिष्ट तर्कों से सिद्ध किया है। उनमें अनन्त गुण है, जिनको हम सभी सभाओं और शास्त्रार्थों में देख चुके हैं।' काशीस्थ विद्वानों में पूज्य स्वाामी जी की अद्वितीय प्रतिभा का, कल्पना पाण्डित्य, सबकी चर्चा विशेष रूप से महामहोपाध्याय जी से शास्त्रार्थ की बड़ी धूमधाम होने पर तथा पण्डित सभापति जी के वेदान्त के कल्पस्य वा भवेत्'–इस पंचदशी के श्लोक की विस्तृत व्याख्या कर सभापति जी को चमत्कृत कर दिया था। इसी तरह उन्होंने एक विद्वान् के इस भ्रम को दूर किया था कि यज्ञ में बलि होती थी। इस पर विचार के समय स्वामी जी ने अपने मीमांसा के पाण्डित्य का ऐसा चमत्कार दिखाया कि काशी के विद्वानों तथा छात्रों के हृदय में विश्वनाथ की भांति स्वामी जी का आदर सदा के लिये अमिट हो गया है।"

पण्डितराज कालीप्रसाद मिश्रा

भू.पू. प्राचार्य सं.वि. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी।

श्री वशिष्ठ जी का लेख

भारत वर्ष लगभग एक हजार वर्ष तक परतन्त्र रहा। वैदेशिक क्रूर आक्रान्ता शासकों ने भारतीय चेतना को विकृत व विनष्ट करने के कोटिशः कुत्सित प्रयास किये। उस विषम परिस्थिति में भी समय-समय पर अनेक महापुरुषों, भारतमाता के वीरसपूतों के प्राणान्तक सत्संकल्पित प्रयासों से भारत की सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण का कार्य अनवरत होता रहा। संस्कृत-संस्कृति व शास्त्र संरक्षण तथा सनातन धर्म प्रचार-प्रसार के अभूतपूर्व अभियान में पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज का महान योगदान सदा अविस्मरणीय रहेगा।

ऐसा भी समय रहा, सामूहिक यज्ञयागादि अनुष्ठान करना तो दूर व्यक्तिगत धार्मिक परम्पराओं का निर्वाह अति दुष्कर हो गया था। शिखा-सूत्र जैसे भारतीयता के चिन्ह आक्रान्ताओं की आंखों को अखरते थे। तीर्थों को नष्ट-भ्रष्ट किया गया, देवालयों को तोड़ा-फोड़ा गया, देवविग्रहों को छिन्न-भिन्न किया। भारत की अपार ज्ञान सम्पदा को सँजोये हुए बड़े-बड़े पुस्तकालयों को आग के हवाले कर दिया गया। सनातन धर्मानुरागियों को मत-मतान्तरों में बाँटा गया, शास्त्रसम्मत सम्प्रदायों में परस्पर वैमनस्यता के बीज बोये गये, शास्त्रीय मर्यादाएँ विशिथिलित हो गयीं, जनता धर्मविमूढ़ होने लगी, आस्तिकता और अर्धनास्तिकता तिरोहित ही हा चली...। देश को आवश्यकता थी एक ऐसे राष्ट्रभक्त शास्त्रवेत्ता अवतारी महापुरुष की, -जो समाज में अभिव्याप्त धर्म-विमूढ़ता, सम्प्रदायगत कल्पित विषमता, वर्णाश्रम पर आक्षेपित असमानता, वेद के नाम पर प्रचलित अवैदिकता और नास्तिकता के अज्ञानान्धकार को ध्वस्त करने में सर्वथा समर्थ हो तथा सनातन धर्म की धुरी को धारण कर सके।

अनन्तश्रीसमलंकृत तपोमूर्ति नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूज्यपाद श्रीजीवनदत्तजी महाराज के सत्संकल्प से संस्थापित व संचालित उत्तरभारत का सुप्रसिद्ध संस्कृत शिक्षण संस्थान 'श्री साङ्गवेद महाविद्यालय नर वर' के अम्बर से अनन्तश्रीविभूषित यतिमण्डल मूर्धन्य विद्वद्वरेण्य षड्दर्शनाचार्य स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रम महाराज पादारविन्द-अधीतविद्य सर्वशास्त्रमर्ममरीचिमाली ज्ञानमर्तण्ड के रूप में पूज्यपाद धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का अरुणोदय हुआ। सम्पूर्ण संस्कृताकाश उनके आभामण्डल से आलोकित हो उठा, उनकी सत्कीर्ति व विमल यश से दिग्-दिगन्तर धवलित हो गये।

उन्होंने सम्पूर्ण भारतवर्ष में पदाति धर्मयात्राएं प्रारम्भ कर दीं। धर्मप्राण, धर्ममूर्ति, धर्मधुरन्धर, धर्मावतार, धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज जिधर भी पहुँचते, जहाँ भी जाते वहाँ का वातावरण धर्ममय हो जाता। साधु-सन्त, महात्मा, ब्रह्मचारी, सद्गृहस्थ व विद्वज्जनों का समुदाय उनके साथ-साथ चलता सैंकड़ो-हजारों लोगों, आबालवृद्ध नर-नारियों का समूह का समूह उनके पुण्यप्रद दर्शन व मार्गदर्शन परक प्रवचन सुनने के लिए उमड़ पड़ता।

'**करपात्र**' - यह अन्वर्थ नाम तो नरवर कुलपति कुटीर अर्थात् पूज्य महाराजश्री के मुखारविन्द से अध्ययन काल में ही प्राप्त हो चुका था। नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूज्यपाद श्रीजीवनदत्तजी महाराज के मुख से यह नामोच्चारण एक बार क्या हुआ कि उनके सहाध्यायी एवं विद्यालयीय छात्र उन्हें इसी नाम से सम्बोधित करने लगे। सभी सम्प्रदायों के परमाचार्यों, विविध विद्वत् परिषदीय विद्वज्जनों, सन्त-महन्त-महात्माओं, धार्मिक-सामाजिक संगठन संस्थाओं एवं सनातन धर्मानुयायी सज्जनों ने उन्हें अभिनव शङ्कर, विश्वबन्द्य, यतिचक्र चूडामणि, श्रीमत् परमहंस परिब्राजकाचार्य आदि विशिष्ट उपाधियों से सादर सम्भूषित, सम्मानित व सम्बोधित किया।

पूज्यश्री स्वामी करपात्रीजी महाराज 'श्रीरामजन्मजयन्ती' रघुनाथ राजधानी अयोध्या में मनाते, तो 'होलिकोत्सव व शरदपूर्णिमा' व्रजेश्वर श्रीकृष्णक्रीड़ाकानन वृन्दावन में। 'महाशिवरात्रि' महादेवनगरी काशी में तो शाक्त पर्व किसी पौराणिक शक्तिपीठ पर। प्रत्येक भारतीय व्रत-पर्व महोत्सव बड़े ही हर्षोल्लासपूर्वक उनके द्वारा आचारित होते थे। स्वतः ही सुमहोत्सव रूप धारित एताट्टश शुभावसरों पर वेद-पुराण-तन्त्रविद् विद्वानों एवं पञ्चदेवोपासकों की सामूहिक उल्लसित उपस्थिति रहती। पूजामण्डप में तपोवनस्थ ब्रह्मवृक्ष-पलाशपुष्पों के विकसन की अद्भुत शोभा को तिरस्कृत करते संन्यस्त हस्त धृत नारायणरूप दण्ड दर्शित होते। ऐसा लगता कि ब्रह्मलोक ही इस समय मृत्युलोक में उतर आया है।

नित्य-नैमितिक रूप से तथा तत्तत् व्रतपर्वोत्सव पूजा प्रसङ्ग में जब वे सविधि सश्रद्ध राम-कृष्णोपासना करते, तो आस्तिकजन उन्हें विष्णु-भक्त समझते, साम्बसदाशिवार्चन करते तो शैव लगते, गणेशोत्सव मनाते तो लोग उन्हें गाणेश मानते, सूर्योपासन की निष्ठा उन्हें सौर्य सिद्ध करता, शक्ति की अद्भुत आराधना से लगता कि ये तो परमशाक्त हैं। इस तरह यह समझ पाना कठिन था कि इनके इष्ट कौन हैं?

ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मचिन्तक स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज वस्तुतः ब्रह्मोपासक ही थे। यह पञ्चदेवोपासना ब्रह्म की ही उपासना है- 'उपासनं पञ्चविधं ब्रह्मोपासनमेव तत्। (योगशास्त्र)' गणेशपुराण में श्रीगणेशजी स्वयं कहते हैं कि 'शिवे विष्णौ तथा शक्तौ सूर्ये मयि नराधिप। याभेद्बुद्धिर्योगः स सम्यक् योगतमो मतः॥' उक्त पञ्चदेवों में अभेदबुद्धि को सर्वश्रेष्ठ योग कहते हैं। अतः पञ्चदेवोपासक पञ्चायतन देवता समर्चन

के माध्यम से सर्वत्र समबुद्धि से निर्गुण परब्रह्म की ही उपासना करते हैं। तदुक्तं ज्ञानसारे मतानामपि पञ्चानां तात्पर्यं निर्गुणं परम्। ब्रह्म बुद्धयैव पूज्यन्ते ह्युपास्यन्ते च पञ्च ते॥

योगसारेऽप्युक्तम्– 'एवं वै गणनाथश्च पुरुषश्च परः शिवः। शक्ति नारायणश्चैव ज्योतीरूप समन्विताः॥ ब्रह्मत्वेनैव प्रोच्यन्ते वेदादिष्वपि षट्सु च। पञ्चम्यश्चैव प्रोच्यन्ते सृष्टयाद्याः कालभेदतः॥' उपासकों की रुचिवैचित्र्य को दृष्टिगत करते हुए परमात्मा को अनेक रूपों में वर्णित किया है, जितने भी शैवादि सम्प्रदायवाद हैं वे सब परब्रह्म परमात्मा में समाहित हो जाते हैं, जैसे कि नदियाँ समुद्र में विलीन हो जाती हैं। पञ्चदेवोपासक भक्तों का यही भाव रहता है– 'विद्वद्भिः रुचिवैचित्र्यात् वर्णितस्त्वमनेकधातदुक्तवादास्त्वय्येव यान्ति नद्योम्बुधो यथा॥' ये शिवादि पञ्चदेवता पृथिवी आदि पञ्चभूतों के अधिदेवता हैं। इनके आधिपत्य में ही पञ्चभूत स्थित हैं– 'आकाशस्याधिपो विष्णु रग्नेश्च महेश्वरी। वायोः सूर्यः क्षिते रीशो जलस्य च गणाधिपः॥ (कापिलतन्त्र)' पञ्चदेवोपासना से पञ्चभूत मङ्गलप्रद व अनुकूल रहते हैं। मनुष्यों की भी पृथक्–पृथक् पाञ्चभौतिकी प्रकृति होती है, प्रकृति भेद से ही शिवादि पञ्चदेवों की उपासना शास्त्र विनिर्दिष्ट है। मानवों की पञ्चद्या प्रकृति में प्रत्येक तत्त्व का विधपूर्वक प्राचुर्य विमर्शन करके उपासना का अधिकार प्रदान करना चाहिए। 'तथोक्तं मन्त्रयोग संहितायाम्–मानवानां प्रकृतयः पञ्चधा परिकीर्तिताः। यतो निरुप्यते सर्गः पञ्चभूतात्मको बुधैः॥ भिन्ना यद्यपि भूतानां प्रकृतिः प्रकृतेर्वशात्। तथापि पञ्चतत्त्वानामनुसारेण तत्त्ववित्॥ भेदानवर्पणम्॥' इसलिए योगनिष्णात गुरुजन शिष्यों की पञ्चधाप्रकृति की पूर्ण परीक्षा करके ही उनके उपासनाधिकार का निर्णय करते हैं–'गुरवो योग निष्णाताः प्रकृतिं पञ्चधागताम्। परीक्ष्य कुर्युः शिष्याणामधिकार विनिर्णयम्॥ (कापिलतन्त्र)'

निर्गुण ब्रह्मोपासना में अशक्तों, अनेक जन्मगत सगुण साकार भाव स्वीकृत, सतत विषयानुराग अभ्यस्त, अद्वैतनिष्ठा अनधिकृत मानवों को सगुणोपासना ही प्रेयस्करी और श्रेयस्करी है, निःश्रेयसकरी भी। इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं। पृथिवी आदि पञ्चभूतों का आनुकूल्य सम्पादन के लिए पञ्चभूताभिमानी शिवादि पञ्चदेवता स्वकीय प्रकृति के अनुसार आराध्य ही हैं। भवबन्ध–मुमुक्षुओं के लिए भी प्रथमतः सगुण साकार सावयव शिव शक्ति, गणेश, सूर्य, विष्णु रूप ब्रह्म उपासना का विषय है। धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का सभी शास्त्र सम्मत सम्प्रदायों के प्रति समान आदर का भाव था। यह सद्भाव उनके आचरण और प्रवचनों में सुस्पष्ट दर्शित भी होता रहता था। समस्त सम्प्रदाय के आचार्यों ने उन्हें मुक्तकण्ठ से स्वकीय सम्प्रदाय का समादर करने वाला महात्मा माना और उनके विलक्षण वैदुष्य से प्रभावित होकर उनके नेतृत्व को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं किया।

भारत भ्रमण में पूज्य धर्मसम्राट्जी ने देखा कि वैदेशिक शिक्षा पद्धति भारतीय आचार-विचार को प्रभावित करती जा रही है, जिसके कारण हमारा सांस्कृतिक ह्रास तीव्र गति से हो रहा है। देश में मत-मतान्तरों का जाल सा बिछा हुआ है। स्वार्थलोलुप सुधारवादी संस्थाएँ जो कुछ सुधरे हुए हैं उन्हें भी बिगाड़ने में लगी हैं, वेद के प्रचार का ढिंढोरा पीटा जा रहा है पर वेद के नाम पर सारे कार्य अवैदिक हो रहे हैं। वेदमन्त्रों का मनमाना अर्थ करके आर्य के नाम पर लोगों को अनार्य बनाया जा रहा है। धर्म के नाम पर अधर्म बाँटा जा रहा है, शास्त्रीय सिद्धान्तों की अवहेलना सभ्यता का रूप ले रही है। इस प्रकार भारतवर्ष में अधर्मानुकरण का वातावरण देख पाना उन्हें असह्य हो उठा, वे भारतीय संस्कृति और सनातन धर्म के संरक्षणार्थ चिन्तित हो उठे। विशिष्ट विद्वानों को आहूत किया और बोले- ''देश में फैलती हुई धर्महीनता और नास्तिकता के प्रबल वेग को रोकने के लिए शास्त्रीय सिद्धान्तों से ओत-प्रोत संस्कृत, संस्कृति, शास्त्र एवं सनातन धर्म रक्षार्थ एक संगठन की अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत होती है। कालक्रमानुसार कलिकाल है और इस कलिकाल में संघ में ही शक्ति कही गयी है- संघे शक्तिः कलौ युगे। कुछ संगठन राष्ट्रोद्धार की अवश्य बातें करते हैं किन्तु धर्मोद्धार के बिना राष्ट्रोद्धार सम्भव नहीं। मौन होकर बैठ जाना अब उचित नहीं, हमें धर्म के लिए राष्ट्र के लिए कुछ करना ही होगा। सामर्थ्य होने पर अधर्म होता हुआ देखना भी पाप है, चुप मत बैठो, पाप के भागी मत बनो। कुछ करो।

पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज के सत्संकल्प से धर्म की रक्षा के लिए शारदीय नवरात्र पक्ष आश्विन विजयादशमी, वैक्रमाब्द १९९७ (सन् १९४०) के शुभावसर पर विन्ध्यवासिनी भगवती पराम्बा की गोद में 'धर्मसंघ' (धर्मायसंघः धर्मसंघः) नामक संस्था की स्थापना हुई। ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य पदाधिरूढ़ अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज ने विद्वानों की प्रार्थना पर इस 'अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ' संस्था का संरक्षकत्व स्वीकार किया। धर्मसंघ की स्थापना करते समय जिन आठ महानुभावों ने संस्था स्थापित करने के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर किये, वे इस प्रकार हैं- १. अनन्तश्री स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज, २. नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्तजी महाराज, ३. श्री पं. रामयशजी महाराज, ४. श्री पं. बिजयानन्दजी त्रिपाठी, ५. श्री सेठ गौरीशंकरजी गोयनका, ६. श्री सेठ छोटेलालजी कनौडिया, ७. श्री पं. सूर्यनाथजी पाण्डेय, ८. श्री पं. गंगाशंकर जी मिश्र।

धर्मसंघ की कार्यकारिणी समिति में देश के श्रेष्ठतम तपस्वी एवं शास्त्रज्ञ संन्यासी, चारों पीठों के शंकराचार्य, वल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, माध्वाचार्य, निम्बार्काचार्य आदि वैष्णवाचार्य, ब्रह्मचारी, वेदज्ञ, धर्मशास्त्र, व्याकरण, वेदान्त एवं साहित्य के मूर्धन्य विद्वान, धर्मप्राण श्रेष्ठी, वीर क्षत्रिय एवं अन्य सद्गृहस्थ रखे गये। फिर तो सभी सम्प्रदायों के आचार्य, धर्माचार्य, महन्त-मठाधीश, धर्मसंघ से प्रभावित होकर धर्मसंघ

से सम्बद्ध होते गये। अनन्त श्री स्वामी नरोत्तमाश्रमजी महाराज (मन्त्री स्वामी), अनन्त श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी महाराज, अनन्त श्री स्वामी नन्दनन्दनान्दजी महाराज, अनन्त श्री स्वामी विष्णु आश्रमजी महाराज, श्री स्वामी सुखबोधाश्रमजी महाराज, श्री स्वामी सदानन्द सरस्वती जी महाराज (वेदान्ती स्वामी), श्री स्वामी भूमानन्द तीर्थजी महाराज, श्री स्वामी शंकरानन्दजी महाराज, श्री स्वामी विपिनचन्द्रानन्द सरस्वती जी महाराज (जजस्वामी), स्वामी श्री परमानन्द सरस्वती जी महाराज, जगद्गुरु बल्लभाचार्य श्री पुरुषोत्तम लाल जी, जगद्गुरु बल्लभाचार्य श्री गोस्वामी ब्रजभूषणलालजी, श्री रामानुज सम्प्रदाय सिद्धान्तावलम्बी श्री वीराधवाचार्य, भगवान् श्री कृष्ण-बलभद्र चरणकमल समुपासक श्री गोकुलनाथ जी, श्री पं. देवनायकाचार्य चतुर्वेदी, कविरत्न पं. अखिलानन्द शर्मा, शास्त्रार्थ महारथी श्री पं. माधवाचार्य श्री पं. कालूराम शास्त्रीजी, श्री पं. पंचानन शास्त्रीजी प्रभृति नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

वर्णाश्रमधर्म परायण द्विजवृन्द धर्मसंघ की सेवा में सन्नद्ध हो गये। धर्ममार्ग का अनुसरण करने वाले शिल्प-श्रमप्रधान द्विजेतर बन्धु भी अपने अधिकारनुसार धर्मसंघ की सेवा में सहर्ष समुद्यत हुए। पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज इन्हें वर्णधर्म का महत्वपूर्ण अङ्ग मानते थे, चातुवर्ण्य व्यवस्था का आधार स्तम्भ। वे उनके वैशिष्ट्य प्रतिपादन प्रसङ्ग में 'महत्तर' की महत्ता बताते हुए कहते थे कि यह वर्ग कितना महत्वशाली है। इसके लिए भारतीय संस्कृति में 'महत्' शब्द का प्रयोग किया गया। फिर लगा कि उनके श्रम-सेवा के प्रशंसनीय कार्य को देखते हुए यह 'महत्' शब्द भी कमजोर पड़ रहा है, तो समाज और राष्ट्र के प्रति समर्पण की पराकाष्ठा रूप अर्थ के उत्कर्ष के लिए महत् में 'तरप्' प्रत्यय समाहित किया गया। संस्कृत में तरप् और तमप् प्रत्यय शब्दार्थ की अत्यन्त उत्कर्षता का बोध कराने वाले होते हैं। जैसे 'प्रिय' शब्द में उक्त प्रत्यय लगने पर प्रियतर और प्रियतम शब्द बनते हैं। इस प्रकार स्वकर्मनिष्ठ चतुर्थवर्ण के व्यक्ति को 'महत्तर' (महतर) कहकर सम्मान दिया जाता था। महत् से ही महत्व या महत्ता शब्द निष्पन्न होते हैं, इसमें 'तरप्' प्रत्यय लग जाने पर तो अतिशय महत्वशालिता रूप अर्थ समुद्भूत होता है। वर्णव्यवस्था में परस्पर सम्मान और सहयोग का भाव सन्निहित है। चातुर्वण्य में परस्पर संघर्ष या ऊँच-नीच का प्रश्न ही नहीं उठता। इसमें कर्म की भिन्नता अवश्य प्रतीत होती है, किन्तु सभी का स्वकीय कर्माधिकारानुसार आत्मोद्धार और राष्ट्रोद्धार का लक्ष्य एक ही है। विष्णुस्मृति में आया है कि जिस देश में वर्णाश्रम व्यवस्था है, वह 'आर्यावर्त' देश कहा जाता है और जहाँ वर्णाश्रम विभाग नहीं है उसे म्लेच्छदेश जानना चाहिए-

वर्णाश्रमविभागोऽयं यस्मिन् देशे न विद्यते। स म्लेच्छदेशो विज्ञेयः आर्यावर्त स्ततोऽत्तरः॥

यह सोचना-कहना भी नितान्त निराधार है कि हिन्दुओं का चातुर्वर्ण्य ही हिन्दू समाज में पैदा हुई सब बुराइयों का कारण है। भगवान् कहते हैं कि चातुर्वर्ण्य

मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। (गीता ४-३) जो व्यवस्था अनेक कोटि ब्रह्माण्ड के रचयिता भगवान् ने बनायी है, भला वह किसी समाज के लिए कभी हानिकारक कैसे हो सकती है? सभी एक ही परमात्मा के पुत्र हैं, पिता ने अपने विभिन्न पुत्रों को भिन्न-भिन्न व्यवस्थाओं का दायित्व सौंपा है। अतः परम पिता परमात्मा की आज्ञापालन में ही लौकिक पारलौकिक कल्याण निहित है।

हमारे राजनैतिक दासत्व में द्वेष-ईर्ष्या, लड़ाई-झगड़े, भोग-विलास, स्वार्थलिप्सा, उचितानुचितनिर्णय-ज्ञानशून्यता, तज्जनित अधर्मानुकराण आदि कारण हो सकते हैं; वर्णाश्रम संस्कृति को दोष देना ठीक नहीं है। वर्णाश्रमधर्म को तिलान्जलि देने वाले भारत को अखण्ड भी नहीं रख सके, भारत भूमि के टुकड़े कर डाले। जबकि वर्णाश्रम व्यवस्था ने भारतवर्ष को कितने ही चक्रवर्ती सम्राट दिये, जिन्होंने समस्त भूमण्डल पर राज्य करते हुए दिग्-दिगन्तरों में भारतीय संस्कति की पताका फहरायी। शिवि, दधीचि, हरिश्चन्द्र, रन्तिदेव जैसे शरणागत रक्षक, दानी, परोपकारी, सत्यवादी राजाओं की गौरवशाली गाथाएं आज भी वर्णाश्रम व्यवस्था की उत्कृष्टता का प्रतिपादन करती हैं। संख्यातीत ब्रह्मचारी, सद्गृहस्थ, वानप्रस्थी, संन्यासी, सन्त-महात्मा, महापुरुष, दार्शनिक, ब्रह्मवेता, परमराष्ट्रभक्त वीर योद्धा और अवतारों को प्रकट करने वाली इस वर्णाश्रम व्यवस्था को हेय मानना, निन्दा करना, अपने ही महान् पूर्वजों का उपहास उड़ाना है, भारतीय संस्कृति को नकारना व भारत राष्ट्र का निरादर करना है।

श्रुतिस्मृति पुराण प्रतिपादित, वर्णाश्रम से सम्भूषित, सत्य, ज्ञान और दया से परिपूरित सनातन धर्म सर्वश्रेष्ठ है- 'श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त वर्णाश्रमविभूषितः। सत्यज्ञानदयापेतो धर्मः श्रेष्ठः सनातनः॥' इस महाभारतीय वचनानुसार धर्मसंघ से सम्बद्ध साधु, सन्त-महन्त, महात्मा, सद्गृहस्थ शास्त्रवेत्ता सज्जनवृन्द सम्पूर्ण भारतवर्ष में, प्रत्येक प्रदेश, प्रत्येक नगर और गाँव-गाँव में विभिन्न धार्मिक आयोजनों व धर्मसभाओं के माध्यम से सनातन धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध हो गये। पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज शास्त्रीय शाश्वत सिद्धान्तों का प्रतिष्ठापन, सनातन धर्म का वैशिष्ट्य प्रतिपादन व धर्मसंरक्षण अभियान में जहाँ भी जाते, वहाँ अनायास ही 'धर्मसंघ' की शाखाएँ स्थापित हो जाती। लोग प्राणप्रण से धर्मसंघ के पुनीत कार्य करने को समर्पित हो जाते। धर्मसंघ के संस्थापक सदस्य तपोमूर्ति नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूज्य श्री जीवनदत्त महाराजजी ने भी अपने नरवर महाविद्यालय के वेदविभाग को पृथक् करके 'धर्मसंघ वेद पाठशाला नरवराश्रम' नाम रख दिया। जिसके प्रधानाचार्य-वेदाध्यापक के रूप में उद्भट वैदिक विद्वान श्री पं. रमेश प्रकाश शर्मा को नियुक्त किया गया, जो कि जटादि घनान्त मन्त्रभाग के विशिष्ट विद्वान थे। यह वेदपाठशाला दर्शन भवन और भोजनालय के मध्य निर्मित चार कच्चे कक्षों में चलती रही। कच्चे कोठों के सामने बड़े-बड़े झप्पड़ पड़े हुए थे और दक्षिण की ओर उत्तरमुख एक सुन्दर फूँस की

झौंपड़ी थी। आज नरवर में इतने क्षेत्र को धर्मसंघ नाम से जानते हैं। इस तरह पूज्य महाराजश्री ने 'धर्मसंघ वेद पाठशाला' स्थापित कर धर्मसंघ संस्था के प्रति सम्मान और सहयोग का भाव प्रकाशित किया।

नरवरस्थ धर्मसंघ वेद पाठशाला को सुचारु रूप से चलाने के लिए नरवर के वैदिकों व नरवर से ही सम्बद्ध पूज्य महाराजश्री के विशेष कृपापात्र ऋषिकेश वेदविद्यालय के अधिष्ठाता, शतपथब्राह्मणादि ग्रन्थों के मर्मज्ञ, भाष्यभाग के महान ज्ञाता वैदिक प्रवर श्री बालकरामशास्त्री आहिताग्निजी का प्रशंसनीय सहयोग रहा। स्वकीय वैदिक मण्डली सहित कुछ समय नरवर में ठहर कर उन्होंने इस वेदपाठशाला को सुव्यवस्थित किया।

एक दिन अग्निहोत्री श्री बालकरामजी ने पूज्य महाराजश्री से यह आग्रह किया कि अब तक आपकी प्रेरणा से बहुत से यज्ञ-महायज्ञों के आयोजन सम्पन्न हो चुके हैं। अब शतकुण्डी यज्ञ का आयोजन होना चाहिए, उसे देखने की इच्छा है। उस समय तक सौ कुण्डों वाले यज्ञों की परम्परा प्रारम्भ नहीं हुई थी। उस दिन संयोग से वहाँ उपस्थित सेठ श्री गौरीशंकर गोयनकाजी ने आहिताग्निजी के कथन का अनुमोदन किया। पूज्य महाराज श्री स्वकीय स्वीकृति में बस किंचित् मुस्कुराये। अनन्त श्री षड्दर्शनाचार्य स्वामी श्री विश्वेश्वराश्रमजी महाराज के निर्वाणोत्सव में पूज्य श्रीकरपात्रीजी महाराज पधारे। अपने शिक्षागुरु की पुण्यस्मृति में समायोजित होने वाले महायज्ञ-श्रद्धाञ्जलि समारोह में वे अवश्य उपस्थित होते थे। पण्डितश्री बालकरामजी का प्रस्ताव यहाँ आने पर उन्हें ज्ञात हो ही गया था। पूज्य जगद्गुरुजी स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रमजी महाराज से परामर्श के उपरान्त यज्ञायोजन की भूमिका पर विचार प्रारम्भ हो गया।

पूज्य महाराजश्री विच्छिन्न हो चली यज्ञ परम्परा को बहुत पहले ही प्रारम्भ कर चुके थे। इटावा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद, हाथरस, आगरा, शिकोहाबाद, फिरोजाबाद, चन्दौसी, मुरादाबाद, बदायूँ आदि नगरों-उपनगरों में छोटे-बड़े पच्चासों यज्ञायोजन सम्पन्न करा चुके थे। द्विजाति परिवार के बालकों के समय पर यज्ञोपवित संस्कार कराये जाने की परिपाटी पर विशेष बल दिया जा रहा था। सविधि विवाहसंस्कार सम्पादनार्थ भी विद्यालयीय वैदिक विद्वान् तत्तत् स्थानों पर भेजे जाते। कभी-कभी तो विशेष आग्रह पर लोक शिक्षा के प्रयोजन से स्वयं श्रीमहाराजपाद ऐसे आयोजनों में समुपस्थित हो जाते थे। जहाँ यज्ञायोजन होते, वहाँ श्रीमद्भागवत महापुराण, शिवपुराण या देवी भागवतपुराण कथा के साथ-साथ धर्मसभा एवं शास्त्रार्थ सभा का भी सत्र चलता। जिसकी अध्यक्षता पूज्यमहाराजश्री के शिक्षागुरु उस समय के सुप्रसिद्ध उद्भट विद्वान् वेद व्याख्याता पण्डित श्री भीमसेन शर्मा करते थे। विशिष्ट शास्त्रार्थ सभाओं में षड्दर्शनाचार्य श्री स्वामी विश्वेश्वराश्रमजी महाराज की निर्णायक के रूप में गरिमामयी उपस्थिति रहती। पूज्य महाराजश्री श्रौत और स्मार्त दोनों ही यागों के पक्षधर थे। नरवराश्रम में तो उन्होंने छः-छः मास तक चलने वाले श्रौतयागों का आयोजन किया

था, जिसमें काशी के वैदिक विद्वान् और दाक्षिणात्य वैदिकों की समुपस्थिति रही। नरवर भी कर्मकाण्डी पण्डितों और अग्निहोत्रियों का गढ़ था।

नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूज्य श्री जीवनदत्त महाराजजी से सम्प्रेरित होकर ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी महाराज का समर्थन प्राप्त कर अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ के तत्त्वावधान में पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने देश की राजधानी दिल्ली में माघ शुक्ल वसन्तपंचमी से पूर्णिमा संवत् २००० विक्रमी पर्यन्त (३०-१-१९४४ से ९-२१९४४) प्रक्रियमाण 'शतमुख कोटि होमात्मक महायज्ञ' का समायोजन किया। परमपूज्य जगद्गुरुजी एवं श्रद्धेय धर्मसम्राट्जी के आत्मीय आग्रह पर इस वेदमाता गायत्री महायज्ञ का गायत्रीसिद्ध पूज्यपाद महाराजजी ने यजमानत्व स्वीकार किया। यहाँ अवगन्तव्य यह है कि 'जगद्गुरुजी' शब्द मात्र ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज का ही बोध कराने वाला है, 'धर्मसम्राट्' सम्बोधन एकमात्र स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज के लिए ही प्रयुक्त होता है और 'महाराजजी' सम्बोधन नरवर वाले नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्तजी महाराज के लिए ही प्रथित था।

इस अद्भुत अभूतपूर्व महायज्ञ में सर्ववेद शाखा सम्मेलन, संस्कृत साहित्य सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन, धार्मिक पत्रकार सम्मेलन, सन्त सम्मेलन, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ विशेषाधिवेशन, अष्टादश पुराणपारायण, व्याख्यान, शास्त्रार्थ व प्रवचनादि प्रायोजित थे। इस अवसर पर भारतवर्ष के समस्त विविध विद्या विशारद विद्वज्जनों का समागमन हुआ था। हजारों-लाखों संख्या में जन समूह की उपस्थिति थी। धर्मसभा में वेदादि शास्त्रों की मनमानी व्याख्या करने वालों को ललकारा जाता, शास्त्रार्थ सभा में धर्मसंघीय शास्त्रार्थ महारथी विशिष्ट विद्वानों के उपरान्त पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज-मुखारविन्द विनिःसृत-गम्भीरगर्जित श्रुतिस्मृतिसिद्ध शाश्वत सिद्धान्त सिंहनाद-अधर्म शाखा परिपोषी धर्मविदूषक मत्तमतंगों के मस्तकों को विदीर्ण कर देने वाला होता। सम्पूर्ण सभामण्डप 'धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की जय हो के गगन भेदी उद्घोष से गुंजायमान हो उठता।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में धर्मसंघ के तत्त्वावधान में धार्मिक समारोहों की क्रमबद्ध शृंखला प्रारम्भ हो गयी। जिधर देखों, उधर-पंचोङ्कार स्वरूप 'स्वास्तिक' चिन्हांकित धर्मसंघीय भगवा ध्वज-पताका फहराती दिखायी देती। फिर तो एतादृश विशाल यज्ञों का ऐसा क्रम चला कि इन्द्रप्रस्थ के पश्चात् कानपुर, मुम्बई, कलकत्ता, लखनऊ, प्रयाग, काशी, पटना आदि महानगरों में यज्ञायोजन सम्पन्न हुए। इन यज्ञों में न्यूनाधिकरूप से दिल्ली वाले यज्ञ जैसी ही रूपरेखा रहती। इस प्रकार कितने ही शतकुण्डीय महायज्ञों के द्वारा धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने भारत की सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक अन्तरात्मा एवं शक्ति को उद्बुद्ध करते हुए उपास्य देवताओं से सम्पर्क स्थापित कर राष्ट्र स्वातन्त्र्य एवं विश्वशान्ति हेतु अद्भुत प्रयास किये।

जहाँ भी धर्मसंघीय यज्ञादिक कार्यक्रम समायोजित होते, सेंकड़ों मीलों तक के नगरों, उपनगरों, गाँवों का वातावरण धर्ममय हो उठता। चतुर्दिक धर्मसंघ की ध्वजा-पताकाएँ फहराती दिखायी देतीं। बस और रेल से आने वालों का तांता लग जाता, पैदल वालों से मार्ग भर जाते। रुद्राक्ष-तुलसी माला विभूषित वक्षःस्थल, त्रिपुण्ड्र-ऊर्ध्वपुण्ड्र शोभित ललाटपट्ट, साधनासिद्ध साधु-सन्तों का समूह, जटिली-मुण्डी व्रती महन्त-महात्मा, विद्वनमण्डलीमण्डित मनहर दृश्य। लाखों सनातन धर्माश्रयी सज्जनों की समुपस्थिति। सबकुछ अतुल्य और अनुपमेय। यज्ञमण्डप के ईशानकोण स्थित स्वास्तिक अंकित धर्मसंघीय सुदीर्घ गगनचुम्बी भगवाध्वज के समक्ष करबद्ध खड़े होकर विशाल जनसमूह जब यह गीत गाता,-''ध्वजो धूयतां धर्मसंघस्य लोके'' तो गगन गुञ्जायमान हो उठता।

यज्ञादि अनुष्ठानों से जो खाद्यान्न या धन बचता, उसे निर्धनों-निराश्रितों में वितरित करा दिया जाता। पूज्य धर्मसम्राटजी निर्धनों के धन और दुर्बलों के बल बन गये, सूखा व बाढ़ पीड़ित लोगों की सहायता के लिए धर्मसंघ सतत प्रयत्नशील रहता। अकाल से परिपीड़ित बंगालवासियों को प्रदान किये गये अन्न, वस्त्र, औषधि, धन, भूमि, घर-मकान के सहयोग को बंगाल प्रदेश के निवासी कभी भूल नहीं सकते। इन आपदाओं का समाधान शासन नहीं कर सकता, सरकार देखती रही। इधर धर्मसंघ से सम्बन्धित श्रेष्ठिजनों के खजाने खुल गये। इस उपकार की कृतज्ञता में पूरा बंगाल 'गोहत्याबन्दी आन्दोलन' में श्री धर्मसम्राट्जी के साथ खड़ा हो गया था। धर्मविरोधी सरकार के द्वारा निरन्तर निर्मम अवरोध उत्पन्न करते रहने पर भी धर्मसंघ का कार्यक्षेत्र बढ़ता ही गया। धर्मसंघ के तत्त्वावधान में आयोजित सभी धार्मिक यज्ञानुष्ठानों के प्रधान संकल्प में ''धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थान निवृत्तिपूर्वक धर्मसस्थापनार्थम्'' यह सनातन धर्मोद्धारक वाक्य अवश्य बोला जाता था, जो आज तक प्रचलित है। 'धर्मसंघ' संस्था द्वारा चलाये सभी धार्मिक समारोहों, सत्याग्रह व आन्दोलनों में शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य, सौर्य और जैन, सिख, बौद्ध आदि सम्प्रदायों के महापुरुष एवं मतानुयायी महानुभाव भेद-भेदनपूर्वक एकीभाव को अङ्गीकृत करते हुए एक मंच पर एकत्रित हो गये। धर्मोद्धार और राष्ट्रोद्धार के इस पुनीत महाअभियान में सभी ने पूज्यपाद धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के नेतृत्व को सहर्ष-सादर स्वीकार किया।

अनन्तश्री विभूषित विश्वबन्द्य अभिनवशंकर यतिचक्रचूड़ामणि परमहंस परिव्राजकार्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज ने सुदीर्घ काल शत-सहस्राब्धियों तक मननशील महामनीषियों की मनीषा को मननीयार्थ सम्प्रदान करने वाले लगभग सत्तर ग्रन्थरत्नों की रचना की। जिनमें वेदस्वरूप विमर्श, चातुर्वण्य संस्कृति विमर्श, वेदप्रमाण्य मीमांसा, रामायणमीमांसा, भक्तिरसार्णव, भक्तिसुधा, भागवत सुधा, राधासुधा, श्रीविद्यारत्नाकर, वेदार्थपारिजात प्रभृति प्रमुख हैं। पूज्य

धर्मसम्राट्जी द्वारा प्रणीत ग्रन्थ साहित्य को 'करपात्र दर्शन' नाम से जाना जा सकता है। मुझे स्मरण आता है–सप्तसरोवर हरिद्वारस्थ अनन्तश्री स्वामी भूमानन्द तीर्थ जी महाराज के आश्रम में समुपस्थित विद्वद्वरेण्य यतिमण्डल व मूर्धन्य विद्वानों के मध्य 'राजराजेश्वरी भगवती त्रिपुरसुन्दरी प्रतिमा' प्रतिष्ठापना के शुभावसर पर गोवर्धनपुरी पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री निरंजनदेव तीर्थजी महाराज ने मुक्तकण्ठ से कहा था कि 'जिसने करपात्रदर्शन का अध्ययन कर लिया, समझो–सुनिश्चित ही उसे सर्व शास्त्रसिद्ध शाश्वत सिद्धान्तों की सम्प्राप्ति सुलभ व सम्भव हो गयी और वह सर्वशास्त्र निष्णात हो गया।' महान आश्चर्य! दैनिक दिव्य देवोपासन, श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहास ग्रन्थों का अनुशीलन, वेदान्तादि उत्कृष्ट ग्रन्थों का अध्यापन चार–छः घण्टे नित्य प्रवचन, धार्मिक–सामाजिक सत्याग्रह–आन्दोलन, सम्पूर्ण भारत में पदातिभ्रमण, यज्ञानुष्ठान–आयोजन, रामराज्य परिषद् प्रकल्प परिचालन इतना सब कुछ करते हुए अत्यधिक व्यस्तता में बृहद ग्रन्थरत्नों का प्रणयन; निश्चित ही वे अलौकिक अप्रतिम अवतारी महापुरुष थे।

भारत राष्ट्र की सर्वसाधारण जनता को भी उन्होंने समस्त शास्त्र सारांश के रूप में "धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो।" यह महावाक्य चतुष्टय प्रदान किये। यह चार महावाक्य धर्मसंघ के प्रतीक व प्रयोजन के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुए। धर्मसंघ के किसी भी कार्यक्रम–समारोह के प्रारम्भ और समापन में इन्हीं वाक्यों का उद्घोष होता था, जो आज तक भी प्रचलित हैं। पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज जहाँ भी जाते, इन्हीं वाक्यों के समुद्घोष से उनका स्वागत–सत्कार होता। वे भी स्वयं भाषण–प्रवचन के आदि और अन्त में इन्हीं नारों का उच्चारण करते।

भारत एक धर्मप्राण देश है। 'धर्मः प्राणो बल स्थिरांशो जीवितदशानुमायक–नासावायुश्च यस्य सः'– इस व्युत्पत्ति के अनुसार धर्म भारत का प्राण, बल, स्थिरांश व जीवन है। धर्म के बिना भारत प्राणहीन, बलहीन, स्थिरांशहीन व निर्जीव है। अतः अपने भारतवर्ष को प्राणवान्, बलवान्, ऊर्जावान, स्थैर्यवान् एवं सजीव बनाये रखने के लिए धर्माचरणात्मक धर्म का संरक्षण परमावश्यक है तथा प्रत्येक भारतीय का सर्वोपरि कर्तव्य है। धर्म की रक्षा राष्ट्र की रक्षा है, क्योंकि धर्म भारत राष्ट्र का प्राण है। फिर धर्म बड़ा या राष्ट्र? यह प्रश्न ही नहीं बनता। धर्म की रक्षा से ही व्यक्ति, परिवार, समाज व राष्ट्र रक्षित रहता है–धर्मो रक्षति रक्षितः। जहाँ धर्म है, वहाँ जयत्व सिद्ध है–यतो धर्मस्ततो जयः। पुरुषार्थ चतुष्टय में भी प्रथम पुरुषार्थ धर्म है। धर्म ही अर्थादि अन्य पुरुषार्थों का आधार व भारतीयता के उत्कर्ष का प्रथम सोपान है। पूज्यपाद स्वामी श्री धर्मसम्राट् जी महाराज प्रदत्त महावाक्यचतुष्टय में प्रथम महावाक्य धर्म की जयत्व सिद्धि के लिए है।

धर्म की जय हो -

धारणार्थक 'धृत्र्' धातु से मनिन् प्रत्यय करने पर 'धर्म' शब्द निस्पन्न होता है। धर्मेण धार्यते सर्वं जगत्स्थावर जंगमम्। अनादिनिधना शक्तिः ह्योषा ब्राह्मी द्विजोत्तमाः॥ (कू.पु.,पू.वि., २-५९) ध्रियते लोकः अनेन-जिससे लोक धारण किया जाय, वह धर्म है। जडजंगमात्मक सम्पूर्ण जगत् धर्म से ही धारित है। सूर्य, चन्द्र, अनिल, मेदिनी, समुद्रादि सबको धर्म ही धारण करता है। यह धर्मशक्ति निश्चय ही आदि और अन्त से रहित ब्राह्मी शक्ति है। धरतीति धर्मः,-जो धारण करता है वह धर्म है। धारयतीति धर्मः,- जो धारण कराये वह धर्म है। ध्रियते यः स धर्मः,- जो धारण किया जाये वह धर्म है। धरति धारयतीति मानवतां यः स धर्मः,- जो मानवता को धारण करे या कराये वह धर्म है। मानव का धर्म है मानवता। मानवता रूप धर्म के बिना मानव, मानव नहीं कहा जा सकता। वह तो पशु तुल्य हो जायेगा। क्योंकि आहार निद्रा, मैथुनादि मनुष्य और पशु में समानरूप से विद्यमान हैं, मनुष्य में एक धर्म ही तो है जो उसे पशु से पृथक करता है-आहार निद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्। धर्मो हि तेषा मधिको विशेषः धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥ भागवत के प्रसिद्ध टीकाकार आचार्य वंशीधर धर्म का लक्षण करते हैं-घ्रियतेऽधः पतन् पुरुषोऽनेनेति धर्मः। जो गिरते हुए व्यक्ति को धारण करे-उसका पतन न होने दे, उसे धर्म कहते हैं। वैशेषिकदर्शन के प्रवर्तक महर्षिकणाद के अनुसार 'यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः'-जिससे इहलोक और परलोक में कल्याण और मोक्ष की सिद्धि हो वह धर्म है। वस्तुतः जो जगत् की स्थिति का कारण और प्राणियों के सर्वविध अभ्युदय एवं पारलौकिक परमोत्कर्ष का हेतु है, वह धर्म है-जगतः स्थितिकारणं प्राणिनामभ्युदय निःश्रेयसहेतुः धर्मः।

धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः। यत्स्याद्धारण संयुक्तं स धर्म रति निश्चयः॥ (म.भा.क.प. ५९-६९) धारण करने से इसे धर्म कहते हैं, जो समस्त प्रजा(जडजंगमात्मक जगत्) को धारण करता है। अतः यह निश्चय है कि जो धारण से युक्त है वह धर्म है। सरलतापूर्वक इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि अग्नि की धारणा शक्ति है-दाहकता। दाहकता रूप धर्म को धारण करने से ही अग्नि को अग्नि कहा जाता है। अग्नित्व रूप दाहकता धर्म न रहने पर उसे अग्नि नहीं कहा जा सकता। उसका न नाम रहेगा, न रूप फिर उसे भस्म (राख कहेंगे)। धर्मी की सत्ता धर्म से है, धर्म नहीं तो धर्मी भी नहीं। इसलिए कहा गया है कि धर्म स्वरूप का रक्षक होता है-स्वरूपरक्ष्को धर्मः। धर्म का ज्ञान प्राप्त करने वालों को वेद ही परमप्रमाण है- धर्म जिज्ञास्यमाणानां प्रमाणं परमं श्रुतिः। (मनु. २-१३) वेद में कर्तव्यत्वेन जो कहा है वह धर्म है, इसके विपरीत अधर्म-वेदप्रणहितो धर्मोह्यधर्मस्तद्विपर्ययः। (श्रीमद्भाग.) अतः वेदविहित कर्मों को न करना और निषेध किये गये कर्मो को करना अधर्म है। अतः धर्म का सुस्पष्ट लक्षण हुआ-वेदविहितत्वं धर्मत्वम्। वेद जिसकी आज्ञा देता है वह ही

धर्म है, जिन कर्मों को निषेध करता है वह अधर्म है। श्रुति-स्मृति भगवान् की आज्ञा है-श्रुतिस्मृते ममैवाज्ञे यस्त उल्लंघ्य वर्तते। आज्ञाभङ्गी ममद्वेषी नरकं प्रतिपद्यते॥ (वा.पु.) भगवान् कहते है कि जो श्रुतिस्मृति के वचनों का उल्लंघन करता है, मेरी आज्ञा को भंग करने वाला मुझसे ही द्वेष करता है, इससे वह निश्चित नरकगामी होता है। श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास (महाभारतादि) प्रतिपादित कर्तव्य कर्म धर्मसंज्ञक हैं। क्योंकि इतिहास और पुराण पञ्चमवेद के रूप में स्वीकृत हैं- इतिहासपुराणानि पञ्चमं वेदरीश्वरः। सर्वेभ्य एवं वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनः॥ (भाग ३-१२-३९) देवीभागवत में तो श्रुति-स्मृति भगवान् के दो नेत्र और पुराण को हृदय कहा है। त्रयोक्त ही धर्म है, अन्यत्र कहा गया धर्म नहीं-श्रुतिस्मृति उभे नेत्रे पुराणं हृदयं स्मृतम्। एतत् त्रयोक्त एवं स्याद्धर्मो नान्यत्र कुत्रचित्॥ गीतोपनिषद् में भगवान् स्वयं कहते है कि जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है वह न तो सिद्धि को प्राप्त करता है, न परम गति और न सुख को ही। अतः कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण है,-ऐसा जानकर शास्त्रविधि से नियत कर्म ही करने योग्य है- यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धि मवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥ तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ। ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्मकर्तुमिहार्हसि॥ (१६/२३-२४)

धर्म के जितने भी लक्षण-उपलक्षण या धर्माङ्ग हैं- सत्य, अहिंसा, अकामता, अलोभमता, अक्रोधता, सर्वभूतहितेहा, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धृति, क्षमा, दम, दया, दान, धी-शास्त्रदितत्त्वज्ञानबुद्धि विद्या-आत्मबोध, पुण्य, न्याय, सदाचार, विहितनित्यकर्म, यज्ञ, तप, परोपकार, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, सन्तोष, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान-ब्रह्मचिन्तन,- ये जहाँ भी होंगे, जहाँ भी आचरित होंगे। वहाँ-वहाँ परमोत्कर्ष अवश्य होगा, जय सुनिश्चित होगी। नहि सत्यात् परोधर्मः, यतो धर्मस्ततो जयः, सत्यमेव जयते नानृतम्-सत्य की ही जय होती है, असत्य की कभी नहीं। महाभारत-रामायणादि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। धर्म का जयत्व तो स्वतः सिद्ध है। जयति-सर्वोत्कर्षेण वर्तते। पूज्यपाद धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज का यह प्रथम महावाक्य- 'धर्म की जय हो' इसी यथार्थ का उद्बुद्ध उद्घोष करता है।

अधर्म का नाश हो-

सर्वप्रथम 'धर्म की जय हो' उच्च स्वर व घनगम्भीर वाणी से यह उद्घोष किया जाता फिर द्वितीय वाक्य के रूप में 'अधर्म का नाश हो'। इससे यह सुस्पष्ट ही है कि जहाँ धर्म की जय है, वहाँ अधर्म का नाश सुनिश्चित है। धर्म की अभिवृद्धि होने पर स्वभाव से ही परस्पर विरोध होने के कारण अधर्म दुर्बल होता हुआ नाश को प्राप्त होता है। जहाँ धर्म है वहाँ अधर्म नहीं रहता और जहाँ अधर्म है वहाँ धर्म नहीं ठहरता। धर्म और अमर्ध का रवि और रजनी की तरह विरोध है। सूर्य की उपस्थिति में अन्धकार दिखायी नहीं देता और अन्धकार की स्थिति में प्रकाश अप्राप्त रहता है। जैसे

जल और अग्नि एक साथ नहीं रहते, वैसे धर्म और अधर्म एक साथ नहीं रह सकते। धर्मरूप सूर्य के समुदित होते ही अधर्मरूप अन्धकार, तिरोहित हो जाता है, अधर्म का नाश होता है। समग्र इतिहास पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट हो जायेगा कि जहाँ, जब, कहीं, जिसने भी अधर्म का मार्ग चुना, अधर्म क मार्ग पर चलने वाले का सर्वनाश ही हुआ। इससे बड़ा उदाहरण और क्या होगा कि विश्वभर के महापराक्रमी योद्धाओं का साथ होने पर भी अधर्मानुयायी दुर्योधन का सर्वनाश हुआ। महाबलशाली रावण-कंसादि दुराचारियों का परिणाम क्या हुआ? कौन नहीं जानता। दुराचारी का दुराचार कुछ समय के लिए अपना चमत्कार दिखाये, पर अन्त में होता उसका नाश ही। 'अधर्म का नाश हो' यह वाक्योद्घोष इसी तथ्य की ओर संकेत करता है।

प्राणियों में सद्‌भावना हो-

यहाँ सद्‌भावना में 'सत्' शब्द है। सत् का अर्थ है-सत्य। गीता में 'सत्' शब्द से ब्रह्म को कहा गया है। वह 'सत्' शब्द वाच्य ब्रह्म सर्वत्र व्याप्त है। इसलिए 'प्राणियों में सद्‌भावना हो'-अर्थात् भगवद् बुद्धि हो, यह तृतीय उद्‌घोष वाक्य है। जिन्होंने अद्वैतवाद से द्वैतवाद को जीत लिया है, ऐसे अद्वैतवादियों के मत में ब्रह्मैवेदं सर्वम्, एकमेवाद्वितीयम्, नेह नानास्ति किञ्चन, इत्यादि दिव्य धारणा स्थिर है। उनके मत में राग-द्वेष व भेदबुद्धि ही नहीं है तो उससे उत्पन्न वैषम्य को दूर करने के लिए 'प्राणियों में सद्‌भावना हो'-इस उदघोष की सार्थकता ही क्या है? इसका उत्तर है कि 'सर्वत्र ब्रह्मबुद्धि हो' यह इस उद्‌घोष का अभिप्राय है। इसलिए यह महावाक्य ब्रह्मसत्ता का प्रकृष्ट दर्शन कराने वाला जीवो ब्रह्मैव नापरः, अयमात्मा ब्रह्म, -इत्यर्थक यह उद्‌घोष सनातन धर्मावलम्बियों के द्वारा किया जाता है। ब्रह्मार्पण बुद्धि से जो-जो वैदिक कार्य किये जाते हैं वे भी गीता में 'सत्' शब्द से कहे हैं, इस प्रकार यज्ञ-दानादि कर्म में जो स्थिति (निष्ठा) है वह भी सत् शब्द से कही गयी है। यहाँ सत् शब्द से कहा जाने वाला परमात्मभाव, श्रेष्ठभाव और परमात्मा की प्राप्ति के लिए जो वेदविहित प्रशस्त कर्म हैं वह इस उद्‌घोष में सद्‌भाव पद को प्राप्त हैं। वेद में विविध अर्थों में प्रयुक्त होने से यह 'सत्' शब्द, शब्द और अर्थ की महिमा के अनुसार तत्तत् अर्थों में संश्लिष्ट है। प्रसङ्ग प्राप्त अर्थ को लेकर ही विवेकशील पुरुष को 'सत्' शब्द का समयोचित अर्थ में व्यवहार करना चाहिए। प्राणियों में सत् भावना हो अर्थात् परस्पर प्रेमभाव हो, इस अर्थ में सत् शब्द का निदर्शन होने से द्वैतभाव में भी श्रेष्ठपुरुषों के साथ मित्रता हेतु प्रयोग करना उचित है। यहाँ पर सभी के साथ समुन्नत मैत्री हो, सभी के प्रति प्रेम हो, परस्पर हितचिन्तन हो, सभी में आत्मीयता का भाव हो, पारस्परिक सहयोग की भावना हो, सभी में ब्रह्मबुद्धि हो, वेदविहित यज्ञ-दानादि में प्रवृत्ति हो,-यह ही 'प्राणियों में सद्‌भावना हो' इस महावाक्य का अभिप्राय है।

विश्व का कल्याण हो-

धर्मसंघ का यह चतुर्थ महावाक्य उक्त भाव का परिणामभूत बोध कराने वाला है। सम्पूर्ण विश्व के सर्वाङ्गीण कल्याण की कामना करने वाला ऐसा उद्घोष समस्त संसार में अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ के अति रिक्त किसी भी देश में देखने-सुनने में नहीं आता। भारतवर्ष के सिद्धान्त में आत्मा ही विश्व है और विश्व ही आत्मा है। जिसमें हरिरेव जगज्जगदेव हरिः, सियाराममय सब जग जानी, वसुधैव कुटुम्बकम्, स्वदेशो भुवनत्रयम्,-जैसे सर्वोच्च भाव समाहित हैं। जिन भावों में शत्रु और मित्र में समान अवस्थिति है, स्वभावतः उसके लिए प्राणिमात्र मित्र ही है, इसलिए प्राणिमात्र के कल्याण की भावना सन्निहित रहती है। यह जगत् ब्रह्म से अभिन्न है-ऐसा विचार करके जो विश्व के कल्याण की कामना करे हैं वे ही मनुष्यों में श्रेष्ठ है। सभी प्राणियों में परमात्मा स्थित है और सम्पूर्ण विश्व परमात्मा में ही अवस्थित है,-जो यह जानते हैं वे ही अपने हृदय में विश्व का कल्याण चाहते हैं। संसार में अपना कल्याण चाहने वाले तो बहुत लोग हैं, किन्तु हृदय से विश्व का कल्याण चाहने वाले पृथिवी पर कोई-कोई महापुरुष है। संसार के सन्तुष्ट होने पर जो सन्तुष्ट होता है, संसार के दुःखी रहने पर दुःखी रहता है तथा समान रहने पर समान रहता है, जन समुदाय में वह ही आदरणीय है-पूजनीय है। लोक कल्याण कारक यह महावाक्य पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्री जी महाराज द्वारा भारतीय जनता को सम्प्राप्त हुआ है, अतः वे विश्ववन्द्य हैं। अपना ही नहीं, अपना घर-परिवार, समाज, प्रदेश व देश का ही नहीं सम्पूर्ण विश्व का सर्वविध अभ्युत्थान हो। यह इस उद्घोष महावाक्य का तात्पर्य है।

इन चार महावाक्यों का परस्पर समन्वय करने पर भी सुस्पष्ट हो जाता है कि जहाँ धर्म की जय है, वहाँ अधर्म का अभ्युत्थान असम्भव ही है। क्योंकि दोनों का साथ-साथ रहना कदापि सम्भव नहीं है। धर्मप्राण मानवों में स्वभाव से ही सद्भाव समुपलब्ध रहता है। सद्भावना भावित धर्मानुरागी सज्जनों की संगति से पारस्परिक सद्भाव सिद्ध होने पर विश्वकल्याण की कामना समुद्भुत होती है। विश्वकल्याणकारी महापुरुषों के द्वारा विश्वकल्याण की इच्छा से धार्मिक समारोहो के अवसर पर जनसमुदाय में इन महावाक्यों का उच्च स्वर में उद्घोष किया जाता है।

हर हर महादेव -

उक्त वाक्यचतुष्टय के उद्घोष के उपरान्त ऊपर हाथ उठा कर सर्वोच्च स्वर से 'हर हर महादेव' का उच्चारण किया जाता है। समस्त पाप-ताप, कष्ट-संताप, रोग-दोष, विघ्न-बाधा हरण करने वाले (हरतीति हरः) हे हर! हे महादेव! हम सर्वतोभावेन आपके लिए समर्पित हैं। आपके शरणागत हैं, हमारी रक्षा करें। भारतवर्ष की प्रतिष्ठाभूत संस्कृत और संस्कृति की रक्षा करें। सनातन धर्म के संरक्षण का सामर्थ्य प्रदान करें। लघुपाप हों या बहुपाप हों भगवान् हर उनका हरण कर लेते हैं, इसलिए ही साक्षात्

शिव उक्त उद्घोष वाक्य में नियोजित हैं- हरः हरति पापानि लघून्यपि बहूनि वा। तस्मादेव शिवः साक्षात् हर हर वाक्ये नियोजितः॥ ब्रह्मवैवर्तपुराण में आया है-

महादेव महादेव महादेवेति वादिनम्। वत्सं गौरिव गौरीशो धावन्त मनुधावति॥

महादेव महादेव महादेवेति यो वदेत्। एकेन मुक्तिमाप्नोति द्वाभ्यां शम्भु ऋणी भवेत्॥

"महादेव, महादेव, महादेव बोलने वाले अपने भक्त के पीछे गिरिजापति इस प्रकार दौड़ते हैं, जैसे गाय अपने बछड़े के पीछे दौड़ती है। जो तीन बार 'महादेव' का उच्चारण करता है, भगवान् शिव एक बार बोलने मात्र से उसे मुक्ति प्रदान कर देते हैं और दो बार के बोलने से भगवान् आशुतोष शम्भु अपने भक्त के ऋणी हो जाते हैं।" प्लुत स्वर से 'हर हर महादेव' के उदात्त उद्घोष से आकाशमण्डल गुञ्जायमान हो जाता है और यह महाउद्घोष भारतवर्ष के धर्मप्राण होने की उद्घोषणा करता है।

धर्मसम्राट् पूज्य स्वामी श्री करपात्रजीजी महाराज के नेतृत्व में संचालित सन् १९६६ के देशव्यापी 'गोहत्याबन्दी आन्दोलन' के काल में दो उद्घोषवाक्य और जोड़े गये 'गोहत्याबन्द हो' और 'गोमाता की जय हो।' जो आज भी प्रचलित हैं।

गोहत्या बन्द हो-

गौ हमारी माता है, हमारी सांस्कृतिक धरोहर है, भारत देश की अमूल्य सम्पदा है। गाय का कोई मूल्य नहीं-गोस्तु मात्रा न विद्यते (यजु. २३-४८) उसकी कोई मात्रा नहीं,-मात्रा मूल्यं मीयते परिमीयतेऽनया सा मात्रा। इस मन्त्र में ब्रह्म की उपमा दी गयी,-ब्रह्म कैसा है? सूर्य समं ज्योतिः-ब्रह्म सूर्य के समान ज्योति है। समुद्र के समान कौन सरोवर है? द्यौः समुद्रसमं सरः-अन्तरिक्ष समुद्र के समान सरोवर है, जिससे वृष्टि होती है। पृथिवी से बढ़कर कौन है? इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान्-इन्द्र पृथिवी से बढ़कर है। कस्य मात्रा न विद्यते-किसकी इयत्ता (परिणाम, तुलना या उपमा) नहीं है? मन्त्र कहता है-गोस्तु मात्रा नविद्यते, गौ की कोई तुलना नहीं, इयत्ता नहीं। यज्ञ धारकत्वात् (म.भा.) क्योंकि वह यज्ञ को धारण करती है।

इससे पूर्व का मन्त्र प्रश्नात्मक है किं स्वित् सूर्यसमं.। दूसरे मन्त्र में उत्तर है ब्रह्मसूर्यसमं. (यजु.२३/४७४८)। भारत वर्ष की इस अमूल्य सम्पदा की हत्या हो? और अपने ही देश में, देश के शासकों के आदेश से? यह कैसे? सहन कर सकता था धर्मात्मा धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का हृदय।

वेद कहता है- रूपायाघे ते नमः (अथर्व. शौ. सं. १०/२०/२, पैप्प. १६-१०६-९) अघ्न्ये! ते रूपाय नमः- हे अवध्ये! तुम्हारे स्वरूप को नमस्कार है, तुम्हारे शरीर को प्रणाम है। गो अघ्न्या है, अनागा है, हमारी माता है इसका वध मत करो- मा गामनागा मदितिं वधिष्ठ (अथर्व ४२१) पूरा मन्त्र है-

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाम मृतस्य नाभिः। प्रनुवोचं चिकितुषे जनाय मा गा मनागा मदितिं वधिष्ठ।। अस्यार्थः- इयं गौ रुद्राणां माता, वसूनां दुहिता, आदित्यानां

स्वसास्ति, तथा अमृतरूपस्य नाभिः विधिरस्ति। प्रनुवोचं–तस्माद् भगवता वेदवाचादिष्टम्–चिकितुषे जनाय कल्याणकारक–विचारशीलाय जनाय वसुरुद्रादित्यदेवपितृ कोपभाजनत्व निरास पूर्वकं तेषामनुग्रहप्राप्तयै अनागां अनपराधां लोकहितैषिणीं अदितिं गां मा विधिष्ठ–विश्वमातरं अवध्यां गां मा प्रपीडय। अस्या हननात् लोकपरलोकविनाशो हन्तुर्भवतीति।

निर्गुण निराकार परब्रह्म परमात्मा के सगुण–साकार भगवान् के रूप में भारत भूमण्डल पर अवतरित होने के प्रयोजनों में प्रथम प्रयोजन गोरक्षण ही है– गोसाधुदेवताविप्रवेदानां रक्षणाय वै। धनुं धत्ते हरिः साक्षाद् भगवानात्मलीलया।। परम गोभक्त भगवान् श्रीकृष्ण ने नित्य गोपूजन, गोचारण, गोसंवर्धन, गोसंरक्षण में सतत संलग्न रहकर अपने अवतार ग्रहण को सार्थक किया। जिससे कि वे परमात्मा इस धराधाम में गोविन्द नाम से पुकारे जाते हैं। भुशुण्डीरामायण में भगवान श्रीराम भी गोपाल के रूप में विस्तार से वर्णित हैं। भगवान् श्रीराम–श्रीकृष्ण ने स्वकीय गोसेवा परायणता के माध्यम से भारतीय जनों को अनिवार्य रूप से गोसेवा गोसंरक्षण के व्रत को धारण करने के लिए सुस्पष्ट शिक्षा प्रदान की है।

गोचारण काल में कमल से भी कोटिगुणित सुकोमल भगवान् श्री राघवेन्द्र रामचन्द्र–ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण के कंटकाविद्ध चरणारविन्दों से निकलती हुई रुधिर की धारा हमें पुकारती है–उठो, हिन्दुओ ! जागो, भारतीयो ! गो सेवा में सन्नद्ध हो जाओ ! गोरक्षा को अर्पित हो जाओ ! भारत की माता गोमाता विश्व की माता गोमाता, हमारी माता गोमाता, अपनी माता गोमाता पुकारती है–मेरे पुत्रो ! ऐसे ही कायर बने रहोगे, क्या? ऐसे ही तुम्हारी आँखों के सामने मेरी हत्या होती रहेगी। हुंकार भरो, ऐसी हुंकार कि गोघाती थर–थर कांपने लगें और ये सरकार 'गोवधबन्दी कानून' पारित करने को विवश हो जाये। यही इस नारे का निहितार्थ है।

गो माता की जय हो–

स्वयम्भू ब्रह्माजी ने जब लोकसृष्टि की कामना की थी, तब उन्होंने समस्त प्राणियों की जीवनवृत्ति के लिए सर्वप्रथम त्रैलोक्यमाता गौ की सृष्टि की। इसलिए गौ प्राणिमात्र की माता है–

लोकान् सिसृक्षुणा पूर्व गावः सृष्टा स्वयमभुवा। वृत्यर्थं सर्वभूतानां तस्मात् ता मातरः स्मृता॥ (म.आ.अ.प. १४६) गावो विश्वस्य मातरः, गोषु लोकाः प्रतिष्ठिताः, सर्वदेवमयी हि गौः, गो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा– इत्यादि श्रुति स्मृत्तिपुराणेतिहास वचनों से स्पष्ट है कि गाय चराचर जगत् की माता है, इसके शरीर में समस्त देवता, तीर्थ और लोक प्रतिष्ठित हैं। गौ सनातन धर्म और भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। वेद में गोमाता के स्वरूप को विश्वरूप व सर्वरूप कहा गया है– एतद् वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोस्वरूपम्। (अथर्व शौ.सं. ९–७–८–२५) गो की महिमा महान् है–महाँस्त्वेव गो र्महिमा। (श.ब्रा. ३–३–३–८) सम्पूर्ण जगत् ही गोरूप हैं, इसलिए जगत् के किसी एक पदार्थ से गौ की

तुलना नहीं की जा सकती, वह अतुलनीय है–गोस्तु मात्रा न विद्यते। (यजु. २३–४८) गोभिस्तुल्यं न पश्यामि धनं किञ्चदिहाच्युत। (म.भा.अनु.प. ५१–२६) गोधनं तु धनं प्राहु:– धन शब्द से गोधनरूप अर्थ ही गृहीत है, उसके बिना घर श्मशान के समान है–श्मशानमिव नद्गृहम्। गोमाता का सर्वोत्कृष्ट वैशिष्टय है, सम्पूर्ण विश्व की अधिष्ठात्री देवी, विश्वजननी की प्रदक्षिणा करने से समस्त ब्रह्माण्ड की प्रदक्षिणा हो जाती है–प्रदक्षिणी कृता सेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ब्रह्म प्राप्ति के विविध साधनों में गोसेवा श्रेष्ठ साधन है। बृहदारण्योपनिषद् में आत्मदर्शन–ब्रह्मप्राप्ति की प्रेरणा देते हुए याज्ञवक्ल्यजी ने मैत्रेयी से कहा है–आत्मा वा अरे दृष्टव्य: श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य:। यह जो आत्मसाक्षात्कार मानव जीवन का परम लक्ष्य है, वह बलहीन के लिए दुर्लभ बताया है– नायमात्मा बलहीनेन लभ्य: (मुण्डक ३–२–४) किन्तु गोसेवा से अर्जित ऊर्जा (शक्ति) इस बलहीनता की न्यूनता का निवारण कर देती है। इसलिए ही सत्यकाम को केवल गोसेवा के कारण ही विशुद्ध बुद्धि की प्राप्ति एवं आत्मसाक्षात्कार की उपलब्धि सहज समप्राप्त हो जाती है। सत्यकाम आप्तकाम–पूर्णकाम अर्थात् आत्मज्ञान की अनुभूति से युक्त जिस समय गौओं को लेकर गुरुजी के पास आया,–उस समय उसके तेज को देखकर गुरुदेव को भी कहना पड़ा कि ब्रह्मविदिव वै सौम्य भासि को नु त्वानुशशास (छान्दो. ४–९–२) हे सोम्य! तू ब्रह्मवेत्ता सा जान पड़ता है, तुझे किसने ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया है।

गोसेवा से बढ़कर कोई भी व्रत, जप, साधना या अनुष्ठान नहीं है। गोभक्त को गोसेवा छोड़कर किसी भी तीर्थ में जाने की आवश्यकता नहीं है। समस्त तीर्थों के स्नान से, कोटि ब्राह्मण भोजन कराने से, विविध धन–महादानों से, हरिहर की भक्ति से, सम्पूर्ण व्रत, उपवास और उद्यापन कृत्यों से, सभी प्रकार के उत्कृष्ट तप करने से, समस्त भूमण्डल पर भ्रमण करने से, जीवनपर्यन्त सत्य बोलने से जिस पुण्य की प्राप्ति होती है उन समस्त पुण्यों की सम्प्राप्ति शीघ्र ही गो सेवा से हो जाती है– तत्पुण्यं प्राप्यते सद्य: केवलं धेनु सेवया। (स्कन्दपुराण)

पुराणों–उपनिषदों में ऐसे अनेक आख्यान प्राप्त होते हैं, जिन्हें गोसेवा से ही नि:श्रेयस सिद्धि, ब्रह्मज्ञान–आत्म साक्षात्कार हुआ, ईश्वर की प्राप्ति हुई। क्योंकि परमात्मा गौओं के मध्य में निवास करता है अर्थात् गौओं मे बसता है–ईश्वर: स गवां मध्ये (अनु. प.७७–२९)।

गोमाता की महिमा अनिर्वचनीय है। गावस्त्रैलोक्य मातर:,–त्रिभुवन माता गौ के शरीर में–अङ्गावयवों में तैतीस करोड़ देवता निवास करते हैं। चतुर्दश लोक बसते हैं–गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश। कोई चौदह लोकों का दर्शन करना चाहे तो गाय के दर्शन करले, चौदह भुवनों को तृप्त करना चाहे तो गौ को ही तृप्त कर दे। कोई एक–एक जन्म में एक–एक देवता की उपासना करना चाहे तो उसे तेतीस करोड़ बार

जन्म लेना पड़ेगा। क्या? यह सम्भव है कि उसे निरन्तर तेतीस करोड़ बार मनुष्य का जन्म ही मिलता रहे। यदि कोई भक्त इसी जन्म में एक-साथ तेतीस करोड़ देवताओं के सेवा-पूजन का पृथक्-पृथक् पुण्य चाहता है तो उसे एकमात्र गौ की भक्ति करनी चाहिए। सर्वे देवाः स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौः। (वृ.पा.स्मृ. ३-३५) कितना बड़ा सौभाग्य और सुविधा हमें सहज ही सम्प्राप्त है। सभी अवतारों, साधु-सन्त महापुरुषों ने हमें गौसेवा की शिक्षा व प्रेरणा प्रदान की है। समस्त वेदादि शास्त्र गोभक्ति का उद्बोधन करते हैं। अतः हम भारतीयों को गोसेवा, गोरक्षा, गो-संवर्धन के प्रति सतत समर्पित रहना चाहिए। गोमाता के सर्वोत्कृष्ट महत्व को प्रदर्शित करने के लिए, गोमाता के जयत्व को प्रतिपादित करने के लिए पूज्यपाद धर्मसम्राट स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने 'गोमाता की जय हो'- यह उद्घोष वाक्य हमें प्रदान किया है।

पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की जय हो -

प्रारम्भ में उद्घोष महावाक्य चतुष्टय के उपरान्त 'हर हर महादेव' का उद्घोष किया जाता रहा। फिर गोविषयक दो नारे गोहत्या बन्द हो गोमाता की जय हो और जुड़ जाने के बाद 'पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की जय हो' का उद्घोष तथा सबसे अन्त में 'हर हर महादेव' उच्च स्वर में बोलने की शिष्ट परम्परा आज भी प्रचलित है।

जिन्होंने हमें परमकल्याण कारक उक्त महावाक्य प्रदान किये, आर्षसिद्धान्त बोधक वेदादिशास्त्र सम्मत स्वप्रणीत ग्रन्थरत्नों को प्रदत्त किया। जिन्होंने सनातन धर्म की रक्षार्थ अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। गोरक्षा हेतु अकल्पनीय कष्ट सहें, यातनाएं झेली, कारावास के कष्टों को भोगा। अपने जीवन की सम्पूर्ण साधना भारत राष्ट्र को अर्पित कर दी। यदि भारत वसुन्धरा में पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्रजी जी अवतरित नहीं हुए होते, तो आज सनातन धर्म की क्या दशा होती? कल्पना नहीं की जा सकती। क्या? कोई शास्त्रों का सम्मान करता। क्या? यज्ञादि धर्मकृत्यों को प्रतिष्ठा मिल पाती।

समस्त धर्मानुरागी सज्जन, यज्ञादि अनुष्ठानकरने कराने वाले विप्रजन भागवत-रामायणादि कथा प्रवाचक एवं उपदेशक महानुभाव किसी भी समारोह के प्रारम्भ और अन्त में प्रतिदिन उक्त महावाक्यों का उद्घोष अवश्य करें। सर्व साधारण को यह भी अवगत कराना आवश्यक है कि भारतवर्ष की जनता को धर्म मार्ग पर चलने हेतु सतत् प्रेरित करते रहने के लिए पुण्यप्रद कल्याणकारी 'धर्म की जय हो' आदि उद्घोष वाक्य किस महापुरुष ने प्रदान किये। उनकी जय बोलने से यह तथ्य उन्हें ज्ञात हो जायेगा। ऐसे भगवद्-विभूतिमत् महामहिमामण्डित महापुरुष का कृतज्ञता पूर्वक सादर स्मरण करना उनकी जय बोलना हमारा परम सौभाग्य व हम भारतीयों का कर्तव्य भी है।

महात्मा-महापुरुष के स्मरण से प्रभूत पुण्य की प्राप्ति होती है। पुण्य स्मरण से अन्तःकरण पवित्र हो जाता है। पुण्यात्माओं के स्मरण से वहाँ का स्थान, वातावरण

और घर भी पवित्र हो जाता है। जिन्होंने ऐसे अलौकिक, शास्त्रवेता, उदारवेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष के दर्शन किये हैं। प्रवचन सुने हैं, सेवा का अवसर मिला है, वे तो परम पवित्र हो ही गये। उनका जीवन धन्य हो गया। महाराज परीक्षित से श्रीशुकदेवजी यही तो कहते हैं –

येषां संस्मरणात् पुंसां सद्यः शुध्यन्ति वै गृहाः।
किं पुनर्दशन स्पर्श पाद शौचासनादिभिः॥

आज से लगभग २५०० वर्ष पूर्व जब भारत में नास्तिकता का बोल–बाला था। अवैदिक मतानुयायियों के द्वारा वेदनिन्दा, शास्त्रनिन्दा, यज्ञनिन्दा, तीर्थनिन्दा व ईश्वरनिन्दा का प्रचार–प्रसार जोरों पर था। सनातन धर्म पर संकट के बादल छाये हुये थे। वैदिक धर्मावलम्बी चिन्तित हो उठे थे कि को वेदानुद्धरिष्यतिवेदों का उद्धार कौन करेगा? ऐसे विषम परिस्थिति के काल में भगवान् श्री आद्यशंकराचार्य ने पुण्यभूमि भारत में अवतरित होकर वैदिक धर्म का संरक्षण किया और भविष्य को ध्यान में रखते हुए चतुर्दिक् चार मठों की स्थापना करके उन पीठों पर सुयोग्य शास्त्रज्ञ संन्यस्त शंकराचार्यों को पदासीन किया तथा पुनः सनातन धर्म की पताका फहराई। पन्द्रह सौ वर्ष के अन्तराल के बाद जब दीर्घावधि के पारतन्त्र्यकाल में वैदेशिक आक्रान्ताओं के द्वारा सनातन धर्म पर कुठाराघात होने पर धर्म पर महान् संकट उपस्थित हो गया। वैदेशिक शिक्षा पद्धति ने भी नास्तिकता और धर्म विमूढ़ता को प्रोत्साहित किया। अधर्मानुकरण बढ़ गया, शास्त्रमर्यादा छिन्न–भिन्न हो गयी, उच्छृंखलता पनपने लगी। फिर वही प्रश्न उपस्थित हो गया कि अब सनातन धर्म की रक्षा कौन करेगा? कैसे सनातन सिद्धान्तों का संरक्षण होगा? कौन करेगा शास्त्र और संस्कृति उद्धार? बीसवीं सदी आते–आते देश को इन प्रश्नों का समाधान परमात्मा की कृपा से प्राप्त हो गया। अभिनव शंकर के रूप में पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्री जी महाराज का धर्मोद्धार व राष्ट्रोद्धार के लिए भारत भूमि पर आविर्भाव हुआ।

वेदादिशास्त्रों के महान् ज्ञाता परमवीतराग तपःपूत इस युवा सन्यासी ने सम्पूर्ण भारतवर्ष में पदाति यात्राएँ करते हुए धर्मजागरण व राष्ट्रोत्थान का ऐसा बिगुल फूँका कि विश्व चमत्कृत हो उठा। समस्त शास्त्रीय सम्प्रदायों के आचार्यों, धर्मात्मा महात्माओं, विद्वानों, सनातनधर्माश्रयी महानुभावों व सन्मार्गानुयायी सज्जनों को संगठित करते हुए 'धर्मसंघ' नामक संस्था की स्थापना की। शास्त्रार्थ–प्रवचनों के माध्यम से शास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिष्ठापन किया। शास्त्रसम्मत सनातन वर्णाश्रम धर्म, वेदादि धर्म ग्रन्थों व श्रीरामकृष्णादि अवतारों पर लगाये जाने वाले कुतर्कपूर्ण आक्षेपों का तर्कपूर्ण प्रबल प्रामाणिकता के साथ खण्डन किाय। पूज्य श्री करपात्री जी के समय में शास्त्र विरुद्ध लिखने बोलने का सामर्थ्य किसी में नहीं था, चाहे उत्कृष्ट विद्वान् श्री मालवीय जी हों, चाहे महापण्डित राहुल सांकृत्यापन हों या श्री सम्पूर्णानन्द जी अथवा

उस समय का कोई उद्भट विद्वान्। शास्त्र विरुद्ध सुनना उन्हें कदापि स्वीकार नहीं था। तुरन्त प्रामाणिक उत्तर देते, निर्भीक होकर खण्डन में पुस्तक तक लिख देते। राजनीति के परिमार्जन के लिए उन्होंने 'रामराज्य परिषद्' की स्थापना की। धर्म को राजनीति से पृथक् करने की राजनेताओं की बात को नकारते हुए कहते थे कि 'धर्म के बिना राजनीति विधवा है, धर्म रहित राजनीति सुख-शान्ति रूपी सन्तानोत्पादन में सक्षम नहीं हो सकती।' तात्कालिक राजनीतिक अवधारणाओं और पाश्चात्य विचारों का खण्डन करते हुए कहते हैं कारावास में उन्होंने अप्रतिम ग्रन्थ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' ग्रन्थ लिखा। जिसमें धर्म, संस्कृति, सभ्यता, दर्शन, समाजवाद, अर्थव्यवस्था, पूंजीवाद, मार्क्सवाद और राजनीति आदि के विषय में सूक्ष्म व विस्तृत विवेचन है। पूज्यपाद की प्रतिभा देखकर सारा विश्व अवाक् रह गया।

'भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा'- भारती की प्रतिष्ठा के मूलभूत संस्कृत और संस्कृति व पुरातन शास्त्रीय परम्पराओं को अक्षुण्ण रखने तथा सदाचारपरक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से 'धर्मसंघ शिक्षा मण्डल' की भी स्थापना की आधुनिक विषयों के साथ-साथ व्याकरण, न्याय, दर्शन, साहित्य, ज्योतिष, कर्मकाण्ड, वेद-वेदाङ्ग आदि विभिन्न विषयों के अध्यापन का प्रबन्ध विद्वान् अध्यापकों द्वारा किया गया। इसके अन्तर्गत आज भी अनेक नगरों में धर्मसंघ महाविद्यालय चल रहे हैं। लोक जीवन को धर्म के प्रति प्रवृत्त करने के लिए विभिन्न समाचार पत्र दैनिक 'सन्मार्ग' साप्ताहिक 'सिद्धान्त' जैसे आध्यात्मिक पत्रिकाओं का संचालन किया।

गोमाता की रक्षा के लिए अपना जीवन समर्पित करने वाले महामहिम यशस्वी तेजस्वी सर्वप्रिय इस महापुरुष ने 'गोहत्या बन्द हो'- इस मांग को लेकर सन् १४४७ में ही अहिंसात्मक सत्याग्रह छेड़ दिया। अनेकों बार जेल यात्राएं की, हजारों धर्मवीर जेल गये। कितने ही महात्मा-गोभक्त अनशन से जेल में ही गोलोकवासी हो गये। सम्पूर्ण भारतवर्ष में इस युवा सन्यासी ने जन-जागरण करके सेंकड़ो नगरपालिकाओं व जिला परिषदों आदि के द्वारा गोवध बन्दी प्रस्ताव स्वीकृत कराये। अनेक राज्यों में ऐसे ही कानून बनवाये, परन्तु केन्द्रीय कानून के अभाव में सम्पूर्ण भारत में गो हत्या बन्द न हो सकी।

अखण्ड भारत के लिए इस तरुण तपस्वी ने पुरजोर विरोध किया 'भारत अखण्ड हो'- का नारा देकर पूरे भारत में 'अखण्ड भारत सम्मेलन' आयोजित किये। देश की जनता पूज्य श्री करपात्री जी महाराज का भरपूर समर्थन कर रही थी। सरकार को हजारों विज्ञापन दिये जा रहे थे, लाखों पत्र लिखे जा रहे थे, तार दिये जा रहे थे और सरकार इस महापुरुष को जेल में डाल देती। पूज्यपाद धर्मसम्राट् जी महाराज ने पाकिस्तान स्थापना से कुछ वर्ष पूर्व ही देश के सभी कर्णधारों को इसके दुष्परिणाम के प्रति सचेत कर दिया था। पाकिस्तान स्थापना के विरोध में उन्होंने राष्ट्रव्यापी दौरे

किये, सभी नेताओं का सहयोग माँगा, परन्तु किसी ने भी इस तरुण तपस्वी वीतराग राष्ट्रभक्त सन्त का सक्रिय साथ नहीं दिया। कहने को तो कुछ नाम लिये जा सकते हैं, क्योंकि राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, श्री वीर दामोदर विनायक सावरकर, श्रीराम मनोहर लोहिया, श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी, श्री माधवराव सदाशिव राव गोलवलकल, श्री जयप्रकाश नारायण प्रभृति विभाजन विरोधियों की सूची में स्थान रखते थे; परन्तु यह भी एक कटु सत्य है कि इन सभी महानुभावों का विरोध केवल मौखिक बनकर रहा। सम्पूर्ण अखण्ड भारत में यदि कोई हृदय से सक्रिय विरोध करने वाला राष्ट्रभक्त था, तो वह थे–स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज।

नेताओं ने देश को धोखा दिया। जिसे हिन्दुओं ने अपना नेता माना उसने भी धोखा दिया। मेरी लाश पर भारत विभाजन होगा–यह कहने वाले पाकिस्तान योजना के समर्थक बन यगे। अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ के कार्यकत्ताओं–महात्माओं के साथ भारत विभाजन के महापातक से बचने के लिए पाकिस्तान–स्थापना का सक्रिय विरोध करते हुए राष्ट्रस्वातन्त्र्य की पूर्व वेला में ही लाहौर के जेल के सींकचों में बन्द था देशभक्त युवा संन्यासी मुस्लिम लीग कांग्रेस ने भारतमाता के टुकड़े करने के समझौता पर मुहर लगा दी। सारा संघर्ष, तरुण संन्यासी का धर्मयुद्ध, जेल यात्राएँ, प्रचार–प्रसार व्यर्थ गया। भयंकर उपद्रव हुए, निरीह आबाल वृद्ध नर–नारी मौत के घाट उतार दिये। ट्रेनों में हिन्दुओं की लाशें भर–भर कर आने लगीं, देश में हाहाकार मच गया।

धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज भारत राष्ट्र के प्रति अपने समर्पण से सनातन धर्मानुयायी सज्जनों, सन्त–महन्त महात्माओं पर भविष्य में लगने वाले महान् कलंक को धो दिया। यदि वे 'गोवध बन्दी' आन्दोलन का संचालन नहीं करते, हिन्दू विरोधी 'हिन्दू कोड बिल' के विरोध का बिगुल नहीं फूँकते, भारत की अखण्डता के लिए सम्पूर्ण शक्ति के साथ सत्याग्रह नहीं करते, तो देश का ऐसा विकृत इतिहास देखकर लोग यही कहते कि भारत की अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर गोमाता की हत्या जारी रही, हिन्दू कोड बिल पास हो गया, भारत माता छटपटाती रही और उसके टुकड़े हो गये, राष्ट्र का विभाजन हो गया। स्वतन्त्र भारत के ही शासकों ने यह सब कुछ कर डाला, किसी ने विरोध नहीं किया? साधु साधना में ही संलग्न रहे। धार्मिक सन्त–महात्मा भी चुप रहे, ये सब होते देखते रहे। क्या राष्ट्र के प्रति उनका कोई कर्तव्य नहीं था।

पुनः 'सर्वदलीय गोरक्षा महाभियान समिति' का गठन किया गया, जिसमें सभी दलों, मतों के आचार्य व नेताओं ने मिलकर देशव्यापी आन्दोलन चलाया। तरुण तपस्वी स्वामी श्री करपात्री जी के नेतृत्व में ७ नवम्बर सन् १९६६ को संसद भवन पर विशाल प्रदर्शन किया गया। जिसमें दस लाख गोभक्तों की उपस्थिति थी। पुरी पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी निरंजनदेव तीर्थ जी महाराज आदि कितने ही महात्माओं

ने आमरण अनशन किये, परन्तु धर्म विरोधी गोघाती शासक दल के द्वारा इस सम्बन्ध में समितियाँ आदि बनाकर आश्वासनों के आधार पर आन्दोलन बन्द करा दिया गया। इस आन्दोलन में सैंकड़ों जाने गयी तथा पूज्यपाद श्री करपात्री जी महाराज पर तिहाड़ जेल में भजन-प्रवचन करते समय खूंखार कैदियों के द्वारा अमानुष कातिलाना हमला कराया गया। जिसमें सभी सत्याग्रहियों को एवं श्री धर्म सम्राटजी को लोहे की छड़ों से पीटा गया। उनके शिरोभाग में मर्मान्तिक आघात लगा। कमर नीली पड़ गई, एक आँख की रोशनी भी जाती रही और वे तत्काल बेहोश हो गये। उपर्युक्त भयंकर व अमानवीय कृत्य के उपरान्त भी गोवध बन्द नहीं हुआ। कांग्रेस की सरकार ने दानवीयता की पराकाष्ठा को पार कर दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रयत्नों के लिए उस समय के कांग्रेस संगठन की सराहना की जा सकती है, परन्तु सत्तालोलुप, राजनैतिक पार्टी कांग्रेस ने श्री नेहरु ले लेकर श्रीमती इन्दिरा गाँधी तक गोहत्या को व सत्याग्रही सन्त-महात्माओं पर किये गये अमानवीय अत्याचार को अनुचित नहीं माना। कांग्रेस ने आज तक भी इन कुकृत्यों की देश से माफी नहीं माँगी। 'कांग्रेस' शब्द अंग्रेजी का है, इसका क्या अर्थ है ये तो अंग्रेज ही जानें। संस्कृत व्याकरण के अनुसार तो कं.-सुखं ग्रसतीति कंग्रसः, कंग्रस एवं कांग्रसः (कांगेसः)। जिसने सुख ग्रस लिया, भारतीयों का सुख, शान्ति, संस्कृति को निगल लिया, उसका नाम है कांग्रेस।

सन् १९४८ में सरकार 'हिन्दू कोड बिल' लेकर आयी, जिसमें हिन्दू विवाह तथा विच्छेद विधेयक, अप्रदत्त उत्तराधिकार विधेयक निहित थे। जो कि हिन्दुओं, हिन्दू संस्कृति व हिन्दू धर्मग्रन्थों के विरुद्ध था तथा हिन्दू वंशपरम्परा व हिन्दू महिलाओं के अहित में था। हिन्दू लॉ कमेटी ने जनमत संग्रह करके यह रिपोर्ट भी दी कि बहुमत इसके विरुद्ध है। जनता की ओर से ऐसे कानूनों की माँग भी नहीं थी। उच्च-न्यायालय के अनेक अधिवक्ता-न्यायाधीशों ने भी इसे अमान्य ठहराया। पूज्य श्री करपात्री जी महाराज ने इसका ऐसा देशव्यापी विरोध किया कि एक बार को तो सरकार हिल गयी। सरकार को यथावत् इसको पास करने का संकल्प स्थगित करना पड़ा, किन्तु सम्पूर्ण भारत में प्रबल विरोध होने पर भी नेहरुजी की जिद इस बिल को पास करने पर तुली थी। अन्ततः खण्ड-खण्ड करके अलग-अलग विधेयकों के रूप में इस बिल को पास करने की कुटिल योजना बनायी गयी, क्योंकि देश के प्रथम प्रधानमन्त्री ने इसे अपनी सरकार की प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था।

आज से हजारों वर्ष बाद जब भी कभी राष्ट्रभक्तों के मन में इस तथ्य पर विचार करने की बात उठेगी कि आखिर क्या भारत माँ का कोई भी लाल देश के बँटवारे व पाकिस्तान की स्थापना का सक्रिय विरोध करने के लिए शेष नहीं था? क्या पन्द्रह अगस्त सन् १९४७ को सम्पूर्ण भारतवासियों ने एक स्वर से मौन होकर सहर्ष

राष्ट्र का विभाजन स्वीकार कर लिया? हो सकता है उस दिन वह तात्कालिक देश के राजनेताओं की आलोचना करे या विवशता पर विचार करें। परन्तु सत्यपरक निष्पक्ष विचारक का मन तब तक शंकित ही रहेगा, जब तक वह इसकी गहरायी में जाकर वास्तविकता की खोज न करेगा। निश्चित ही ऐसे सत्यान्वेषी विचारक धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के राष्ट्रप्रेम प्रपूरित व्यक्तित्व और कृतित्व के प्रति नतमस्तक होकर कृतज्ञता का अनुभव करेंगे। (सन्दर्भित तत्तत् पुस्तकों से भी कुछ तथ्यात्मक वाक्य संगृहीत हैं।)

पूज्य श्री चरण यह भी कहा करते थे कि सरकार तो गूंगी-बहरी है, कुछ भी सुनने को तैयार नहीं। उससे कहें जो सबकी सुनता है, अपने भक्तों की तो अवश्य सुनता है। हम परमेश्वर की आराधना में लग जायें। धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, गोहत्या बन्द हो, -इस प्रकार गोहत्या बन्दी के पावन संकल्प से नित्य एक मिनट भी अपने-अपने इष्टदेव को करुणार्द्र हृदय से पुकारें तो सफलता अवश्य मिलेगी। हम सब भारतवासियों को गोसेवा व गोरक्षा के प्रति प्रयत्नशील रहना चाहिए।

भारत भूमि पर उन्होंने अपना कर्तव्य पूर्ण किया। देश और धर्म के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। अपने आविर्भाव की सार्थकता सम्पन्न कर चुकने पर ब्रह्मलोक से आमन्त्रण आ ही गया- "अब आ जाओ! तुम्हारे बिना ब्रह्मविचारगोष्ठी अपूर्ण रहती है।" भगवान् आद्य शंकराचार्यजी की अध्यक्षता में समायोजित ब्रह्मगोष्ठी में इनका स्मरण किया गया। सूर्य के समान प्रकाशमान दिव्य चिन्मय आत्माओं में प्रमुख थे- अनन्त श्री विभूषित स्वामीश्री विश्वेश्वराश्रमजी श्री षड्दर्शनाचार्य जी महाराज (स्वामी श्री करपात्री जी के शिक्षा गुरु), वहाँ पर भी नरवर वेद-वेदाङ्ग विद्यालय चलाने वाले व गायत्रीपुरश्चरण रत नैष्ठिक ब्रह्मचारी श्री जीवनदत्त जी महाराज, गोवर्धनपीठ पूर्वाम्नाय के जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री भारतीकृष्ण तीर्थ जी महाराज, ज्ञान-वैराग्यमूर्ति ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु जी स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रमजी महाराज, गुरुकल्प स्वामी श्री सोमेश्वराश्रम जी महाराज (प्रभासभिक्षुजी) प्रभृति...।

उधर स्मरण किया गया और इधर, महादेव शिव की प्रिय तिथि चतुर्दशी सवितृनारायण का दिवस रविवार और पुष्य नक्षत्र उपस्थित हो गया। ७ फरवरी सन् १९८१ को प्रातः काल ८ बजकर १७ मिनट पर गंगास्नोपरान्त काशीस्थ करपात्रधाम स्थित वेदानुसन्धान केन्द्र के कक्ष में हरिहरानन्द-निमग्न पद्मासनस्थ उस युगपुरुष ने तीन बार 'शिव-शिव-शिव' का उच्चारण कर इहलीला संवरण किया। सनातन धर्म का जाज्वल्यमान प्रचण्ड मार्तण्ड अस्त हो गया। ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मचिन्तक पूज्यपाद, धर्मसम्राट् श्री करपात्री जी महाराज ब्रह्मलीन हो गये।

समस्त संस्कृत जगत्, अखिल भारतवर्ष और सम्पूर्ण विश्व, विश्वबन्द्य, पूज्यपाद धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का सदैव ऋणी रहेगा। समस्त वेदादि

शास्त्र सिद्धान्त स्वरूप उनके द्वारा प्रणीत ग्रन्थों का पठन–पाठन व प्रकाशन तथा सर्वशास्त्र सार सर्वस्व के रूप में उनके द्वारा सर्वसाधारण जनता को प्रदत्त उद्घोष वाक्यों का नित्य भजन–पूजन, यज्ञ–अनुष्ठान, रामायण पारायण, पुराणकथा, धर्मोपदेश, सांस्कृतिक–सामाजिक–राष्ट्रीय समारोह कार्यक्रमों के प्रारम्भ और समापन काल में निष्ठापूर्वक उच्चारण करते रहना, राष्ट्र और धर्म के प्रति उनके समर्पण को सादर श्रद्धाञ्जलि है।

"धर्म की जय हो, अमर्ध का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो, गोवध बन्द हो, गोमाता की जय हो।

अनन्त श्री विभूषित विश्वबन्द्य अभिनव शङ्कर यतिचक्र चूडामणि पूज्यपाद धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की जय हो। हर–हर महादेव।"

आचार्य दिवाकर वासिष्ठ
श्री सांग वेद महा विद्यालय, वृद्धकेशी सिद्धपीठ
नरवराश्रम, नरौरा, बुलन्दशहर

आचार्य रामसुदर्शन जी मिश्र, प्राचार्य, श्री वृन्दावन

मङ्गलाचरण ...विना वेङ्कटेशं न नाथो न नाथः, सदा वेङ्कटेशंस्मरामि स्मरामि! हरे वेङ्कटेश प्रसीद प्रसीद! प्रियं वेङ्कटेश प्रयच्छ प्रयच्छ! अहं दूरतस्ते पदाम्भोजयुम, प्रणामेच्छया नित्यसेवां करोमि!!! सकृत्सेवया नित्यसेवा फलं त्वं, प्रयच्छ प्रयच्छ प्रभो वेङ्कटेश!!!!...कारङ्कारमलौकिकाद्भुतमयंमायावशात् संहरन्, हारंहारमपीन्द्रजालमिव यः कुर्वन् जगत् क्रीडति! तं देवं निरवग्रहस्फुरदभिध्यानानुभावंभवं, विश्वासैकभुवंशिवंप्रतिनमन्भूवासमन्त्येष्वपि!!!!दोर्भियुक्तैश्चतुर्भिःस्फटिकमणिमयी मक्षमालांदधाना, हस्तेनैकेनपद्मंसितमपिशुकंपुस्तकंचापरेण! पाशंवीणांमुकुन्दस्फटिक मणिनिभाभासमानासमाना, सा मे वादे च तथ्यं निवसतु वदने सर्वदा सुप्रसन्ना!!!! ...गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवोमहेश्वर! गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः!!! ...लक्ष्मीनाथसमारम्भांनाथयामुनमध्यमाम्! अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्!!! ...

यह भारतवर्ष परमतपस्वियों, परमत्यागियों, परमवैराग्यवानों, परमविद्यावानों, परमज्ञानियों का परमपवित्र देश है। इस देश ने अनेकानेक रत्नों को समय-समय पर प्रकट कर इस देश में वास करने वालों का कल्याण किया है। जो अमूल्य रत्न इस देश में प्रकट हुए वे सबके सब जगकल्याण हेतु ही प्रकट हुए। उनमें महर्षि वशिष्ठ, वाल्मीकि, याज्ञवल्क्य, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, अङ्गिरा, च्यवन, पराशर, गर्ग, कृष्णद्वैपायनवेदव्यासादि अनेकानेक महापुरुषों का नाम उद्धृत किया जा सकता है। वैदिक संस्कृतवाङ्मय के पश्चात् लौकिकसंस्कृतवाङ्मय में भी दार्शनिकवाङ्मय पौराणिकवाङ्मय आदि अपनी अपनी गरिमा से सभी को प्रभावित कर रहे हैं। वर्तमान में ...बाणोच्छिष्टञ्जगत्सर्वम्... यह सूक्ति अत्यन्त प्रसिद्ध है, यह सूक्ति ...व्यासोच्छिष्टञ्जगत्सर्वम्... को अतिक्रान्त नहीं करती है। ...व्यासोच्छिष्टञ्जत्सर्वम्... महर्षि वाल्मीकि के बाल्मीकीय रामायण पर चरितार्थ नहीं होती है, क्योंकि व्यासीयसाहित्यों के बहुत पूर्व में ही उक्त रामायण का प्राकटय हुआ था। वेदव्यासजी द्वारा विरचित ब्रह्मसूत्र पर शिवावतार भगवत्पाद आद्यशङ्कराचार्यजी द्वारा शङ्करभाष्य का प्रणयनकर अद्वैतवाद को विस्तृतदिशा प्रदान की यी। शेषावतार भगवत्पादश्री रामानुजाचार्यजी द्वारा उक्तग्रन्थ पर श्रीभाष्यकाप्रणयन कर विशिष्टाद्वैतवाद को विस्तृतदिशा प्रदान की गयी है। इसी प्रकार निम्बार्काचार्यादि आचार्यों द्वारा भी भाष्यों का प्रणयन कर करके द्वैताद्वैतादिवादों को भी विस्तृतदिशायों प्रदान की गयीं, जिनका वर्णन करने

पर अत्यन्त विस्तार का भय है, अतः सबका वर्णन न करके अद्वैतवाद के अन्तर्गत प्रायः सभी ग्रन्थों पर ही नहीं, बल्कि सनातनीय सभी ग्रन्थों पर प्रायः जिनके बौद्धिक विचार हमें सनातन से भटकने नहीं देते हैं ऐसे युगमहापुरुष ...यतिचक्रचूड़ामणिधर्मसम्राट् स्वामिश्रीकरपात्रीजीमहाराज के सम्बन्ध में ...समर्थश्रीत्र्यम्बकेश्वरचै तन्यजीमहारज... द्वारा...अभिनवशङ्कर... नाम शीर्षक से ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य किया जा रहा है। श्रीमद्भागवतमहापुराणजीको...प्रत्यक्ष:कृष्णएवहि...कहकर साक्षात् परब्रह्म कृष्ण ही माना गया है, उसमें श्रीमद्भागवतजीके उपदेष्टा साक्षात् नारायण ही हैं, उन्होंने ब्रह्मा जी को उपदेश दिया, पुनः नारायण ने ही ब्रह्मा के रूप में नारदजी को, नारायण ने ही नारदजी के रूप में कृष्णद्वैपायनवेदव्यासजी को नारायण ने ही वेदव्यासकेरूपमें परमहंस शुकदेव जी को उपदेश दिया है। आजभी श्रीमद्भागवतजी के वक्ता का पूजन...व्यासायविष्णुरूपायव्यासरूपायविष्णवे! नमो वै ब्रह्मनिधये वाशिष्ठाय नमो नमः ...के द्वारा विष्णु के रूप में किया जा रहा है। कृष्ण साक्षात् विष्णु ही हैं, भागवत् जी साक्षात् कृष्ण ही है स्वयं के सम्बन्ध में स्वयं ही पूर्ण ज्ञाता हो सकता है, इसीलिए यह सब स्वीकार करने पर किसी भी प्रकार का काठिन्य नहीं होता है। प्रकृत में स्वामिश्रीकरपात्रजीमहाराज को अभिनवशङ्कर के रूप में उक्तनाम से प्रकाशित हो रहे ग्रन्थ में प्रतिपाद्य के रूप में वर्णित किया जा रहा है। अभिनव शङ्कर शङ्कर ही हैं इस परिपूर्ण तथ्य को विधिवत् आत्मसात् करने वाले कोई अन्य नहीं बल्कि ...समर्थश्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजीमहाराजभी शङ्कर हैं। स्वयं ही स्वयं को पूर्णतया अवगत करता है। स्वामिश्री करपात्री जी का नाम ...स्वामिश्रीहरिहरानन्दसरस्वतीजीमहाराजहै...। ...स्वाश्रितानांसर्वेषाम्भक्तानांत्रैकालिकान्सर्वान्कष्टान्हरत्यसौहरि:हरोवा...आनन्दं ब्रह्म...हरिश्चासौहरश्चेतिहरिहर:...हरिहरएवआनन्द:हरिहरानन्द:...एवम्भूत: स्वामिश्रीहरिहरानन्दसरस्वतीजी महाराज:!...यथानाम तथागुण: ...के अनुसार स्वामिश्री करपात्रीजी महाराज को सम्भवतः अभिनवशङ्कर के नाम से उक्त ग्रन्थ में प्रतिपादित करना कोई अतथ्य नहीं है क्योंकि ...क्वचित्पदार्थैकदेशेनापिशाब्दबोधोभवति... पूर्ण पदार्थ है हरिहर! प्रकृत में अभिनव शङ्कर=हर हैं, जो कि पदार्थ=हरिहर के एकदेश हैं, उनके द्वारा भी हरिहर=यतिचक्रचूडामणिस्वामिश्रीकरपात्रजीमहाराजजीका ही बोध हो रहा है। प्रकृत में करावेवपात्रेयेषान्तेकरपात्रा के अनुसार महाराज ही को करपात्र कहा जाता है। करपात्रीजीमहाराज के रूप में लोकख्यात होने के कारण स्वामिश्रीकरपात्रजीमहाराज के नाम से अभिहित किये गये हैं। जिस प्रकार से वाचस्पति मिश्र जी की भामती का अवगाहन करने पर प्रतीत होता है कि वाचस्पति मित्र जैसा कोई अन्य नैयायिक नहीं हो सकता उन्हीं के सांख्य तत्व कौमुदी का अवगाहन करनेपर प्रतीत होता है उनके जैसा सांख्य का कोई अन्य विद्वान नहीं। उसी प्रकार से स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के विभिन्न विषयों पर उनके द्वारा प्रतिपादनो का

अवगाहन करने पर उनकी सर्वज्ञता का बोध होता है।

मैं अधिक क्या कहूँ समय एवं स्वास्थ्य दोनों मेरे पास वर्तमान में अनुकूल नहीं हैं। बस इतना अवश्य कहूँगा कि स्वामिश्री करपात्री जी महाराज ने शङ्कराचार्यों को जन्म दिया है, जो ऐसा कर सकते हैं उनके सम्बन्ध में ...असितगिरिसमंस्यात्कज्जलंसिन्धुपात्रे, सुरतरुवरशाखालेखनीपत्रमुर्वी! लिखतियदिगृहीत्वाशारदासर्वकालं, तदपि तवगुणानामीशपारं न याति...! अर्थात् उनके सम्बन्ध में वर्णन करते थक जाऊँगा, फिर भी पार नहीं पा सकता हूँ। उक्त सम्बन्ध में वशिष्ठ आदि महापुरुषों ने अपने जीवन दर्शन से जो उपदेश सभी को प्रदान किया वह सब कुछ स्वामिश्रीकरपात्रीजी महाराज के जीवन से ग्रहण कर तदनुसार जीवनशैली बनाकर अपने मानवीय जीवन को सभी को कृतार्थ करना चाहिए।

आचार्य रामसुदर्शनमिश्र, प्राचार्य, श्रीवृन्दावनधाम!

श्रीमच्छङ्कराचार्य-सिद्धान्तविचार

धर्मब्रह्मशरीराय प्रमाणपुरुषाय च। अदुष्टवन्द्यपादाय करपात्राय ते नमः।।

किसी प्रकार कुछ संस्कृत लिख–बोल लेने वाले वर्णाश्रमतिरस्कारी यतिवेशधारी एक अज्ञात अहङ्कारी से भेंट हुई। चर्चा के क्रम में उन्होंने भगवत्पाद श्रीशङ्कराचार्य के 'निर्वाणदशकम्' की एक पङ्क्ति ''न वर्णा न वर्णाश्रमाचारधर्माः'' का दुष्प्रयोग कर उपदेश दिया कि हम शाङ्करपरम्परा को मानने वाले हैं, अतः अपने गुरु के शिक्षानुसार वर्ण और वर्णाश्रमोक्त बन्धनों से मुक्त हैं। ज्ञानी होने के कारण हमें कर्म करने की आवश्यकता नहीं है। हमारे यहाँ ''ज्ञानान्मुक्तिः'' की प्रधानता है, कर्म की नहीं। आदि ...

आश्चर्य– दो–चार चेलों से घिरे महात्मवेशधारी उस दुरात्मा के दुर्वचनों से उसके विप्रेतर या द्विजेतर ही नहीं; चतुर्वर्णेतर होने का निश्चय हो गया। ऐसे लोग किसी मोहवान् गोरू की कृपा से सत्परम्परा और शास्त्रानभिज्ञ समाज में बौद्धिक उत्पात फैलाने में अग्रसर बने रहते हैं। एतादृश कूपदेशकों को स्तम्भित करने के लिए सदैव सिद्धान्तविचारमन्थन होते रहना चाहिए।

यह शास्त्र और व्यवहार से भी सिद्ध है कि शास्त्रोक्त अधिकारियों के अन्तःकरण में ही शास्त्रसिद्धान्तों का साक्षात्कार हो सकता है। भगवत्पाद के शारीरकभाष्यादि निबन्धों के स्वारस्य का समास्वादन करने से यथाधिकार वर्णाश्रमोक्त कर्म की करणीयता में कोई विरोध प्रकट नहीं होता। आचार्यसिद्धान्तानुसार चरमपुरुषार्थ में ज्ञान अपेक्षित होता है। ज्ञानसम्पादन में चित्तशुद्धि की आवश्यकता होती है और चित्तशुद्धि के लिए यथोक्त कर्मानुष्ठान की अनिवार्यता सिद्ध है।

ऐसी स्थिति में अब्रह्मविद् यतिवेशधरियों के द्वारा यथाधिकार श्रुतिस्मृत्युक्त कर्मानुष्ठानों का परित्याग अत्यन्त शोचनीय है। उनमें भी संसारदशापन्न वैधावैध यतियों के द्वारा विहित कर्मो का यथाविधि सम्पादन न करना अनिष्टकर है। हाँ; शिखासूत्रविरहित यतियों के कर्तव्य कर्म शास्त्रतः निश्चित हैं, जिनका सम्यक् सम्पादन उन्हें करना ही चाहिए। निस्त्रैगुण्य पथ पर विचरण करने वाले चरमावस्थाप्राप्त असंसारियतियों का तथाविध कर्मविरहित हो जाना भले ही इष्ट हो, परन्तु संसारासक्त यतियों का कर्मपरित्याग केवल और केवल अनर्थ का कारण ही सिद्ध होता है।

शिवावतार भगवान् श्रीशङ्कराचार्य ने 'साधनपञ्चकम्' अथवा 'उपदेशपञ्चकम्'

में वेदोक्त कर्मानुष्ठान के सम्पादन की आज्ञा दी है– ''वेदो नित्यमधीयतां तदुदितं कर्म स्वनुष्ठीयतां तेनेशस्य विधीयतामपचितिः काम्ये मतिस्त्यज्यताम्'' वेदों का न्तिय अध्ययन करो और वेदोपदिष्ट कर्मों का सम्यग्रूपेण अनुष्ठान करो। भगवान् वेदपुरुष के सकल विधानों का पालन करो और संसार में फँसाने वाली काम्यबुद्धि का परित्याग करो। आदि ...

श्रीमदाचार्यपाद के द्वारा संस्थापित शाङ्करपीठों की निगमागमोक्त श्रीविद्यासपर्या से कर्मत्यागियों की आँखें खुलनी चाहिए। भगवत्पाद श्रीमदाद्यशङ्कराचार्य ने स्वयमेव देश के विभिन्न भूभागों में विविध पूजापीठों की स्थापना की है; तथापि आचार्यपरम्परा की वेशभूषा से महाभोग की व्यवस्थामात्र में व्यस्त रहने वाले महासंसारी कर्मविहीन यतिसमुदाय सत्कर्मानुष्ठान के परित्याग का उपदेश बाँटते फिरे, चिन्ता और विवेचन का विषय है। आचार्य द्वारा संस्थापित तत्तत् पीठों में तदवताररूप सपरिकर श्रीमच्छङ्कराचार्य महाभागगण इस समय भी तथाविध समग्र पूजोपचारों से स्वेष्टार्चनानुष्ठान करते देखे जाते हैं। शास्त्र और सत्परम्परा में उपद्रव फैलाने वाले दुष्टोपदेशकों को इन वन्दनीय महापुरुषों का अनुकरण करना चाहिए।

सकल अदुष्टवन्द्य श्रीविद्यामहोपासक साङ्गोपाङ्गनिगमागमधर्म्मब्रह्मविद्वरिष्ठ धर्म्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज इस महनीय परम्परा के महान् आचार्य थे। उन विशालात्मा तपस्विशिरोमणि की सर्वश्रेयस्करी सर्वतोमुखी ऋतम्भरा प्रज्ञा से समुदित वेदभाष्यादि महत्तम ग्रन्थरत्न अनन्तकाल तक सनातनधर्म और सनातनजीवों का महोपकार करते रहेंगे। ऐसे सर्वभूतहृदय सर्वसुहृत् महात्ममणि के कलिमलविध्वंसक पावन पादपद्मों में अनन्तार्चनरूप शब्दसुमन समर्पित करता हूँ; स्वीकार करें।

शिव शिव इति ...

श्रीराजन्मभूमिशिलापूजनाचार्य पण्डित गङ्गाधर पाठक 'मैथिल'
श्रीवृन्दावनधाम विक्रमसंवत् २,०९० अक्षयतृतीया सूर्यवार पूर्वाह्न

किञ्चिन्नैवेद्यम्

विगत शताब्दी के सुप्रसिद्ध धर्मब्रह्मवेत्ता 'अभिनवशंकराचार्य' धर्मसम्राट् श्रीकरपात्रस्वामीजी (ब्रह्मलीन अनन्तश्री स्वामी हरिहरानन्द सरस्वतीजी) महाराज के युगल पावन श्रीचरणों में हमारी प्रीति तथा पूज्यश्री के द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों में हमारी यथासामर्थ्य प्रवृत्ति हमारे पूर्वपुण्यों का परिपाक है। शिवावतार जगद्गुरु भगवान् आदिशंकराचार्यपाद ने किसी वैयक्तिक सिद्धान्त की संकल्पना नहीं की, अपितु उपक्रमोपसंहारादि षड्विधतात्पर्यबोधक लिंगों के द्वारा सम्पूर्ण श्रुतियों एवं तदनुकूल स्मृतियों के प्रामाणिक अर्थ का निर्णय किया। भगवती श्रुति के एकदेश में स्थिर रहकर भगवत्पादीय दार्शनिक सन्दर्भ से वैमत्य रखने वाले असंख्य लोग, बारम्बार उनके प्रत्याख्यान का निष्फल प्रयास करने पर भी, परमाचार्य श्रीभगवत्पादरूपी यशोभानु के समक्ष खद्योतवत् प्रतीत होते हैं। किन्तु वे प्रत्याख्याता भी सनातनधर्म के प्रति भगवत्पाद के महत्वपूर्ण अवदानों की मुक्त कण्ठ से यथायोग्य प्रशंसा करते हैं। श्रीभगवत्पाद के ही समान; श्रीकरपात्रस्वामीजी ने भी किसी वैयक्तिक सिद्धान्त की संकल्पना नहीं की, प्रत्युत उन्होंने शास्त्रीय प्रमेयों का प्रमाणनिरूपणपूर्वक अनुवादमात्र किया है। उनके ग्रन्थों में प्रसंगवश विभिन्न पूर्वपक्षों का निरास अवश्य उपलब्ध है, किन्तु उस समीक्षण में राग-द्वेष का कोई स्थान नहीं है। एतावता भले ही श्रीकरपात्रस्वामिपाद को अभीष्ट-निर्विशेषकेवलाद्वैतवाद में अनेक सम्प्रदायाचार्यों की श्रद्धा न हो, किन्तु उन सभी लोगों के लिए भी पूज्यचरण श्रीधर्मसम्राट् सर्वथा श्रद्धेय हैं। उनका निर्मल यशोवैभव दिगन्त में व्याप्त है, यह हम सभी का सामान्य प्रत्यक्षानुभव है।

हमने गुरुजनों से सुना है तथा श्रीचरणों का साहित्य इसका अनुमापक भी है कि पूज्यपाद श्रीमहाराजजी का जीवन दुर्धर्ष तप से युक्त था। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य-इन तीनों का समन्वित दर्शन पूज्यपादजी के जीवन एवं साहित्य में होता है। अतः अनादिदम्पत्ति-सौन्दर्य-सुधापान से सतत आनन्दप्रमत्तचित्त होते हुए भी जन्मिथ्यात्व-आदि औपनिषद/साम्प्रदायिक विषयों के प्रतिपादन में आपश्री की दक्षता आपश्री को विगत शताब्दी के अन्यों से विलक्षण सिद्ध करने हेतु पर्याप्त है। नामजप में आपश्री की निष्ठा हम सभी के लिए सदैव अनुकरणीय है। वेदार्थपारिजातभाष्य को देखकर 'वेद' में, भक्तिरसार्णव के माध्यम से भक्ति को दशम रस के रूप में प्रस्थापित देखकर 'साहित्य' में, श्रीविद्यारत्नाकर-आदि के द्वारा 'आगम' में, रामायणमीमांसा-आदि के द्वारा 'पुराणेतिहास' में, कुम्भतिथ्यादिनिर्णय के द्वारा 'ज्योतिष' में, समन्वयसाम्राज्यसंरक्षण-आदि द्वारा 'दर्शन' में, राजनीतिक्रान्तिबिन्दु-आदि द्वारा

'राजनीति' में, चातुर्वर्ण्यसंस्कृतिविमर्श-आदि द्वारा 'धर्मशास्त्र' में ... इस प्रकार; संस्कृतसाहित्य के प्रायः सभी विभागों में आपश्री की अबाधित गति हमें ज्ञात होती है। अतः आपकी ऋतम्भरा प्रज्ञा एवं दृष्टादृष्ट रहस्यों का व्यापक अध्ययन हम सभी के लिए निश्चयेन प्रणम्य हैं।

पूज्यपादजी के समग्र दृष्टिकोण को यदि केवल एक शब्द में अभिव्यक्त करना हो, तो वह शब्द होगा-'शास्त्रपारतन्त्र्य'। व्यक्तिविशेष के प्रति, साधन-विशेष का उपयोग करते हुए, प्रयोजन-विशेष के लिए, परिस्थिति-विशेष में, देश-विशेष में, काल-विशेष में, किसी पात्र-विशेष का जो शास्त्रोक्त अनिष्टशून्य कर्तव्य है; वही 'धर्म' है। यही 'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ' (गीता १६.२४) का स्वारस्य है। किन्तु ध्यान रहे; उक्त सभी घटकों के मूल में शास्त्रमूलकता की सर्वत्र समान अपेक्षा है। शास्त्रपारतन्त्र्य जीवन में आ जाए, तो धर्मनिष्ठ प्राणी के अभ्युदय एवं निःश्रेयस की सिद्धि का मार्ग प्रशस्त होने लगता है; यह सभी आस्तिकों का अभिमत है। पूज्यपाद श्रीमहाराजजी इसी बिन्दु को ध्यान में रखकर अपने समय में उपस्थित हुए सभी विषयों की उज्ज्वल मीमांसा की। उन्होंने धर्म (एवं तदुपलक्षित अर्थ, काम तथा मोक्ष), उसके प्रतिपादक वेद तथा उसके साधनभूत यज्ञ-सन्ध्या-गायत्री आदि का प्रतिपादन किया। न केवल प्रतिपादन किया, अपितु-विद्वत्संन्यासी होने के कारण सभी कर्तव्याकर्तव्यों से मुक्त होने पर भी-लोकसंग्रहार्थ उसके अनुष्ठान द्वारा अपने अनुवर्तियों को भी शास्त्रपरतन्त्र बनने की शिक्षा दी। इसी से उनका आचार्यत्व भी चरितार्थ होता है : 'स्वयमाचरते यस्मादाचारं स्थापयत्यपि। आचिनोति च शास्त्राणि आचार्यस्तेन चोच्यते' (ब्रह्मपुराण १.३२.३२)।

हम सभी सुविज्ञ पाठकों के सौभाग्य से श्रीमहाराजजी की शिक्षाओं के संग्रहभूत 'श्रीमदभिनवशङ्कर' का प्रकाशन हो रहा है। यह सभी सनातनियों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। धर्मप्रचारकों को चाहिए कि वे प्रस्तुत ग्रन्थ को अपने दैनिक स्वाध्याय में विनियुक्त करें तथा इसकी बारम्बार आवृत्ति करते रहें। यदि वे प्रयास करें कि अपने दैनिक प्रवचन-आदि में हम वही कहेंगे, जो प्रस्तुत ग्रन्थ में अभिव्यक्त (श्रीधर्मसम्राट्स्वामीजी के) विचारों के अप्रतिकूल होगा; तो वे स्वतः धर्ममार्ग का प्रतिपादन करने में दक्ष हो जाएँगे। साथ ही; गुरुकुलीय बटुकों को प्रस्तुत ग्रन्थ में संलग्न निबन्धों का अनुशीलन करना चाहिए; ताकि इन्हीं को विषय बनाकर अनध्याय के दिनों में गोष्ठियाँ सम्पादित हो सकें। इस दृष्टि से हम प्रस्तुत ग्रन्थ को सद्गृहस्थों की अपेक्षा धर्मप्रचारकों एवं बटुकों के लिए अत्यधिक उपयोगी समझते हैं। भगवान् चन्द्रमौलीश्वरजी का सकृत् कृपाकटाक्ष हम सभी को श्रीकरपात्रस्वामिपाद के द्वारा दिखलाए धर्मपथ पर चलने का सामर्थ्य प्रदान करे, यही सद्भावना है। किमधिकम्! नारायणस्मृतिः।।

अंकुर नागपाल

(अक्षयतृतीया, वि. २०८०, दिल्ली)

श्रीसत्गुरु धर्मसम्राट्
करपात्री चालीसा

गुरु के वचन प्रकाश सों, मिटत हृदय अधियार।
चरण-शरण नौका चढ़े, भव सौ जावत पार॥
निज मति को बल है नहीं, केवल गुरु की आस।
कर्ता धर्ता आप ही, त्र्यम्बक उर विश्वास॥

जय हरि-हर-विधि विविध स्वरूपा। जय-जय ऋषि मुनि यति कुल भूपा॥१
काशी अवध प्रयाग त्रिकोणहि। बिंदू सम भटनी भू सोहहि॥२
ओझा भूसुर वंश विमंडन। अधम कुमति मतवाद विखंडन॥३
हर-नारायण हरि-हर स्वामी। विश्वेश्वर ब्रह्मा अनुगामी॥४
भृगूक्षेत्र नरवर विद्यालय। कोयल-घाटी दिव्य हिमालय॥५
शिक्षा तप साधन धन धीरा। सरस्वती वर गंगा-तीरा॥६
कर ही पात्र बना ले भिक्षा। करपात्री बन देते शिक्षा॥७
एक लंगोटी भस्म भाल पर। संस्कृत-भाषण हंस चाल पर॥८
ज्ञान भक्ति वैराग्य सुशोभित। संगम लख नरदेव विलोभित॥९
वर्णाश्रम शुभ धर्म प्रचारक। सदाचार संचार विचारक॥१०
शास्त्र-निष्ठ-सिद्धांत-सुधारक। भ्रमित पतित शतजन संतारक॥११
राम-राज्य सद्भाव हृदय भर। धर्मसंघ पथ पावन रचकर॥१२
यज्ञ धूम ध्वज लिए चले तुम। कलियुग सेवक देख हुए गुम॥१३
गोवध बंद कराने हेतू। घूमे भारत आ-गिरि सेतु॥१४
सन छासठ में दिल्ली शासन। सह न सका संतों के भाषण॥१५
गोरक्षार्थ समागत जनजन- नरवध करने लगा प्रशासन॥१६
श्री करपात्र स्वामि तब बोले। गोवध वंश-नाष विष घोले॥१७
शास्त्र-सृजन शंका-परिमर्दन। मानवता-हित करते गर्जन॥१८
शिव शिव मंगल मंत्र उचारे। अभिनव शंकर हृदय पुकारे॥१९
श्री विद्या-पूजा परिकर्ता। दैन्य दोष दुर्भाव विहर्ता।२०

सत्य सनातन के संपोषक। धर्म विजय निर्भय उद्घोषक ॥२१
विजय धर्म की होवे जग में। हो अधर्म का नाश सुमग में ॥२२
सद्भाव प्राणियों के उर हो। कल्याण विश्व का ईश्वर हो ॥२३
गो वध बंद करे सरकारें। गूंजे गो माँ के जयकारे ॥२४
हर हर महादेव मिल बोले। निर्भय हिंदू जग में डोले ॥२५
घर घर तुलसी गंगाजल हो। गीता रामायण का बल हो ॥२६
हर घर गौ माता की शोभा। देव हृदय भारत हित लोभा ॥२७
वेद पढे द्विज अभय भाव से। क्षत्रिय रक्षा करें चाव से ॥२८
वैश्य कृषि गो पण्य संभारे। गंगानुज सेवाव्रत धारें ॥२९
सती संत शुचि शूर सुरक्षित। भारत का जनजन हो शिक्षित ॥३०
अविरल निर्मल सरिता सर हो। वृक्ष सजे वन गिरि कंदर हो ॥३१
ऐसे भारत का सपना ले। नंगे पैर चले पग छालै ॥३२
वेद–भाष्य कर भ्रांति मिटाई। कीरति अमल जगत भर छाई ॥३३
ज्योतिष्मती प्रकल्प साधना। पार्थिव–पूजा शिवाराधना ॥३४
काशी नेह भरा जिनके मन। ऐसे शंकर शंकर पावन ॥३५
कथा–सुधा वृष्टी–कर जलधर। कलि–मल हारक तारक गुरुवर ॥३६
मोक्ष–मार्ग उपदेशक ज्ञानी। कृपा–सिंधु सर्वोतम दानी ॥३७
शिष्य–शोक–संताप विदारक। लीला हरिहर नर तन धारक ॥३८
कोटि कोटि वंदन अभिनंदन। भक्त–हृदय शुचि शीतल चंदन ॥३९
श्रुति–शोधित सन्मार्ग विधायक। ज्ञान शिरोमणि मुनि–गण–नायक ॥४०
शास्त्र विलास वंश अवतंसा। त्र्यम्बक शुचि मन मानस हंसा ॥४१
जय गुरुदेव नमामि नमामी।
जय गुरुदेव नमामि नमामी ॥

भाव–सहित तन शुद्ध कर। पाठ करे नित नेम।
उद्भासित निज ज्योति हो, हरिहर पावत प्रेम ॥
संकल्पित शुभकाम सब, होते हैं परिपूर्ण।
विघ्न रोग अरिवृंद दुख, हो जाते हैं चूर्ण ॥
जय गुरुदेवा जय गुरुदेवा। जय गुरुदेवा जय गुरुदेवा ॥
गुरुदेव नमो गुरुदेव नमो। गुरुदेव नमो गुरुदेव नमो ॥
गुरुदेव नमामि नमामि गुरो। गुरुदेव नमामि नमामि गुरो ॥

श्री करपात्र-स्वामी जी अष्टक

जय करपात्र स्वामि जग वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे।
जय वसुधा वसुधारण कर्ता, वसुधा धर्म सुधारक हे॥

वर्णधर्म के संपोषक मुनि, शास्त्र-स्वामि बुध चातक घन।
जन रक्षक हरि सौम्य सुधाकर, सत्य सनातन जीवन धन॥
जयति जयति जय धर्म विभासक, जय शुचिता संचारक हे॥
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥१

भस्म विभूषित भालपट्ट पर, भाग्य भानु भा उद्भासित।
जिसकी अनुपम ज्योति शिखा से, है तारामंडल शासित॥
जय जय विश्व विकास विलासक, जय नरवर कुल कमल रवि।
जय शशि शुभ्र गौर वपु धारी, जय जय अनुपम विमल कवि॥
जय गोरक्षक पालक पोषक, जय गोकुल संतारक हे॥
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥२

राजनीति के कुशल विचारक, राजधर्म के उपदेशक।
पग पग चलकर भारत नापा, साम्य भाव के संदेशक॥
जय जय रामराज्य उद्घोषक, हरिहर हरनारायण जय।
जय विश्वेश्वर शिष्य विलक्षण, गुरुवर ब्रह्मानन्द विजय॥
जय जगमंगल मोद मनोहर, अविनय दोष विदारक हे।
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥३

विविध शास्त्र का सार सार ले, लिखे अलौकिक ग्रंथ महान्।
भव भक्ति भव बंधन काटे, देते अनुपम सबको ज्ञान॥
श्रुतिवर शोधित भाष्यकार ऋषि, सतत ग्रंथ शत सृजन-शील।
यति-कुल मंडल मंडन मंडित, करुणा-रस संसाधक झील॥
शरणागत-वत्सल विश्व-वंद्य, भव-सागर के उद्धारक हे।
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥४

विजय धर्म की रहे सदा जग, और अधर्म पराजित हो।
मनुज हृदय सद्भाव भरे शुचि, जग कल्याण विराजित हो॥
गोहत्या मिल बंद कराये, गौमाता की जय बोले।
हर हर महादेव के स्वर से, दिग्दिगन्त में रस घोले॥
अभिनव शंकर ज्ञान-सिद्ध मुनि, शंका पंक निवारक हे।
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥५

संस्कृत से संस्कृति संरक्षा, भारत का वैभव रक्षित।
इसीलिए हर घर में होंवे, सब बच्ची बच्चा शिक्षित॥
धर्मसंघ शिक्षा-मंडल रच, समाचार सन्मार्ग चले।
राम-राज्य-परिषद के साधक, धर्मवीर बन दीप जले॥
विश्वनाथ मंदिर संस्थापक, वेदशास्त्र उपकारक हे।
जय करपात्र स्वामि जग-वंदित, यति-कुल-भूषण तारक हे॥६

भारत भर आवर्ष भ्रमण कर, चौमासा करते काशी।
वृहत् हृदय सिद्धांत समर्पित, चिदानंद सत अविनासी॥
अभय अलोभ अलौकिक उर भर, सत्य-सनातन के रक्षक।
सुख दुख में अविचल भूधर सम, अनय दोष छल के भक्षक॥
हरि हर गणपति शक्ति दिवाकर, पंचदेव परिचारक हे।
जय करपात्र स्वामि जगवंदित, यतिकुलभूषण तारक हे॥७

शास्त्र मार्ग तज भटक चुकी जो कुमती के परिहारक हे।
जय जय दीनदयाल महामुनि, ससृती के संस्कारक हे॥
बुध-वृंदारक-वृंद-विवंदित, जीवमात्र हितकारक हे।
युगदृष्टा युग शोधक योगी, यज्ञ पताका धारक हे॥
त्र्यम्बक विश्वनाथ शिवशंकर, त्र्यम्बक दुख संहारक हे॥
जय करपात्र स्वामि जगवंदित, यतिकुलभूषण तारक हे॥८
...माघमेला प्रयाग...

॥ श्री धर्म सम्राट् स्तवनम् ॥

आदित्यो-निजतेजसा हिमकर-स्तापापनोदेन वै,
भौमः शत्रुविदारणेन-सततं सौम्यश्च ज्ञानाकरैः
वाण्या देवगुरुः कविःसुतपसा सौरिश्च सत्येन यः,
इत्थं सर्वविधैः ग्रहैः विलसितः श्रीपाणिपात्रो यतिः॥ १ ॥

स्वकीय तेजस्विता से जो सूर्य, मानव मन के संतापों को निश्चित दूर करने में जो चन्द्र, शास्त्र विरोधियों के अभिमतों को विदीर्ण करने में (सेनापतित्वात्) भौम, ज्ञान संपदा में बुध, शास्त्र पूत वक्तृता में देवगुरु वृहस्पति, तपस्या में कविवर शुक्राचार्य, सत्य भाषण एवं त्यायप्रियता में शनिदेव, के समान हैं, ऐसे सर्वविध ग्रहों के तेज से सुशोभित पूज्य श्री करपात्री जी महाराज का दिव्य स्वरूप है॥ १ ॥

भक्त्या-भूषित-मानसं यतिवरं वैराग्य-वोधाश्रयं,
ज्ञानाकाश-विभासकं-पटुतमं विज्ञान-भा-भासुरम्।
सिद्धांत-प्रतिपादने प्रतिपलं संरक्षणे तत्परं,
वन्दे ज्ञानदिवाकरं हरिहरानन्दं सदा श्रद्धया॥ २ ॥

भक्ति से भूषित मन वाले, ज्ञान-वैराग्य से संपन्न, ज्ञानाकाश को प्रकाशित करने वाले, विज्ञान के तेज से भासित अत्यन्त दक्ष, प्रतिपल सिद्धान्त के प्रतिपादन एवं संरक्षण में तत्पर, ज्ञानदिवाकर यतिश्रेष्ठ पूज्य श्री हरिहरानन्द सरस्वती जी महाराज को मैं सदा श्रद्धापूर्वक नमन करता हूं॥ २ ॥

योदृष्टवा भवसागरे निपतितं मोहान्धकारे जगत्,
अज्ञाना-वृतमानसं विचलितं पाखण्ड पंकेरतम्।
कारुण्येन समागतो नरवरे तद्रक्षितुं यः स्वयं,
पूज्यो भावभरैः नृभिः प्रतिदिनं श्रीपाणिपात्रो यतिः॥ ३ ॥

अज्ञान से घिरे हुए, अतएव विचलित हो पाखण्ड रूपी कीचड़ से आवृत, प्राणियों को मोहान्धकार रूपी भवसागर में पड़े हुए देखकर करुणा से द्रवीभूत हो इस जगत की रक्षा के लिये, जो स्वयं नरवर में आये, ऐसे पूज्य श्री करपात्री जी महाराज समस्त प्राणियों के द्वारा भावूपर्वक नित्य पूजनीय(प्रणम्य) हैं॥ ३ ॥

पूज्य श्री की अवतरण स्थली भटनी प्रतापगढ़ यूपी है, तदपि यहां नरवर को वरीयता देने का तात्पर्य है, जन्म के दो प्रकार शास्त्रों में कहे गये हैं, १. विन्दु २. नाद,

(द्विधा वंशो विद्याया जन्मना च) पूज्य श्री का पावन यश विन्दु कुल की अपेक्षा नाद (विद्या, ज्ञान) कुल के कारण ही है, नरवर पूज्य श्री का विद्याकुल गुरुकुल है।

आर्यभ्रान्ति निवारणैक–कुशलो लोकस्य संरक्षकः,
शास्त्रार्थ–प्रतिपादने च निरतो वादादि संयोजने।
जात्या वर्णविधिर्न कर्मविहितः शास्त्रेष्वियानेव वाक्,
इत्याख्यैः सुवचैः प्रतिष्ठितयशाः श्रीपाणिपात्रो यतिः॥ ४॥

तथाकथित आर्य जनों के विचारों में आयी भ्रान्तियों के निवारण में कुशल, लोक के संरक्षक, शास्त्रों के परम्परागत समुचित अर्थ का प्रतिपादन करने तथा (वादे वादे जायते बोधः इस सिद्धान्त का अनुसरण करते हुये) शास्त्रीय पक्ष का निर्धारण करने के लिये विचार गोष्ठी आयोजित करने में निरत, वर्ण व्यवस्था जन्म से होती है न कि कर्म से शास्त्रों में यही सिद्धान्त स्पष्टतया सर्वथा वर्णित है, इत्यादि सम्यक मतों के प्रतिपादन से लब्ध प्रतिष्ठ पूज्य श्री करपात्री जी महाराज वन्दनीय हैं॥ ४॥

संसारानल–तप्तमानसवतां कोसौ सुधानिर्झरः,
भक्तानां–भगवान–पूर्व–रुचिरो–वात्सल्य–कल्पद्रुमः।
मोहग्राहग्रहीतमानसवतां मोक्षार्थ विद्यामणिः,
सर्वाशापरिपूरको हरिहरो श्रीपाणिपात्रोयतिः॥ ५॥

संसाराग्नि में झुलसते प्राणियों को शीतलता प्रदान करने के लिये ये सुधा निर्झर के रूप में कौन हैं, भक्तों के लिये अपूर्व मनोहर सर्वाशापरिपूरक भगवान, महामोह रूपी ग्राह के द्वारा जकड़े हुए मन वाले प्राणियों की मुक्ति के लिये जो विद्या मणि हैं (ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः) वत्सलता के कल्पतरु श्रीहरिहरानन्द सरस्वती स्वामी श्री करपात्री जी महाराज वन्दनीय हैं॥ ५॥

शैवानां–शिवतत्वनिष्ठ–रुचिरः सीताधवो राघवः,
शाक्तानां समतामयश्च मधुहा राधाधवोमाधवः।
विष्णौ भक्तिमतां सतां शिवकरः श्री वैष्णवः शंकरः,
नोमेशो न हरी असौ हरिहरः साक्षाद्यतीन्द्राधिराट्॥ ६॥

मानो शैवों में श्रेष्ठ शिवतत्व निष्ठ भगवती सीता के स्वामी श्री राम हैं, अथवा शाक्तों में समत्व भाव रखने वाले, मधुहन्ता राधावर श्रीकृष्ण हैं या भगवान विष्णु में भक्ति भाव रखने वाले, सज्जनों का कल्याण करने वाले, श्रीवैष्णव देवाधिदेव महादेव ही हैं, अरे नहीं, ये न तो उमापति शिव हैं, न राम कृष्ण हैं, ये तो साक्षात् यतीश्वरों के श्रीअधिनायक पूज्य श्री हरिहरानन्द सरस्वती स्वामी श्री करपात्री जी महाराज हैं॥ ६॥
हरिश्च हरिश्च इति हरी–श्रीराम कृष्णौ

धर्मस्य प्रगतिर्भवेदवनतिर्भूयादधर्मस्य च,
सद्भावो मनुजेषु वै खलु सदा लोकस्य भद्रं भवेत्।
गोमातुर्विजयोभवेदथ च गोहत्या निरुद्धा भवेत्,
इत्थं घोषकरः सदा विजयते योगीन्द्रवृन्दाधिराट्॥ ७॥

धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो, गौ माता की जय हो, गो हत्या बन्द हो, इस प्रकार की घोषणाओं से जनमानस के हृदय में दिव्य भाव का जागरण करने वाले, योगीकुल के अधिपति पूज्य श्री करपात्री जी महाराज की सदा जय हो॥ ७॥

श्रीविद्यासमुपासकं गुरंवरं यज्ञात्मकं सिद्धिदं,
धर्माधर्मविवेचकं श्रुतिपरं शान्त पर दैवतम्।
सिद्धान्तप्रतिमा-सनातनवपुः श्रीशंकरं नूतनं,
पद्यैरष्टभिरद्य नौमि वचसा श्रीपाणिपात्रं यतिम्॥ ८॥

श्रीविद्या के समुपासक, यज्ञस्वरूप, वेद शास्त्र परायण, धर्म एवं अधर्म के समर्थ व्याख्याता, सिद्धिप्रदान करने वाले परम दैव, सनातन धर्म के सिद्धान्तों के साक्षात विग्रह, शाश्वत सत्ता वाले अभिनव शंकर, श्रीकरपात्री जी महाराज को अष्ट पद्य प्रसूनात्मक वाणी के द्वारा आज नमन करते हैं॥ ८॥

अष्टपाश निराशाय, सर्वेष्टसाधनायच।
अन्तःकरण-शुद्धयर्थं-मयाकारि तदष्टकम्॥ ९॥

अष्ट पाशों के विनाश के लिये, सर्व इष्ट सिद्धि के लिये तथा अन्तः करण की शुद्धि के लिये मेरे द्वारा ये अष्टक रचा गया। १. अविद्या, अस्मित आदि,

श्रीगुरुकृपाधनसम्पन्नः
त्र्यम्बकेश्वरश्चैतन्यः

श्रीकरपात्रपदरजपंचकम्

भवभीतिहरं भवभूतिकरं, भववैभव भासितकांतियुतम्।
जनताभयकारककीर्तियुतं, करपात्रपदाब्जरजो विनुमः॥ १॥

वसुधारजराशिहितं विमलं, जगतापहरैकनुतं सरलम्।
शशिशुभ्रसुधामयभावभरं, करपात्रपदाब्जरजो विनुमः॥ २॥

मनमोहनपूजितधामरतं, नवभारतभाववितानपरम्।
श्रुतिरीतिसुनीतिविचारधरं, करपात्रपदाब्जरजो विनुमः॥ ३॥

यमुनाजलसेवनशुद्धिकरं, व्रजराजपदाब्जपरागगतम्।
महिमामहनीयगतिं करुणं, करपात्रपदाब्जरजो विनुमः॥ ४॥

मधुरं ह्यघवृंदविनाशकरं, शुचितापरिसिंचितवृत्तिधरम्।
सततं नृपभालकिरीटनुतं, करपात्रपदाब्जरजो विनुमः॥ ५॥

भवभूतिप्रदं दिव्यं, भवभीतिहरं तथा।
करोति त्र्यंबको भक्त्या, शुभं श्रीरजपंचकम्॥

करपात्र वन्दना

विद्यावतां गुरुरसौ गुरुरेव साक्षात्
इन्द्रस्य भारतमहीमगमत् नृपूज्यः।
गोरक्षणं सुरसरिज्जलरक्षणं वा
कुर्वन् न कस्य हृदयं हृतवान् महर्षिः।।1।।

यः संस्कृतिं जितमना जितकामलोभो
वैराग्यभारभरितो मुदितो ररक्ष।
सोऽयं भवान् हि करपात्रमहर्षिनामा
लोकेऽमरत्वपदवीं सुकृतैर्विकृष्य ।।2।।
धर्मो विषीदति च रोदिति हन्त धेनुः
गंगा विलापमधुना कुरुतेऽद्य साश्रु।
पाखण्डनं हसति रक्ष तु देशमेतत्
श्रीमन्महर्षिवर! हे करपात्रिदेव ।।3।।

तज्जन्मपर्वणि मुदा हृदयेन नत्वा
श्रद्धासुमानि गुरवे प्रदद् ब्रवीमि।
रक्ष स्वभारतमिदं बहु दूयमानं
धर्मावतारसुपथेन समावतीर्य ।।4।।

तीर्थान्यतीर्थपदवीं समवाप्य लोके
नूनं तपन्त्यनुदिनं बहुतीर्थकाकैः।
रक्षाधुना महितभारतवर्षमेतत्
हे देव देव करपात्रिबुधेतिहास ।।5।।

दासानुदास ऋषिकुमारदास
श्रीधामवृंदावन

पुस्तक प्राप्ति के लिए सम्पर्क करें

श्री करपात्र धाम

पानी घाट चौराहा, परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन, +91 9557010001, 9414141941

कलासन प्रकाशन
मॉर्ड्न मार्केट, बीकानेर
ISBN : 978-93-92655-41-2
978-93-92655-41-8